FOREWORD

The University of Rajasthan has very recently revised its Syllabus for the B. Ed. examination, as a consequence of which its syllabus of the paper on "Problems of Indian Education" has been very considerably amplified The present book, entitled "Problems of Indian Education", is a commendable effort by Shri Ratan Lal Sharma, Head of a department in the Jawaharlal Nehru Teachers Training College, Kota, to bring under one volume the treatment of various problemes of Indian Education, keeping in view the requirements of Rajasthan University syllabus.

The treatment of most of the "Problems" is detailed and painstaking While it fully meets the requirements of the Rajasthan University syllabus, its comprehensive sweep covers almost all the Problems one has to face in the vast field of Indian education. Even such topical problems as the "Language problem" and the "problem of emotional integration" find a place in it.

Apart from its patent usefulness for teacher's training institutions in Rajasthan, I feel it will be found to be useful in a much wider area. It is notable contribution to the literature on the subject and I hope it will be well received amongst educationists and workers in the sphere of teacher education.

(Kamala Kant Chaturvedi
M. A., T. Dip (London), B. Ed. (Edinburgh)
Principal,
Jawaharlal Nehru Teachers Training,
College, Kota. (Rajasthan)

Dated Kota,
December 18, 1969.

प्राक्कथन

प्रस्तुत पुस्तक पाठकों के समक्ष है। राष्ट्र-भाषा में पुस्तक लिखने का यह दूसरा प्रयास है। मुझे आशा ही नहीं अपितु विश्वास है कि यह पुस्तक विद्यार्थियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी।

भारतीय शिक्षा की अनेकों समस्याएँ हैं, प्रायः सभी समस्याओं को इस पुस्तक मे समाहित करने का प्रयास किया गया है। सामान्यतया समस्याओं का प्रारम्भ पूर्व-प्राथमिक शिक्षा से होता है और वस्तुतः पुस्तक का शुभारम्भ भी इसी पौशिक समस्या से किया गया है। पुस्तक में कुल बाईस अध्याय हैं। सभी अध्यायों को लिखने मे अनेकों सदर्भ मे पुस्तकों की सहायता ली गई है।

इस पुस्तक को लिखने मे एक वर्ष से अधिक समय लगा है और समस्त समस्याओं को भारतीय परिवेश में सामयिक बनाने का पूर्ण प्रयास किया गया है।

मैं उन सभी भारतीय एव विदेशी शिक्षा शास्त्रियों का हृदय से आभारी हूँ जिनके अमूल्य विचारों को प्रस्तुत पुस्तक में आवश्यकतानुसार स्थान दिया गया है। इस पुस्तक को सम्पूर्ण कराने मे मेरे सहयोगी प्राध्यापकों ने जिस प्रकार से मेरा उत्साहवर्धन किया है, उसके लिए मैं उनका हृदय से आभारी हूँ। इस पुस्तक का प्रारम्भ मेरे मित्र श्री जितेन्द्रसिंह नेगी की सूझ का द्योतक है अतः इस पुस्तक मे उनका सहयोग भी विश्वसनीय है। प्रकाशक श्री चौथमल जैन, जिनके अथक् प्रयास से यह पुस्तक प्रकाशित हो सकी है, उनका आभार प्रदर्शन करना भी आवश्यक है।

अन्त मे मैं अपनी पत्नी श्रीमती सन्तोष शर्मा का भी आभारी हूँ। जिन्होंने समय-समय पर पाडुलिपि को पढकर महत्वपूर्ण सुझाव दिये और पुस्तक को यथाशीघ्र पूर्ण करने के लिए सदैव प्रोत्साहित किया।

पाठकों के सुझावात्मक विचार सादर आमन्त्रित हैं।

रतनलाल शर्मा

जवाहरलाल नेहरू शिक्षक
प्रशिक्षण महाविद्यालय, कोटा
मंगलवार 2, दिसम्बर 1980

भारतीय शिक्षा की समस्याएँ

PROBLEMS
OF
INDIAN EDUCATION

विषय-सूची

पृ० सं०

अध्याय

अध्याय | | पृ० सं०

अध्याय | पृष्ठ सं०

अध्याय एक
Chapter One
पूर्व प्राथमिक शिक्षा
Pre-Primary Education

अध्याय बिन्दु
Learning Points

* 1.01 पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का अर्थ एवं क्षेत्र
  (Meaning and Scope of Pre-Primary Education)
* 1.02 पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य एवं लक्ष्य
  (Aims and Objectives of Pre-Primary Education)
  1. पॅस आवेन के मतानुसार
  2. कोठारी आयोग (1964-66) के अनुसार
* 1.03 पूर्व-प्राथमिक शिक्षा क्यों ?
  (Why Pre-Primary Education ?)
* 1 0. ऐतिहासिक विकास
  (Historical Development)
* 1.05 पूर्व-प्राथमिक शालाओं के प्रकार
  (Kinds of Pre-Primary Schools)
* 1.06 विदेशों में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा
  (Pre-Primary Education in Foreign Countries)
* 1.07 भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा
  (Pre-Primary Education in India)
* 1.08 पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विकास हेतु कोठारी आयोग की सिफारिशें
  (Recommendations of Kothari Commission for the Development of Pre-Primary Education)

1. बालकों को स्वस्थ वातावरण प्रदान करना जैसे प्रकाश, धूप, स्वच्छ वायु, स्वच्छ स्थान आदि ।
2. बालकों को प्रफुल्ल, स्वस्थ एवं नियमित जीवन प्रदान करना तथा चिकित्सा सुविधाएँ देना ।
3. बालकों में समग्र व्यक्तिगत आदतों का निर्माण करना ।
4. बालकों की कल्पना शक्ति, विभिन्न प्रकार की रुचियों तथा क्षमताओं को विकसित करने के सुअवसर प्रदान करना ।
5. बालकों में लघु स्तर पर सामूहिक जीवन के अनुभव प्रदान कर समान आयु तथा अन्य आयु स्तर के बालकों के साथ कार्य करने एवं खेलने के अनुभव प्रदान करना ।
6. पारिवारिक जीवन की वास्तविक एकता प्राप्त करना ।

उपरोक्त उद्देश्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का मूल उद्देश्य बालकों में वांछित शारीरिक और बौद्धिक क्षमताओं का विकास कर उनमें सहकारिता, सहयोग और संवेगात्मक स्थिरता प्रदान करना है । दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि इस शिक्षा का उद्देश्य बालकों का मनोवैज्ञानिक ढंग से विकास करना है जिससे वे प्रसन्न, नियमित, सहयोगी और प्रेममय जीवन-यापन कर अपने भावी जीवन को सुखद बनाने में समर्थ हो सकें ।

कोठारी आयोग (1964-66) के अनुसार—

कोठारी आयोग ने पूर्व प्राथमिक शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निश्चित किये हैं[1] :—

1. — To develop in the child good health habits, and to build up basic skills necessary for personal adjustment, such as dressing, toilet habits, eating, washing, cleaning etc.
— To develop desirable social attitudes and manners; and to encourage healthy group participation, making the child sensitive to the rights and privileges of others.
— To develop emotional maturity by guiding the child to express, understand, accept and control his feelings and emotions
— To encourage aesthetic appreciations,
— To [illegible] the beginnings of intellectual; curiousity [illegible] the environment and to help him under-[illegible] world in which he lives, and to foster new

1. बालकों में अच्छी स्वास्थ्य आदतों का विकास और व्यक्तिगत समायो
की क्षमताओं जैसे वस्त्र पहनना, शौचालय, खाने, धोने, सफाई आ
को विकसित करना।

2. वांछित सामाजिक अभिवृत्तियों एवं ढंगों का विकास करना, स
सामूहिक सम्मेलन में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना, बालक
अपने अधिकारों तथा दूसरों के विशेषाधिकारों के प्रति जागरूक करना

3. बालक को अपने संवेगों पर नियन्त्रण करने हेतु निर्देश देना जिस
संवेगात्मक परिपक्वता का विकास हो।

4. सौन्दर्यात्मक प्रशंसा हेतु प्रोत्साहित करना।

5. बालक को उसके संसार जिसमें वह रहता है एवं वातावरण
सम्बन्धित बौद्धिक उत्सुकता पैदा करना और उसे नवीन रुचियों
अवसर प्रदान करना।

6. बालक को स्वतन्त्रता और सृजनात्मकता के प्रोत्साहन हेतु स्वयं अभि
व्यक्ति के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करना।

7. बालकों में स्पष्ट एवं सही भाषा द्वारा अपने विचारों और भावना
को व्यक्त करने की योग्यता का विकास करना।

8. बालकों के शारीरिक गठन एवं गामक क्षमताओं को विकसित करना।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति तभी की जा सकती है जबकि हम
लकों को वे अनुभव और वातावरण सम्बन्धी दशाएं प्रदान कर सकें जिससे उनका
रीरिक, मानसिक, संवेगात्मक और सामाजिक विकास हो सके। यह सब ही सम्भव
जबकि इस शिक्षा के प्रसार हेतु अच्छी शालाओं का निर्माण हो। वर्तमान शैक्षिक
ति का पूर्व-प्राथमिक शिक्षा पर विशेष बल है, विशेष कर उन बालकों के लिए
नका पारिवारिक वातावरण असन्तोषजनक है। यही वह दिशा है जिस ओर

---

interest through opportunities to explore, investigate and experiment.

To encourage independence and creativity by providing the child with sufficient opportunities for self-expression.

To develop in the child a good physique, adequate muscular coordination and basic motor, skills,

cation Commission (1964-66)

में अग्रसर होना है[1]। संक्षेप में कहा जा सकता है कि हम इस शिक्षा व्यवस्था द्वारा देश के भावी नागरिकों का निर्माण कर सकते हैं जो कि सामाजिक रूप से व्यवस्थित एवम् समायोजित होंगे।

1.03 पूर्व-प्राथमिक शिक्षा क्यों ?
Why Pre-Primary Education ?

यह हमारे देश का दुर्भाग्य रहा है कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा को समग्र शिक्षा व्यवस्था में यथोचित स्थान नहीं दिया गया और इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि हमारे देश का वर्तमान शिक्षा स्तर दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा है तथा इसका मूल कारण यह है कि बालकों को प्रारम्भिक वर्षों में वे संस्कार प्रदान नहीं किये जाते जो भावी शिक्षा-स्तर को सुधारने हेतु अनिवार्य हैं। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम पूर्व प्राथमिक शिक्षा के प्रति जागरूक हों।

उपरोक्त प्रश्न के उत्तर में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा समिति मैसूर[2] (1961) ने यह निश्चित धारणा प्रकट की थी कि 'पूर्व प्राथमिक शिक्षा का योजनाबद्ध और शीघ्र प्रसार हमारे विकास हेतु अत्यन्त आवश्यक है।' शिक्षा आयोग[3] (1964-66) ने इसकी महत्ता पर विचार स्पष्ट करते हुए लिखा है कि पूर्व प्राथमिक शिक्षा बालक के शारीरिक, संवेगात्मक और बौद्धिक विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है और विशेषकर उन बालकों के लिए जिनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि असन्तोष-जनक है।"

इसके अतिरिक्त "एक सामान्य परिवार ढाई वर्ष से छः वर्ष के बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ रहता है और यदि इन आवश्यकताओं की पूर्ति उचित रूप से नहीं होती है तो स्पष्ट अथवा अस्पष्ट रूप से बालक का भावी जीवन संकटमय हो जाता है। इसीलिए हमारी यह निश्चित धारणा है कि पूर्व-

1. The modern trend in educational policy, therefore, is to emphasize pre-primary education especially for children with unsatisfactory home backgrounds. This is the direction in which we also should move.

—*Ibid*, p. 148.

2. We are of the firm opinion that planned and immediate expansion of Pre-Primary Education is essential at the present stage of our development.

3. Pre-Primary education is of great significance to the physical, emotional and intellectual development of children, especially those with unsatisfactory home backgrounds.

—*The Education Commission 1964-66*

विज्ञान[1] के क्षेत्र में हुए अनुसंधान इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि बालक के प्रारम्भिक पाँच वर्ष सम्पूर्ण जीवन के लिए निश्चित गति एवम् दिशा निर्धारित करते हैं जो अन्ततोगत्वा जीवन के आधारभूत रूप में संचालित होते हैं। अतः यह नितान्त आवश्यक है कि पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के माध्यम द्वारा बालकों को स्वस्थ एवम् मुखरित वातावरण प्रदान किया जावे परन्तु यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीतियों में शिक्षा के इस आधार स्तम्भ की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व तो अंग्रेजों ने इस ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया और स्वतन्त्रता के पश्चात् भी बीस वर्षों में इस ओर आशातीत प्रगति नहीं हो पाई है।

10·4 ऐतिहासिक विकास

Historical Development

जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का इतिहास अत्यन्त असन्तोषजनक रहा है। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व ब्रिटिश शासन व्यवस्था में इस शिक्षा को किसी प्रकार का प्रोत्साहन नहीं दिया गया क्योंकि अंग्रेजों का मूल उद्देश्य भारतीयों को शिक्षित करना नहीं था बल्कि शासन करना था और इसीलिए वे पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के प्रति सदैव अनास्था ही प्रगट करते रहे।

सन् 1939 में द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ हुआ और 1944 तक अधिक समाप्त हो चुका था। इस समय सर जॉन सार्जेण्ट को भारतीय शिक्षा सलाहकार के रूप में युद्धोत्तर शिक्षा विकास पर एक स्मृतिपत्र प्रस्तुत करने का आदेश दिया गया। उन्होंने 1944 में भारतीय शिक्षा पर केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के सम्मुख स्मृतिपत्र प्रस्तुत किया जिसमें पहली बार पूर्व-प्राथमिक शिक्षा पर विचार व्यक्त किये गये जो निम्नलिखित थे—

* राष्ट्रीय शिक्षा योजना हेतु पूर्व-प्राथमिक विद्यालयों को प्रारम्भ करना आवश्यक है।
* इस शिक्षा हेतु 3 वर्ष से 6 वर्ष तक के बालकों के लिए विद्यालयों की व्यवस्था की जावे।

---

1. "A number of writers have suggested that children go through critical periods during which bearing opportunities are especially effective and beyond which they are less effective ....If opportunities to learn during a given developmental period do not occur, children may fail to learn a given behaviour pattern."

George G. Thompson, *Child Psychology*, The Times of India Press, Bombay, 1965, p. 124.

- इन शालाओं के लिए केवल उन्हीं अध्यापिकाओं की नियुक्ति की जावे जो विशिष्ट प्रशिक्षण प्राप्त हों ।
- प्रत्येक दशा में यह शिक्षा नि शुल्क होनी चाहिए ।
- यद्यपि इस शिक्षा को अनिवार्य बनाना कठिन है तथापि माताओं-पिताओं को अनुनय द्वारा बालकों को इन शालाओं में भेजने हेतु कहा जाये विशेष रूप से जहाँ माताएं घर से बाहर कार्य करने जाती हैं और/अथवा पारिवारिक दशा असन्तोषजनक है ।
- शहरों में, जहाँ बालकों की संख्या पर्याप्त है वहाँ पृथक रूप से शालाएं स्थापित की जावें अन्यथा बेसिक प्राथमिक शालाओं में इन बालकों के लिए पृथक कक्षाओं की व्यवस्था की जाये ।
- इस शिक्षा का उद्देश्य बालकों को सामाजिक अनुभव एवम् सदाचार प्रदान करना है न कि औपचारिक शिक्षा देना ।

इस प्रकार सार्जेण्ट कमेटी ने इस शिक्षा का विधिवत सूत्रपात किया । वैसे 1939 में भी दूसरी वर्धा शिक्षा समिति ने इस ओर ध्यान दिया था परन्तु इससे कोई वांछित उपलब्धि प्राप्त नहीं हो सकी ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भी इस शिक्षा पर कोई ध्यान नहीं दिया गया । यद्यपि यह सत्य है कि सरकार के सम्मुख अन्य शैक्षिक समस्याएं अधिक महत्त्वपूर्ण थीं तथापि इस शिक्षा के प्रति कम ध्यान देना भी क्षम्य नहीं है । तालिका 1·1 से हमें यह स्पष्ट होता है कि इस ओर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है ।

तालिका 1·1

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात पूर्व-प्राथमिक शिक्षा[1]

वर्ष	स्कूलों की संख्या	छात्रों की संख्या	अध्यापकों की संख्या	प्रत्यक्ष व्यय (लाखों में)
1950-51	302	21,640	866	11·98
1955-56	630	45,828	1,880	24 99
1960-61	1,909	1,21,184	4,007	53 73
1961-62	2,240	1,48,868	4,895	74·91
1962-63	2,502	1,64,695	5,221	82 31
1963-64	2,717	1,78,958	5,453	92·20

तीसरी पंचवर्षीय योजना में इस शिक्षा के प्रसार पर विशेष बल दिया गया । बा

———

बाल-वाड़ियों में सुधार करने की ओर नई बाल-वाड़ियाँ खोलने की व्यवस्
गई। शिक्षा क्रम में से शिशु कल्याण और सम्बद्ध योजनाओं के लिए तीन
रुपये केन्द्र में एक करोड़ रुपये राज्यों में रखे गए। यह राशि सामुदायिक वि
और समाज कल्याण कार्यक्रमों के अन्तर्गत उपलब्ध होने वाले साध
अतिरिक्त थी।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा को अधिकतर
प्रयास[1] पर छोड़ा गया है। योजना में यह स्वीकार किया गया है कि यह
पूर्ण क्षेत्र है परन्तु सीमित साधनों एवम् प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य प्रा
के कारण सरकार थोड़ा ही उत्तरदायित्व निभा सकती है। अतः सरक
ध्यान कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्रों जैसे अध्यापकों का प्रशिक्षण, शैक्षिक सामग्री का
और भारतीय दशाओं के अनुसार उपयुक्त शिक्षण विधियों आदि पर
रहेगा।

जहाँ तक पूर्व-प्राथमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति का प्रश्न है; —
ऐसे शालाओं की संख्या 3,500 है जिसमें करीब 6,500 अध्यापिकाएँ
बालकों की कुल संख्या 250,000 है। इसके लिए प्रत्यक्ष व्यय में भी वृ
,जो कि सम्पूर्ण शिक्षा व्यय का 0 2 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में केन्द्री
कल्याण बोर्ड (CSWB) और सामुदायिक विकास प्रशासन ने सन्तोष
किया है। इस समय कुल मिलाकर 20,000 बाल-वाड़ियाँ हैं जिसमें बा
कुल संख्या 600,000 है।

यदि हम सम्पूर्ण विकास पर दृष्टिपात करें तो निश्चित रूप से
सकता है कि सम्पूर्ण लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए तो यह प्रगति बहुत
परन्तु ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से काफी प्रगति की है।[2]

1.05 पूर्व-प्राथमिक शालाओं के प्रकार

Kinds of Pre-Primary Schools

हमारे देश में मुख्य रूप से निम्नलिखित पूर्व-प्राथमिक शालाएँ हैं.-

1. माण्टेसरी शालाएँ
   Montessori Schools

इन शालाओं का प्रारम्भ डा० मेरिया मोण्टेसरी ने किया था।
से 1950 तक भारत में रहीं और एक नवीन शिक्षण पद्धति पर का

1. Private Initiative
2. The progress is no doubt small in relation goals, but it marks a 'tremendous advance over achievements.

Education Commission 1964-66, p

(स) स्वस्थ अनुभव—बालकों को स्वस्थ अनुभव प्रदान करने हेतु
में एक छोटी फुलवारी, क्रीडास्थल, खेलकूद के अन्य साधन, संगीत, अभिनय,
पौधे, पक्षी आदि की व्यवस्था होती है।

(द) गिफ्ट्स और ओकूपेशन द्वारा प्रेरणा—बालकों को प्रेरणा प्रदान
हेतु इस शिक्षा पद्धति में पारितोषक स्वरूप गिफ्टस और ओकूपेशनस् व्यवस्था
है। पहली गिफ्ट में 6 अलग-अलग रंगों के ऊन के गोले हैं जिनको बालकों के लिए
स्थिति, दिशा आदि के ज्ञानस्वरूप रक्खा गया है। दूसरी गिफ्ट में लकड़ी
और त्रिकोण हैं, यह बालकों को वस्तु का ज्ञान देने के लिए रक्खे गये हैं।
गिफ्ट में लकड़ी के समानाकार के आठ टुकड़े हैं, इनसे बालकों में निर्माण की
का विकास होता है। इन गिफ्टस के अतिरिक्त कुछ ओकूपेशनस् हैं जिनमें
मिट्टी, कागज आदि सामग्रियों को रक्खा गया है। इन सबका उद्देश्य बाल
कल्पना शक्ति एवम् सौन्दर्य की भावना का विकास करना है।

3. पूर्व-बेसिक शालाएँ
Per Basic Schools

गांधीजी के 'बाल-शिक्षा' विचारों के आधार पर इन शालाओं का
हुआ है। इस शिक्षा का आरम्भ सेवाग्राम में हुए प्रयोगों के आधार पर
भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने 1953 में एक पुस्तिका 'बाल शिक्षा में
प्रकाशित की। इस पुस्तिका में इन शालाओं का विशद् रूप से वर्णन है। इस
के सक्षेप में निम्नलिखित चरण हैं—

(i) गर्भाधान से जन्म तक
(ii) जन्म से ढाई वर्ष तक
(iii) ढाई वर्ष से पाँच वर्ष तक
(iv) पाँच वर्ष से आठ वर्ष तक

प्रथम चरण में गर्भवती माता को आवश्यक निर्देशन की व्यवस्था है
माता का भोजन, दिनचर्या, स्वास्थ्यप्रद वातावरण, बालक के लिए आवश्यक
का सञ्जोना एवम् माता के बालक के प्रति कर्तव्य आदि को रखा गया है
कोई सन्देह नहीं कि गर्भावस्था एक महत्वपूर्ण अवस्था है, बालक का
व्यक्तित्व निर्माण इसी समय में हो जाता है। अतः इस समय माता की
[illegible] है।

चरण में बालक के प्रथम ढाई वर्ष आते हैं।
[illegible] की आवश्यकता होती है अतः यह आवश्यक है कि
आवश्यकताओं की पूर्ति की जावे और माता को शि
[illegible] की जावे।

तीसरे चरण मे बालकों के लिए शालाओं की व्यवस्था है। ये शालाएँ पूर्ण-
...पेण भारतीय हैं जो कि भारतीय बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक
। परन्तु हमारे देश मे इस प्रकार की शालायें बहुत कम हैं क्योंकि सम्पूर्ण व्यवस्था
लिए बहुत अधिक धन की आवश्यकता पड़ती है। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है
पूर्व-बेसिक शालाओं की सम्पूर्ण व्यवस्था को परिवर्तित किया जाये और प्रथम
चरणों को छोड़कर अन्तिम दो चरणों को ही क्रियान्वित किया जावे। यद्यपि
-बेसिक शिक्षा व्यवस्था अपने मे एक आदर्श है, परन्तु सभी आदर्श वास्तविक
नहीं होते।

1.06 विदेशों में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा[1]

Pre-Primary Education in Foreign Countries

विदेशों में पूर्व प्राथमिक शिक्षा की बहुत प्रगति हुई है। रूस, अमेरिका
...ड, जर्मन, आस्ट्रेलिया आदि देशों में इस शिक्षा को एक आवश्यक शिक्षा
...था के रूप मे माना गया है। विदेशो में पूर्व प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था
...लिखित है—

...स

...ussia

सोवियत संविधान मे नर्सरी एवम् किन्डरगार्टन शालाओं को स्थान दिया
। संविधान में स्पष्ट रूप से पूर्व प्राथमिक शिक्षा को देश की प्रगति के लिए
...क बतलाया है। 1914 में किन्डरगार्टन शालाओं की संख्या बहुत कम थी
...बल 4,000 बालकों की ही व्यवस्था थी और ये शालाएँ प्राईवेट रूप से
...त होती थी। 1961 में रूस की कुल आबादी 20 करोड़ थी जिसमें से
वर्ष के 20 लाख बालकों की शिक्षा व्यवस्था थी।

...ड

...gland

यहाँ पूर्व-प्राथमिक शिक्षा को शैक्षिक क्रम का आधार माना जाता है।
...म शिक्षा प्रक्रिया के लिए बाल शिक्षा प्रारम्भ आवश्यक है। अनिवार्य शिक्षा
से प्रारम्भ होती है। दो वर्ष से पाँच वर्ष तक के बालकों के लिए पृथक
...शालाओं की व्यवस्था है। यहाँ बालकों को चिकित्सा, भोजन का प्रबन्ध और
...सुविधाएँ प्रदान की जाती है। यहाँ तक सम्भव होता है बालकों को स्वतन्त्र
...प में रहने के अवसर प्रदान किए जाते हैं।

---

3. संयुक्त राज्य अमेरिका
United States of America

यहाँ किन्डरगार्टन शालाएँ बहुत लोकप्रिय हो गई हैं और शनैः शनैः पवि
स्कूल का रूप धारण कर रही हैं। यहाँ की किन्डरगार्टन शालाओं में वास्तविव
के आधार पर शिक्षण पद्धतियों को अपनाया गया है। इन शालाओं में साढ़े च
वर्ष से छः वर्ष के बालकों को शिक्षा प्रदान की जाती है। बालकों को क्रिया द्व
सीखना एवं वांछित सामाजिक अनुभव प्रदान किये जाते हैं। बालसुलभ आवश्
ताओं के अनुसार समस्त अनुभव प्रदान करना इस शिक्षा की विशेषता है।
शालाओं को दिन प्रतिदिन बढ़ाया जा रहा है।

4. डेनमार्क
Denmark

यहाँ पूर्व-प्राथमिक शिक्षा सरकार के कार्याधीन है। इस शिक्षा में ढाई
से सात वर्ष तक के बच्चों को शिक्षा प्रदान की जाती है। यहाँ मुख्य रूप से
प्रकार की शालायें हैं—

(i) नर्सरी शालायें (Nurseries)
(ii) दैनिक घर (Day Homes)
(iii) क्रीड़ा स्थल (Play Rooms)

इस शिक्षा हेतु 30 प्रतिशत व्यय सरकार द्वारा, 40 प्रतिशत नगरपालिव
द्वारा एवम् अतिरिक्त धन दान द्वारा अथवा माता-पिता से लिया जाता है।
शिक्षा व्यवस्था की एक अन्य विशेषता यह है कि शालाओं में पारिवारिक वाता
प्रदान करने का प्रयत्न किया जाता है।

5. आस्ट्रेलिया
Australia

बाल कक्षाएँ स्थानीय प्राथमिक शालाओं से सम्बन्धित होती हैं। सामा
ये कक्षाएँ पाँच वर्ष के बालकों के लिए होती हैं। देश में कहीं इस शिक्षा हेतु
शालाएँ भी हैं। आकाशवाणी द्वारा भी पूर्व प्राथमिक शिक्षा का आयोजन है
शिक्षा का मूल उद्देश्य बालक को सामान्य रूप से विकसित करना है तथा बाल
सृजनात्मक विकास हेतु अनेकों प्रकार के अवसर प्रदान किये जाते हैं।

6. नीदरलैंड्स
Netherlands

नगरपालिकाओं को बाल शालाएँ खोलने का अधिकार है। बालकों
निर्धारण नगरपालिका क्षेत्र की जनसंख्या पर आधारित है।

...द्वारा अनुदान प्राप्त होता है। यदि निजी तौर प
...ा खोलना चाहे तो नगरपालिका द्वारा सहयोग प्रदान किया जात
...सा के साथ अभिभावकों का सम्पर्क होता है। अभिभावकों द्वारा
...हयोग प्रदान किया जाता है जिससे वे अपने बालकों की प्रगति से सा
...िंत होते रहें। यहाँ सामान्य रूप से तीन प्रकार की शिक्षण पद्धति
...ि लाया जाता है—किण्डरगार्टन, मान्टेसरी, सामयिक विधि। इस
...िक शिक्षा के लिए चार वर्ष से सात वर्ष की आयु निश्चित की गई है

1.07 भारत में पूर्व-प्राथमिक शिक्षा
Pre Primary Education in India

...प थ, जैसा को हम पहले कह चुके हैं, पूर्व प्राथमिक शिक्षा को सदैव
...गया है। स्वतन्त्रता से पूर्व की स्थिति के विषय में हम विस्तृत रूप
...मे चर्चा कर चुके हैं परन्तु सार्जेण्ट समिति[1] के ये विचार काफी
...कि यदि इस शिक्षा हेतु पूरे प्रयास भी किये जायें तो भी भारतीय
...त करना बहुत कठिन है क्योंकि वे अपने बच्चों के शा...
...ण को और स्वस्थप्रद बनाने हेतु जागरूक हैं जो यह ...
...र्व-प्राथमिक शिक्षा को और अधिक सफल बनाने के लि...
... हेतु प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

...ान में बहुत हद तक सत्यता है क्योंकि हमारे देश में ऐसे
...ी है जो अपने बालको की शिक्षा के लिए बिलकुल भी
... शिक्षा की धारणा तो बहुत दूर है—वे तो अपने बाल...
...ने के हक में नहीं हैं। परन्तु सम्भव है कि सामाजिक
...छड़ी हुई जातियों तथा आदिवासियो में इस ओर जाग...
...स दिशा में काफी प्रशसनीय विकास हो रहा है। भा...
... जो बीस वर्ष पूर्व था।

...अधिक लोकप्रिय न होने का एक कारण हमारी आर्...
...तो हम अपने उन उद्देश्यो की प्राप्ति भी नहीं कर सके

...if proper facilities are provided, it would b...
...asy matter to persuade the Indian mothers to
... natural effections in the interest of a more
...nd mental environment for her children A
...opaganda and training of public opinion will
...e a system of Pre Primary Education can be
...nced"

—Sargent Committee

जो हमने बीस वर्ष पूर्व निर्धारित किये थे क्योंकि आर्थिक स्थिति से हम सम्पन्न नहीं हैं। हमारे देश में ऐसे परिवारों की कमी नहीं जहाँ दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना भी कठिन है—वहाँ यदि हम पूर्व-प्राथमिक शिक्षा की बात करें तो निरर्थक ही होगा। यदि हम यह कहें कि सरकार के जागरूक न होने के कारण इस शिक्षा को प्राइवेट तौर पर इतना अधिक महँगा बना दिया है कि यह केवल सम्पन्न परिवारों की निधि बनकर रह गई है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

वातावरण सम्बन्धी और आर्थिक कारणों के अतिरिक्त एक अन्य कारण शैक्षिक भी है। शिक्षा की दृष्टि से ये शालाएँ उन शैक्षिक मूल्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं हैं जो इस आयु स्तर पर वांछनीय है। शालाओं में वे सामग्रियाँ नहीं हैं जो छोटे बालकों की शिक्षा के लिए आवश्यक हैं। यही कारण है कि अधिकतर अभिभावक इन शालाओं में अपने बच्चों को भेजना बेकार समझते हैं।

उपरोक्त तथ्यों के कारण हमारे देश में इस शिक्षा की प्रगति में आशातीत वृद्धि नहीं हो पाई है। इन कारणों के अतिरिक्त पूर्व प्राथमिक शिक्षा की निम्नलिखित समस्याएँ हैं—

1. प्रशिक्षित अध्यापिकाओं की कमी

Lack of Trained Lady Teachers

प्रशिक्षित अध्यापिकाओं की कमी के कारण यह शिक्षा समुचित नहीं हो पाई है। अप्रशिक्षित अध्यापिकाएँ बालकों को समझने में असमर्थ रहती हैं और उनका मनोवैज्ञानिक उपचार नहीं हो पाता। अतः यह आवश्यक है कि अध्यापिकाओं को प्रशिक्षित किया जाये और अप्रशिक्षित अध्यापिकाओं की सेवाएँ उस समय तक पक्की न की जायें जब तक वे प्रशिक्षण प्राप्त न करलें।

2. प्रशिक्षणालयों की कमी

Lack of Training Schools

पूर्व प्राथमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि हमारे देश में प्रशिक्षणालयों की बहुत कमी है। देश में बालकों की संख्या को देखते हुए जितनी अध्यापिकाएँ प्रशिक्षित होती हैं वे इस शिक्षा की माँग का पूरा करने में प्राय: असमर्थ हैं। इसके अतिरिक्त जो भी प्रशिक्षण केन्द्र हैं वे उन सुविधाओं से पूर्ण नहीं हैं जो प्रभावशाली शिक्षण के लिए आवश्यक हैं।

3. बाल साहित्य की कमी

Lack of Juvenile Literature

यद्यपि इस आयु स्तर पर पुस्तकीय ज्ञान प्रदान करना आवश्यक नहीं है तथापि बाल साहित्य का सृजन नितान्त आवश्यक है। इस आयु के बालकों की विशेष माँग होती है अतः मनोवैज्ञानिक आधार पर इन बालकों के मानसिक योग्य-

...नुसार साहित्य का होना बहुत जरूरी है। हमारे देश में न तो इस प्रकार के ...हित्य सृजन के लिए प्रयास ही किया जाता है और न इस साहित्य के प्रति ...जाग...ता ही है। केन्द्रीय एवं राज्य सरकार को चाहिए कि वे इस ओर ...विध...धाएँ प्रदान करने का प्रयास करें।

...8 पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विकास हेतु कोठारी आयोग की सिफारिशें

...Recommendations of Kothari Commission for the Development ...of Pre-Primary Education

पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विस्तार हेतु कोठारी आयोग (1964–66) ने ...निलिखित सिफारिशें की हैं—

(1) पूर्व-प्राथमिक शिक्षा के विकास हेतु राजकीय शिक्षा संस्थान में एक केन्द्र राजकीय स्तर का होना चाहिये। इसके अतिरिक्त अगले 20 वर्षों में प्रत्येक जिले के अन्तर्गत इस प्रकार के केन्द्रों की स्थापना की जाये। इन केन्द्रों का मुख्य कार्य पूर्व-प्राथमिक अध्यापकों को प्रशिक्षण, निर्देशन एवं मार्ग प्रदर्शन कराना, माताओं पिताओं को बालक की देखभाल के लिए शिक्षित करना होना चाहिए। इसके अतिरिक्त अध्यापकों को प्रारम्भिक प्रशिक्षण की समस्त सुविधायें भी इन्हीं केन्द्रों के द्वारा प्रदान की जा सकती हैं।[1]

(2) इन विद्यालयों की स्थापना एवं संचालन वर्तमान स्थिति में, व्यक्तिगत प्रबन्धकों द्वारा होना चाहिए। इन शालाओं को राज्य सरकारों द्वारा उदार आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए क्योंकि राज्य सरकारों ...

(3) पूर्व-प्राथमिक शिक्षा से सम्बन्धित प्रत्येक अनुसन्धान को प्रोत्साहित किया जाये, विशेष रूप से कम कीमती शिक्षण विधियों के परीक्षणों को विकसित किया जाये :

(4) प्राथमिक शालाओं से सम्बन्धित बाल क्रीडा केन्द्रों को स्थापित किया जाये। इन केन्द्रों में सामूहिक गान, कहानी पद्धति, विभिन्न प्रकार के खेल आदि को बालकों के व्यक्तिगत स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए सम्मिलित किया जाये।

(5) राज्य सरकार इस प्रकार के केन्द्रों को राज्य एवं जिला स्तर पर स्थापित करे जिसका कार्य शिक्षकों को प्रशिक्षण देना, अनुसन्धान करना, साहित्य सृजन करना, पूर्व प्राथमिक शालाओं को निर्देशन देना तथा प्रशिक्षण शालाओं का निरीक्षण करना आदि हो।

उपरोक्त समस्त सुझावों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता [illegible] आयोग ने महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं और इन्हें पथ-प्रदर्शक बनाना नितान्त [illegible]यक है। यह हमारा पुनीत कर्त्तव्य है कि भारतीय संस्कृति के आधारानुसार [illegible]माज के बालकों मे उन संस्कारों को डालें जिससे भविष्य में प्रजातान्त्रिक मूल्यों [illegible]आधार पर हम सचरित्र सफल नागरिक बनाने में समर्थ हो सकें। भारत की [illegible]संख्या को ध्यान में रखते हुए यह नितान्त आवश्यक है कि अधिक से अधिक [illegible] मन्दिरों की स्थापना हो जिससे केवल शहरी बालक ही नहीं बल्कि ग्रामीण [illegible]लक भी लाभान्वित हों।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. Baruch, Dorothy W.
   Nursery School and the Kindergarten, Scott Foresman & Co., Chicago, 1939.
2. D. Soura Austin A
   Aspects of education in India and Abroad, Orient Longmans 1958.
3. De Young C. A.
   Introduction to American Public Education, Mc Graw Hill Book Co Inc., New York, 1950.
4. *Education in India*, Vol. I, Ministry of Education, New Delhi, 1958.
5. *Elementry Education* Second Lok Sabha's Estimate Committee Report, Lok Sabha Secretariat, New Delhi, 1958.
6. *Education in the States*, (1956-57). Ministry of Education New Delhi, 1959.
7. *India 1965, 66, 67*, Publication Division, Ministry of Information & Broadcasting Govt of India.
8. Hurlock, Elizabeth B.
   Child Development, Mc. Graw Hill Book Co., Inc., New York, 1959
9. Hans N.
   Comparative Education, Routledge, London, 1959.
10. King Hall, Magdalen.
    Story of the Nursery, Routledge and Kegan Paul. London, 1953
11. Mukerji, S. N.
    Education In India Today and Tomarrow, Acharya Book Depot, Baroda, 1964
12. Medinsky, Y. N.
    Public Education in U S S R., Foreign Language Publication House, Moscow, 1956.

Report of the Education Commission, (1964-66), Ministry of Education, Govt. of India 1966.

Report of working Group on Education for Draft Third Five Year Plan, Ministry of Education, New Delhi, 1960

Report of working Group on Education for *Draft Fourth Five Year Plan*, (A Draft Outline) Govt. of India, 1967.

अध्याय दो
Chapter Two
प्राथमिक शिक्षा और सार्वलौकिकता
Primary Education & Universalisation

अध्ययन बिन्दु
Learning Points

* 2.01 प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य
  Aims of Primary Education
* 2.02 ऐतिहासिक विकास
  Historical Development
  1813–1854; 1854–1857; 1857–1882;
  1881–1911,
  अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा हेतु प्रयास
  1911–21; 1921–1937,
  1937 से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक
  स्वतन्त्रता प्राप्ति से चतुर्थ पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक
* 2.03 अनिवार्य शिक्षा का संक्षिप्त इतिहास
  Brief History of Compulsory Education
* 2.04 अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की समस्यायें
  Problems of Compulsory Primary Education
  1. शैक्षिक सुविधाओं की असमानता
     * प्राथमिक सुविधाओं में असमानता
     * मनोवैज्ञानिक कारण
     * सामाजिक विघटन
  2. प्रशासकीय समस्यायें
  3. पहली कक्षा में प्रवेश
  4. अध्यापकों की समस्या
     * अध्यापकों के प्रशिक्षण की समस्या
     * आदिवासियों के लिए अध्यापकों की समस्या
     * बालिकाओं के लिए अध्यापिकाओं की समस्या
  5. लड़कियों की शिक्षा
  6. अपव्यय और अवरोधन
  7. अविकसित क्षेत्रों की समस्या
  8. अन्य समस्यायें

प्राथमिक शिक्षा और सार्वलौकिकता
PRIMARY EDUCATION & UNIVERSALISATION

प्राथमिक शिक्षा वह प्रकाश है जो जीवन के समस्त अन्धकारों को दूर क
बालक में उन पुनीत संस्कारों, पवित्र भावनाओं, निश्चित दृष्टिकोण और भा
विचारों को जन्म देता है जिससे बालक का भावी जीवन प्रकाशित होता है। सचे
में हम कह सकते हैं कि प्राथमिक शिक्षा भारत के बालकों और भावी नागरिकों क
साक्षर करने का प्रयास है।

2.01 प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य
Aims of Primary Education

एशिया क्षेत्रीय सभा[1] में प्राथमिक शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित
किये गये—

1. सीखने के सिद्धान्तों पर आधारित मौलिक शिक्षा प्रदान करना।
2. बालक का शारीरिक, बौद्धिक, सामाजिक, संवेगात्मक, सौन्दर्यात्मक,
नैतिक विकास पर सर्वाङ्ग विकास करना।

1. Regional Meeting of Members, *Primary & Compulsory Education*, December 1959—January 1960

3. बालक में देश की सांस्कृतिक एवम् परम्पराओं के प्रति प्रेम जागृत कर आदर्श नागरिक बनाना।
4. बालक में अन्तर्राष्ट्रीय चेतना का विकास कर विश्व भ्रातृत्व की भावना का विकास करना।
5. बालकों में श्रम की महत्ता विकसित करना।
6. बालकों को क्रियात्मक अनुभव प्रदान कर, भावी जीवन के लिए तैयार करना।

उपरोक्त उद्देश्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य बालकों के ज्ञान की वृद्धि करना, उनमें बाल सुलभ रुचि तथा अभिरुचि विकसित करना और उन्हें अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक करना है जिससे वे प्रजातन्त्रात्मक देश के आदर्श नागरिक हो सकें।

2.02 ऐतिहासिक विकास
Historical Development

भारत में प्राथमिक शिक्षा का इतिहास बहुत प्राचीन है। वैदिक काल में ही हमें प्राथमिक शिक्षा के दर्शन होते हैं। उस समय शिक्षा व्यवस्था अत्यन्त मनोवैज्ञानिक थी और बालक के सम्पूर्ण विकास को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रदान की जाती थी परन्तु धीरे-धीरे सामाजिक व्यवस्था के परिवर्तन के साथ-साथ शिक्षा का स्वरूप परिवर्तित होता चला गया।

हमारे देश पर मुस्लिम राज्य का आधिपत्य हुआ और शिक्षा का उद्देश्य मुस्लिम धर्म का प्रसार हो गया। तत्पश्चात मिशनरियों ने अपने धर्म का प्रसार करना प्रारम्भ कर दिया और उनका माध्यम भी शिक्षा ही बनी। इसके पश्चात् अंग्रेजों का आगमन हुआ और हमारी संस्कृति पर इनका विशेष प्रभाव पड़ा। अंग्रेजों ...[illegible]यिक दृष्टि के कारण था अतः शैक्षिक प्रसार की ओर उन्होंने विशेष ...[illegible] और कम्पनी के काल में भी ईसाई धर्म का प्रचार होता रहा। ...[illegible] समाजन की दृष्टि से प्राथमिक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास

[illegible]

...[illegible]थम शिक्षा प्रसार की ओर ध्यान गया जिसके ...[illegible]ओं की स्थापना की गई। 1835 में विलियम ...[illegible] प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इस प्रतिवेदन में प्राय- ...[illegible] कदम उठाने का प्रयास किया गया। सर्वप्रथम ...[illegible] रूप से चलाने के लिए शिक्षा व्यवस्था बनाई

भरसक प्रयत्न किये । देश में राजनैतिक चेतना आई। पराधीन राष्ट्र ने जन
के लिये अनिवार्य शिक्षा को महत्व प्रदान किया और अनेकों बार प्रयास कि
सफलता प्राप्त न हो सकी।

1912 मे गोखले ने केन्द्रीय विधान सभा मे अनिवार्य शिक्षा हेतु बि
किया । अंग्रेजी सत्ता ने उसे स्वीकार नही किया क्योंकि वह गुलामों को
करने में अपनी हानि सोचती थी । इसके पश्चात प्रथम विश्वयुद्ध हुआ जिसे
अंग्रेजी सत्ता ने अनिवार्य शिक्षा के व्यय 'को वहन करने मे असमर्थता प्रदर्शि
बड़ौदा नरेश ने अपने राज्य मे अनिवार्य शिक्षा हेतु प्रशंसनीय प्रयास कि
स्थानों पर बालकों की उपस्थिति अनिवार्य कर दी परन्तु इससे सम्पूर्ण
आवश्यकता की पूर्ति न हो सकी और अनिवार्य शिक्षा हेतु आन्दोलन जारी
अंग्रेजी सत्ता इस मांग को ठुकराती रही और सदैव यह दलील देती रही कि
निक तथा आर्थिक आधार पर अनिवार्य शिक्षा सम्भव नहीं है।

अन्त में राष्ट्र स्वतन्त्र हुआ और अनिवार्य शिक्षा को वास्तविक रूप
करने के लिए भारतीय संविधान की धारा 45 मे यह स्पष्ट किया गया कि
लागू होने से दस वर्षों में चौदह वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए निःशुल्
अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जायेगी ।[1] परन्तु यह प्रतिज्ञा केवल मात्र
ही रही और इस दृष्टि से अभी तक असफल प्रयास ही रहे । कुछ राज्यों जैसे
मध्यप्रदेश, आसाम, मैसूर, गुजरात, आन्ध्र प्रदेश आदि ने अनिवार्य शिक्षा वि
पास कर दिये हैं । अन्य राज्यों में अभी तक प्रयास जारी है परन्तु अनिवार्य
को लागू करने में असमर्थ रहे ।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि सरकार ने इस ओर काफी ध्यान दिया
अनेकों प्रयास किये परन्तु आर्थिक अड़चनों के कारण तथा दो युद्धों (चीन
पाकिस्तान) के कारण हमें सफलता प्राप्त नहीं हो पाई है। जब तक हम सम्पूर्ण
में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य रूप नहीं देंगे तब तक हम शैक्षिक उद्देश्यों की
नहीं कर पायेंगे । प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाकर ही हम देश में समृद्धि
खुशहाली ला सकते हैं। अभी हमें अपनी अनपढ़ जनता को साक्षर बनाना
साक्षरता के पश्चात् ही गुणात्मक शिक्षा के विषय में सोचा जा सकता है । गो
के शब्दों में जनसाधारण की शिक्षा का मुख्य उद्देश्य निरक्षरता को भारत भूमि
समाप्त करना है, शिक्षा का गुणात्मक रूप भी महत्वशाली है परन्तु यह निरक्षा

1. The state shall endeavour to provide free and comp
... education for all children upto the age of fourteen years with

प्राप्त करने के पश्चात् ही सम्भव है ।[1] परन्तु प्राथमिक शिक्षा के मार्ग में बहुत समस्याएँ हैं और जब तक इन समस्याओं एवं कठिनाइयों को दूर करने का प्रयास किया जायेगा तब तक जनसाधारण के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना असम्भव है ।

2.04 अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की समस्याएँ
Problems of Compulsory Primary Education

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात संविधान निर्माताओं ने यह लक्ष्य निर्धारित किया था कि संविधान लागू होने से दस वर्षों में चौदह वर्ष की आयु के बच्चों के लिये निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जायेगी । क्या कारण है कि हम अभी तक इस लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर पाये हैं ?

इसके बावजूद कि स्कूल जाने वाले छात्रों की संख्या में प्रशंसनीय वृद्धि हुई है परन्तु फिर भी 14 वर्ष तक के बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का प्रावधान जो संवैधानिक आदेश था, उससे हम अभी तक बहुत दूर हैं । इस उद्देश्य की पूर्ति 1981 से पूर्व नहीं की जा सकती ।[2] इसका अर्थ यह हुआ कि वर्तमान आँकड़ों के आधार पर हम अपने उद्देश्यों की पूर्ति में कम से कम 20 वर्ष पिछड़ गए हैं—परन्तु ऐसा क्यों ?

इस प्रश्न का उत्तर शिक्षा आयोग (1964–66) ने देने का प्रयास किया है और इस संदर्भ में कुछ वास्तविक समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि अनेकों कठिनाइयों के कारण जैसे वांछित स्रोतों की कमी, जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि, लड़कियों की शिक्षा के प्रति उपेक्षित रुख, पिछड़ी हुई जातियों के बच्चों की अत्यधिक संख्या, गरीबी और माता पिता की निरक्षरता के कारण प्राथमिक शाला के विकास में तथा संवैधानिक नीति निर्देशक तत्व द्वारा निर्धारित लक्ष्य पूर्ण करने में असमर्थ रहे हैं ।[3]

---

1 'The primary purpose to mass education is to banish illiteracy from the land, the quality of education is a matter of importance that comes, only after illiteracy has been banished.'

—*Gokhale's Speech*, 1920

2. [illegible] going to s [illegible] directive of [illegible] age of 14 [illegible]

Fourth Five Year Plan, A Draft Outline, p. 313

3 But in view of the immense difficulties involved such as lack of adequate resources, tremendous increase in population, resis-

इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस लक्ष्य की प्राप्ति हमें शीघ्रातिशीघ्र करनी चाहिए क्योंकि यदि हम सफलता चाहते हैं और देश को प्रगति के पथ पर चलाना चाहते हैं तो यह नितान्त आवश्यक है कि हम संविधान में निहित लक्ष्य को शीघ्र पूर्ण करें। आयोग[1] ने इस लक्ष्य के प्रति हमदर्दी प्रदर्शित करते हुए कहा है कि इसके प्रति हमें पूर्ण सद्भावना है और हमारा विश्वास है कि निःशुल्क और सभी के लिए शिक्षा का प्रावधान सर्वश्रेष्ठ शैक्षिक उद्देश्य है। केवलमात्र सामाजिक न्याय और प्रजातन्त्र के कारण ही नहीं बल्कि श्रमिक की क्षमता तथा राष्ट्रीय उत्पादकता की वृद्धि के लिए यह आवश्यक है।'

इससे यह स्पष्ट होता है कि देश के हित के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि प्राथमिक शिक्षा के अवसर प्रत्येक बालक को प्रदान किये जायें। इसी में राष्ट्र की उन्नति निहित है। इन समस्त तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य रूप प्रदान करने के क्षेत्र में अनेकों समस्याएँ सम्मुख आईं और कुछ समस्याएँ अब भी अपने विराट रूप में प्रस्तुत हैं। प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य रूप प्रदान करने में निम्नलिखित समस्याएँ एवं कठिनाइयाँ हैं—

(1) शैक्षिक सुविधाओं में असमानता
Inequality of Educational Opportunities

चतुर्थ राष्ट्रीय गोष्ठी[2], पुरी में अनिवार्य शिक्षा के प्रसार पर विचार किया गया। गोष्ठी के सदस्यों का मत था कि शैक्षिक सुविधा की असमानता के कारण प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य रूप प्रदान नहीं किया जा सकता। कुछ राज्यों में तो इस क्षेत्र में इतनी कम प्रगति हुई है कि वह राष्ट्रीय लक्ष्यों को देखते हुए बहुत ही

---

tances to the education of girls, large numbers of children of the backward classes, general poverty of the people and the illiteracy and apathy of parents, it was not possible to make adequate progress in primary education and the constitutional directive has remained unfulfiled.

Report of the Education Commission, 1964-66, Minis ry of Education, Govt of India, 1966, p. 151

1. We are in sympathy with this demand and we believe

Ibid, p. 151

mpulsory Primar

। जिन राज्यो मे अनिवार्य शिक्षा के लिए अनेकों वर्षों से प्रयास हो रहे हैं वहाँ
ाओं की सख्या मे काफी कमी है। इसका प्रमुख कारण यही है कि हमारे देश
क सुविधाओं मे समानता नहीं है।

शैक्षिक सुविधा की असमानताओं के कारण भारत के विभिन्न राज्यों मे
ार्य शिक्षा की स्थिति भिन्न है। तालिका न० 2 2 से यह स्पष्ट हो जाता है
ज्यों मे अनिवार्य शिक्षा की स्थिति मे काफी विभिन्नता है। बालिकाओं की
स्थिति से तो यह और भी स्पष्ट हो जाता है कि शैक्षिक सुविधाओं की
नता के कारण विभिन्न राज्यों की स्थिति मे कितना अन्तर है। मुख्य रूप
इन कारणों को निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत कर सकते हैं—

तालिका न० 2.2

6 से 11 वर्ष के पाठशाला में पढ़ने वाले बालकों की

प्रतिशत संख्या

राज्य	बालक	बालिकाएं	कुल प्रतिशत
ाम	73 6	45 6	60·5
प्रदेश	76·4	41·2	58 8
ना	43 9	16 1	36 2
प्रदेश	51 5	13 6	33·3
ा	100 0	91 0	95 5
स्थान	38 5	9 3	24 5
कश्मीर	41·2	8 9	25·7
ब	74·6	32·4	55·1
प्रदेश	67 8	16 6	42 7
ाचल प्रदेश	77·7	14·1	47·2
मान निकोबार	48·6	23 6	36·4
र	80·6	40 4	62 9
श्चमी बगाल	95 1	48·8	72·2
ुरा	97 8	41·2	70·5
णपुर	97·0	82·0	89·6
ली	85 1	61.0	73·5
हार	55·8	11·9	34 0
ा	15·8	2·1	9 5
ाम	88 1	54·4	71·3
ाराष्ट्र	84 0	50·0	67·5
रत	69 0	33·0	51·0

* आर्थिक सुविधाओं में असमानता
Inequality in Economic Opportunities

हमारे देश में सभी राज्यों के अन्तर्गत आर्थिक सुविधा समान नहीं है। कुछ राज्य आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हैं जबकि कुछ राज्य आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। इसके अतिरिक्त कुछ राज्यों में शिक्षा सम्बन्धी योजनाएँ भिन्न हैं।

** मनोवैज्ञानिक कारण
Psychological Causes

हमारे देश में अब भी इस प्रकार की जातियां हैं जो अपने लड़के लड़कियों को स्कूल भेजना नहीं चाहते। कहीं पर पर्दा प्रथा इतनी अधिक है कि लड़कियों को घर के बाहर भी नहीं निकलने दिया जाता है। कुछ आदिवासियों की परम्पराएँ बिल्कुल पृथक हैं और वे अपने लड़कों को निःशुल्क शिक्षा भी दिलवाना नहीं चाहिए।

** सामाजिक विघटन
Social Disintegration

अनिवार्य शिक्षा के क्षेत्र में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि हमारी सामाजिक व्यवस्था का विघटन हो चुका है। आज हमारा समाज अनेकों वर्गों में विभाजित है जैसे पिछड़ी हुई जातियाँ, अनुसूचित जातियाँ, निम्नवर्ग, उच्चवर्ग आदि। इस प्रकार के सामाजिक विघटन में सबको समान सुविधाएँ प्राप्त नहीं हो पाती जिससे वर्गों की खाई प्रतिदिन फैलती जा रही है।

उपरोक्त समस्याओं के हल की आवश्यकता है। यदि हम अनिवार्य शिक्षा करना चाहते हैं तो यह नितान्त आवश्यक है कि उपरोक्त असमानताओं को समाप्त किया जाये। जिन राज्यों की आर्थिक दशा ठीक नहीं है और जो शिक्षा पर अधिक व्यय करने में असमर्थ हैं, वहाँ केन्द्रीय सरकार अधिक से अधिक सहायता प्रदान करे जिससे सम्पूर्ण भारत के नागरिक किसी राज्य विशेष की आर्थिक कठिनाई के कारण इस अधिकार से वंचित न रह सकें। जिन जातियों अथवा सामाजिक व्यवस्थाओं में लड़कियों की शिक्षा को ठीक नहीं समझा जाता, वहाँ उन्हें वस्तुस्थिति की वास्तविकता से परिचित कराना नितान्त आवश्यक है। इसका हल थोड़े समय में नहीं होगा परन्तु परिवर्तित सामाजिक व्यवस्था तथा राज्य सरकारों द्वारा प्रयत्न इस क्षेत्र में शनैः-शनैः प्रगति प्राप्त कर सकती है।

(2) प्रशासकीय समस्याएँ
Administrative Problems

प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अनेकों प्रशासकीय समस्याएँ हैं जिनके कारण सही अनिवार्य व्यवस्था का पता नहीं चलता। सर्वप्रथम अधिकारियों की समस्या हो

कम है और शालाओं की संख्या अधिक है। इसके अतिरिक्त जहाँ पर प्राथमिक शिक्षा पंचायत समितियों के अधीन है वहाँ तो स्थिति और भी गम्भीर है। स्कूल सरपंचों तथा पंचों के अधीन होने से राजनैतिक दाव पेंचो का अखाड़ा मात्र बन कर रह गये हैं। जाति विशेष के बालकों के साथ अनुचित व्यवहार किया जाता है जिसके कारण अनिवार्य रूप प्राप्त नहीं हो पाता। गाँवो मे अध्यापकों को सरपंचों का दास बनकर रहना पड़ता है, यदि अध्यापक आज्ञा का उल्लंघन करता है तो उसे प्रशासनिक यातनाएँ सहन करनी पड़ती हैं। हमारे कहने का अर्थ यह नहीं कि सभी स्थानों पर इस प्रकार होता होगा परन्तु इतना निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि प्राथमिक शाला को पंचायत समिति में देने के स्थान पर यदि जिला निरीक्षक कार्यालय के अधीन रक्खा जावे तो अधिक उपादेय हो। इसके अतिरिक्त इसमे सबसे बड़ा लाभ यह भी है कि शिक्षा से सम्बन्धित व्यक्ति द्वारा किया गया प्रशासन अनिवार्य शिक्षा की दृष्टि से बिना पढ़े लिखे लोगों के प्रशासन की अपेक्षा अधिक सन्तोष प्रद हो रहेगा। इस क्षेत्र में यदि अनुसन्धान किया जावे तो और भी वस्तुनिष्ठ फलों की प्राप्ति हो सकती है तथा अन्य प्रशासकीय समस्याओं तथा उनके निराकरण के सम्बन्ध मे स्थिति स्पष्ट हो सकती है।

इस समय सम्पूर्ण भारत मे प्राथमिक शिक्षा का प्रशासन मुख्यत तीन प्रकार का है।

(1) वे राज्य निम्नलिखित हैं जहाँ पंचायत राज को लागू नहीं किया है—

(i) जम्मू काश्मीर।

(ii) मैसूर।

(2) वे राज्य निम्नलिखित हैं जहाँ पंचायत राज अधिनियम को लागू तो कर दिया गया है परन्तु शिक्षा को पंचायत राज के अधीन स्थानान्तरित नहीं किया गया है—

(i) केरल

(ii) पश्चिमी बंगाल

(iii) आसाम

(iv) मध्य प्रदेश

(v) बिहार

(3) वे राज्य निम्नलिखित हैं जहाँ पंचायत राज अधिनियम को लागू करके शिक्षा को पंचायत राज में स्थानान्तरित कर दिया गया है—

(i) उत्तर प्रदेश

(ii) राजस्थान

रे-धीरे यह समस्या दूर हो सकती है और अगले 5-10 वर्षों में यह समस्या र्णतया दूर हो सकती है।

(4) अध्यापकों की समस्या
(Problem of Teachers)

अध्यापकों की समस्या को हम निम्नलिखित भागों में विभाजित कर सकते हैं:—

तालिका नं० 2.4
प्राथमिक स्तर के अध्यापकों की शिक्षा

निम्नतर प्राथमिक शालाएँ			उच्चतर प्राथमिक शालाएँ		
स्नातक और अधिक	सैकण्डरी अथवा स्नातक से कम	सैकण्डरी से कम	स्नातक और अधिक	सैकण्डरी अथवा स्नातक से कम	सैकण्डरी से कम
1950-51 पुरुष 898 (0 2)	14,730 (9 8)	410,009 (90 0)	1950-51 पुरुष 3,920 (6 4)	31,267 (43 1)	37,422 (51·5)
स्त्री 410 0·5	9,670 11·8	72,201 87 7	स्त्री 887 (6 9)	4,323 (33 5,	7,677 (59 6)
कुल योग 1308 (1 3)	34,400 (10 1)	482,210 (89·6)	कुल योग 4,807 (5 6)	35 590 (41 6)	45,099 (52·8)
[illegible]	430,650	412,260 (48 5)	1965-66 पु० 23,600	212,206 (55 1)	144,300 (38·0)

(i) अध्यापकों के प्रशिक्षण की समस्या
Problem of Teachers' Training

बहुत से राज्यों में अप्रशिक्षित अध्यापकों की अधिकता है। जब तक प्रशिक्षित अध्यापकों की व्यवस्था नहीं होगी तब तक न तो शिक्षा का स्तर ही ऊप
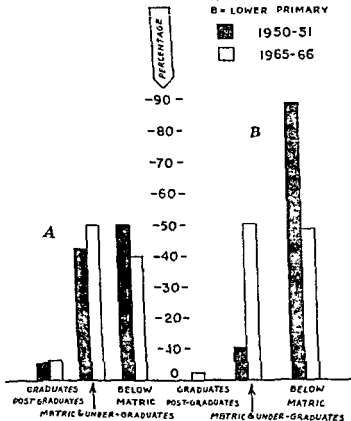
उठ सकता है और न प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्यता ही प्रदान की जा सकती है

प्रयास करें और माता-पिताओं को प्रेरित करें। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि वर्ष में एक बार अध्यापक अभिभावक सम्मेलन हो और जो माता-पिता अपने बालकों के शैक्षिक विकास में रुचि नहीं रखते उन्हें इसके प्रति सचेत किया जावे।

तालिका नं० 2.5

राज्य	अध्यापकों की कुल संख्या एवम् प्रतिशत	
	उच्चतर प्राथमिक स्तर	निम्नतर प्राथमिक स्तर
1. आंध्र प्रदेश	15,625 (80 5)	86,501 (90 0)
2. आसाम	14,810 (22 4)	37,500 (55 0)
3. बिहार	32,918 (72·5)	99,663 (82 7)
4 गुजरात	83,650 (61 4)	उच्चतर प्राथमिक स्तर में सम्मिलित
5. जम्मू काश्मीर	3,467 (54 2)	48,74 (54·0)
6. केरेला	30,406 (82 7)	59,703 (93 0)
7. मध्य प्रदेश	27,961 (72 0)	67,0096 (80 0)
8. मद्रास	59,440 (93 1)	76 638 (96·7)
9. महाराष्ट्र	151,500 (74·8)	उच्चतर प्राथमिक स्तर में सम्मिलित
10. मैसूर	91,952 (59 9)	उच्चतर प्राथमिक स्तर में सम्मिलित
11. नागालैंड	745 (8·7)	1,764 (20·3)
12. उड़ीसा	10,322 (31·0)	48,339 (60 0)
13. पंजाब	14,011 (88 0)	34,863 (89 0)
14. राजस्थान	18,352 (71·0)	41,000 (75 0)
15. उत्तर प्रदेश	46,819 (87·1)	162,472 (73·5)
16. पश्चिमी बंगाल	12,041 (16·3)	98,306 (38·3)

ए यह नितान्त आवश्यक है कि प्राथमिक शालाओं के अन्तर्गत प्रशिक्षित
रों की व्यवस्था हो। यह तभी सम्भव है जबकि प्रशिक्षण विद्यालय अधिक
र खोले जावें। प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए न्यूनतम योग्यता मैट्रिक/हायर
ो रखी जावे। कुछ राज्यों में अभी तक भी यह स्थिति है जहाँ मैट्रिक से
या शिक्षित पास अध्यापक पढ़ा रहे हैं। प्राप्त आंकड़ों के आधार पर
सं० 2.4 से यह स्पष्ट होता है कि प्राथमिक शालाओं के अध्यापकों में
अध्यापक मैट्रिक पास भी नहीं हैं, इसके अतिरिक्त कुछ अध्यापक स्नातक
ाप्त भी हैं परन्तु इस प्रकार के अध्यापकों की संख्या बहुत कम है। जो
: सैकेण्डरी पास नहीं हैं उन्हें शीघ्र ही से शीघ्र हायर सैकेण्डरी पास करने
प्रेरित किया जावे।

जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं कि प्राथमिक शालाओं में अप्रशिक्षित अध्या-
ी अधिकता है। इसके लिए यह नितान्त आवश्यक है कि अप्रशिक्षित अध्या-
प्रशिक्षित किया जावे। तालिका 2.5 से यह स्पष्ट होता है कि बहुत से
में अभी तक प्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या बहुत कम है जिसमें आसाम,
उड़ीसा और पश्चिमी बंगाल विशेष उल्लेखनीय हैं। यदि विभिन्न राज्यों
क्षित प्राथमिक अध्यापकों की संख्या एवं प्रतिशत की दृष्टि से देखा जावे तो
धिक अप्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या 21-25 वर्ष के अध्यापकों की मिलती
मनोवैज्ञानिक दृष्टि से प्राथमिक शिक्षा के विस्तार में अहितकर है। तालिका
में विभिन्न आयु स्तरों पर अप्रशिक्षित प्राथमिक अध्यापकों की प्रतिशत

कोठारी आयोग ने इस समस्या के समाधान के लिए बताया है कि उन अध्यापकों के लिए जो आदिवासियों को शिक्षा प्रदान कर सकें, भवन एवं अधिक वेतन की व्यवस्था करनी चाहिए। इन अध्यापकों को उस आदिवासी भाषा और संस्कृति का ज्ञान होना चाहिए तथा उनके प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इसके लिए विशेष स्थान होना चाहिए। इन पाठशालाओं के कार्यक्रमों में भी आदिवासी जीवन की झलक होनी चाहिए।[1] यदि आदिवासियों के लिए उचित अध्यापकों की व्यवस्था हो जाये तो निश्चित रूप से अनिवार्य शिक्षा की कमी में एक बहुत बड़ी पूर्ति हो सकती है।

(iii) बालिकाओं के लिए अध्यापकों की समस्या
Problems of Lady Teachers for Girls

शिक्षा को अनिवार्य रूप प्रदान करने में एक अन्य समस्या स्त्री शिक्षकों का अभाव भी है। हमारा देश रूढ़िवादी देश है और इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि शिक्षा कार्यक्रमों को इस प्रकार का बनाया जाये जिसमे सामाजिक मूल्यों को

तालिका नं० 27
महिला अध्यापकों की प्रतिशत संख्या

राज्य	पुरुषों की तुलना मे महिला अध्यापकों की प्रतिशत संख्या
केरल	45
मद्रास	33
मैसूर	25
पश्चिमी बंगाल	14
राजस्थान	10
उड़ीसा	5

ठेस न पहुँचे। हमारे देश मे इस प्रकार के माता-पिताओं का अभाव नहीं है जो अपनी बालिकाओं को लड़कों के स्कूल मे पढ़ने के लिए भेजना नहीं चाहते। इसके

1. The obvious remedy seems to lie in providing bette[r] scales to pay and adequate housing facilities for those who ar[e] prepared to take up the task of teaching in tribal areas The tea[-] cher must know the tribal language and culture, and a study o[f] these should be included in their training programmes. The pro[-] gramme of the school will have to be redesigned to suit tribal life

Report of the Education Commission, p. 16[4]

ii) आदिवासियों के लिए अध्यापकों की समस्या
Problems of Teachers for Tribals

प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने के लिए एक समस्या आदिवासियों के बालकों को शिक्षा प्रदान करने की है। इस समस्या का मूल कारण अध्यापकों की कमी है। प्रत्येक अध्यापक आदिवासियों को शिक्षा प्रदान नहीं कर सकता, इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि उनकी भाषा को तथा संस्कृति को समझा जावे।

तालिका नं० 2.6
विभिन्न आयु स्तरों में अप्रशिक्षित अध्यापक (1985)

आयु	अप्रशिक्षित अध्यापकों का प्रतिशत			
	निम्नतर प्राथमिक शालाएँ		उच्चतर प्राथमिक शालाएँ	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
20 से नीचे	8·9	11·9	11·0	9·0
21—25	40·7	31·7	30·1	30·3
26—30	23·2	23·8	26·9	27·6
31—35	11·6	13·7	13·7	15·3
36—40	6·5	7·9	8·9	8·6
41—45	3·7	5·0	4·0	4·5
46—50	2·4	3·1	2·5	2·7
51—55	1·9	2·2	1·9	1·2
56—60	0·9	0·7	0·9	0·6
60 से ऊपर	0·2	....	0·1	0·2
कुल प्रतिशत	100·0	100·0	100·0	100·0

कोठारी आयोग ने इस समस्या के समाधान के लिए बताया है कि उन अध्यापकों के लिए जो आदिवासियों को शिक्षा प्रदान कर सकें, भवन एवं अधिक वेतन की व्यवस्था करनी चाहिए। इन अध्यापकों को उस आदिवासी भाषा और संस्कृति का ज्ञान होना चाहिए तथा उनके प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इसके लिए विशेष स्थान होना चाहिए। इन पाठशालाओं के कार्यक्रमों में भी आदिवासी जीवन की झलक होनी चाहिए।[1] यदि आदिवासियों के लिए उचित अध्यापकों की व्यवस्था हो जाये तो निश्चित रूप से अनिवार्य शिक्षा की कमी में एक बहुत बड़ी पूर्ति हो सकती है।

(iii) बालिकाओं के लिए अध्यापकों की समस्या
Problems of Lady Teachers for Girls

शिक्षा को अनिवार्य रूप प्रदान करने में एक अन्य समस्या स्त्री शिक्षकों का अभाव भी है। हमारा देश रूढ़िवादी देश है और इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि शिक्षा कार्यक्रमों को इस प्रकार का बनाया जाये जिससे सामाजिक मूल्यों को

तालिका सं० 27
महिला अध्यापकों की प्रतिशत संख्या

राज्य	पुरुषों की तुलना में महिला अध्यापकों की प्रतिशत संख्या
केरल	46
मद्रास	33
मैसूर	25
पश्चिमी बंगाल	14
राजस्थान	10
उड़ीसा	6

ठेस न पहुँचे। हमारे देश में इस प्रकार के माता-पिताओं का अभाव नहीं है जो अपनी बालिकाओं को लड़कों के स्कूल में पढ़ने के लिए भेजना नहीं चाहते। इससे

1. The obvious remedy seems to lie in providing better scales to pay and adequate housing facilities for those who are prepared to take up the task of teaching in tribal areas. The teacher must know the tribal language and culture, and a study of those should be included in their training programmes. The programme of the school will have to be redesigned to suit tribal life.

Report of the Education Commission, p. 16

...की विद्यालय खोलना सम्भव नहीं है, जहाँ वि
अध्यापिकाओं का अभाव है इसका एक प्रमुख कारण यह है कि स्त्री शि
पनी कुछ सीमाएँ होती हैं। यही कारण है कि अध्यापिकाओं की स
कों की तुलना मे बहुत कम है जब कि सत्यता यह है कि प्राथमिक स्तर
भव महिला शिक्षक ही होनी चाहिए क्योंकि इस स्तर पर अध्यापक की तुल
पिका अधिक प्रभावशाली सिद्ध हो सकती है। इसीलिए शैक्षिक दृष्टि
ध्यापकों का प्रबन्धान हो सके तो अधिक उत्तम हो परन्तु अध्यापिकाओं
बहुत कम है जैसा कि तालिका न० 2 7 मे स्पष्ट किया गया है। तालिका
मात्र छः राज्यो के आकडे ही प्रदर्शित किये गये हैं और इसका एक मात्र
मे प्रगतिशील राज्य तथा पिछड़े राज्य की प्रतिशत संख्या प्रदर्शित करना
आधार पर हम कह सकते हैं कि इस क्षेत्र में अभी बहुत कुछ करना शेष
स्वतन्त्रता के पश्चात् हमने प्रगति की है तथापि अनिवार्य शिक्षा के
पूर्ण करने मे अभी बहुत कुछ करना शेष है।

(5) लड़कियों की शिक्षा

Education of Girls

की अनिवार्यता की दृष्टि से एक प्रमुख कठिनाई लड़कियों की शिक्षा
। जैसा कि हम पूर्व बिन्दु मे स्पष्ट कर चुके हैं कि हमारे देश में
ार के हिन्दू और मुसलमान परिवारों की अधिकता है जो अपनी
दान करने के पक्ष मे नहीं हैं। तालिका न० 2.8 से यह स्पष्ट है
मिक स्तर पर लड़कों की शिक्षा की समस्या का प्रायः समाधान
लड़कियों की समस्या का समाधान निकट भविष्य मे सम्भव नहीं
ाथमिक स्तर पर तो लड़कियों की शिक्षा सम्बन्धी समस्या और भी

यह कहना उचित होगा कि संवैधानिक निर्देशक की पूर्ति हेतु
करना अनिवार्य है। स्त्री शिक्षा की राष्ट्रीय समिति (1958-
का सावधानी पूर्वक परीक्षण किया और निम्नलिखित सुझाव

... It may well be said that the problem of ful-
...tional Directive is essentially the problem of
...problem was carefully examined by the National
...en's Education (1958-59)......... In particular
...phasize its proposals regarding:—

तालिका नं० 2·8[1]
प्राथमिक स्तर पर शिक्षा पा रहे लड़कों और लड़कियों की तुलना

स्तर/वर्ष	000' में प्रवेश		
	लड़के	लड़कियाँ	योग
कक्षा 1 से 4 तक			
1950—51	10,102	3,549	13,651
	(4 1)	(7.2)	(4 9)
1955—56	12,369	5 011	17,380
	(6 8)	(9.3)	(7·5)
1960—61	16,170	7,826	24,996
	(14·3)	(9.9)	(8·2)
1965—66	24,536	12,554	37 090
	(7·8)	(10.2)	(8·1)
1970—71	34,447	26,850	61,297
	(2·0)	(10 4)	(5·5)
1975—76	38,066	33,484	71,550
	(1·6)	(2 8)	(2 2)
1980—81	41,173	38,515	79,688
1985—86	39,509	36,730	76,239
कक्षा 5 से 7 तक			
1950—51	2,669	559	3,228
	(6·5)	(10·8)	(7·6)
1955—56	3,659	933	4,592
	(8 8)	(15·0)	(10·2)
1960—61	5,587	1,876	7,463
	(9·9)	(13·8)	(11·0)
1965—66	8,962	3,587	12,549
	(10 0)	(15·6)	(11·1)
1970—71	14,433	6,785	21,218
	(6 5)	(13·2)	(8·8)
1975—76	19,774	12,620	32,394
	(3 8)	(7 9)	(5·5)
1980—81	23,867	18,456	42,323
	(1 1)	(5 0)	(2 9)
1985—86	25,214	23,600	48 714

1. *Report of the Education Commission*, 1964-66, p. 161

* बालिका शिक्षा के विषय में परम्परागत धारणा को समाप्त कर
  शिक्षित करना;
* अध्यापिकाओं की नियुक्ति;
* मिश्रित प्राथमिक शालाओं को लोकप्रिय बनाना, और जहाँ पर स
  के लिए पृथक शाला खुलना सम्भव है वहाँ उच्चतर प्राथमिक स्त
  शालाओं को खुलाने का प्रावधान हो;
* पुस्तकों, अन्य सामग्री और आवश्यकता पड़ने पर वस्त्रों की
  व्यवस्था, और
* 11 से 13 वर्ष की उन लड़कियों के लिए, जो पूरे समय शाला
  पढ़ सकें, उनके लिए कम समय की शिक्षा व्यवस्था का प्रावधान।

उपरोक्त समाधानों को क्रियान्वित करना नितान्त आवश्यक है। को
आयोग ने इन सभी समाधानों से सहमति प्रगट की है। प्राथमिक शिक्षा को
वार्य बनाने की दृष्टि से यह नितान्त आवश्यक है कि उपरोक्त सुझावों को
मे लड़कियों की शिक्षा के प्रति अधिक जागरूकता आये। पहली से पाँचवी कक्षा
24·6% से लड़कियों की प्रतिशत संख्या बढ़कर 53·2% हो गई है, छठी से आ
कक्षा में 4·5% से 16·7% हो गई है।[1] यद्यपि प्रगति हुई है तथापि प्रगति
गति इतनी धीमी है कि निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति निकट भविष्य मे सम्भव नहीं

---

* *educating public opinion to overcome traditional prejudic against girls education;*
* appointing women teachers;
* popularising mixed primary schools, and wherever poss ble and demanded, opening separate schools for girls higher primary stage.
* providing free books and writing materials and, wher needed, even clothing, and
* providing part time education for girls in the age—grou 11—13 who cannot attend schools on a wholetime bas because they are required to work at home.

Ibid, p. 16

1. 'Girl students as a percentage of their population in the relevant age group increased from 24·6 per cent to 56 2 per cen in class I—V, 4·5 per cent to 16·7 per cent in class VI—VIII.......'

Fourth Five Year Plan, A Draft Outline, Govt. of India, Planning Commission.

(6) अपव्यय और अवरोधन
Wastage and Stagnation

यद्यपि हम इस मुख्य बिन्दु पर किसी अगले अध्याय में विस्तृत रूप से विचार करेंगे तथापि यहाँ प्रसंगवश इतना ही स्पष्ट करना काफी है कि अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के मार्ग में अपव्यय और अवरोधन गम्भीर बाधा के रूप में हैं। प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर जो अपव्यय और अवरोधन है वह शिक्षा के अनिवार्य स्वरूप को क्षतिग्रस्त करने में सफल रहा है। 1911-12 में 100 छात्रों में से केवल 20 छात्र ही ऐसे थे जो पहली से चौथी कक्षा में जाते थे। 1946-47 में यह अनुपात 39 था। इससे प्रगति तो स्पष्ट होती है परन्तु बहुत कम स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात्, जहाँ दशा में सुधार होना था वहाँ उसे स्थान पर बिगाड़ हुआ है क्योंकि 1965-66 में 100 बालकों में से चौथी कक्षा में जाने वाले बालकों की संख्या 37 थी। इससे स्पष्ट है कि जितनी तेजी से शिक्षा का विस्तार हुआ है उससे कुछ अपव्यय और अवरोधन भी बढ़ा है।[1] इन आँकड़ों से यह ज्ञात होता है कि प्राथमिक शिक्षा में ऐसे बालकों की प्रतिशत संख्या अधिक है जो चौथी कक्षा अथवा इससे पूर्व ही शालाओं को छोड़ देते हैं। इसके दो ही कारण हो सकते हैं, या तो बालक को चौथी कक्षा उत्तीर्ण करने से पूर्व ही हटा लेना अथवा बालक का एक वर्ष से अधिक किसी कक्षा में रहना। ये दोनों ही कारण प्राथमिक शिक्षा के मार्ग में बाधाएँ हैं, अतः यह बहुत आवश्यक है कि इन बाधाओं को दूर किया जाये जिससे अनिवार्य स्वरूप को अधिकाधिक प्रश्रय प्राप्त हो।

(7) अविकसित क्षेत्रों की समस्या
Problem of Under developed Areas

यद्यपि तीन पंचवर्षीय योजनाओं में शैक्षिक अवसरों की समानता का प्रयास किया गया है तथापि अभी तक हम इस उद्देश्य की प्राप्ति नहीं कर पाये हैं। हमारे देश में अभी तक इस प्रकार के अविकसित क्षेत्र हैं जो अनिवार्य शिक्षा की दृष्टि से उपेक्षित हैं। प्राथमिक शिक्षा के विकास को केवलमात्र राज्यों की पृष्ठभूमि में देखने से सन्तोष कर लेना ही उचित नहीं है; हमें जिलों, तहसीलों, नगरों और

---

1. 'As against 100 children enrolled in class I, there were only 20 in class IV in 1911-12 In 1946-47, this proportion increased, to 39. This shows some progress, though a slow one. In the post-independence period, however, the position has not only not improved but has deteriorated to some extent, because in 1965-66 there were only 37 students in class IV as against 100 in class I. The implication is obvious : the rapid expansion that has taken placed has led to a, slight increase in wastage and stagnation;

Op. Cit, p. 154.

ग्रामों की वास्तविक स्थिति को देखना है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमने नगरों में शैक्षिक प्रसार हेतु अनेकों प्रयास किये हैं परन्तु यदि ग्रामीण क्षेत्रों को देखें तो निराशा के दर्शन होते हैं।

इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में शैक्षिक अवसरों की असमानता लक्षित होती है। गरीब और अमीर परिवारों में शैक्षिक उपलब्धि की दृष्टि से भारी भेद है। इसके अतिरिक्त अनुसूचित जातियों, अनुसूचित वर्गों, पिछड़ी जातियों, आदि के बालकों को प्राथमिक शिक्षा के वांछित अवसर प्रदान करना है। जब तक हम शैक्षिक दृष्टि से अविकसित क्षेत्रों को समान शैक्षिक सुविधाएँ प्रदान नहीं करेंगे तब तक अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का प्रावधान नहीं हो सकेगा। इसके लिए आवश्यक है कि राज्य सरकारें जिला स्तर पर विस्तृत प्राथमिक शिक्षा योजना बनायें और जो क्षेत्र अभी तक अविकसित रहे हैं उनके लिए विशेष सुविधायें प्रदान की जायें।

(8) अन्य समस्याएँ

Other Problems

अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अनेक समस्याएँ और भी हैं जैसे माता पिता का निरक्षर होना, सामाजिक कुरीतियाँ, भवन की समस्या, सम्पूर्ण औजारों की उपलब्धि न होना आदि। इन सभी समस्याओं को दूर करना नितान्त आवश्यक है। कोठारी आयोग ने आशा व्यक्त की है कि 1986 तक प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य कर देना नितान्त आवश्यक है। हमें आशा है कि यदि परिस्थितियाँ अनुकूल रहीं तो निश्चित ही इस क्षेत्र में आशातीत प्रगति होगी। सफल प्रजातन्त्रात्मक शासन पद्धति के लिए नितान्त आवश्यक है कि हमारे देश का प्रत्येक नागरिक शिक्षित हो। यह तभी सम्भव है जबकि अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में आई बाधाओं एवं समस्याओं को दूर किया जा सके।

ग्रन्थ - सूची

Bibliography

1. Boyd, William.
   The History of Western Education, London, 1952

2. Debirsse, Jean
   Compulsory Education in France, 1951

3. Desai, D. M.
   Universal, *Compulsory and Free Primary Education in India*, Indian Institute of Bombay, 1953.

4. Desai, D M
   A Critical Study of Compulsory Primary Education Acts in India, Baroda University, 1956.

5. *Education in India*, Ministry of Education, 1959.

6. *Education in the States*, A Statistical Survey (1956-57), Ministry of Education, 1959.

7. Mukerji, S. N.
   Education in India, Today and Tomorrow, Acharya Book Depot, Baroda, 1961.

8. *Report of the National Committee on Women Education*, Ministry of Education. 1959.

9. *Report of the Education Commission*, 1964 – 66, Ministry of Education, Govt. of India, 1966.

10. R. V. Parulker,
    Mass Education in India, Local Self Govt. Institute Bombay, 1934.

11. *Second Five Year Plan*, Planning Commission.

12. *Third Five Year Plan*, Planning Commission.

13. *Fourth Five Year Plan*, A Draft Outline, Planning Commission.

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. *Trace the development of Primary Education in India for the last fifty years. Also suggest measures to remove the difficulties which are being experienced in establishing Compulsory Primary Education in India.*

Nagpur 1952

2. *Trace the history of Primary Education in India from 1902 to 1921.*

Banaras 1952, Nagpur 1950

3. *What are the main problems of Compulsory Education in India? Give your suggestions for solving them.*

B. T. 1951

4. *Give a historical review of the attempts made for Compulsory Primary Education in India. How far have these attempts been successful.*

Agra 1953

5. *Mention the difficulties that have been experienced in establishing a free and compulsory system of education in India and the attempts made to over come them.*

L. T. 1952

6. *'Man is more important than materials.' Enumerate the deficiences in ordinary primary schools in Rajasthan in point of materials, and show how a good Inspector of schools can take up a school improvement programme effectively by:—*

(a) mobilising the community resources, (b) inspiring the school teacher, (c) organising an efficient supervisory procedure.

Rajasthan, 1954.

7. *Formulate the two most fundamental problems in the feld of primary education in India, analyse them, and suggest measures for solving them*

Rajasthan, 1965

8. *Name the problems of (a) Expansion and (b) Qualitative improvement, in Elementary, Education in India. Discuss one of the aforesaid problem areas giving suggestions for improvement.*

भारत में प्राथमिक शिक्षा की (अ) प्रसारात्मक और (ब) गुणात्मक समस्याएँ कौन सी हैं ? उपरोक्त समस्या क्षेत्रों में से किसी एक की समस्याओं की सुधारात्मक आलोचना कीजिये ।

अध्याय तीन

Chapter Third

प्राथमिक शिक्षा का विस्तार एवम् गुणात्मक उन्नति

Expansion and Qualitative Advancement of Primary Education

अध्ययन बिन्दु

Learning Points

* 3 01 पाठ्यक्रम में सुधार
  (Improvement in Curriculum)
  1. लोअर प्राथमिक स्तर (कक्षा एक से चार)
  2. उच्चतर प्राथमिक स्तर (कक्षा पाँच से आठ)
* 3.02 अध्यापकों के शैक्षिक स्तर मे सुधार
  (Improvement in Teachers, Educational Standard)
  1. प्रशिक्षण की सुविधाओं का विस्तार
  2. पत्राचार द्वारा प्रशिक्षण
  3. अध्यापकों की न्यूनतम योग्यता
* 3.03 शिक्षा-प्रशासन में सुधार
  (Improvement in Education Administration)
* 3 04 आर्थिक साधनों में सुधार
  (Improvement in Finances)
* 3.05 शिक्षा विकास हेतु कार्यक्रम
  (Programmes for School Improvement)
* 3.06 उपसंहार
  (Conclusion)

प्राथमिक शिक्षा
का
विस्तार एवम् गुणात्मक उन्नति

EXPANSION QUALITATIVE ADVANCEMENT OF PRIMARY EDUCATION

शिक्षा का वास्तविक अर्थ एव उद्देश्य भावी नागरिकों को व्यक्तिगत महत्व, आत्म गौरव एव समाजोपयोगी वांछित क्षमताओं का विकास कर उनमे आत्म-जागृति, आत्म-उन्नति तथा सामाजिकता की भावनाओं को विकसित करना है। "शिक्षा का अर्थ व्यक्तियों को केवल वही बताना नहीं है जिसको वे नही जानते, बल्कि उनको व्यवहार करने की शिक्षा प्रदान करना है जैसा कि वे व्यवहार नहीं करते।"[1] यदि हमें वास्तव मे आज के बालकों और कल के भावी नागरिकों को शिक्षित करना है तथा देश के आर्थिक और सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा उठाना है तो

---

1. "Education does not mean teaching people to know what they do not know; it means teaching them to behave as they do not behave."

—*John Ruskin*

निश्चित ही हमें सुनियोजित प्राथमिक शिक्षा का विस्तार कर सर्वलौकिक गुणात्मक उन्नति प्राप्त करनी होगी।

शैक्षिक विस्तार का अर्थ केवल मात्रा में वृद्धि कर लेना ही नहीं है बल्कि मात्रा में वृद्धि के साथ-साथ गुणात्मक उन्नति करना भी है। अत: स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाईस वर्षों के पश्चात् हमे गम्भीरतापूर्वक यह विचार करना है कि हमारे देश में प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के साथ ही गुणात्मक उन्नति के मार्ग में क्या समस्याएँ हैं जिससे उनका समाधान कर प्राथमिक शिक्षा की योजना को अधिक सफल बनाया जा सके। इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्राथमिक शिक्षा का विस्तार हुआ है परन्तु विस्तार में गुणात्मकता का लोप है। आखिर क्यों? यह एक प्रश्न है जिसे आज के बालक कल व्यस्क होने पर हमसे पूछेंगे। इसीलिए अब समय आ गया है जबकि हम प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के साथ-साथ उसके गुणात्मक पक्ष की ओर भी गम्भीरतापूर्वक विचार करें।

भूतपूर्व केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री श्री एम० सी० छागला ने राज्यों के शिक्षा मन्त्रियों की बैठक में कहा था कि 'हम शिक्षा के क्षेत्र में बहुत विस्तार कर चुके हैं। प्राथमिक शिक्षा में हमने निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति कर ली है। अब समय आ गया है जब हमें एकीकरण और गुण के विषय में सोचना चाहिए और मैं सोचता हूँ कि केन्द्र गुणात्मक उन्नति की पूर्ति हेतु कुछ निश्चित क्षेत्रों को चुने। मैं चाहूँगा कि सम्पूर्ण देश में 'श्रेष्ठता के शिखर' हों जो अन्य शालाओं के लिए प्रकाशस्तम्भ हों और जिनमें समान उच्च स्तर प्राप्त करने की इच्छा हो।'[1] अत: यह नितान्त आवश्यक है कि प्राथमिक शिक्षा का विस्तार गुणात्मक रूप में हो जिसके लिए निम्नलिखित सुधारों की आवश्यकता है.—

3.01 पाठ्यक्रम में सुधार
Improvement in Curriculum

प्राथमिक शालाओं का पाठ्यक्रम आलोचित आवश्यकताओं के प्रतिकूल है जिसमें बालकों की रचनात्मक शक्ति का विकास नहीं होता। यदि हमें प्राथमिक शिक्षा से वांछित उपलब्धियों को प्राप्त करना है तो पाठ्यक्रम में सुधार करना नितान्त आवश्यक है। यदि हमें बेसिक शिक्षा के पाठ्यक्रम को राष्ट्रीय नीति के आधार पर प्राथमिक शिक्षा का आधार बनाना है तो यह आवश्यक है कि हम पुन: सम्पूर्ण

1. 'We have made a tremendous expansion We have passed targets in primary education The time has come when we think of Consolidation and quality and I think that the pick out selected sectors for purposes of improving like to have all over the country 'peaks of excellence' a sort of beacon lights to all other institutions fired attain the same high position.'

M. C. Chagla, 25th April 1964

पाठ्यक्रम को ऐसे व्यापक बेसिक शिक्षा के उद्देश्यों का प्रत्यावर्तन देना चाहिए है। संक्षेप में हम निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार कर सकते हैं—

(1) लोअर प्राथमिक स्तर (कक्षा एक से चार)
Lower Primary Stage (Classes I—IV)

लोअर प्राथमिक स्तर पर एक भाषा का ज्ञान निश्चित रूप से हो जाना चाहिए—चाहे वह मातृ भाषा हो अथवा प्रादेशिक भाषा। वातावरण का ज्ञान भी इस स्तर पर हो जाना आवश्यक है—इस ज्ञान को विज्ञान और सामाजिक अध्ययन की सहायता से कक्षा दो से प्रारम्भ किया जा सकता है। गणित के सामान्य सिद्धान्तों का ज्ञान हो—जिससे बालक भावी जीवन में उसका सदुपयोग कर सके। इस स्तर पर बालक को सृजनात्मक शक्ति का विकास भी होना चाहिए—यह सृजनात्मक क्रियाओं द्वारा सम्भव है। कार्य अनुभव, समाज सेवा और स्वास्थ्य शिक्षा को भी पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाय। कहने का तात्पर्य यह है कि आयोजित सभी प्रारम्भिक विषयों का साधारण ज्ञान व्यावहारिक रूप से हो जाना चाहिए।

(2) उच्चतर प्राथमिक स्तर (कक्षा पाँच से आठ)
Higher Primary Stage (Classes V-VIII)

इस स्तर पर दो भाषाओं का ज्ञान कराया जा सकता है—मातृ भाषा अथवा प्रादेशिक भाषा में से एक दूसरे हिन्दी अथवा अंग्रेजी में से एक। कोठारी आयोग ने तो तीसरी भाषा को भी वैकल्पिक रूप से सिफारिश की है। भाषाओं के ज्ञान के अतिरिक्त गणित, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन जिसमें इतिहास—भूगोल और नागरिक शास्त्र का मिश्रित रूप हो और मानवीय सम्बन्ध और प्रभाव का विशेष रूप से उल्लेख किया जाये। कला, कार्यानुभव और समाज सेवा क्रियात्मक रूप से आवश्यक है। शारीरिक विकास हेतु शारीरिक शिक्षा का आयोजन हो। आध्यात्मिक विकास हेतु नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों से ओत-प्रोत शिक्षा की व्यवस्था हो। कहने का तात्पर्य यह है कि इस स्तर पर मनोवैज्ञानिक आधार स्वरूप बालक का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और नैतिक विकास होना चाहिए तथा पाठ्यक्रम में उन रचनात्मक एवं पुस्तकीय ज्ञान को स्थान दिया जाना चाहिए जिसमें बालक का सर्वाङ्ग विकास सम्भव हो। प्राथमिक शिक्षा की गुणात्मक उन्नति तभी हो सकती है जबकि हम बालक के सर्वाङ्ग विकास को दृष्टिगत रखते हुए शैक्षिक रूप से उद्देश्यों की पूर्ति करने में सफल हो सकें।

3.02 अध्यापकों के शैक्षिक स्तर में सुधार
Improvement in Teachers' Educational Standards

पिछले अध्याय में विस्तृत रूप से चर्चा की

शालाओं के अध्यापकों का शैक्षिक स्तर सन्तोषप्रद नह

प्राथमिक शिक्षा का सुधार करना है तो अध्यापकों के शैक्षिक स्तर पर विशेष ध्यान देना होगा क्योंकि अध्यापक का शैक्षिक व्यक्तित्व बालक को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। अतः यह आवश्यक है कि प्राथमिक शालाओं के अध्यापक स्तरानुसार शिक्षित और प्रशिक्षित हों। परन्तु वस्तु स्थिति बहुत भिन्न है क्योंकि 1950-51 में स्नातक अथवा उच्चतर माध्यमिक परीक्षा पास शिक्षकों की सख्या सम्पूर्ण लोअर प्राथमिक शालाओं के अध्यापकों की पूर्ण सख्या के 10 3 प्रतिशत थी और 1965-66 में यह 61·0 प्रतिशत हो गई। 1950–51 मे उच्चतर प्राथमिक शालाओ में इस प्रकार के अध्यापकों की सख्या 47·2 प्रतिशत थी और 1965-66 में बढ़ कर 60·0 हो गई। उपरोक्त आकडो से ज्ञात होता है कि अध्यापकों के शैक्षिक स्तर मे बहुत धीमी गति से सुधार हुआ है। यदि इसी प्रकार की गति रही तो अगले 20–25 वर्षों के पश्चात ही प्रत्येक प्राथमिक शाला का अध्यापक शैक्षिक दृष्टि से उच्चतर माध्यमिक पास हो सकेगा। यदि इतने समय तक प्रतीक्षा की गई तो देश के भावी भविष्य का निश्चय करना कठिन होगा।

जहाँ तक प्रशिक्षित अध्यापको का प्रश्न है उसमे प्रगति तो अवश्य हुई है परन्तु गुणात्मक दृष्टि से सन्तोषजनक नहीं है। अत आवश्यक है कि प्रत्येक राज्य

ion Commission, 1966, p 82
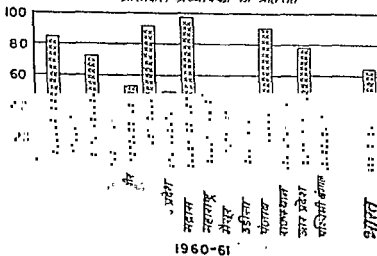
(i) समस्त नई नियुक्तियां केवल उन्हीं अध्यापकों को दी जावें जो दस वर्ष की सामान्य शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। स्त्री शिक्षकों तथा आदिवासी क्षेत्रों के शिक्षकों के लिये यह उस दशा में अपवाद भी हो सकता है यदि योग्य व्यक्ति न मिलें।

(ii) कम शिक्षित अध्यापकों की सहायता के लिये विशेष बल दिया जाये जिससे वे पत्राचार द्वारा अपनी योग्यताओं को बढ़ा सकें। इसके अतिरिक्त उन्हें अध्ययन के लिये अवकाश की व्यवस्था होनी चाहिए।

उपरोक्त सुझाव बहुत महत्वपूर्ण हैं, इनसे वर्तमान प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था तथा भावी व्यवस्था को गुणात्मक योग प्राप्त हो सकेगा।

3 03 शिक्षा-प्रशासन में सुधार
Improvement in Educational Admin stration

प्राथमिक शिक्षा का प्रशासन मुख्यतः तीन एजेंसियों के आधीन है—सरकार, स्थानीय शासन और निजी प्रबन्ध। तालिका नं० 3.1 से यह स्पष्ट होता है कि

तालिका नं० 3.1
विभिन्न प्रबन्धों में प्राथमिक शिक्षा (1960–61)

	शालाओं की संख्या		
	सरकार द्वारा प्रबन्ध	स्थानीय अधिकारियों द्वारा प्रबन्ध	निजी प्रबन्ध
1. लोअर प्राथमिक शालाएँ	72,380 (21·9)%	184,825 (55·9)%	73,194 (22 2)%
2. उच्चतर प्राथमिक शालाएँ	9,895 (19·5)%	26,481 (53 4)%	13,484 (27·1)%

restricted to those who have had at least ten years of general education. Exceptions should be made, if qualified persons are not available, only in the case of women teachers or teachers for tribal areas.

(ii) For greater emphasis should be placed on helping unqualified teachers in service to improve their qualifications by providing correspondence courses and allowing liberal concessions for study leave.

Loc. cit. p. 81

1960-61 में लोग्रर तथा उच्चतर प्राथमिक शालाओं की संख्या विभिन्न प्रबन्धों में भिन्न प्रकार की थी। उस समय लोग्रर प्राथमिक शालाओं की कुल संख्या 330,399 और उच्चतर प्राथमिक शालाओं की 49,6^2 थी जिसमें से स्थानीय प्रबन्ध शालाओं की संख्या सबसे अधिक है और सरकार एवम् निजी प्रबन्धों में विशेष अन्तर नहीं है परन्तु फिर भी निजी शालाओं की संख्या कुछ अधिक है। जिसका स्पष्ट अर्थ यह है कि सरकार द्वारा शिक्षा का प्रबन्ध अपेक्षाकृत कम है और स्थानीय एवम् निजी प्रबन्धों की अधिकता है। इसमें सन्देह नहीं कि केन्द्रीय सरकार प्रत्यक्ष रूप से प्राथमिक शिक्षा की जिम्मेदार नहीं पर तु प्रान्तीय सरकार को मार्ग-दर्शन करना उसी का उत्तरदायित्व है क्योंकि केन्द्रीय सरकार ही इस प्रकार की कड़ी है जो प्रान्तीय सरकारों की नीतियों मे सामंजस्य स्थापित कर सकती है। केन्द्रीय सरकार का सबसे महत्वपूर्ण कार्य राष्ट्र व्यापी प्राथमिक शिक्षा नीति का निर्धारण करना है जिससे प्राथमिक स्तर पर प्रशासनिक सुधार हो सके।

प्रान्तीय सरकारों का उत्तरदायित्व है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा सुझाई गई नीतियों का यथासम्भव निर्धारण किया जाये। आर्थिक स्रोतों को अधिकाधिक बढ़ावा दिया जाये जिसमें गुणात्मक पक्ष को सामने रक्खा जाये। अध्यापकों के प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था हो और प्रशिक्षण विद्यालयों को यथासम्भव सुविधाएं प्रदान की जायें जिससे अच्छे अध्यापकों का निर्माण हो सके। प्राथमिक शिक्षा के गुणात्मक पक्ष को बल प्रदान करने के लिए प्रशासकीय विभाग हो जिससे स्थानीय एवम् निजी प्रबन्धों के आधीन शालाओं का निरीक्षण हो सके। स्थानीय एवम् निजी संस्थाओं को राज्य द्वारा आर्थिक सहायता प्रदान की जाये जिससे प्राथमिक शिक्षा की गुणात्मकता को सभी प्रबन्धों द्वारा सक्रिय सहयोग प्राप्त हो सके। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा प्रशासन मे सुधार हो।

3.04 आर्थिक साधनों में सुधार

Improvement in Finances

प्राथमिक शिक्षा की गुणात्मक वृद्धि हेतु यह नितांत आवश्यक है आर्थिक सहायता में वृद्धि की जाये जिससे प्रशिक्षित अध्यापक, जनसंख्या के अनुसार शालाओं की संख्या में वृद्धि, अच्छे भवन आदि की व्यवस्था की जा सके। यह तभी सम्भव है जबकि प्राथमिक शिक्षा पर अधिक व्यय किया जाये। इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्राथमिक शिक्षा पर प्रत्यक्ष रूप से व्यय की जाने वाली धन राशि मे उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। तालिका नं॰ 3.2 से यह स्पष्ट होता है कि 1901 से 1966 तक सम्पूर्ण प्राथमिक शिक्षा योजना के व्यय में वृद्धि हुई है।

निम्नलिखित तालिका से यह स्पष्ट है कि 1901 से 1966 तक प्राथमिक शिक्षा के व्यय को बढ़ाया गया है। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या यह वृद्धि देश की वर्तमान

तालिका सं० 3.3

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में प्राथमिक शिक्षा पर व्यय

(व्यय करोड़ रुपयों में)	
प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951–56)	85
द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956–61)	87
तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961–66)	209
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	322

उपरोक्त अध्ययन बिन्दु के सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि प्राथमिक शिक्षा के प्रसार हेतु अधिक धन की आवश्यकता है। इसके लिए राज्य सरकारों को उत्तरदायित्व निभाने का प्रयत्न करना चाहिए और केन्द्रीय सरकार को यथा-सम्भव सहायता करनी चाहिए जिससे गुणात्मक विकास सम्भव हो।

3.05 शाला विकास हेतु कार्यक्रम
Programmes for School Improvement

प्राथमिक शिक्षा को गुणात्मक बनाने के लिए यह आवश्यक है कि कुछ निश्चित कार्यक्रम बनाये जायें। इन कार्यक्रमों को वास्तविक रूप प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि जिले स्तर पर कार्य आरम्भ किया जाये। एक जिले में समस्त शहरों के प्राथमिक शालाओं को आस-पास के ग्रामीण क्षेत्र दिये जायें जो निश्चित क्षेत्रों को प्राथमिक शालाओं को इन कार्यक्रमों से परिचित करायें। जिले के एक प्राथमिक शाला को जो समस्त आधुनिक सुविधाओं से सम्पन्न हों, यह कार्य सौंपा [illegible] क सेवा-प्रसार विभाग द्वारा अपने क्षेत्र के समस्त प्राथमिक शालाओं को [illegible] करें।

तालिका नं० 3.2

प्राथमिक शिक्षा पर कुल प्रत्यक्ष व्यय

	1901-02	1921-22	1946-47	1950-51	1960-61	1965-66
लोअर प्राथमिक स्तर	119	509	1849	3649	7344	12200
उच्चतर प्राथमिक स्तर	47	166	480	770	4292	7175
प्रशिक्षण विद्यालय	47	58	91	152	344	600
योग	173 करोड़	733 करोड़	2420 करोड़	4571 करोड़	11980 करोड़	19975 करोड़

स्थिति को देखते हुए संतोषजनक है ? क्या हम इस बढ़ी हुई धनराशि से गुणात्मक विकास करने में सफल हो सकेंगे ? सम्भवतः दोनों ही प्रश्नों का उत्तर नकारात्मक है। क्यों ? इसलिए कि देश की वर्तमान आवश्यकता को देखते हुए धनराशि बहुत कम है। इसके अतिरिक्त यदि राष्ट्रीय आय की [illegible] तो हम सम्पूर्ण व्यय का 80% ही प्राथमिक शिक्षा पर [illegible] स्पष्ट है कि प्राथमिक शिक्षा के गुणात्मक विकास का [illegible] गुणात्मक विकास भी नहीं कर सकते।

यदि अभी राष्ट्रीय योजनाओं में [illegible] करें तो यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि [illegible] तालिका नं० 3.3 से इस स्थिति का [illegible]

ग्रन्थ - सूची

Bibliography

1. Desai, D M.
   A Critical Study of Primary Education Acts in India, M. S. University, Baroda, 1957.

2 Estimate Committee,
   Elementary Education, Lok Sabha Secretariat, New Delhi, 1958.

3 Ministry of Education, (Govt. of India)
   Report of the First Meeting of All India Council of Elementary Education.

4 ....
   School for All, 1958.

5. ....
   National Seminars on Compulsory Primary Education (Report I, II, III, IV)

6 ....
   Report of the Education Commission, 1964-66.

7 National Council of Educational Research and Training,
   The Indian Year Book of Education.

8. ....
   Second Year Book (Elementany Education), 1964.

9. Sen, J. M.
   History of Elementary Education in India, M. Book Co., Calcutta, 1943.

करेंगी । इसीलिए यह आवश्यक है कि
शालाओं को विभाजित किया जावे और
कक्षाओं पर विशेष ध्यान दिया जावे ।

3.06 उ
Co

उपरोक्त समस्त बिन्दुओं के आधार प
शिक्षा का विशिष्ट उद्देश्य बालकों को उपयो
है । यह तभी सम्भव है जबकि हम शिक्षा के
हमारे देश का प्रत्येक शिक्षा शास्त्री प्राथमि
चाहता है । इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए स
सब बालकों और बालिकाओं को निःशुल्क एवं
स्वीकार किया गया था परन्तु यह हमारा दुभ
नहीं कर पाये हैं । अतः यह आवश्यक है कि शि
सुझावों को स्वीकार कर चौदह वर्ष की आयु के
सकने मे समर्थ हो सकें और साथ-साथ गुणात्म
इक्कीस वर्षों के पश्चात् भी यदि प्राथमिक शिक
नहीं कर पाये तो निश्चित ही हम संसार के
रहेंगे । स्वतंत्र भारत को अन्य विकासशील देश
अत्यन्त आवश्यक है सम्पूर्ण शिक्षा भवन की
शिक्षा को गुणात्मक बना सकें ।

इसमें सन्देह नहीं कि निरक्षरता देश के
वह समय आ गया है जबकि हम निरक्षरता को
शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दें जिससे देश का

अध्याय चार

Chapter Fourth

एक-अध्यापक शाला

Single-Teacher School

अध्ययन बिन्दु

Learning Points

* 4.01 ऐतिहासिक विकास
  Historical Development
  (1) प्राचीन भारतीय शिक्षा का प्रतीक
  (2) मध्यकाल में एक-अध्यापक शालाएँ
  (3) अंग्रेजी काल में एक-अध्यापक शालाएँ
* 4.02 स्वतन्त्रता के पश्चात एक-अध्यापक शालाएँ
  Single-Teacher Schools After Independence
* 4.03 एक-अध्यापक शाला व्यवस्था की समस्याएँ
  Problems of Single-Teacher School System
  (1) विभिन्न प्रकार की शालाओं की समस्या
  (2) अध्यापकों की नियुक्ति सम्बन्धी समस्या
  (3) अध्यापकों के स्थानान्तरण की समस्या
  (4) अवकाश प्राप्त करने की समस्या
  (5) समय-सारिणी की समस्या
  (6) अध्यापकों के प्रशिक्षण की समस्या
  (7) पाठ्यक्रम की समस्या
* 4.04 अनुसन्धान की आवश्यकता
  Need for Research

विश्वविद्यालय-प्रश्न
University Questions

1. Formulate the two most fundamental field of primary education in India, analyse th measures for solving them.

2. Name the problems of (a) Expansion a tative improvement in Elementary Education in It one of the aforesaid problem areas giving suggestions ment. Raja

भारत मे प्राथमिक शिक्षा की (अ) प्रसारात्मक और (समस्याएँ कौन सी है ? उपरोक्त अ अथवा ब मे से किसी एक की स सुधारात्मक आलोचना कीजिये।

3. "It is necessary to achieve needed expansion in education alongwith the improvement in quality." Rajasthan,

Discuss the above statement in the light of qualitativ mary education.

4. 'We have made a tremendous expansion. We h passed our targets in primary education. The time has come wh we should think of consolidation and quality and I think that t ntre must pick out selected sectors for purposes of improvin ality. I would like to have all over the country 'peaks o cellence' which would be a sort of beacon lights to all other tutions fired with ambition to attain the same high position."

How far do you agree with this statement ?

———

शालाएँ सम्पूर्ण शिक्षा प्रदान करती थीं और इन्हीं की प्रचुरता थी।'[1] गुरुकुल प्रणाली आश्रम व्यवस्था एक-अध्यापक शाला पद्धति के प्रतीक मात्र है जहाँ छात्रगण अपने गुरु के कुल अथवा आश्रम मे निवास करते थे। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति मे केवल मात्र एक ही अध्यापक बालक का सर्वाङ्ग विकास कर शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति करता था। डा० अल्तेकर के शब्दो मे, "ईश्वर-भक्ति तथा धार्मिकता की भावना, चरित्र-निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, नागरिक तथा सामाजिक कर्त्तव्यों के प्रति जागरूकता, सामाजिक कुशलता की अभिवृद्धि और राष्ट्रीय संस्कृति की सुरक्षा और प्रसार प्राचीन भारतीय शिक्षा के विशिष्ट उद्देश्य और आदर्श थे[2]।' इन सभी उद्देश्यों की पूर्ति एक ही अध्यापक/गुरु करता था। एक-अध्यापक शाला द्वारा विद्यार्जन और वैदिक आदर्शों की प्राप्ति, बालक का सर्वाङ्गीण विकास, ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन, छात्रों मे अच्छी आदतों का निर्माण आदि इन शालाओं की विशेषता थी।

प्राचीन भारत में एक-अध्यापक शालाओं के अस्तित्व के मुख्यतः निम्नलिखित कारण थे—

1. छात्रों की संख्या इतनी कम थी कि एक ही अध्यापक शैक्षिक कार्यों के लिए पर्याप्त था।
2. छात्र एवम् अध्यापक के सम्बन्ध वंशानुक्रम थे निश्चित परिवारों के बालक ही शिक्षा प्राप्त करते थे और इन परिवारों का गुरु परिवारों से पूर्व सम्बन्ध होता था। इस प्रकार गुरु सम्बन्धित परिवारों में श्रद्धा का पात्र होता था और इसी कारण उस परिवार के बालकों की शिक्षा का उत्तरदायित्व भी उसी पर होता था।
3. प्राचीन शिक्षा पद्धति मे अध्यापक-छात्र सम्बन्धों का विशेष स्थान था और यह तभी सम्भव था जबकि गुरु और *शिष्य के सम्बन्ध* घनिष्ठ हों।

—*J P. Naik*

2. Infusion of a spirit of piety and righteousness, formation of character, development of personality, inculcation of civic and social duties, promotion of social efficiency and preservation and spread of national culture may be described as the chief aims and ideals of ancient Indian education.

A. S. Altekar, *Education in Ancient India*,

में आर्थिक कठिनाइयों के कारण दूसरे अध्यापक का प्रावधान कठिन है परन्तु जिन गाँवों में एक-अध्यापक प्राथमिक शाला है इसकी अपेक्षा एक भी शाला न हो तो उचित है। इसीलिए हम सिफारिश करते हैं कि जहाँ तक सम्भव हो वहाँ केन्द्रीय शालाओं की स्थापना की जाये और 'एक अध्यापक शाला' को उससे सम्बन्धित शालाओं (Branch Schools) में परिवर्तित कर दिया जावे।[1]

संक्षेप में अंग्रेजी के अन्तर्गत एक-अध्यापक शाला की निम्नलिखित स्थिति थी—

* 1813 के एक्ट के अनुसार ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने कुछ प्राथमिक शालाओं की स्थापना की जिनमें एक ही अध्यापक की व्यवस्था थी। यह व्यवस्था 1855 तक उत्तरोत्तर बढ़ती रही।
* 1855–1921 के समय में एक-अध्यापक शाला की गति मन्द पड़ गई क्योंकि छात्रों की संख्या में काफी वृद्धि हो गई थी।
* 1921–35 का समय इस प्रकार का था जिसमें एक-अध्यापक व्यवस्था की आलोचना की गई। हर्टॉग कमेटी (1929) ने इस व्यवस्था को समाप्त करने की सिफारिश की जिसके परिणामस्वरूप अनेकों गाँवों और शहरों में एक-अध्यापक शालाएँ समाप्त कर दी गईं। यह अंग्रेजों की भारतीयों के प्रति उपेक्षित व्यवहार की नीति थी जिसकी पूर्ति उन्होंने भारतीयों को शिक्षा से वंचित करने अभिलाषा से की।

---

1. We entirely [illegible]
hold that no primary [illegible]
teachers. Unless the s[illegible]
one teacher and can be [illegible]
verted into a branch school consisting of one or two classes only, [illegible] ng children until they [illegible] it is better closed for [illegible] realise that financial [illegible] of a second teacher [illegible] that minimum number [illegible] om the point of view of economical administration is about a hundred, whereas the average number attending each primary school at the end of 1925-26 was only 43. But nothing is to be gained by failure to face the fact that a village which has a primary school with only one teacher might almost as well be without a school at all. We, therefore, recommend that, *wherever possible, the policy of establishing 'central' schools and of converting 'single-teacher' schools into 'branch' schools should be adopted.*

—*Royal Commission on Agriculture*, 1928

...कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीय शिक्षा की अनेकों विशे-
षताओं मे एक प्रमुख विशेषता यह भी थी उस समय एक-अध्यापक शालाएँ थीं
जिनके द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों और आदर्शों को सफलतापूर्वक प्राप्त किया जाता था।

2. मध्यकाल में एक-अध्यापक शालाएँ
Single Teacher Schools in Medieval Period

मध्यकालीन शिक्षा की व्यवस्था मे भी एक-अध्यापक शालाओं की प्रचुरता
थी। इस्लामी शिक्षा मे मकतबों की व्यवस्था थी, मकतबों मे मुख्यतः एक ही
अध्यापक होता था। वहाँ बालकों को कुरान की आयतों को कठस्थ कराया जाता
था जो कि मुसलमान के लिये आवश्यक समझे जाते थे[1]। मकतबों के अतिरि-
खानकाह और दरगाह भी होते थे। खानखाह और दरगाह के बनाने वाले ए-
मौलवी की नियुक्ति कर देते थे तथा एक मौलवी बालकों को प्रारम्भिक शिक्षा
प्रदान करता था।

प्राचीन शिक्षा की भाँति मध्यकाल मे भी शिक्षक और शिष्य के सम्बन्ध
श्रद्धापूर्ण थे। परन्तु शनैः शनैः इन सम्बन्धों मे कटुता आती गई क्योंकि गुरु भक्ति
का आदर्श गौण होता चला गया। इसके अनेकों कारण थे परन्तु उनमे से एक यह
भी था कि अध्यापक का शिष्य के प्रति कठोर व्यवहार हो गया था जिसके परिणाम-
स्वरूप प्रेम के स्थान पर भय का आतंक हो गया था। इसके अतिरिक्त छात्रों
की संख्या बढ़ने लगी थी और अध्यापक की संख्या केवल एक ही थी।

अंग्रेजी काल में एक-अध्यापक शालाएँ
Single-Teacher Schools in British Period

ब्रिटिश शासन काल मे भी एक-अध्यापक शालाएँ थीं। 1835-3
... और बिहार के अन्तर्गत प्रायः सभी शालाओं मे एक ही अध्यापक की व्यव-
...स के शब्दों में मद्रास में प्रत्येक गाँव के अन्तर्गत एक प्राथमिक शाला थ-
...त्रों की संख्या बहुत कम थी।

1921-47 का समय इस प्रकार का था जबकि शाला में एक-अध्यापक
...की आलोचना की गई। रायल आयोग[3] ने इसके सम्बन्ध में अपने विचार
...कि हम शिक्षा अधिकारियों के इस मत से पूर्ण सहमत हैं कि कोई भी
...शाला उस समय तक सुचारु रूप से कार्य नहीं कर सकती जब तक कि
...अध्यापक न हों।......हम यह स्वीकार करते हैं कि प्राथमिक शालाओं

... Keay, F. E., Education in Ancient ...
... S. M., History ...
... oyal Commission o...

पढ़ने के लिए दूर न जाना पड़े। इसी कारण स्वतन्त्रता प्राप्ति के तेरह वर्षों के पश्चात इन शालाओं की प्रतिशत संख्या में दुगुनी वृद्धि हुई। 1950–51 में प्राथमिक शालाओं में 33 प्रतिशत एक-अध्यापक शालाएँ थी। 1960–61 मे इन शालाओं की प्रतिशत संख्या कुल प्राथमिक शालाओं की संख्या की 43 प्रतिशत थी। तालिका न० 4·1 में इन शालाओं की उत्तरोत्तर वृद्धि को बताया गया है जिससे यह स्पष्ट है कि ये शालाएँ प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

उपरोक्त साँख्यिकी से स्पष्ट है कि स्वतन्त्रता के पश्चात हमारे देश मे एक अध्यापक व्यवस्था की संख्या मे वृद्धि हुई है। संसार के अन्य प्रगतिशील देशों में भी इस व्यवस्था को विकसित किया गया है। यह व्यवस्था उन देशों के लिए बहुत आवश्यक है जहाँ गाँवों की संख्या अधिक है। हमारा देश भी कृषि प्रधान है अतः यह नितान्त आवश्यक है कि इस व्यवस्था को और भी गुणात्मक बनाया जाये और अमेरिका, आस्ट्रेलिया आदि देशों की एक–अध्यापक शाला व्यवस्था का अध्ययन कर कुछ आवश्यक कदम उठाये जायें। श्री जे. पी. नाइक के शब्दों में यह बड़ा खेद का विषय है कि हम हमेशा से इगलैंड को आदर्श मानकर उसका अनुकरण करते चले आये हैं। हम सामान्य रूप से ग्रामीण शिक्षा की समस्या को तथा विशिष्ट रूप से एक–अध्यापक शालाओं की समस्या को जानबूझ कर उपेक्षित करते रहे हैं और इसका कारण यही है कि इगलैंड में इस व्यवस्था की कोई महत्ता नहीं है क्योंकि वह एक शहरी देश है। अब वे सम्बन्ध जिनके कारण हम सयुक्त थे, वे प्रायः टूट चुके हैं, अब हमारा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध होना चाहिए और ससार के प्रत्येक भाग को नमूने के रूप में स्वीकार करना चाहिए। यदि यह किया गया और यदि हम अमेरिका, आस्ट्रेलिया और स्वीडन आदि देशों की शिक्षा व्यवस्था में यह देखने का प्रयत्न करें कि एक–अध्यापक शालाओं को किस प्रकार विकसित किया गया है तथा हम किस प्रकार इस व्यवस्था में सुधार कर सकते हैं तो ग्रामीण क्षेत्रों में अच्छी शिक्षा व्यवस्था हो सकती है।[1]

---

1 'It is a pity that, throughout the past we have followed England as the only model The problem of rural education in general and of single - teacher school in particular have, therefore been ignored because they have not much significance in an urban country like the United Kingdom New that the ties which linked us exclusively to England are broken, we must cultivate wider international contacts and seek our models in every part of the globe If this is done and we study closely what countries like U S A, Australia or Sweden are doing to improve their Single - teacher schools, the first step in raising the quality of instruction in our small schools will have been taken.'

J. P. Naik, *Single Teacher School*, p. 271

शनैः शनैः भारतीयों में जागृति आई, उन्होंने शिक्षा व्यवस्था की म
की । 1937 में कांग्रेस मंत्रिमण्डल के हाथ में सत्ता आई जिस
परिणामस्वरूप एक-अध्यापक शालाओं को विकसित किया गया । 194
तक इन शालाओं की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई ।

4 02 स्वतन्त्रता के पश्चात् एक-अध्यापक शालाएँ
Single Teacher Schools After Independence

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इन शालाओं की संख्या में काफी वृद्धि हुई है इसका एक मात्र कारण यह है कि प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि प्रत्येक बच्चे को उसके घर के समीप शिक्षा सुविधाएँ प्राप्त हो सकें अतः शिक्षा सुविधाओं और सार्वभौमिकता की दृष्टि से एक-अध्यापक शाला का प्रावधान आवश्यक है । इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों के लिए यह बहुत जरूरी है कि प्रत्येक गाँव में प्राथमिक शालाएं हों जिससे बालकों को

तालिका न० 4 1

एक-अध्यापक शालाएं

वर्ष	संख्या	पिछले वर्ष से बढ़ी हुई प्रतिशत संख्या
1960–51	68,841	·11
1951–52	71,361	·73
1952–53	75,214	5 1
1953–54	86,031	14 4
1954–55	1,01,342	17·8
1955–56	1,11,220	9 7
1956–57	1,16,272	4.5
1957–58	1,23,248	6 0
1958–59	1,26,238	2 4
1959–60	1,58,9[illegible]3	0 8

(3) अध्यापकों के स्थानान्तरण की समस्या
Problem of Teachers' Transfers

यदि इन शालाओं में अध्यापकों का स्थानान्तरण हो जाता है तो वे इसे दण्ड के रूप में समझते हैं। अध्यापकों का दण्ड रूप में समझना कोई अनुचित भी नहीं है क्योंकि सहायक शिक्षा निरीक्षकों का व्यवहार इन शालाओं के प्रति भी इसी प्रकार का होता है कि इन शालाओं में उन्हीं अध्यापकों को भेजा जाये जिनकी कुछ शिकायतें हों।

यदि शिक्षा अधिकारियों का व्यवहार इसी प्रकार का रहा और इन शालाओं के स्थानान्तरण सम्बन्धी सामान्य सिद्धान्त अस्पष्ट रहे तो समस्या का समाधान सम्भव नहीं। अतः यह आवश्यक है कि जिन अध्यापकों का स्थानान्तर इन शालाओं में हो उन्हें अतिरिक्त धनराशि दी जाय। इससे अध्यापकों में इन शालाओं के प्रति प्रेम उत्पन्न होगा और शिक्षा निरीक्षकों के परिवर्तित व्यवहार से भय कम होगा।

(4) अवकाश प्राप्त करने की समस्या
Problem of Grant of Leave

जिस शाला में एक ही अध्यापक हो और किन्हीं कारणोंवश वह अवकाश ले तो उस शाला में शिक्षण कार्य कैसे सम्भव हो सकता है? प्रायः ऐसा देखा गया है कि इन परिस्थितियों में एक–अध्यापक शालाएं बन्द पड़ी रहती हैं जिसके परिणाम-स्वरूप इन शालाओं के प्रति अभिभावक उदासीन हो जाते हैं। इस समस्या के समाधान के लिये निम्नलिखित सुझाव कार्यान्वित किये जा सकते हैं —

* यदि अध्यापक कुछ दिनों के लिए अवकाश पर जाये तो कक्षा का मानिटर शिक्षण कार्य को देखे।
* यदि अध्यापक अधिक दिनों के लिये अवकाश पर जाये तो पास के बड़े प्राथमिक शाला के प्रधानाध्यापक को सूचित करे और वहाँ से अन्य अध्यापक को भेजा जाये।
* कुछ अध्यापकों की नियुक्ति केवल इसी लिए की जाये जिससे वे सम्बन्धित क्षेत्रों के एक अध्यापक शालाओं में अवकाश की स्थितियों में कार्य कर सकें। बम्बई में इस विधि को कार्य रूप में परिणित किया गया है जिसमें इन शालाओं को 20 समूहों में विभाजित करके एक अतिरिक्त अध्यापक की नियुक्ति द्वारा अवकाश पर जाने वाले अध्यापकों की पूर्ति की गई।

(5) समय सारिणी की समस्या
Problem of Time Table

शाला में एक अध्यापक के रहने से यह समस्या सदैव रहती है कि वह सब कक्षाओं को किस प्रकार से व्यस्त रख सके। इसके लिये आवश्यक है कि समय

तालिका नं० 42

प्राथमिक शालाओं/वर्गों में अध्यापकों द्वारा पढ़ाई जाने वाली कक्षाओं का वर्गीकरण[1]

राज्य	एक कक्षा	दो कक्षाएं	तीन कक्षाएं	चार कक्षाएं	पाँच कक्षाएं	योग
	%	%	%	%	%	%
आंध्र प्रदेश	35 9	27·7	16·9	4 5	15 0	100 0
केरल	83 5	14·1	0 6	1 8	....	100 0
मध्य प्रदेश	30·5	26·1	17 4	8 5	17 5	100 0
मैसूर	50 9	21 4	3 7	24 7	...	100 0
उड़ीसा	43 0	29·6	26 2	0 7	0·5	100·0
पंजाब	46 4	26·9	14·8	1 1	10·8	100 0
राजस्थान	10 1	20 8	26·0	13 6	24·3	100·0
उत्तर-प्रदेश	36·5	35 9	19·6	2·5	5·5	100 0
योग	43 7	26 6	14·2	8 4	8 1	100 0

where one teacher/teachers one class in very small. More than half of our teachers, therefore, have to teach more than one class at a time. In a situation of this type, research in multiple-class teaching is badly needed, and training institutions have to make a special effort in orientating teachers to the special techniques that have to be used under such conditions.

Report of the Education Commission, 1964-66, p. 235.

1. The information is based on statistics collected from districts in 8 states

प्रभावशाली शिक्षा प्रदान करने में समर्थ हो सकें। इसके लिये निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रख कर अनुसन्धान किये जा सकते हैं —

* अन्य देशों जैसे—आस्ट्रेलिया, अमेरिका और स्वीडन में एक अध्यापक शालाओं का प्रशासन।
* अन्य देशों और भारतीय एक अध्यापक शालाओं का तुलनात्मक अध्ययन।
* एक-अध्यापक शाला की समस्याओं का समाधान।
* एक-अध्यापक शालाओं में क्रियात्मक शिक्षण अभ्यास।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि इन शालाओं के कार्यों को प्रभावशाली बनाना अत्यन्त आवश्यक है। इन शालाओं के दोषों का दृष्टिपात कर उन्हें दूर करना चाहिए क्योंकि ये शालाएं राष्ट्र के भावी नागरिकों का निर्माण कर रही हैं और सम्पूर्ण देश की प्राथमिक शालाओं में ये शालाएं 40% हैं।

अतः इस दशा में यह परयन्त आवश्यक है कि शिक्षण विधियों पर नवीन अनुसन्धान किये जायें और इन शालाओं में पढ़ाने वाले अध्यापकों के लिये प्रशिक्षण विद्यालयों मे पृथक् प्रबन्ध किया जावे तथा विशिष्ट विधियों से परिचित कराया जावे जिससे इन शालाओं द्वारा शैक्षिक उत्पादन सन्तोषप्रद हो सके।

(7) पाठ्यक्रम की समस्या

Problem of Curriculum

शाला मे एक ही अध्यापक होने के कारण यह समस्या सदैव बनी रहती कि एक–अध्यापक शाला का पाठ्यक्रम क्या हो? यदि एक–अध्यापक शाला का पाठ्यक्रम वही रखा जाये जो सामान्य शालाओं मे होता है और जहाँ एक से अधिक अध्यापक पढ़ाते हैं तो एक अध्यापक द्वारा कार्य सम्पन्न होना मुश्किल है। यदि पाठ्यक्रम को परिवर्तित किया जाये तो दोनो शालाओ के शैक्षिक स्तर मे अन्तर आ जायेगा जो आधारभूत सिद्धान्तो के प्रतिकूल होगा। दोनों स्थितियों मे प्रजातान्त्रिक दृष्टिकोण से यही उचित है कि दोनों शालाओ का शैक्षिक स्तर तो समान होना चाहिए। यदि हम समान पाठ्यक्रम को स्वीकार करते हैं तो एक अध्यापक शालाओं का उत्तरदायित्व बढ़ जाता है क्योंकि एक अध्यापक को निश्चित समयावधि मे निर्दिष्ट कार्य करना होगा।

अत ऐसी स्थिति मे यही उचित है कि पाठ्क्रम की सामान्य रूप रेखा को शालाएँ स्वीकार करें और अध्यापक को यह पूर्ण स्वतन्त्रता हो कि पाठ्यक्रमा-वह अवधि विशेष मे समस्त कार्य समाप्त कर लेगा। इसके लिए अधिक हो यदि इन शालाओं की कक्षाओ का शिफ्टो मे विभाजित कर दिया जाये कक्षाओ को पहले तीन घण्टे देख लिया जाये और अन्य दो कक्षाओं को बाद घण्टों मे देख लिया जाये। इससे इन शालाओं का स्तर सामान्य शालाओं के सकेगा। निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार समस्त कार्य सम्पन्न हो सकेगा।

अनुसन्धान की आवश्यकता

Need for Research

रोक्त समस्त चर्चा के आधार पर यह कहना नितान्त आवश्यक शालाओ के प्रशासन, गठन, शिक्षण विधियों, इनकी सफलत आदि पर अनुसन्धान की आवश्यकता है। जब हम पूर्ण रूप से ते हैं कि देश की आर्थिक एव भौगोलिक स्थिति को देखते हुए आवश्यकता है और इनके बिना कार्य नहीं चल सकेगा तब हमारे आवश्यक है कि इन शालाओं की सम्बन्धित समस्याओं का समाध इन विषयक अनुसन्धान करें जिससे [illegible] देश के [illegible]

प्रभावशाली शिक्षा प्रदान करने मे समर्थ हो सकें। इसके लिये निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रख कर अनुसन्धान किये जा सकते हैं:—

* अन्य देशों जैसे—आस्ट्रेलिया, अमेरिका और स्वीडन में एक अध्यापक शालाओं का प्रशासन।
* अन्य देशों और भारतीय एक अध्यापक शालाओं का तुलनात्मक अध्ययन।
* एक-अध्यापक शाला की समस्याओं का समाधान।
* एक-अध्यापक शालाओं में क्रियात्मक शिक्षण अभ्यास।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि इन शालाओं के कार्यों को प्रभावशाली बनाना अत्यन्त आवश्यक है। इन शालाओं के दोषों का दृष्टिपात कर उन्हें दूर करना चाहिए क्योंकि ये शालाएं राष्ट्र के भावी नागरिकों का निर्माण कर रही हैं और सम्पूर्ण देश की प्राथमिक शालाओं में ये शालाएं 40% हैं।

ग्रन्थ - सूची

Bibliography

1. Govt. of India,
   Handbook of Suggestions for Teachers in Small Rural Schoo
   Manager of Publications, Delhi, 1954.
2. J. P. Naik,
   The Single - Teacher Schools, 1963.
3. Mukerji, S. N.
   Education in India To-day and Tomorrow, Acharya
   Depot, Baroda, 1964.
4. N. C. E. R. T.,
   Second Year Book, 1964.
5. J. M. Sen
   History of Elementary Education in India, Book (
   Calcutta, 1962.

अध्याय पाँच

Chapter Fifth

माध्यमिक शिक्षा का ऐतिहासिक पर्यावलोकन

Historical Survey of Secondary Education

अध्ययन बिन्दु
Learning Points

* 5.01 ईसाई मिशनरी के शैक्षिक प्रयासों से 1853 तक
  From Educational Efforts of Christian Missionaries to 1853
* 5.02 सन् 1854 के वुड घोषणा पत्र से सन् 1904 के भारतीय विश्वविद्यालय एक्ट तक
  From Wood's Despath of 1854 To Indian Universities Act of 1904
  (1) वुड का घोषणा-पत्र (1854)
  (2) भारतीय शिक्षा आयोग (1882)
  (3) सरकारी शिक्षा नीति (1904)
  सन् 1882 से 1902 तक माध्यमिक शिक्षा का विकास
* 5.03 सन् 1905 से 1921 तक
  From 1905 To 1921
  (1) शिक्षा-नीति सम्बन्धी सरकारी प्रस्ताव (1913)
  (2) कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग (1917)
* 5.04 सन् 1922 से 1937 ई० तक
  From 1922 To 1937
  (1) हर्टाग समिति (1929)
  (2) एबट-वुड रिपोर्ट (1936-37)
* 5.05 सन् 1937 से 1947 तक
  From 1937 To 1947
  सार्जेन्ट रिपोर्ट (1944)
* 5.06 सन् 1852 से 1947 तक माध्यमिक शिक्षा का विकास
  Development of Secondary Education From 1852 To 1947
* ... प्राप्ति के पश्चात् माध्यमिक शिक्षा का विकास
  ...evelopment of Secondary Education After Independence

माध्यमिक शिक्षा का ऐतिहासिक पर्यवलोकन
HISTORICAL SURVEY OF SECONDARY EDUCAT.

सम्पूर्ण शिक्षा मे माध्यमिक शिक्षा का विशेष महत्व है। माध्यमिक शि
देश के राष्ट्रीय जीवन की रीढ़ की हड्डी है। क्योंकि इस शिक्षा से राष्ट्र के राष्ट्
लक्ष्य निर्धारित होते हैं हमारे देश की समृद्धि, सफलता और प्रकाशमय भविष्
माध्यमिक शिक्षा पर ही अवलम्बित करता है। माध्यमिक स्तर के पश्चात् ही
व्यक्ति अपने भावी जीवन का स्वप्न साकार करता है। आज माध्यमिक शालाओं
में पढ़ रहे बालक कल के भावी नागरिक होंगे जिनके कन्धों पर देश का भावी भार
होगा। कहने का तात्पर्य यह है कि माध्यमिक शिक्षा का भारत मे अत्यधिक महत्व
। सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया में माध्यमिक शिक्षा का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है
क्योंकि यह प्राथमिक और उच्च शिक्षा के बीच की कडी है। इससे पूर्व कि हम
माध्यमिक शिक्षा की प्रमुख समस्याओ पर विचार करें, उससे पहले यह उत्तम होगा
हम माध्यमिक शिक्षा का ऐतिहासिक पर्यवलोकन करलें।

5.01 ईसाई मिशनरी के शैक्षिक प्रयासों से 1853 तक
From Education Efforts of Christian Missionaries To 1853

यदि हम वर्तमान माध्यमिक शिक्षा के स्वरूप का आरम्भ देखने का प्रयास
इसका सूत्रपात ईसाई मिशनरियों के शैक्षिक प्रयासों से आरम्भ होता है।
3 के आज्ञा पत्र के अनुसार ईसाई मिशनरियो को भारत में धर्म प्रचार
ता प्राप्त हुई और उन्होने ईसाई धर्म के प्रचार हेतु शिक्षा व्यवस्था की

र ध्यान दिया। सन् 1830 ई० में स्काटलैण्ड निवासी श्री अलक्जेण्डर डफ ने
रतीयों को मोक्ष दिलाने का मार्ग 'पश्चिम और बाइबिल' बताया। उसने अंग्रेजी
शिक्षा का माध्यम बनाया और कलकत्ता में एक चर्च की स्थापना की। इससे
वर्ष 1813 से 1823 तक मिशनरियों ने अनेक शिक्षा संस्थाओं की स्थापना कर
ली थी जिनमें अधिकांश प्राथमिक विद्यालय थे और कुछ संस्थाओं में माध्यमिक
स्तर तक की शिक्षा भी दी जाती थी। माध्यमिक शिक्षा का जो वर्तमान स्वरूप
में आज दिखाई देता है उसका श्रेय इन्हीं मिशनरियों को है। इस समय तक
ध्यमिक-शालाओं का नामकरण नहीं हुआ था क्योंकि कुछ माध्यमिक शालाओं
की संज्ञा दी गई और कुछों को 'कालिज' की। परन्तु इतना अवश्य है
से कुछ शालाओं में माध्यमिक स्तर की शिक्षा दी जाती थी।

में सबसे पहले मिशन कालेज 'सीरामपुर कालेज' की स्थापना की
में 10 वर्नाक्यूलर स्कूल खोले गये। 1820 में धीरे-
मद्रास और उत्तर प्रदेश के प्रमुख शहरों आगरा, मेरठ, जौन-
आदि स्थानों में स्कूलों की स्थापना की गई, जिसके परिणाम
नरियों का जाल फैल गया और
गया।

नवीन आन्दोलन आरम्भ हो गया और इन्हें शिक्षा और संस्कृति को स्वीकार किया जाने लगा। इन प्रयासों के फलस्वरूप 1882 तक सम्पूर्ण भारत में अंग्रेजी शालाएं स्थापित हो चुकी थी।

5.02 सन् 1854 के वुड घोषणा पत्र से सन् 1904 के भारतीय विश्वविद्यालय एक्ट तक

From Wood's Despath of 1854 To Indian Universities Act of 1904

1854 से 1904 तक माध्यमिक शिक्षा के प्रसार में काफी प्रगति हुई। भारत में शैक्षिक प्रगति की दृष्टि से ये पचास वर्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण थे। इन वर्षों में तीन महत्वपूर्ण कार्य हुए जो निम्नलिखित हैं—

(1) वुड का घोषणा पत्र (1854)
(2) भारतीय शिक्षा आयोग (1882)
(3) सरकारी शिक्षा नीति (1904)

सुविधा की दृष्टि से यह अधिक उपादेय होगा यदि माध्यमिक शिक्षा का ऐतिहासिक पर्यावलोकन उपरोक्त तीन महत्वपूर्ण कार्यों की पृष्ठभूमि में देखा जाये।

(i) वुड का घोषणा-पत्र (1854)
Wood's Desatbp (1854)

19 जुलाई सन् 1854 में वुड का महत्वपूर्ण घोषणा-पत्र जारी हुआ। भारतीय शिक्षा के इतिहास में इस घोषणा पत्र द्वारा एक नवीन दिशा मिली जिसके फलस्वरूप भारत में अंग्रेजी शिक्षा का विधिवत रूप से सूत्रपात हुआ। इस घोषणा-पत्र द्वारा माध्यमिक शिक्षा में निम्नलिखित परिवर्तन आये—

(1) सर्वप्रथम यह स्वीकार किया गया कि भारतीयों को ...

(3) शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी को स्वीकार किया गया क्योंकि भारतीय भाषाओं में पाठ्य पुस्तकों का अभाव था। शिक्षा के माध्यम के सबंध में घोषणा-पत्र के अन्तर्गत स्पष्ट किया गया कि 'हमारी यह इच्छा नहीं है कि स्थानीय भाषाओं के स्थान पर अंग्रेजी भाषा को जबर दस्ती थोपा जावे। परन्तु उच्च स्तरीय शिक्षा अंग्रेजी द्वारा सम्भव है। माध्यम के सम्बन्ध में निर्णय किया गया कि 'योरुपीय ज्ञान के लिए हम अंग्रेजी तथा भारतीय भाषाओं को साथ साथ शिक्षा माध्यम के रूप में स्वीकार करना चाहते हैं, और यह हमारी इच्छा है कि ये भाषाएँ समान रूप से भारतीय शालाओं में उन्नति करें।[1]'

(4) घोषणा-पत्र में शिक्षा के उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए कहा गया 'हमें स्पष्ट रूप से घोषणा करनी चाहिए कि हम भारत में जिस शिक्षा प्रसार की अभिलाषा करते हैं उसका उद्देश्य यूरोपीय उच्च कला, विज्ञान, दर्शन और साहित्य अथवा संक्षेप में यूरोपीय ज्ञान का प्रसार करना है[2]।'

(5) शिक्षा के अधिकाधिक प्रसार हेतु अनुदान प्रथा को प्रश्रय दिया गया। ब्रिटिश सरकार ने इस प्रथा का प्रारम्भ इसलिए किया क्योंकि इगलैंड मे यह सफलता प्राप्त कर चुकी थी। घोषणा-पत्र में कहा गया कि हमने भारत में अनुदान-प्रथा को प्रारम्भ करने का निश्चय किया है। इगलैंड में इस पद्धति के सफलतापूर्वक क्रियान्वन होने के आधार पर हमें पूर्ण आशा है कि राज्य के अतिरिक्त स्थानीय साधनों का सहयोग प्राप्त कर शिक्षा का प्रसार राज्य के खर्च

---

f the thought and labour of Europeans on the subject of every escription and to extend the means of imparting this knowledge aust be the object of any general system of educatioan.'

—*Wood's Despatch*, 1854.

1. We look to the English language and to the vernacular anguages of India together as the media for the diffusion of European Knowledge, and it is our desire to see them cultivated together n all schools in India.

Ibid

2. We must emphatically declare that the education which we desire to see extended in India is that which has for its object the diffusion of the improved Arts, Science, Philosophy and Literature of Europe, in short of European knowledge.

Ibid

नवीन आन्दोलन प्रारम्भ हो गया और प्राचीन शिक्षा और संस्कृति व
किया जाने लगा। इन प्रयासों के फलस्वरूप 1852 तक सम्पूर्ण भारत
अंग्रेजी शालाएँ स्थापित हो चुकी थी।

5.02 सन् 1854 के वुड घोषणा पत्र से सन् 1904 के भा
विश्वविद्यालय एक्ट तक

**From Wood's Despath of 18 4 To Indian Uoivers
Act of 1904**

1854 से 1904 तक माध्यमिक शिक्षा के प्रसार में काफी प्रगति हुई
त में शैक्षिक प्रगति की दृष्टि से ये पचास वर्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण थे। इन व
तीन महत्वपूर्ण कार्य हुए जो निम्नलिखित हैं—

(1) वुड का घोषणा पत्र (1854)
(2) भारतीय शिक्षा आयोग (1882)
(3) सरकारी शिक्षा नीति (1904)

सुविधा की दृष्टि से यह अधिक उपादेय होगा यदि माध्यमिक शिक्षा का
सिक पर्यवलोकन उपरोक्त तीन महत्वपूर्ण कार्यों की पृष्ठभूमि में देखा जाये।

ड का घोषणा-पत्र (1854)

's Desatbp (1854)

19 जुलाई सन् 1854 में वुड का महत्वपूर्ण घोषणा-पत्र जारी हुआ।
शिक्षा के इतिहास में इस घोषणा पत्र द्वारा एक नवीन दिशा मिली
फलस्वरूप भारत में अंग्रेजी शिक्षा का विधिवत रूप से सूत्रपात हुआ। इस
पत्र द्वारा माध्यमिक शिक्षा में निम्नलिखित परिवर्तन आये—

(1) सर्वप्रथम यह स्वीकार किया गया कि भारतीयों को शिक्षित करने
का उत्तरदायित्व ब्रिटिश सरकार पर है।

(2) माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में पाश्चात्य ज्ञान और विज्ञान को
उपयुक्त समझा गया और यूरोपीय कला, साहित्य एवम् विज्ञान को
भारत में प्रसारित करने की इच्छा व्यक्त की गई। घोषणा पत्र
में यह स्पष्ट रूप से उल्लेखित किया गया।

> 'कि भारतीयों को योरपीय लेखकों के कार्यों से परिचित
> कराया जावे और सामान्य शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए कि
> प्रत्येक विषय पर हुए यूरोपीय विचारों और मत से भारतीयों
> को अवगत कराया जावे'।'

............that the people of India should be made

शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी को स्वीकार किया गया क्योंकि भारतीय भाषाओं में पाठ्य पुस्तकों का अभाव था। शिक्षा के माध्यम के संबंध में घोषणा-पत्र के अन्तर्गत स्पष्ट किया गया कि 'हमारी यह इच्छा नहीं है कि स्थानीय भाषाओं के स्थान पर अंग्रेजी भाषा को जबर दस्ती थोपा जाये। परन्तु उच्च स्तरीय शिक्षा अंग्रेजी द्वारा सम्भव है। माध्यम के सम्बन्ध में निर्णय किया गया कि 'योरुपीय ज्ञान के लिए हम अंग्रेजी तथा भारतीय भाषाओं को साथ साथ शिक्षा माध्यम के रूप में स्वीकार करना चाहते हैं, और यह हमारी इच्छा है कि ये भाषाएं समान रूप से भारतीय शालाओं में उन्नति करें।[1]'

4) घोषणा-पत्र मे शिक्षा के उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए कहा गया 'हमें स्पष्ट रूप से घोषणा करनी चाहिए कि हम भारत में जिस शिक्षा प्रसार की अभिलाषा करते हैं उसका उद्देश्य यूरोपीय उच्च कला, विज्ञान, दर्शन और साहित्य अथवा संक्षेप में यूरोपीय ज्ञान का प्रसार करना है[2]।'

5) शिक्षा के अधिकाधिक प्रसार हेतु अनुदान प्रथा को प्रश्रय दिया गया। ब्रिटिश सरकार ने इस प्रथा का प्रारम्भ इसलिए किया क्योंकि इगलैंड में यह सफलता प्राप्त कर चुकी थी। घोषणा-पत्र में कहा गया कि हमने भारत में अनुदान-प्रथा को प्रारम्भ करने का निश्चय किया है। इगलैंड में इस पद्धति के सफलतापूर्वक क्रियान्वन होने के आधार पर हमें पूर्ण आशा है कि राज्य के अतिरिक्त स्थानीय साधनों का सहयोग प्राप्त कर शिक्षा का प्रसार राज्य के खर्च

on the subject of every

के आदि स्वरूप हैं। उपरोक्त चार्ट से स्पष्ट है कि माध्यम शिक्षा मिडिल स्तर तथा कालेज स्तर के बीच की कड़ी थी। इसके अतिरिक्त जिस क्रमबद्ध शिक्षा योजना की व्यवस्था घोषणा-पत्र में की गई थी, वह आज भी विद्यमान है।

इस घोषणा-पत्र से भारत में अंग्रेजी का प्रसार बढ़ता गया और अंग्रेजी स्कूलों की संख्या में वृद्धि होती चली गई। यद्यपि सिद्धान्त रूप में यह स्वीकार किया गया था कि अंग्रेजी और स्थानीय भाषाओं में कोई भेद नहीं होगा तथापि स्कूलों में अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दी जाने लगी क्योंकि उच्च शिक्षा और विश्व विद्यालय शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही था। परिणामस्वरूप माध्यमिक शिक्षा में दोष आने लगे जिनका कारण मातृ भाषा की उपेक्षा, अध्यापकों के प्रशिक्षण का अव्यवस्थित स्वरूप आदि था।

(2) 1882 का भारतीय शिक्षा आयोग
Indian Education Commission of 1882

लार्ड रिपन ने भारतीय शिक्षा आयोग की नियुक्ति की जिसके अध्यक्ष विलियम हन्टर थे। आयोग ने सम्पूर्ण भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर विचार किया परन्तु माध्यमिक शिक्षा के सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिए—

(1) माध्यमिक शिक्षाओं की उच्च कक्षाओं को दो भागों में विभाजित किया जाये—एक विश्वविद्यालयों में प्रवेश परीक्षा के रूप में हो, दूसरी अत्यधिक क्रियात्मक हो जो कि युवकों को व्यवसायिक और व्यवहारिक बना सके।[1]

यद्यपि आयोग ने बहुत महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किया परन्तु इस ओर कोई भी कारगर कदम नहीं उठाया गया।

(2) माध्यमिक शिक्षा के प्रसार हेतु यह सुझाव दिया गया कि अधिक से अधिक माध्यमिक विद्यालय खोले जायें और इसके लिए भारतीय जनता इस उत्तरदायित्व को सँभाले। सरकार द्वारा अनुदान प्रणाली को स्वीकार किया जाये। परन्तु जिन स्थानों पर जनता स्कूल खोलने में असमर्थ हो वहाँ राजकीय स्कूल खोले जा सकते हैं। इन स्कूलों की संख्या जिले में एक से अधिक नहीं होनी चाहिए।

(3) सन् 1882 तक भारतवर्ष में केवल दो प्रशिक्षण विद्यालय थे। प्रशिक्षण सुविधाओं को बढ़ाने के लिए आयोग ने कुछ ठोस सुझाव

1. 'That in the upper classes of high schools there be two divisions – one leading to the Entrance Examination of Universities, the other of a more practical character, intended to fit youths for commercial or other non-literary pursuits.'

Report of Indian Education Commission, 1882 para No. 3.

दिये और यह सिफारिश की कि प्रशिक्षण की समयावधि योग्यता के आधार पर होना चाहिए। प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में सुधार होना चाहिए।

(4) माध्यमिक शिक्षा स्तर पर माध्यम के प्रश्न को आयोग ने नहीं छेड़ा परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजी की जड़ों को मजबूत अवश्य किया और मिडिल स्तर पर भी अंग्रेजी का ज्ञान वांछनीय कर दिया।

382 से 1902 तक माध्यमिक शिक्षा का विकास

उपरोक्त कार्यकाल में माध्यमिक शिक्षा का जो विकास हुआ वह ऐतिहासिक ...ण से काफी महत्त्वपूर्ण है। तालिका न० 5.1 से यह स्पष्ट है कि माध्यमिक ... की संख्या में कुछ वृद्धि अवश्य हुई।

तालिका न० 5.1

माध्यमिक शिक्षा का विकास (1882–1902)

882	विद्यालयों की संख्या	3,016	
	छात्रों की संख्या	2,14,077	
	मैट्रिक पास विद्यार्थियों की संख्या	7,429	
902	विद्यालयों की संख्या	6,124	
	छात्रों की संख्या	6,22,868	
	मैट्रिक पास विद्यार्थियों की संख्या	22,767	
82	प्रशिक्षण महाविद्यालयों की संख्या	2	
02	प्रशिक्षण महाविद्यालयों की संख्या	6	

...रोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 1902 में माध्यमिक शिक्षा का विकास ... तुलना में तिगुना था। इस आधार पर यह तो कहा जा सकता है। ...क विकास तो अवश्य हुआ।

...री शिक्षा-नीति (1904)

...ernment Resolution on Educational Policy

...ड कर्जन की शिक्षा की नीतियों का पालन करना ने घोर विरोध किया ... इसके निश्चय में विचलित नहीं हुआ और 19 मार्च 1904 को एक ...र किया जो 21 मार्च, 1904 को कानून बन गया। इसमें कोई सन्देह

नहीं कि कर्जन ने भारतीय शिक्षा का वास्तविक स्वरूप देखने का प्रयास किया था और शिक्षा प्रसार हेतु सन्तोषप्रद कदम भी उठाये थे। प्रस्ताव में कहा गया था कि संख्यात्मक दृष्टि से जो कमियाँ आज की प्रणाली हैं वे सर्वविदित हैं। पाँच गाँवों में से चार बिना शालाओं के हैं। चार लड़कों में से तीन बिना शिक्षा के ही विकसित होते हैं, और चालीस लड़कियों में से केवल एक लड़की किसी प्रकार की शाला में जाती है।[1] इन पंक्तियों को देखकर हमें अपने देश की दयनीय दशा का आभास तो निश्चित होता है, परन्तु जो शिक्षा–नीति इस दयनीय दशा को ठीक करने के लिए अपनाई गई वह हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था के लिए आगे चलकर विष बन गई और इसीलिए हमारे देशवासियों ने इस शिक्षा व्यवस्था का विरोध किया था। परन्तु फिर भी इस सरकारी शिक्षा–नीति ने माध्यमिक शिक्षा को प्रभावित किया जिसके कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु निम्नलिखित हैं—

(1) माध्यमिक शालाओं के मान्यता प्राप्त सम्बन्धी नियमों को निर्धारित कर दिया गया जिससे व्याप्त दोषों को दूर करने में काफी सहायता मिली।

(2) इस सरकारी प्रस्ताव से विश्वविद्यालयों को यह अधिकार प्राप्त हो गया कि वे शालाओं के मान्यता सम्बन्धी नियमों में वांछनीय परिवर्तन कर सकते हैं। इन नियमों के आधार पर अब केवल मान्यता प्राप्त शालाओं को ही मैट्रिक परीक्षा दिलाने का अधिकार था। कहने का तात्पर्य यह कि माध्यमिक शिक्षा विश्वविद्यालय के आधीन हो गई थी।

(3) शालाओं में शुल्क की दर इतनी होनी चाहिए जिससे पड़ोसी विद्यालयों पर गलत प्रभाव न पड़े।

(4) माध्यमिक शालाओं में प्रशिक्षित अध्यापकों को रखा जाये ।

(5) माध्यमिक शिक्षा को अधिक जीवनोपयोगी बनाने हेतु व्यावसायिक विषयों के शिक्षण की व्यवस्था हो ।

(6 हर एक जिले में एक सरकारी शाला हो।

---

1. The shortcomings of the present system in point of quantity are well known. Four out of five villages are without a school Three boys out of four grow up without education, and only one girl in forty attends any kind of school.

Government Resolution on Educational Policy, 1901.

5.03 सन् 1905 से सन् 1921 तक
From 1905 To 1921

20 वी शताब्दी के प्रारम्भ से ही भारतवासियों के हृदय मे राष्ट्रीय भावनाएं गहरी हो गई थीं। लार्ड कर्जन की शिक्षा नीतियो ने भारतीयों के हृदय मे शंका उत्पन्न कर दी थी। इस समय राष्ट्रीय चेतना अपनी चरम सीमा पर थी। राष्ट्रीय नेता यह अनुभव करने लगे थे कि ब्रिटिश सरकार भारत में शिक्षा का विकास नही चाहती। वास्तव में उस समय हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था अत्यन्त दयनीय थी। जब 1906 मे जापान की शिक्षा व्यवस्था से सम्बन्धित एक प्रतिवेदन प्रकाशित हुआ तो भारतीयों के हृदय में शिक्षा के प्रति रुचि जाग्रत हुई जिसके परिणाम स्वरूप शिक्षा सुधार हेतु भारतीय नेताओं द्वारा मांग होने लगी और अनुभव किया जाने लगा कि प्रचलित शिक्षा मे राष्ट्रीय तत्वों की कमी है। महात्मा गांधी ने भारतीय शिक्षा के विदेशी स्वरूप के प्रति आवाज उठाई और धीरे धीरे राष्ट्रीय आन्दोलन उग्र होता चला गया। एनी बेसेंट ने भारतीय शिक्षा के सही स्वरूप के पक्ष में अपने विचार रखते हुए कहा कि भारतीय शिक्षा पर भारतीयों [illegible] नियन्त्रण, शैक्षिक योजना एवम् कार्यान्वित होना चाहिए। इसमे भारतीयों [illegible] देशों का अनुराग, बुद्धिमता और नैतिकता होनी चाहिए जो भारतीय धार्मिकता [illegible] प्रोत होते भी साम्प्रदायिक भी भावनाओं से परे हो।'

कहने का तात्पर्य यह है कि राष्ट्रीय आन्दोलन का शिक्षा पर प्रत्यक्ष [illegible] पड़ा और नेताओं ने यह मांग की कि भारतीय शिक्षा का आधार भारतभूमि [illegible] चाहिए जिसमे स्वदेश प्रेम की भावनाएं हों, नवीन ज्ञान की प्राप्ति हो, [illegible] भावनाओं का यथायोग्य स्थान हो और जीवनउपयोगी शिक्षा हो।

[illegible] प्रचलित शिक्षा नीति का प्रत्यक्ष विरोध करने के लिए बंगाल में राष्ट्रीय [illegible] करने के लिए मण्डल का निर्माण किया गया जिसके प्रमुख नेता श्रीराम [illegible], गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर आदि थे। इस समिति ने अपनी पुस्तक [illegible] बनाई और राष्ट्रीय भावनाओं से ओत प्रोत शिक्षा प्रसार हेतु एक [illegible] तैयार की। परन्तु यह आन्दोलन बहुत दिनों तक न चल सका [illegible] 1911 तक इसकी गति बहुत धीमी पड़ गई। भारत [illegible]

5.03 सन् 1905 से सन् 1921 तक
From 1905 To 1921

20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही भारतवासियों के हृदय मे भावनाएँ गहरी हो गई थी। लार्ड कर्जन की शिक्षा नीतियों ने भारतीयों में रोष उत्पन्न कर दी थी। इस समय राष्ट्रीय चेतना अपनी चरम सीमा राष्ट्रीय नेता यह अनुभव करने लगे थे कि ब्रिटिश सरकार भारत में शि विकास नहीं चाहती। वास्तव में उस समय हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था दयनीय थी। जब 1906 में जापान की शिक्षा व्यवस्था से सम्बन्धित एक प्र प्रकाशित हुआ तो भारतीयों के हृदय में शिक्षा के प्रति रुचि जाग्रत हुई परिणाम स्वरूप शिक्षा सुधार हेतु भारतीय नेताओं द्वारा मांग होने लगी। अनुभव किया जाने लगा कि प्रचलित शिक्षा मे राष्ट्रीय तत्वों की कमी है। गांधी ने भारतीय शिक्षा के विदेशी स्वरूप के प्रति आवाज उठाई और धी राष्ट्रीय आन्दोलन उग्र होता चला गया। एनी बेसेंट ने भारतीय शिक्षा स्वरूप के पक्ष में अपने विचार रखते हुए कहा कि भारतीय शिक्षा पर भा द्वारा नियन्त्रण, शैक्षिक योजना एवम् कार्यान्वित होना चाहिए। इसमे भा आदर्शों का अनुराग, बुद्धिमता और नैतिकता होनी चाहिए जो भारतीय धार्मि से ओत प्रोत होते भी साम्प्रदायिक भी भावनाओं से परे हो।[1]

कहने का तात्पर्य यह है कि राष्ट्रीय आन्दोलन का शिक्षा पर अत्य प्रभाव पड़ा और नेताओं ने यह मांग की कि भारतीय शिक्षा का जन्म भारत से होना चाहिए जिसमे स्वदेश प्रेम की भावनाएँ हों, नवीन ज्ञान की प्राप्ति भारतीय भाषाओं का यथायोग्य स्थान हो और जीवनपयोगी शिक्षा हो।

प्रचलित शिक्षा नीति का प्रत्यक्ष विरोध करने के लिए बंगाल में राष् शिक्षा प्रदान करने के लिए संगठन का निर्माण किया गया जिसके प्रमुख नेता श्री बिहारी घोष, गुरुदेव रविन्द्र नाथ टैगोर आदि थे। इस समिति ने अपनी पृ शिक्षा नीति बनाई और राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत शिक्षा प्रदान हेतु विस्तृत योजना तैयारी की। परन्तु यह आन्दोलन बहुत दिनो तक न चल स और दिसम्बर 1911 तक इसकी गति बहुत धीमी पड़ गई। सरकार का ध्यान

---

1. It must be controlled by Indians, shaped by Indian carried on by Indians. It must hold up Indian ideals of devotion wisdom and morality, and must be permeated by Indian religio spirit rather than fed on the letter of creeps.
The Problem of National Education in Indi

शिक्षा नीति निर्धारण की ओर गया और सरकार ने माध्यमिक शिक्षा के विकास हेतु निम्नलिखित आवश्यक कार्य किये—

(1) शिक्षा-नीति सम्बन्धी सरकारी प्रस्ताव (1913)
Government Resolulon on Educationl Policy (1913)

इस प्रस्ताव में माध्यम शिक्षा सम्बन्धी निम्नलिखित सिफारिशें की गई —

* सरकारी शालाओं को न बढ़ाया जाये।

* माध्यमिक शिक्षा के प्रसार हेतु गैर सरकारी शालाओं को अधिकाधिक सहायता प्रदान की जावे

* माध्यमिक शालाओं में प्रशिक्षित अध्यापकों को रखा जाये।

* पाठ्यक्रम में सुधार किया जाये और मेनुअल प्रशिक्षण एवं विज्ञान आदि विषयों को सम्मिलित किया जाये।

* अध्यापकों के वेतन क्रम में निश्चितता आये।

* छात्रों के निवास हेतु छात्रावासों की व्यवस्था हो ।

उपरोक्त प्रस्तावो से यह निश्चित है कि माध्यमिक शिक्षा के प्रसार के लिए सरकार के लिखित प्रयास तो रहे परन्तु उन्हें वास्तविकता प्रदान नहीं की गई।

(2) कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग (1917)
Calcutta University Commission (1917)

सरकार ने 14 सितम्बर सन् 1917 को कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग की नियुक्ति की। इस आयोग के अध्यक्ष डा माइकेल सैंडलर थे। आयोग ने सत्तरह माह तक भारत का भ्रमण किया और 1919 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया।

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा पर विस्तृत रूप से विचार किया क्योंकि सदस्यों की यह मान्यता थी कि माध्यमिक शिक्षा उच्च शिक्षा एवम् विश्वविद्यालय शिक्षा की आधार शिला है अत यह अत्यन्त आवश्यक था कि माध्यमिक शिक्षा में सुधार किया जाये।

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के निम्नलिखित दोष बताए—

(1) माध्यमिक शिक्षा का गुणात्मक विकास नहीं है।
(2) माध्यमिक शालाओं में प्रशिक्षित अध्यापकों का अभाव है।
(3) पाठ्यक्रम में जीवनोपयोगी विषयों की कमी है।
(4) माध्यमिक शिक्षा खर्चीली है जिसके कारण अनेकों विद्यार्थी शैक्षिक अवसरों से वंचित रह जाते हैं।

(5) शालाओं मे सहायक सामग्रियों एवं दृश्य श्रव्य सामग्री का अभाव है ।

(6) परीक्षा प्रणाली दूषित है ।

उपरोक्त दोषों को स्पष्ट करते हुए आयोग ने माध्यमिक शिक्षा पर पु
विचार आवश्यक समझा और इसके लिए निम्नलिखित सुझाव दिये—

(1) माध्यमिक शिक्षा के समुचित उपयोग हेतु पाठ्यक्रम व विभिन्नीकरण कर देना आवश्यक है ।

(2) माध्यमिक शिक्षा के गुणात्मक विकास हेतु अधिक धन राशि निश्चित की जाये ।

(3) इण्टरमीडिएट कक्षाओं को *विश्वविद्यालय से* पृथक कर दिया जाये ।

(4) बी० ए० का कार्यकाल तीन वर्ष का कर दिया जाये ।

(5 हाई स्कूलो को इण्टरमीडिएट कालेज कर दिया जाये ।

(6) माध्यमिक कक्षाओ तक भारतीय भाषाओ को शिक्षा का माध्यम बनाया जाये और इण्टरमीडिएट कक्षाओं में अंग्रेजी भाषा को समुचित स्थान दिया जाये ।

(7) सभी प्रान्तों मे माध्यमिक शिक्षा परिषद् की स्थापना की जाये ।

(8) माध्यमिक शालाओं मे छात्रावास की व्यवस्था की जाये ।

यदि हम उपरोक्त दो महत्वपूर्ण शैक्षिक कार्यों अर्थात् 1913 का शिक्षा-
ति सम्बन्धी सरकारी प्रस्ताव और 1917 का कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग
पृष्टभूमि में 1905 से 1921 तक के कार्यकाल में माध्यमिक शिक्षा के विकास
देखें तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि माध्यमिक शालाओं की
या में वृद्धि अवश्य हुई ।

इस कार्यकाल में माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के माध्यम के प्रश्न को लेकर
ढी मतभेद रहा । भारतीय नेताओं ने भारतीय भाषाओं के विकास हेतु अपनी
तों को दोहराया परन्तु [illegible] तत्वों से उनकी मांगों को ठुकरा दिया

(3) भारतीय भाषाओं का सभी प्रान्तों में समान न होने के कारण।

(4) अंग्रेजी का अन्तर-प्रादेशिक स्वरूप होने के कारण।

उपरोक्त कारणों से भारतीय भाषाएं विकसित न हो सकीं और अंग्रेजी का प्रभाव बढ़ता चला गया।

5.04 सन् 1922 से 1937 ई० तक
From 1922 To 1937

सन् 1921 से द्वैध शासन की व्यवस्था की गई। प्रान्तीय सरकारों के उत्तरदायित्वों को दो भागों में विभाजित कर दिया गया—(1) संरक्षित विषय (2) हस्तान्तरित विषय। संरक्षित विषयों की देखभाल करना गवर्नर का उत्तरदायित्व था जो एक्जीक्यूटिव काउन्सलरों की सहायता से कार्य करता था। हस्तान्तरित विषयों का उत्तरदायित्व भी गवर्नर पर था पर इन विषयों पर सम्बन्धित कार्य मन्त्रियों के परामर्श से होता था और ये मन्त्री व्यवस्थापिका सभाओं के प्रति उत्तरदायी थे। शिक्षा का स्थान हस्तान्तरित विषयों में था जो भारतीय मन्त्रियों के अधिकार क्षेत्र में थी। परन्तु वित्त सम्बन्धी समस्त कार्यवाही अंग्रेज मन्त्रियों के हाथ में थी। ऐसी स्थिति में कठिनाइयों का होना स्वाभाविक ही था परन्तु फिर भी इस कार्य काल में शिक्षा की काफी प्रगति हुई।

इस कार्यकाल में भारतीय शिक्षा की समस्याओं का कुछ प्रतिवेदनों में परीक्षण किया गया जिनमें माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित समस्याओं की चर्चा की गई। इस काल में दो शैक्षिक कार्य हुए—

(1) हर्टाग समिति (1929)

(2) ऐबट और वुड प्रतिवेदन (1936-37)

(1) हर्टाग समिति (1929)
Hartog Committee (1929)

जैसा हम ऊपर कह चुके हैं कि ब्रिटिश भारत में 1921 से दोहरे शासन प्रबन्ध की व्यवस्था की गई थी। द्वैध शासन प्रबन्ध में भारत की व्यवस्था बहुत बिगड़ गई थी जिसके कारण भारतीय जनता में असन्तोष होना स्वाभाविक था। भारतीयों को सन्तोष प्रदान करने के लिये ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने 8 नवम्बर 1927 को भारतीय व्यवस्था की जाँच हेतु साइमन कमीशन की नियुक्ति की। कमीशन ने भारतीय शिक्षा व्यवस्था की जाँच करना भी आवश्यक समझा क्योंकि राष्ट्रीय शिक्षा हेतु अनेकों आन्दोलन हो रहे थे। अत: कमीशन के एक सदस्य सर फिलिप हर्टाग (Sir Philip Hartog) को भारतीय शिक्षा की जाँच का कार्य दिया गया। इसी कारण यह समिति हर्टाग समिति के नाम से प्रसिद्ध है। इस समिति ने सितम्बर

(5) शालाओं में सहायक सामग्रियों एवं दृश्य श्रव्य सामग्री अभाव है।

(6) परीक्षा प्रणाली दूषित है।

उपरोक्त दोषों को स्पष्ट करते हुए आयोग ने माध्यमिक शिक्षा पर विचार आवश्यक समझा और इसके लिए निम्नलिखित सुझाव दिये—

(1) माध्यमिक शिक्षा के समुचित उपयोग हेतु पाठ्यक्रम विभिन्नीकरण कर देना आवश्यक है।

(2) माध्यमिक शिक्षा के गुणात्मक विकास हेतु अधिक धन रा निश्चित की जाये।

(3) इण्टरमीडिएट कक्षाओं को विश्वविद्यालय से पृथक दिया जाये।

(4) बी० ए० का कार्यकाल तीन वर्ष का कर दिया जाये।

(5 हाई स्कूलों को इण्टरमीडिएट कालेज कर दिया जाये।

(6) माध्यमिक कक्षाओं तक भारतीय भाषाओं को शिक्षा माध्यम बनाया जाये और इण्टरमीडिएट कक्षाओं में अंग्रेज भाषा को समुचित स्थान दिया जाये।

(7) सभी प्रान्तों में माध्यमिक शिक्षा परिषद् की स्थापन की जाये।

(8) माध्यमिक शालाओं में छात्रावास की व्यवस्था की जाये।

यदि हम उपरोक्त दो महत्वपूर्ण शैक्षिक कार्यों अर्थात् 1913 का शिक्षा नीति सम्बन्धी सरकारी प्रस्ताव और 1917 का कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग की पृष्ठभूमि में 1905 से 1921 तक के कार्यकाल में माध्यमिक शिक्षा के विकास को देखें तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि माध्यमिक शालाओं की संख्या में वृद्धि अवश्य हुई।

इस कार्यकाल में माध्यमिक शिक्षा के माध्यम के प्रश्न को लेकर द रहा। भार... के विकास हेतु अपनी

(4) शालाओं का कार्य सुचारु रूप से चलाने के लिये निरीक्षकों की नियुक्ति की जाये।

(5) व्यावसायिक शिक्षा को सामान्य शिक्षा का स्तर प्रदान किया जाये।

(6) व्यावसायिक और सामान्य शिक्षा के लिये पृथक-पृथक शालाओं की व्यवस्था हो।

(7) व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने हेतु जूनियर और सीनियर व्यावसायिक स्कूल खोले जायें। जूनियर व्यावसायिक शालाओं में मिडिल पास बच्चों को प्रवेश दिया जाये और सीनियर व्यावसायिक शालाओं में हायर सैकेण्डरी कक्षा के बाद प्रवेश दिया जाये।

यदि 1922 से 1937 के बीच संक्षेप में माध्यमिक शिक्षा का विकास देखा जाये तो निम्नलिखित आँकड़ों से स्पष्ट हो जाता है जो तालिका न० 5 2 में अङ्कित किया गया है।

तालिका नं० 5.2

माध्यमिक शिक्षा का विकास 1921—1937

	1921—22	1936—37
(अ) मान्यता प्राप्त माध्यमिक शालाओं की संख्या	7,530	13,056
(ब) माध्यमिक शालाओं में छात्रों में छात्रों की संख्या	11,06 803	22,87,872

उपरोक्त तालिका में अङ्कित आँकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि द्वैध शासन प्रणाली में राजनैतिक और सामाजिक संकटों के बावजूद भी माध्यमिक शिक्षा का विकास सन्तोषप्रद गति से हुआ। इसका एक मात्र श्रेय राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन को था। इसके अतिरिक्त इस कार्यकाल में भारतीय भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्थान मिला जो कि एक बहुत बड़ी सफलता थी।

5 05 सन् 1937 से सन् 1947 तक

From 1937 To 1947

इस कार्यकाल में शिक्षा की प्रगति तो हुई परन्तु वह उतनी नहीं थी। जितनी इससे पूर्व हुई थी। इसका प्रमुख कारण यह था कि संसार में युद्ध की

1929 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और भारतीय शिक्षा के सभी पक्षों पर विचार कर कुछ महत्वपूर्ण सुझाव भी दिये। माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित सुझाव निम्नलिखित थे—

(1) मिडिल शालाओं का पाठ्यक्रम जीवनोपयोगी नहीं है इसलिए यह आवश्यक है पाठ्यक्रम को जीवनोपयोगी और व्यावहारिक बनाया जावे।

(2) हाई स्कूल के पाठ्यक्रम को भी जीवनोपयोगी बनाया जावे और छात्रों को औद्योगिक एवम् व्यावसायिक विषयों का अध्ययन करने हेतु प्रोत्साहित किया जावे।

(3) हाई स्कूल के पाठ्यक्रम में उन वैकल्पिक विषयों को स्थान दिया जावे जिनके चुनाव में बालक की रुचि प्रधान हो।

(4) मिडिल स्कूल की शिक्षा समाप्त होने पर परीक्षा की व्यवस्था हो और उसमें विद्यार्थियों को विभिन्न उद्योगों एवम् व्यवसायों की शिक्षा हेतु भेजा जावे।

(5) माध्यमिक शिक्षा के गुणात्मक विकास हेतु अच्छे अध्यापक प्रशिक्षण विद्यालय खोले जावें।

(6) अध्यापकों के स्तर में सुधार लाने के लिए उनके वेतन में वृद्धि की जावे।

(7) अध्यापकों के सेवा नियमों में सुधार किया जावे और लिखित अनुबन्ध के अनुसार उनसे कार्य लिया जावे। अध्यापकों के सेवा काल में उन्हें पूर्ण रूपेण सुरक्षा का अनुभव होना चाहिए।

(2) ऐबट-वुड रिपोर्ट (1936-37)
Abbott-Wood Report (1936-37)

केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड सुझाव पर ऐबट जो कि इगलैण्ड के शिक्षा बोर्ड के टेकनिकल शालाओं के भूतपूर्व चीफ निरीक्षक थे एवम् एस० एच० वुड जो कि इगलैण्ड की शिक्षा बोर्ड के डाइरेक्टर आफ इन्टेलिजेन्स थे, भारत सरकार के निमन्त्रण पर भारत आये। इन दोनों महानुभावो ने 1937 मे सरकार के समक्ष अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमे उन्होने निम्नलिखित सिफारिशें की—

(1) जूनियर माध्यमिक कक्षाओं मे अ ग्रेजी के अध्ययन पर विशेष जोर न दिया जावे।

(2) माध्यमिक स्तर तक भारतीय भाषाओ के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जावे।

(3) ग्रामीण क्षेत्रों मे वहाँ की आवश्यकतानुसार शालाओं मे शि
की जावे।

(4) शालाओं का कार्य सुचारु रूप से चलाने के लिये निरीक्षकों की नियुक्ति की जावे।

(5) व्यावसायिक शिक्षा को सामान्य शिक्षा का स्तर प्रदान किया जाये।

(6) व्यावसायिक और सामान्य शिक्षा के लिये पृथक्-पृथक् शालाओं की व्यवस्था हो।

(7) व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने हेतु जूनियर और सीनियर व्यावसायिक स्कूल खोले जायें। जूनियर व्यावसायिक शालाओं में मिडिल पास बच्चों को प्रवेश दिया जावे और सीनियर व्यावसायिक शालाओं में हायर सैकेण्डरी कक्षा के बाद प्रवेश दिया जावे।

यदि 1922 से 1937 के बीच संक्षेप में माध्यमिक शिक्षा का विकास देखा जाये तो निम्नलिखित आंकड़ों से स्पष्ट हो जाता है जो तालिका न० 5.2 में अङ्कित किया गया है।

तालिका न० 5.2
माध्यमिक शिक्षा का विकास 1921—1937

	1921—22	1936—37
(अ) मान्यता प्राप्त माध्यमिक शालाओं की संख्या	7,530	13,056
(ब) माध्यमिक शालाओं में छात्रों में छात्रों की संख्या	11,06 803	22,87,872

उपरोक्त तालिका में अङ्कित आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि द्वैध शासन प्रणाली में राजनैतिक और सामाजिक संकटों के बावजूद भी माध्यमिक शिक्षा का विकास सन्तोषप्रद गति से हुआ। इसका एक मात्र श्रेय राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन को था। इसके अतिरिक्त इस कार्यकाल में भारतीय भाषाओं को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्थान मिला जो कि एक बहुत बड़ी सफलता थी।

5 05 सन् 1937 से सन् 1947 तक
From 1937 To 1947

इस कार्यकाल में शिक्षा की प्रगति तो हुई परन्तु वह उतनी नहीं थी। जितनी इससे पूर्व हुई थी। इसका प्रमुख कारण यह था कि संसार में युद्ध की

1929 में अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और भारतीय शिक्षा के सभी पक्षों पर विचार कर कुछ महत्वपूर्ण सुझाव भी दिये। माध्यमिक शिक्षा के सम्बन्ध में सुझाव निम्नलिखित हैं—

(1) मिडिल स्कूलों का पाठ्यक्रम व्यावसायिक नहीं है इसलिए यह आवश्यक है पाठ्यक्रम को व्यावसायिक और व्यावहारिक बनाया जावे।

(2) हाई स्कूल के पाठ्यक्रम को भी व्यावसायिक बनाया जावे और छात्रों को औद्योगिक तथा व्यावसायिक शिक्षा का अध्ययन करने हेतु प्रोत्साहित किया जावे।

(3) हाई स्कूल के पाठ्यक्रम में उन वैकल्पिक विषयों को स्थान दिया जावे जिनके [illegible] में बालक की रुचि [illegible] हो।

(4) मिडिल स्कूल की शिक्षा समाप्त होने पर परीक्षा की व्यवस्था हो और उन्होंने विद्यार्थियों को विभिन्न उद्योगों एवम् व्यवसायों की शिक्षा हेतु भेजा जावे।

(5) माध्यमिक शिक्षा के गुणात्मक विकास हेतु अच्छे अध्यापक प्रशिक्षण विद्यालय खोले जावें।

(6) अध्यापकों के स्तर में सुधार लाने के लिए उनके वेतन में वृद्धि की जावे।

(7) अध्यापकों के सेवा नियमों में सुधार किया जावे और लिखित अनुबन्ध के अनुसार उनसे कार्य लिया जावे। अध्यापकों के सेवा काल में उन्हें पूर्ण रूपेण सुरक्षा का अनुभव होना चाहिए।

(2) ऐबट-वुड रिपोर्ट (1936-37)

Abbott-Wood Report (1936-37)

केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड सुझाव पर ऐबट जो कि इंगलैण्ड के शिक्षा बोर्ड के टेकनिकल शालाओं के भूतपूर्व चीफ निरीक्षक थे एवम् एस० एच० वुड जो कि इंगलैण्ड की शिक्षा बोर्ड के डाइरेक्टर आफ इन्टेलिजेन्स थे, भारत सरकार के निमन्त्रण पर भारत आये। इन दोनों महानुभावों ने 1937 में सरकार के समक्ष अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें उन्होंने निम्नलिखित सिफारिशें कीं—

(1) जूनियर माध्यमिक कक्षाओं में अंग्रेजी के अध्ययन पर विशेष जोर न दिया जावे।

(2) माध्यमिक स्तर तक भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जावे।

(3) ग्रामीण क्षेत्रों में वहाँ की आवश्यकतानुसार शालाओं में शिक्षा प्रदान की जावे।

माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित सुझावों के आधार पर यह कहा जा सकता है सार्जेन्ट रिपोर्ट राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति की दृष्टि से महत्वपूर्ण है ।

इस काल मे माध्यमिक शिक्षा की प्रगति पर विहगम दृष्टि डालें तो तालिका 5.3 से यह स्पष्ट होता है कि विकास की गति धीमी रही ।

तालिका नं० 5.3

माध्यमिक शिक्षा का विकास (1937—47)

प्रकरण	1937	1947
(अ) माध्यमिक शालाओं की संख्या	13,058	11,907
(ब) माध्यमिक शालाओं के छात्रों की संख्या	22,87,872	26,81,981

5.06 सन् 1852 से 1947 तक माध्यमिक शिक्षा का विकास (एक दृष्टि)

Development of Secondary Education From 1852 To 1947 (A Look)

सन् 1852 से 1947 तक माध्यमिक शिक्षा का क्रमिक विकास तालिका नं० 5.4 मे दर्शाया गया है जिसमे यह स्पष्ट होता कि ब्रिटिश भारत में माध्यमिक शिक्षा का सख्यात्मक विकास तो हुआ परन्तु गुणात्मक नहीं। इसका सबसे बड़ा कारण यह था कि अंग्रेजों ने भारतीय शिक्षा के विकास हेतु उपेक्षित रुख अपनाया और जो कुछ भी विकास इन 95 वर्षों मे हुआ वह भारतीय जनता की जागरूकता के कारण था। ब्रिटिश सरकार यह कदापि नहीं चाहती थी कि भारतीय जनता शिक्षित हो और इसी कारण उसने दमनकारी नीति के द्वारा भारतीय जनता का शोषण किया जिसके फलस्वरूप भारत मे अशिक्षा का जाल फैलता गया और ब्रिटिश साम्राज्यवाद भारतीयों की बेबसी पर हसता रहा।

5.07 स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात माध्यमिक शिक्षा का विकास

Development of Secondary Education After Independence

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे देश के नेताओं का ध्यान माध्यमिक शिक्षा के संगठन की ओर गया। माध्यमिक शिक्षा का विकास करने के लिए और

शक्ति प्रज्वलित हो चुकी थी। युद्ध के कारण मूल्यों में भ
और इसका सबसे अधिक प्रभाव मध्यम वर्ग पर पड़ा जिससे
शालाओं में बालकों की संख्या में वृद्धि न हो सकी। परिण
के कारण छात्रों की संख्या में ह्रास हो गया।

जैसे-जैसे द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हुआ और भार
ारतीय जीवन के विविध पक्षों में भारतीय शिक्षा पर भी रचन
ा और वाइसराय की प्रबन्ध-कारणी कौंसिल की पुनर्नि
रतीय शिक्षा सलाहकार सर जान सार्जेन्ट को युद्धोत्तर शिक्ष
ते पत्र प्रस्तुत करने का आदेश दिया—

र्जेण्ट रिपोर्ट) 1944

Sargent Report (1944)

सर जान सार्जेण्ट ने सन् 1944 में सम्बन्धित स्मृति पत्र
कार बोर्ड[2] के सम्मुख प्रस्तुत किया। इस प्रतिवेदन को भारत
योजना[3] या केन्द्रीय शिक्षा-सलाहकार बोर्ड का प्रतिवेदन
। इस रिपोर्ट में भारतीय शिक्षा के समस्त पहलुओं का विशद
ाष्ट्रीय शिक्षा-पद्धति की दृष्टि से इसका अत्यधिक महत्व है।

इस रिपोर्ट में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित निम्नलिखित
दिये गये—

(1) छात्रों के लिए हाईस्कूलों में प्रवेश पाने के लिए न्यूनतम
11 वर्ष निश्चित की गई।

(2) निर्धन छात्रों के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था होनी चाहिए।

(3) सामान्य और औद्योगिक शालाएं पृथक - -
में कुछ विषय समान होंगे जैसे मातृभा
गणित, विज्ञान, कृषि, शारीरिक शिक्षा

(4) हाईस्कूल कक्षाओं में शिक्षा का माध्यम

(5) अंग्रेजी का स्थान द्वितीय अनिवार्य विष

---

1. Reconstruction Committee of
Council.

2. Central Advisory Board of ...

3. Scheme of Post-War ...

4. Report of the Central ...

स आयोग की नियुक्ति विश्वविद्यालय शिक्षा की जाँच करने के लिए की गई थी रन्तु इस आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के लिए भी कुछ सुझाव दिये और यह ताया कि हमारी सम्पूर्ण शिक्षा-पद्धति में माध्यमिक शिक्षा-पद्धति दोषपूर्ण है और उसके सुधार की अत्यन्त आवश्यकता है।

(4) माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53)

Secondary Education Commisson (1952-53)

केन्द्रीय शिक्षा–सलाहकार बोर्ड और ताराचन्द समिति की सिफारिशों के आधार पर माध्यमिक शिक्षा आयोग की नियुक्ति की गई। आयोग ने समस्त माध्यमिक शिक्षा का अध्ययन किया और उसके विकास हेतु अनेकों महत्वपूर्ण सुझाव दिये इस आयोग का विस्तृत विवेचन अगले अध्याय में किया जायेगा।

(5) भारत शिक्षा आयोग (1964–66)

Indian Education Commission (1964-66)

शिक्षा के सभी–अंगों पर विचार करने हेतु भारतीय सरकार ने 1964 ई० मे एक नये शिक्षा आयोग की नियुक्ति की गई जिसके अध्यक्ष प्रोफेसर डी० एस० कोठारी थे। इस शिक्षा आयोग की नियुक्ति 14 जुलाई 1964 को गई। आयोग की नियुक्ति का सबसे बड़ा कारण यह था कि एक ऐसी राष्ट्रीय जीवन की झलक हो। इस आयोग ने इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु सभी शिक्षा स्तरों पर विचार प्रस्तुत किये हैं। माध्यमिक शिक्षा को प्रशस्त बनाने हेतु आयोग ने महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। कोठारी आयोग की सिफारिशो को हमने सभी समस्याओं से सम्बन्धित किया है जिससे सामयिक विवेचन हो सके।

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1 Analyse the main recommendations in respect of Secondary education made in the report of the Central Advisory Committee on post - war educational instruction

(L. T., 1942)

2. Describe and discuss the proposals made by Sargent Report on the organization of Secondary Education in India.

(Saugar, 1953)

3. Summarise the views expressed by Messrs Abbot and Wood on the development of Vocational education in this country. How far have they been put in practice in Indian Schools.

(Agra, 1951.)

4. Summarise and criticise the main recommendations of the Hartog Committee and say how far they have influenced modern conception of Secondary Education in India

(L. T. 1947)

5. Trace briefly that relationship since 1884 between government and private enterprise in Secondary Education in India,

(Poona 1953)

6. Summarize the chief recommendations of the Hunter Commission of 1882 for secondary education and trace their influence on the subsequent development of secondary education in India.

(Agra 1953)

7. माध्यमिक शिक्षा के विकास हेतु भारतीय शिक्षा आयोग ने कौन-कौन से महत्वपूर्ण सुझाव दिये । विस्तृत विवेचना कीजिये ।

अध्याय छः
Chapter Sixth
माध्यमिक शिक्षा आयोग
Secondary Education Commission

अध्ययन बिन्दु
Learning Points

- 6.01 आयोग का विचार क्षेत्र
  Terms of Reference of the Commission
- 6.02 आयोग की सिफारिशें और सुझाव
  Recommendations & Suggestions of the Commission
  - (I) माध्यमिक शिक्षा के दोष
  - (II) माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य
    1. प्रजातांत्रिक नागरिकता का विकास
    2. जीवन यापन में दक्षता
    3. व्यक्तित्व का विकास
    4. व्यावसायिक कुशलता की वृद्धि
    5. नेतृत्व के लिए शिक्षा
    6. सच्ची देशभक्ति की भावना का विकास
  - (III) माध्यमिक शिक्षा का नव संगठन रूप
  - (IV) भाषाओं का अध्ययन
  - (V) माध्यमिक विद्यालयों का पाठ्यक्रम
  - (VI) माध्यमिक स्तर पर पाठ्य-पुस्तकें
  - (VII) गतिशील शिक्षण विधियाँ
  - (VIII) चरित्र निर्माण की शिक्षा
  - (IX) माध्यमिक शालाओं में मार्ग-दर्शन और परामर्श
  - (X) माध्यमिक स्तर पर परीक्षा और मूल्यांकन
  - (XI) अध्यापकों की स्थिति
  - (XII) अध्यापकों का प्रशिक्षण
  - (XIII) माध्यमिक शिक्षा का प्रशासन
  - (XIV) माध्यमिक शिक्षा हेतु वित्त व्यवस्था

6.03 माध्यमिक शिक्षा आयोग का आलोचनात्मक मूल्यांकन
Critical Evaluatioc of Secondary Education Commission.

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53)

SECONDARY EDUCATION COMMISSION (1952-53)

मुदालियर आयोग

Mudaliar Commission

जैसा कि हम पिछले अध्याय में कह चुके हैं कि स्वातन्त्र्य प्राप्ति के पश्चात हमारे देश की सम्पूर्ण व्यवस्थाओं में परिवर्तन आये। इन परिवर्तनों के कारण यह आवश्यक हो गया कि हम अपने देश की शिक्षा व्यवस्था को भी उसी के अनुरूप ढालें जिससे यह शिक्षा जीवनोपयोगी होकर सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकने में समर्थ हो सके। इन्हीं आधार भूत सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए सर्व प्रथम 'केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड' ने 1948 में माध्यमिक शिक्षा आयोग की नियुक्ति हेतु सरकार को सुझाव दिया था। जनवरी 1951 में बोर्ड ने पुन. अपने प्रस्ताव को दोहराया और माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन की आवश्यकता पर बल दिया। भारत सरकार ने 23 सितम्बर, 1952 को माध्यमिक शिक्षा आयोग की नियुक्ति की जिसके अध्यक्ष डा० लक्ष्मणस्वामी मुदालियर थे।

6.01 आयोग का विषय-क्षेत्र

Terms of Reference of the Commission

आयोग के विषय क्षेत्र निम्नलिखित थे—

1. माध्यमिक शिक्षा के समस्त पहलुओं को जाँच करना।

2. निम्नलिखित तथ्यों के संदर्भ में उसके पुनर्संगठन और सुधार हेतु सुझाव देना—

1. उसके उद्देश्य, व्यवस्था और विषय वस्तु;
2. उसका प्राथमिक, बेसिक और उच्च शिक्षा से सम्बन्ध;
3. अनेकों प्रकार के माध्यमिक विद्यालयों का पारस्परिक सम्बन्ध और
4. अन्य सम्बन्धित समस्याएं।

जिससे समस्त देश को उसकी आवश्यकताओं और साधनों के अनुरूप, समान माध्यमिक शिक्षा पद्धति दी जा सके।[1]

6·02 आयोग की सिफारिशें और सुझाव

Recommendations & Suggestions of the Commission

आयोग ने निम्नलिखित सिफारिशें और सुझाव दिये—

(I) माध्यमिक शिक्षा के दोष—

Defects of Secondary Education

(i) माध्यमिक शिक्षा पूर्णरूपेण नीरस एवम् अवास्तविक है।

(ii) यह शिक्षा छात्रों की रुचि एवम् अभिवृत्ति के अनुसार नहीं है।

(iii) यह शिक्षा बालकों के व्यक्तित्व को विकसित करने में असमर्थ है।

(iv) वर्तमान पाठ्यक्रम में पुस्तकीय ज्ञान की अधिकता है जिसके कारण बालक उपयोगी नागरिक नहीं हो सकते।

(v) शिक्षण-विधियाँ दोषपूर्ण हैं।

---

1. (A) "To enquire into and report of the present position of Secondary Education in India in all its aspects,

(B) Suggest measures for its reorganisation and improvement with particular reference to—

(1) the aims, organization and content of secondary education,
(2) its relationship to primary, basic and higher education,
(3) the inter-relation of Secondary Schools of different types and
(4) other allied problems

so that a sound and reasonably uniform system of secondary education suited to our needs and resources may be provided for the whole country."

Report of the Secondary Education Commission, p. 2.

(vi) परीक्षा प्रणाली दूषित है ।

(vii) पाठ्य पुस्तकें नीरस हैं ।

(viii) अंग्रेजी अनिवार्य विषय होने के कारण छात्रों की मानसिक शक्ति का दुरुपयोग होता है ।

(ix) यह शिक्षा सामाजिक दृष्टिकोण विकसित करने मे असमर्थ है ।

(x) वर्तमान शिक्षा पद्धति चारित्रिक शिक्षा का कोई स्थान नहीं है ।

(xi) इस शिक्षा व्यवस्था मे बालकों की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति के विकास हेतु कोई अवसर प्रदान नही किये जाते ।

(II) माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य
Aims of Secondary Education

आयोग के अनुसार विशिष्ट उद्देश्यो का निर्धारण नितान्त आवश्यक है । माध्यमिक शिक्षा से उन उद्देश्यों की पूर्ति होनी चाहिए जिससे हम आदर्श नागरिकों का निर्माण कर सकें और अपने देश मे सफल प्रजातन्त्र की स्थापना कर सकने में समर्थ हो सकें । आयोग लोकतन्त्रीय भारत मे माध्यमिक शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये—

(1) प्रजातान्त्रिक नागरिकता का विकास
Development of Democratic Citizenship

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतन्त्रवादी देश है । प्रजातन्त्रात्मक शासन पद्धति मे नागरिकों के बहुत उत्तरदायित्व होते हैं अत. प्रत्येक व्यक्ति को सफल नागरिक जीवन व्यतीत करने का प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है । नागरिकता का प्रशिक्षण शिक्षा के माध्यम द्वारा दिया जा सकता है । माध्यमिक शिक्षा द्वारा उन सभी बाधाओं को दूर करना आवश्यक है जो आदर्श नागरिक के मार्ग में उपस्थित होती हैं । अतः नागरिकों में मानसिक परिपक्वता, सत्य और असत्य का ज्ञान, वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास, अन्धविश्वासों और रूढ़िवादी परम्पराओं का त्याग कर सकने की सामर्थ्य आदि का विकसित होना नितान्त आवश्यक है । विद्यार्थियों में सफल नागरिक के गुणों का विकास करना, माध्यमिक शिक्षा का सर्व प्रथम उद्देश्य है ।

हमारे देश मे प्रजातन्त्र तभी सफल हो सकता है जब कि हमारे छात्रों को भारतीय संस्कृति का ज्ञान हो और विचार स्वातन्त्र्य, भाषण और लेखन की स्वतन्त्रता का अर्थ, समस्याओं का शान्तिमय ढग से हल करने की क्षमता आदि नागरिक गुणों का विकास हो सकें । माध्यमिक शिक्षा के द्वारा भारतीय लोकतन्त्र को सफल बनाना है और यह तभी सम्भव है जबकि प्रजातन्त्रीय नागरिकता का विकास हो सकें ।

प्राविधिक शिक्षा
Technical Education

(i) इस शिक्षा के लिए प्राविधिक शालाओं की व्यवस्था यथाशीघ्र की जाये।

(ii) स्थानीय शालाओं की पूर्ति हेतु बड़े नगरों में केन्द्रीय टैकनिकल इंस्टीट्यूट खोले जायें।

(iii) क्रियात्मक शिक्षण हेतु प्राविधिक शालाओं की स्थापना उद्योगों के समीप की जाये।

(iv) प्राविधिक शिक्षा के चार स्वरूप होंगे—

(अ) इस वर्ग का छात्र औद्योगिक उच्च शालाओं में शिक्षा प्राप्त करेंगे।

(ब) इस वर्ग के छात्र माध्यमिक शिक्षा समाप्त होने से पूर्व ही उद्योग अथवा व्यापार शिक्षा प्राप्त करेंगे।

(स) माध्यमिक शिक्षा के पश्चात् प्राविधिक शिक्षा प्राप्त करेंगे।

(द) इस वर्ग में वे छात्र होंगे जो सायं कक्षाओं में प्राविधिक शिक्षा प्राप्त करेंगे। यह सुविधा नौकरी करने वाले व्यक्तियों को प्रदान की जायेगी।

अन्य शालाएँ
Other Schools

(i) पब्लिक स्कूलों को राष्ट्रीय शिक्षा पर बल देना चाहिए। इन शालाओं को पाँच वर्ष चलने दिया जाये तत्पश्चात् इनका स्वरूप भी माध्यमिक शालाओं जैसा हो जाना चाहिए। इन शालाओं के प्रतिभाशाली छात्रों को सरकार द्वारा छात्रवृत्तियों की व्यवस्था होनी चाहिए।

(ii) कुछ चुने हुए स्थानों पर निवास विद्यालयों की स्थापना की जाय।

(iii) विकलांग बच्चों के लिए पृथक् शालाएँ खोली जायें। इन बालकों के निवास की व्यवस्था शालाओं में ही की जानी चाहिए।

(iv) छात्र एवं छात्राओं की शिक्षा में कोई भेद न किया जाये। लड़कियों के लिए गृह विज्ञान के अध्ययन की सुविधा दी जाये। आवश्यकता होने पर बालिकाओं के लिए पृथक् शालाएँ खोली जायें।

(IV) भाषाओं का अध्ययन
Study of Languages

आयोग ने हिन्दी, अंग्रेजी और संस्कृत भाषाओं के स्थान पर विशेष प्रकाश डाला। इसके अतिरिक्त आयोग ने निम्नलिखित भाषा सम्बन्धी सुझाव दिये—

(1) माध्यमिक शालाओं में शिक्षा का माध्यम मातृ भाषा अथवा प्रादेशिक भाषा होनी चाहिए।

(2) अल्पसंख्यक बालकों की सुविधा के लिए केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के सुझावों के अनुसार विशेष व्यवस्था होनी चाहिए।

(3) मिडिल स्कूलों में दो भाषाओं की व्यवस्था होनी चाहिए।

(4) उच्चतर माध्यमिक स्तर पर कम से कम दो भाषाओं का अध्ययन होना चाहिए। जिसमें से एक मातृ-भाषा प्रादेशिक भाषा होनी चाहिए।

(V) माध्यमिक विद्यालयों का पाठ्यक्रम
Curriculum of Secondary Schools

आयोग ने सर्वप्रथम वर्तमान पाठ्यक्रम के निम्नलिखित दोष बताये—

(1) पाठ्यक्रम संकीर्ण है।

(2) इसमें पुस्तकीय ज्ञान पर अधिक बल दिया गया है।

(3) इससे बालक का सर्वाङ्गीण विकास नहीं हो सकता।

(4) इसमें छात्रों की रुचि, मानसिक आयु और बौद्धिक पक्ष का कोई ध्यान नहीं रक्खा गया है।

(5) यह जीवनोपयोगी नहीं है।

(6) इसमें तकनीकी एवम् व्यवसायिक विषयों का अभाव है।

आयोग ने पाठ्यक्रम के दोष दूर करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये—

(1) पाठ्यक्रम के संकीर्ण अर्थ को छोड़कर उसके विस्तृत अर्थ को लिया जाये और पाठ्यक्रम में बालकों की रुचि, योग्यताओं एवम् बौद्धिक पक्ष को समावेश कर, वर्तमान आवश्यकतानुसार निर्माण किया जाये।

(2) पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाये।

(3) पाठ्यक्रम का निर्माण स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए किया जाये।

(4) पाठ्यक्रम में विविधता और लचीलापन होना चाहिए।

आयोग ने उपरोक्त सुझावों के आधार पर पाठ्क्रम में निम्नलिखित विषयों के अध्ययन हेतु सिफारिश की—

(i) मिडिल अथवा बेसिक स्कूलों का पाठ्यक्रम
Curriculum of Middle or Basic Schools

(i) भाषाएं
(ii) सामाजिक अध्ययन
(iii) सामान्य विज्ञान
(iv) गणित
(v) कला और संगीत
(vi) शारीरिक शिक्षा
(vii) उद्योग

(ii) माध्यमिक शालाओं का पाठ्यक्रम
Cu.riculum of Secondery Schools

इस स्तर पर आयोग ने पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण की सिफारिश की। पाठ्यक्रम में कुछ आन्तरिक विषयों का समावेश किया गया जिनका अध्ययन समस्त छात्रों के लिए आवश्यक है। इसके अतिरिक्त कुछ वैकल्पिक विषय निश्चित किये जिन्हें सात समूहों में विभक्त किया गया। अतः पाठ्यक्रम की रूपरेखा निम्नलिखित निश्चित की गई—

आन्तरिक विषय
Core Subject

(1) मातृ-भाषा या प्रादेशिक भाषा या मातृ-भाषा तथा शास्त्रीय भाषा का सम्मिलित पाठ्यक्रम।
(2) निम्नलिखित भाषाओं में से एक अन्य भाषा—
    (1) हिन्दी (जिनकी मातृ-भाषा हिन्दी नहीं है)
    (2) प्रारम्भिक अंग्रेजी (जिन्होंने मिडिल स्तर अंग्रेजी नहीं पढ़ी है)
    (3) उच्च अंग्रेजी (जिन्होंने पहले अंग्रेजी पढ़ी है)
    (4) हिन्दी के अतिरिक्त एक अन्य भारतीय भाषा
    (5) अंग्रेजी के अतिरिक्त विदेशी भाषा
    (6) एक शास्त्रीय भाषा
(3) समाज विज्ञान (केवल प्रथम दो वर्षों के लिए)
(4) गणित तथा सामान्य विज्ञान (केवल दो वर्षों के लिए

निम्नलिखित में से एक शिल्प—
(1) कताई और बुनाई (Sp. and Weaving)
(2) काष्ठ कला (Wood work)

(3) धातु कार्य (Metal work)
(4) बागवानी (Horticulture)
(5) सिलाई (Tailoring)
(6) मुद्रण (*Typography*)
(7) प्रयोग शाला कार्य (Workshop Practice)
(8) सुई का काम (Needle Work)
(9) कढ़ाई बुनाई (Embroidery)
(10) प्रतिरूपण (Modelling)

वैकल्पिक विषय
Optional Subjects

आयोग ने निम्नलिखित सात समूह निश्चित किये जिनमें से कोई से एक समूह में से तीन विषय आवश्यक हैं—

समूह नं० 1—मानव विज्ञान (Humanities)

(1) एक शास्त्रीय भाषा (जो अनिवार्य विषय में से न ली गई हो)
(2) इतिहास
(3) भूगोल
(4) अर्थशास्त्र तथा नागरिक शास्त्र के सामान्य सिद्धान्त
(5) मनोविज्ञान तथा तर्कशास्त्र के सामान्य सिद्धान्त
(6) गणित
(7) संगीत
(8) गृह विज्ञान

समूह नं० 2—विज्ञान (Sciences)

(1) भौतिक शास्त्र
(2) रसायन शास्त्र
(3) जीव विज्ञान
(4) भूगोल
(5) गणित
(6) शरीर विज्ञान तथा स्वास्थ्य विज्ञान (यदि जीव विज्ञान नहीं लिया है तो)

समूह नं० 3—प्राविधिक (Technical)

(1) व्यावहारिक गणित और ज्यामितीय कला
(2) व्यावहारिक विज्ञान

(3) मिकैनिकल इन्जीनियरिंग के तत्व

(4) इलेक्ट्रिकल इन्जीनियरिंग के तत्व

समूह नं० 4—वाणिज्य (Commerce)

(1) वाणिज्यिक प्रयोग

(2) बुक-कीपिंग

(3) वाणिज्य भूगोल अथवा अर्थशास्त्र तथा नागरिक शास्त्र

(4) शार्टहैण्ड और टाइप

समूह नं० 5—कृषि (Agriculture)

(1) सामान्य कृषि

(2) पशु पालन

(3) उद्योग एवम् बागवानी कार्य

(4) कृषि रसायन और वनस्पति विज्ञान

समूह नं० 6—ललित कलाएं (Fine Arts)

(1) कला का इतिहास

(2) ड्राइंग तथा पेंटिंग

(3) चित्रण

(4) प्रतिरूपण

(5) संगीत

(6) नृत्य

समूह नं० 7—गृह विज्ञान (Domestic Sciences)

(1) गृह अर्थशास्त्र

(2) आहार, पोषण तथा पाक कला

(3) मातृ कला और शिशु पालन (Mother Craft and Child care)

(4) गृह स्वास्थ्य एवम् उपचार (Home-Nursing)

(VI) माध्यमिक स्तर पर पाठ्य-पुस्तकें
Text Books at Secondary Stage

आयोग के अनुसार पाठ्य पुस्तकों का स्तर संतोषजनक नहीं था। पाठ्य-पुस्तकों से सम्बन्धित आयोग के सुझाव

(1) पाठ्य पुस्तक समिति
Text-Book Committee

आयोग ने सन्तोषप्रद पाठ्य पुस्तकों के लिये प्रत्येक राज्य में एक समिति के गठन की सिफारिश की। समिति के गठन के लिये निम्नलिखित सदस्यों के रखे जाने का सुझाव दिया:—

(1) उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश
(2) लोक सेवा आयोग का एक सदस्य
(3) राज्य के किसी एक विश्वविद्यालय का उपकुलपति
(4) राज्य की शालाओं के आचार्यों में से एक
(5) दो प्रसिद्ध शिक्षा-शास्त्री
(6) शिक्षा निदेशक

(2) पाठ्य-पुस्तकों के सम्बन्ध में सुझाव
Suggestions Regarding Text-Books

(1) एक विषय में समिति द्वारा कई पाठ्य-पुस्तकें निर्धारित की जायें। यह शालाओं की इच्छा पर छोड़ दिया जाये कि वे कौनसी पुस्तक का चयन करते हैं।
(2) पाठ्य पुस्तकों में किसी धर्म, जाति, समुदाय के विरुद्ध कोई भी तथ्य नहीं होना चाहिए।
(3) एक पाठ्य पुस्तक को शीघ्र ही न बदला जाये।

(VII) गतिशील शिक्षण विधियाँ
Dynamic Methods of Teaching

शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति शिक्षण विधियों के द्वारा ही सम्भव है। शिक्षण विधियों का जीवन उनकी गतिशीलता पर आधारित है। आयोग ने शिक्षण विधियों से सम्बन्धित निम्नलिखित सुझाव दिये:—

(1) शिक्षण विधियों का उद्देश्य केवल ज्ञानात्मक पक्ष तक ही सीमित नहीं है बल्कि वांछित गुणों का विकास भी होना चाहिए।
(2) शिक्षण में रटने की क्रिया का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। शिक्षण को सफल बनाने के लिए क्रिया प्रधान विधियों तथा योजना विधि को प्रयोग करना चाहिए।
(3) छात्रों में सहयोग, प्रेम और सहिष्णुता की भावना को विकसित करने हेतु उन विधियों को प्रयोग में लाना चाहिए जो इन गुणों की अभिवृद्धि कर सकने में सहायक हो सकें।

(4) शिक्षण विधियों का प्रयोग [illegible] होना चाहिए और [illegible] चाहिए जिसके द्वारा [illegible] का विकास हो सके।

(5) कुछ विधियों को प्रयोग कर के देखने के लिए कुछ शालाओं को स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए जो इन विधियों का परीक्षण कर सकें। इन शालाओं को राज्य द्वारा विशेष मान्यता प्रदान होनी चाहिए।

(VIII) चरित्र निर्माण की शिक्षा
Education of Character

शालाओं में चरित्र निर्माण की व्यवस्था का होना अत्यन्त आवश्यक है। मु० आयोग ने इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिये.—

(1) छात्रों में चरित्र निर्माण का उत्तरदायित्व अध्यापकों पर अवलम्बित है। शाला का कार्यक्रम इस प्रकार होना चाहिए जिससे छात्रों का चरित्र बन सके।

(2) चरित्र निर्माण की शिक्षा हेतु यह अत्यन्त आवश्यक है कि अभिभावक इस शिक्षा में सहयोग प्रदान करें।

(3) छात्रों के चारित्र आधार हेतु 'आचार संहिता' का होना अत्यन्त आवश्यक है।

(4) छात्रों में आत्मविश्वास और अनुशासन की भावना विकसित करने के लिए छात्रों में स्वशासन का प्रशिक्षण नितान्त आवश्यक है।

(5) शालाओं में पाठान्तर क्रियाओं को विशेष स्थान दिया जावे और इन्हें शाला व्यवस्था का आवश्यक अंग माना जावे।

(6) शालाओं में स्काउटिंग, एन० सी० सी० एवं सी० सी०, की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

(7) शालाओं में धार्मिक और नैतिक शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए।

(8) शालाओं का सम्पूर्ण कार्य इस प्रकार का होना चाहिए जिससे बालकों को स्वतः उत्तम चरित्र निर्माण की शिक्षा मिल सके।

(IX) माध्यमिक शालाओं में मार्ग दर्शन और परामर्श
Guidance and Counselling in Secondary Schools

आयोग ने बालकों की रुचि को ध्यान में रखते हुए माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम को सात वर्गों में बाँटा

ता कि बालक का अपनी रुचिनुसार विषयों को लेने में मार्ग दर्शन किया जा सके और परामर्श दिया जा सके। अतः इसके लिए आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये —

(1) बालकों के व्यक्तिगत भेदों, मानसिक योग्यताओं, रुचियों आदि को आधार मानकर मार्ग दर्शन किया जाये।

(2) बालकों को विभिन्न व्यवसायों और उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि उनका मार्ग दर्शन किया जाये और उचित परामर्श दिया जाये।

(3) माध्यमिक शालाओं मे शनैः शनैः प्रशिक्षित मार्ग-दर्शन अधिकारियों तथा जीविकोपार्जन अध्यापकों की नियुक्ति की जाये।

(4) केन्द्रीय सरकार द्वारा मार्ग-दर्शन अधिकारियों तथा जीविकोपार्जन अध्यापकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए।

(5) प्रत्येक राज्य में एक व्यावसायिक और शैक्षणिक मार्ग-दर्शन कार्यालय की व्यवस्था होनी चाहिए।

(X) माध्यमिक स्तर पर परीक्षा और मूल्यांकन

Examination and Evaluation at Secondary Stage

इस सम्बन्ध मे आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये—

(1) परीक्षाओं में वस्तु-निष्ठता का आना नितान्त आवश्यक है। परीक्षाओं मे परीक्षकों के व्यक्तिगत मत द्वारा ही निर्णय नहीं होना चाहिए।

(2) परीक्षा के निबन्धात्मक ढग को परिवर्तित किया जाये और परीक्षा प्रणाली को इस प्रकार का बनाया जाये जिससे छात्रों का बौद्धिक पक्ष स्पष्ट हो सके।

(3) छात्रों के कार्यों का मूल्यांकन प्रतिशत में न किया जाये बल्कि सकेतात्मक (Symbolic) रूप में किया जावे। मूल्यांकन का आधार पाँच बिन्दु मापदण्ड (Five Point Scale) बनाया जावे।

(4) वाह्य परीक्षाओं मे कमी की जाये।

(5) माध्यमिक शिक्षा समाप्त होने पर एक सार्वजनिक परीक्षा होनी चाहिए तथा पूरक परीक्षा (Compartmental Examination) की व्यवस्था होनी चाहिए।

(2) माध्यमिक शिक्षा प्राप्त अध्यापकों का प्रशिक्षण शिक्षा विभाग के आधीन होना चाहिए।

(3) स्नातक शिक्षा प्राप्त अध्यापकों का प्रशिक्षण विश्वविद्यालयों के आधीन होना चाहिए।

(4) प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सह क्रियाओं, अभिनव पाठ्यक्रमों और क्रियात्मक प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए।

(5) प्रशिक्षण महाविद्यालयों में छात्राध्यापकों एवम् छात्राध्यापिकाओं के रहने की व्यवस्था होनी चाहिए।

(6) प्रशिक्षण की अवधि में छात्रों एवम् छात्राओं से कोई शुल्क न लिया जाये।

(7) एम० एड० की व्यवस्था केवल उन प्रशिक्षित अध्यापकों के लिए होनी चाहिए जो तीन वर्ष का अध्यापन अनुभव रखते हों।

(8) अध्यापिकाओं की कमी को दूर करने के लिए अंशकालिक प्रशिक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(9) प्रशिक्षण महाविद्यालयों में छात्राध्यापकों तथा छात्राध्यापिकाओं के लिए दो विषयों की शिक्षण विधियों का अध्ययन करना अनिवार्य होना चाहिए।

(XIII) माध्यमिक शिक्षा का प्रशासन
Administration of Secondary Education

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के प्रशासन हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये—

(1) माध्यमिक शिक्षा का संगठन
Organization of Secondary Education

(i) शैक्षिक विषयों पर शिक्षा मंत्री को परामर्श देने का कार्य शिक्षा निदेशक का होना चाहिए।

(ii) केन्द्र एवम् प्रान्तों की शिक्षा समिति होनी चाहिए जो उपयुक्त योजनाएँ बनाये।

(iii) शिक्षा निदेशक की अध्यक्षता में एक माध्यमिक शिक्षा बोर्ड होना चाहिए जिसके सदस्यों की संख्या 25 होनी चाहिए।

(iv) एक शिक्षक प्रशिक्षण परिषद् होनी चाहिए जो शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था करे।

(v) प्रान्त में एक 'राज्य शिक्षा सलाहाकार बोर्ड' होना चाहिए जैसा कि केन्द्र में 'केन्द्रीय शिक्षा सलाहाकार बोर्ड' है।

1) निरीक्षण
Inspection

(i) शालाओं मे शिक्षा सुधार एवम् शिक्षण कार्यों के निर्देशन हेतु विद्वान निरीक्षक होने चाहिए।

(ii) विशेष विषयों के लिए पृथक रूप से निरीक्षकों की नियुक्ति होनी चाहिए।

(iii) शाला-निरीक्षकों के पद पर उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों को नियु[क्त] किया जावे।

(XIV) माध्यमिक शिक्षा हेतु वित्त व्यवस्था
Finance for Secondary Education

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के लिए वित्त की व्यवस्था हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये —

(i) माध्यमिक स्तर पर प्राविधिक शिक्षा के हेतु उद्योगों पर कर लगाया जावे।

(ii) माध्यमिक शिक्षा के प्रसार मे खर्च होने वाले धन पर आय कर न लगाया जावे।

(iii) केन्द्रीय एवम् प्रान्तीय सरकारों को शालाओं को साधन सम्पन्न करने का प्रयत्न करना चाहिए।

(iv) शालाओं की समस्त सामग्री पर किसी प्रकार की चुंगी न लगाई जाये।

(v) शाला भवन पर किसी प्रकार का कर न लगाया जावे।

6 03 माध्यमिक शिक्षा आयोग का आलोचनात्मक मूल्यांकन
Critical Evaluation of Secondary Education Commission

सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था मे माध्यमिक शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है, परन्तु
की उपेक्षा के कारण यह इतनी महत्वहीन हो गई थी कि इसमे सुधारों की
न्त आवश्यकता थी। माध्यमिक शिक्षा के प्रति अंग्रेजो के उपेक्षित व्यवहार के
ण जनता मे असन्तोष होना स्वाभाविक ही था। अतः यह अत्यन्त आवश्यक
कि माध्यमिक शिक्षा की सम्पूर्ण जाँच करने के लिए एक आयोग की नियुक्ति
इसमे स्वतन्त्र भारत मे उचित माध्यमिक शिक्षा की रूप रेखा प्रस्तुत की जा
। हमारी यह निश्चित धारणा है कि राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात्
शैक्षिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो जिससे हमारे नागरिक स्वतन्त्र भारत के भावी
ण मे अपना सक्रिय सहयोग प्रदान कर सकें। स्वतन्त्र भारत के शैक्षिक
ास मे माध्यमिक शिक्षा आयोग की नियुक्ति एक अभूतपूर्व घटना है। आयोग
... है कि इसका कार्यान्वित शैक्षिक प्रगति के लिए

नितान्त आवश्यक है। परन्तु यहां यह निश्चित रूप से कह देना आवश्यक है कि आयोग के महत्वपूर्ण सुझावों के होते हुए भी इसमें अभाव के दर्शन भी होते हैं और सम्भवतः इसका मूल कारण यही है कि इस आयोग में सामान्य शालाओं के अध्यापकों का प्रतिनिधित्व नहीं था जो कि सामयिक एवम् वास्तविक रूपरेखा के निरूपण के लिए नितान्त आवश्यक था।

आयोग ने परिवर्तित सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप ही माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य निश्चित किये जो कि देश की वर्तमान व्यवस्था के अनुकूल हैं। भावी नागरिकों के सर्वाङ्ग विकास हेतु एक पक्षीय ज्ञान के स्थान बहुपक्षीय ज्ञान प्रदान करना माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की आधार शिला है। अतः माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा निश्चित उद्देश्य गणतन्त्र भारत के लिए निश्चित ही व्यवहारिक हैं।

उद्देश्यों को कार्यरूप में परिणित करने हेतु माध्यमिक शिक्षा का नवनिर्मित संगठन नितान्त आवश्यक है। आयोग ने बहु उद्देशीय शालाओं की स्थापना हेतु सुझाव दिये। ग्रामीण विद्यालयों में कृषि को अनिवार्य विषय बनाने का सुझाव निश्चित रूप से कृषि प्रधान देश के लिए महत्वपूर्ण है। आयोग द्वारा दिया गया यह सुझाव भारतीय मिट्टी से उत्पन्न हुआ मालूम होता है। परन्तु बहुउद्देशीय शालाओं की स्थापना निश्चित रूप से महंगी योजना है। आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए भारत में प्रत्येक बहु उद्देशीय शाला में बहुमूल्य प्रयोग शालाएँ कीमती यंत्र आदि की व्यवस्था वर्तमान में कठिन अवश्य है।

प्राविधिक शिक्षा की आवश्यकता पर आयोग ने महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं परन्तु आयोग ने औद्योगिकरण पर बल नहीं दिया। देश की औद्योगिक उन्नति अत्यन्त आवश्यक है और इसके लिए भारत के श्रमिक को शिक्षित करना भी आवश्यक है। प्राविधिक शिक्षा के पाठ्यक्रम का अन्तिम भार भी राज्य सरकारों को वहन करना चाहिए।

भाषा के सम्बन्ध में आयोग ने क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाना स्वीकार किया है, यह सुझाव निश्चित रूप से प्रशंसा के योग्य है क्योंकि अंग्रेजी से भारत का मंगलमय भविष्य नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त आयोग ने माध्यमिक स्तर पर तीन भाषाओं का अध्ययन आवश्यक बताया है अर्थात् माध्यमिक स्तर पर दो भाषाएँ तो पढ़नी पढ़ेंगी ही परन्तु साथ ही हिन्दी का अध्ययन भी आवश्यक होगा। परन्तु जिन विद्यार्थियों की मातृभाषा हिन्दी नहीं है तो उन्हे तीन भाषाएँ पढ़नी होंगी। तीन भाषाओं के अध्ययन का भार कुछ अधिक प्रतीत होता है। आयोग का यह सुझाव हिन्दी भाषा क्षेत्रों के लिए त्रासद भी नहीं है क्योंकि हिन्दी मातृ भाषा भी है और राष्ट्र भाषा भी।

आयोग के विविध पाठ्यक्रम सम्बन्धी सुझाव बहुत महत्वपूर्ण हैं।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान रखते हुए पाठ्यक्रम का गठन होना निश्चय आवश्यक भी था। परन्तु कुशल अध्यापकों के अभाव में पाठ्यक्रम की यह नवीनता आदर्श बनकर ही रह जायेगी।

भारतीय विद्यार्थियों की दैनिक दुर्दशा, अनुशासनहीनता एवम् चारित्रिक पतन देश की स्वतन्त्रता के लिए अत्यन्त घातक है। आयोग ने इसके लिए अनेक सुझाव दिये हैं जिनसे विद्यार्थियों के चरित्र का निर्माण हो सके। क्या ये समस्त सुझाव वास्तविक हो सकेंगे, यह एक गम्भीर विषय है? परन्तु फिर भी यदि हम मानव के भावी पीढ़ी का निर्माण करना है तो चरित्रवान नागरिकों का निर्माण करना माध्यमिक शिक्षा का ही पुनीत कर्त्तव्य है।

आयोग द्वारा 'परीक्षा और मूल्यांकन' के सम्बन्ध में दिये हुए सुझाव व्यापक हैं। यह सर्वविदित है कि आज की परीक्षा प्रणाली बालक में पलायनी भावनाओं को जन्म देती है और आज की परीक्षाएँ अभिशाप बन गई हैं। इस दोष को दूर करने के लिए आयोग ने वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का सुझाव दिया है जो महत्त्वपूर्ण है।

अध्यापक की स्थिति में सुधार लाने के लिए आयोग ने महत्त्वपूर्ण एवम् प्रशंसनीय सुझाव दिये हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जब तक अध्यापक की आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं किया जायेगा तब तक वह दत्तचित्त होकर शिक्षण कार्य नहीं कर सकता जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव भावी नागरिकों के व्यक्तित्व पर पड़ेगा। यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि आज का अध्यापक अपनी आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं कर सकता। यदि अध्यापक अपनी आवाज बुलन्द करता है तो अनुशासन अथवा राजकीय तरीके से उसे दबा दिया जाता है। जिस देश के भावी नागरिकों के निर्माता भूखे होंगे उस देश की प्रगति का क्या स्वरूप होगा यह हमें आज लक्षित ही हो रहा है।

आयोग के प्रशासन, संगठन, निरीक्षण विद्यालय भवन एवम् वित्त व्यवस्था सम्बन्धी समस्त सुझाव महत्त्वपूर्ण हैं। माध्यमिक शिक्षा की प्रगति हेतु यह अत्यन्त आवश्यक है कि इन्हें आदर्श के रूप में स्वीकार किया जावे।

अन्त में हम इतना ही कह सकते हैं कि आयोग के अधिकांश सुझाव प्रशंसनीय हैं। आयोग ने सभी दृष्टिकोणों से माध्यमिक शिक्षा को देखा और परखा है। आयोग के अन्तिम अध्याय में जब हम माध्यमिक शालाओं का स्वरूप देखने का प्रयास करते हैं तो भारत के भावी भविष्य की कल्पना सुखदायी लगती है। अध्यापक के अस्तित्व को पहचान कर परीक्षा प्रणाली में सुधार कर, पाठ्यक्रम को सुव्यवस्थित कर, शालाओं में स्वस्थ सामाजिक जीवन का प्रस्फुटन कर जब हम माध्यमिक शिक्षा को व्यवस्थित कर सकने में समर्थ हो सकेंगे तो निश्चित रूप से हम अपने को समृद्धिशाली बना सकेंगे। आयोग के आद्योपांत अध्ययन से यह तो विदित है कि माध्यमिक शिक्षा के स्वरूप की रूपरेखा महत्त्वकांक्षाओं से परि-पूर्ण है।

ग्रन्थ - सूची

Bibliography

1. Ministry of Education.
   Report of the Secondary Education Commission, (1952-53), Government of India, New Delhi, 1953.

2. Mukerji, S. N.
   Secondary School Administration, Acharya Book Depot, Baroda, 1963.

3. Mudaliar, A. Lakshmanaswami.
   Education in India, Asia Publishing House, Bombay, 1960.

4. Naik, J P.
   The Role of Government of India in Education, Ministry of Education, New Delhi, 1963.

5. Shrivastava, B. Dayal.
   The Development of Modern Indian Education, Orient Longmans, New Delhi, 1963.

7.01 माध्यमिक शिक्षा की प्रगति (1947–68)
Progress of Secondary Education (1947-68)

यद्यपि पिछले वर्षों में माध्यमिक शिक्षा की प्रगति द्रुत गति से हुई है तथापि स्वतन्त्रता प्राप्ति से अब तक माध्यमिक शिक्षा के प्रसार को देखते हुए यह अवश्य कहा जा सकता है कि माध्यमिक शिक्षा हमारी सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था की दुर्बलतम कड़ी है। सन् 1947 में माध्यमिक शालाओं की संख्या 12,693 थी जिनमें 29,53,095 छात्र थे। सन् 1950 में शालाओं की संख्या 20,884 थी जिनमें 52 32,009 छात्र थे। सन् 1955 में शालाओं की संख्या 32,568 थी जिनमें 85,26,509 छात्र थे और 1960–51 में शालाओं की संख्या बढ़कर 66,916 हो गई जिनमें 1,80,26,594 छात्र थे। तालिका नं० 7 1 में उपरोक्त संख्या एवम् व्यय धन राशि को स्पष्ट किया है।

तालिका नं० 7.1

माध्यमिक शिक्षा (1947–61)

वर्ष	माध्यमिक शालाएं	छात्रों की संख्या	व्यय धन राशि (करोड़ों में)
1947–48	12,693	29,53,095	14
1950–51	20,884	52,32,009	31
1955–56	32,568	85,26,509	51
1960–61	66,916	1,80,26,594	110

उपरोक्त तालिका से यह तो प्रतीत होता है कि माध्यमिक शिक्षा प्रदान करने हेतु शालाओं की संख्या में वृद्धि हुई, छात्रों की संख्या भी शनैः शनैः बढ़ी और

---

for both elementary and adult education. It also prepares pupils for the universities and other institutions of higher learning. Besides, it is the stage which in all countries marks the completion of education for the vast majority. Even the minority which goes for higher education can not take full advantage of the wider opportunities by the universities unless they have received there grounding in a system of sound secondary education. If for no other reasons these considerations alone demand that secondary education must be of the highest quality, if it is to satisfy the needs of the modern age.

Humayun Kabir, *Education in New India*, p. 3[illegible]

करने वाले विद्यार्थियों की संख्या 1,500,000 थी जो कि 1965–66 मे बढ़कर 6,100,000 हो गई। इसका अर्थ यह हुआ कि औसत वार्षिक वृद्धि 10% थी। कोठारी आयोग[1] की सम्भावना के अनुसार अगले 20 वर्षों मे अर्थात् 1980–81 तक 13–15 वर्ष के लड़कों की कुल जनसंख्या के 67.2%, 13 से 16 वर्ष की लड़कियों की कुल जनसंख्या के 21·3% और लड़के लड़कियों की सम्मिलित *जनसंख्या के 45% विद्यार्थी लोअर माध्यमिक शालाओं मे अध्ययन करेंगे।*

इसी प्रकार की स्थिति उच्च माध्यमिक स्तर की है। सन् 1950–51 में कुल 282,0(0 विद्यार्थियों ने शिक्षा प्राप्त की। सन् 1965–66 में यह संख्या 1,400,0(0 हो गई। इसका अर्थ यह हुआ कि औसत वार्षिक वृद्धि 11·3% थी। आगे के 20 वर्षों मे यह संख्या 6,900,000 होगी परन्तु औसत वार्षिक वृद्धि 11·3% से घटकर 8.3% होगी। तालिका न० 7.2 और 7.3 रेखा चित्रों से यह स्पष्ट है।

तालिका नं० 7.2

लोअर माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की संख्या

संख्या (000, में)

वर्ष	लड़के	लड़कियाँ	कुल योग
1950—51	1,304	204	1,508
1955—56	1,965	406	2,371
1960—61	2,941	741	3,682
1965—66	4,707	1 420	6,127
1970—71	6,559	2,259	8,818
1975—76	9,104	3,581	12,685
1980—81	12,256	5,285	17,541
1985—86	16,526	7,842	24,368

1. *Report of the Education Commission*, 1964–66.

...आयु वर्ग की जनसंख्या का प्रतिशत

वर्ष	लड़के	लड़कियां	कुल
1950—51	10·9	1 8	6·5
1955—56	14 [illegible]	3 3	9 3
1960—61	20·4	5 4	13 1
1965—66	28·7	9 0	19·1
[illegible]70—71	34 2	12·2	23·4
[illegible]5—76	40 8	16 0	29 1
—81	49·1	22·6	36·3
—86	60 4	30·6	46·0

...क्त तालिका एवम् तालिका न० 7.3 से यह तो स्पष्ट...
...ों मे तथा उससे भी अधिक समय तक माध्यमिक शिक्षा...
...बना सकते। यदि प्रगति की गति को देखा जावे तो...
...पचास वर्षों से अधिक समय मे माध्यमिक शिक्षा को अनिवा...
...सका मुख्य कारण देश की आर्थिक स्थिति है।

तालिका नं॰7.3

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की संख्या

संख्या (000, में)

वर्ष	लड़के	लड़कियाँ	कुल योग
1950—51	245	37	282
1955—56	431	71	502
1960 – 61	717	1 12	849
1965—66	1,172	226	1,398
1970—71	1,698	391	2,0 7
1975—"6	2 351	638	2,989
1980—81	3,423	1,089	4,512
1985—86	5,004	1,869	6,8 3

उपरोक्त तथा निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट होता है कि आयोग की सम्भावित तालिका के अनुसार कक्षा 11 और 12 में छात्रों की संख्या में वृद्धि होगी। इस समय अनुरूप आयु के विद्यार्थियों की कुल संख्या के 7 0% विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। सन् 1970–71 में यह संख्या बढ़कर 9 2%, सन् 1975–76 में 11 0% और 1985–86 में बढ़कर 20 6% हो जायेगी। इसका अर्थ यह हुआ कि उस समय 16 से 17 वर्षीय समूह के 5 विद्यार्थियों में से 1 विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करेगा और 10 लड़कियों में से 1 लड़की उच्च माध्यमिक शाला से शिक्षा प्राप्त करेगी।

16 से 17 वर्षीय आयु वर्ग की जनसंख्या का प्रतिशत

वर्ष	लड़के	लड़कियाँ	कुल
1950—51	3·3	0·5	[illegible]
1955—56	5·2	0·9	[illegible]
1960—61	8 0	1·6	[illegible]
1965—66	11 5	2 3	7
1970—71	14·6	3·5	9
1975—76	17·0	4·8	11
1980—81	21·7	7·4	14·
1985—86	28 8	11 4	20·

निम्नलिखित रेखा चित्रों से यह स्पष्ट होता है कि 1985–8
माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु बहुत कुछ करन
अगले पृष्ठों पर अंकित ग्राफों से यह स्थिति स्पष्ट होती है।

7.02. माध्यमिक शिक्षा की भावी प्रगति (1969–1986) हेतु सुझा

Suggestions for Future Progress (1969-1986) of Secondary Education

जैसा कि हम पिछले पृष्ठों में कह आये हैं कि भारतीय शिक्षा आ
(1964–66) ने वर्तमान स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए माध्यमिक शिक्षा की
प्रगति हेतु कुछ लक्ष्य निर्धारित किये हैं। इन लक्ष्यों की पूर्ति हेतु तीन म
बिन्दुओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पर बल दिया है। यदि हम
माध्यमिक शिक्षा प्राप्त लोगों में बेरोजगारी की समस्या को देखें तो निराशा
होती है और यदि हम बढ़ती हुई बेरोजगारी को रोकने का प्रयास नहीं किया
तो निश्चित ही स्थिति दारुण [illegible] गी। अब हमारे देश की माध्य
शिक्षा का भावी स्वरूप इस प्रकार [illegible]

नैराश्य की भावना भी न बढे और सभी अपनी अर्जित शक्तियो को देश के उत्थान एवम् मंगलमय भविष्य में लगा सकें। इसके लिए अत्यन्त आवश्यक है कि शिक्षा को व्यावसायिक बनाया जाये (इसकी विस्तृत चर्चा हम किसी अगले अध्याय में करेंगे और प्रचलित माध्यमिक शिक्षा व्यवस्था मे सुधार लाया जाये। अगले पृष्ठों
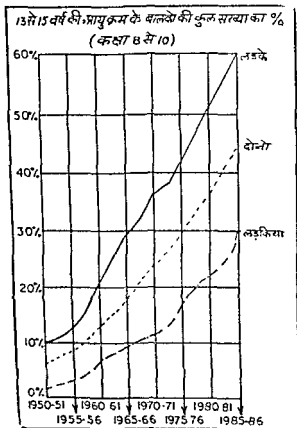
पर अङ्कित ग्राफों से यह स्पष्ट है कि 1986 तक माध्यमिक शिक्षा का विकास द्रुतगति से होगा अतः भारतीय शिक्षा आयोग ने भावी प्रगति को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

(1) प्रत्येक जिले मे माध्यमिक शिक्षा की एक विकास योजना होनी चाहिये, जो वर्तमान और भावी आवश्यकताओं के आधार पर बने। इस योजना
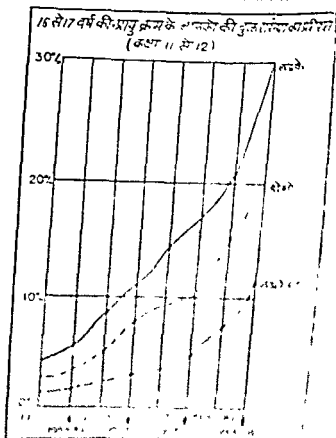
पश्चात भी कोई विकास न हो तो उस शाला का कार्य करने की स्वीकृति न दी जाये।

(2) प्रत्येक माध्यमिक शाला में अच्छे प्रशिक्षित अध्यापक होने चाहिएँ जिससे गुणात्मक शिक्षा प्रदान की जा सके। इसके लिये यह आवश्यक है प्रत्येक नई शाला को निश्चित स्तर प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। और एक कक्षा में अधिक छात्र नहीं होने चाहिए। यदि यह सम्भव हो सका तो लोअर माध्यमिक शालाओं में अच्छी शिक्षा की व्यवस्था हो सकेगी।
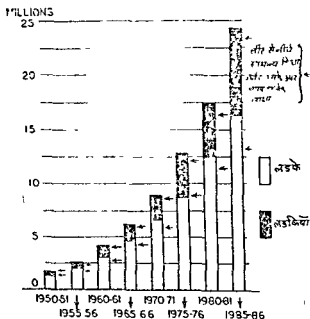
(3) प्रत्येक माध्यमिक शाला अच्छे विद्यार्थियों को प्रवेश दे। लोअर माध्यमिक स्तर पर 'स्वयं चयन पद्धति' (Self Selection), को अपनाया जाये। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर चयन की पद्धति अधिक कठोर नहीं चाहिए। चयन का
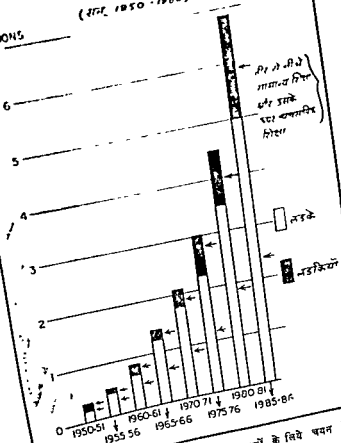
7·03 माध्यमिक स्तर पर शैक्षिक सुविधाओं को बढ़ाने की आवश्यकता
Need For Expansion Educational Facilities at Secondary Stage

जुलाई माह में शालाओं के खुलने पर प्रायः शैक्षिक सुविधाओं की कमी के कारण विद्यार्थियों के प्रवेश की समस्या प्रति वर्ष बढ़ती जा रही है। 11 से 17 वर्ष के विद्यार्थियों की संख्या शनै. शनै बढ़ रही है। तालिका न० 7·4 और 7·5 से यह स्पष्ट है।

तालिका नं० 7.4

11 से 14 वर्ष के बालकों की शैक्षिक सुविधाओं की स्थिति

वर्ष	11 से 14 वर्ष की आयु क्रम की जनसंख्या का प्रतिशत		
	लड़के	लड़कियां	कुल योग
1950–51	20 7	4·5	12·7
1951–52	22 0	4·9	13·7
1952–53	22·6	5 3	14 2
1953–54	23 5	5 9	15·9
1954–55	24·3	6·3	15·5
1955–56	25·5	6·9	16·5
1956–57	26 4	7·7	17·3
1957–58	29 2	8·8	19·3
1958–59	29·5	9·1	19·5
1959–60	31·5	10·2	21·2
1960–61	34·3	10 8	22·8
1961–62	34·9	12·2	23·8
1962–63	36·3	13·3	25·1
1965–66	39·9	16·5	28·6

तालिका न० 7·5

14 से 17 वर्ष के बालकों को शैक्षिक सुविधाओं की स्थिति

14 से 17 वर्ष की आयु क्रम की जनसंख्या का प्रतिशत

वर्ष	लड़के	लड़कियाँ	कुल योग
1950–51	5 4	1·7	5·4
1951–52	6 1	1·8	6·1
1952–53	6 5	2 0	6·5
1953–54	6 7	2·1	6·7
1954–55	7 0	2 3	7·0
1955–56	8·0	2·8	8·0
1956–57	9 1	3·0	9 1
1957–58	9 2	3·4	9·2
58–59	9 4	3·5	9 [illegible]
59–60	10·6	3·9	10[illegible]
960–61	11·8	4·3	11[illegible]
961–62	19 7	4·8	12[illegible]
1962–63	20·8	5·5	1[illegible]
1965–66	25 0	7·3	1[illegible]

उपरोक्त तालिकाओं से 11—17 वर्ष के बालकों के लिए शैक्षि[illegible] का ज्ञान होता है जिससे यह स्पष्ट है कि शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रति[illegible] की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है जिसका प्रत्यक्ष रूप [illegible] शालाओं पर प्रभाव पड़ रहा है। क्योंकि बालकों की संख्याओं में [illegible] शालाओं के पद-पदों, सुविधाओं आदि की समस्या [illegible]

यही स्थिति रही तो माध्यमिक शिक्षा से राष्ट्रीय हित की सम्भावना करना व्यर्थ है। यदि हमें माध्यमिक शिक्षा से वांछित उपलब्धि प्राप्त करनी है तो केन्द्रीय एवं राज्य सरकारों का यह पुनीत कर्तव्य है कि माध्यमिक स्तर पर शैक्षिक सुविधाओं की वृद्धि की जाये जिससे शैक्षिक अधिकार से सभी लाभान्वित हो सकें।

7.04 माध्यमिक शिक्षा की समस्याएं एवं समाधान
Problems & Remedies of Secondary Education

भारत की वर्तमान बदलती हुई परिस्थितियों को देखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम माध्यमिक शिक्षा की समस्याओं और उनके समाधान पर विचार करें तथा यह देखें कि राष्ट्र की वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार आज की माध्यमिक शिक्षा है अथवा नहीं। हमारे देश की समृद्धि, सफलता और प्रकाशमय भविष्य माध्यमिक शिक्षा पर ही अवलम्बित करता है। माध्यमिक स्तर के पश्चात् ही व्यक्ति अपने भावी स्तर का स्वप्न साकार करता है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमने प्रजातान्त्रिक शासन-पद्धति को अपनाया अत. इस पद्धति के अनुसार ही हमें अपने विद्यार्थियों की अभिवृत्ति को परिवर्तित करना होगा और यह उत्तरदायित्व माध्यमिक शालाओं का है। इन्हीं शालाओं के माध्यम से प्रजातन्त्र की नींव को दृढ़ कर भावी महल का निर्माण करना होगा जो देश के परिवर्तित मूल्यों के अनुसार सुसमायोजित एवं संगठित नागरिकों के योगदान पर निर्भर है। परन्तु यदि हम सूक्ष्म रूप से देखने का प्रयास करें तो इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि आज की माध्यमिक शिक्षा परिवर्तित सामाजिक व्यवस्था के अनुरूप नहीं है क्योंकि इससे हमें उस फल की प्राप्ति नहीं हो रही है जो कि अनिवार्य रूप से होनी चाहिए। इसका एक मात्र कारण यही है कि हमारी माध्यमिक शिक्षा में अनेकों दोष विद्यमान हैं और इसी कारण अनेकों समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं जो इस प्रकार हैं—

(1) पाठ्यक्रम
Curriculum

माध्यमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम दोषपूर्ण है। जैसा कि हम पिछले पृष्ठों में कह आये हैं कि माध्यमिक स्तर के पश्चात् जीवन-यापन करने की क्षमता का आना नितान्त आवश्यक है। परन्तु दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि हमारे देश में माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम को वास्तविक जीवन अनुभवों से दूर रक्खा गया है और यही कारण है कि माध्यमिक कक्षा पास करने के पश्चात् भी विद्यार्थीगण जीवन के किसी भी क्षेत्र में समायोजित नहीं हो पाते। माध्यमिक शाला में पुस्तकीय ज्ञान को ही महत्ता प्रदान की जाती है और दैनिक अनुभवों से दूर रक्खा जाता है। इस दोष के प्रति उत्तरदायी माध्यमिक शालाएँ नहीं हैं बल्कि पाठ्यक्रम निर्माता हैं जिन्हें बालक

नहीं बताया कि इस समस्या का समाधान तभी हो सकता है जबकि शैक्षिक प्रक्रिया में सुधार किया जाये। शिक्षा का उद्देश्य छात्रों में स्वस्थ अनुशासन प्रदान करना होना चाहिए। यह तभी सम्भव है जब कि छात्रों को अधिक से अधिक शैक्षिक सुविधाएँ प्रदान की जायें और छात्रों में रुचि जाग्रत की जाये। इसके लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि शिक्षा के सभी स्तरों में सुधार किया जाये। जब तक यह सब नहीं किया जाये तब तक इस समस्या का समाधान असम्भव है।[1]

---

1. Briefly there have been many ugly *strikes* and demons-trations-often without any justification-leading to violence, walk-out from examination halls, *ticketless* travel, clashes with the police and sometimes, even manhandling of teachers ... .Urgent steps are, therefore, needed to curb these *trends* and *to* ensure that whatever else education may or may not aim at doing, it shoul at least strive to enable young men and *women* to learn and practis civilized norms of behaviour and commit themselves honestly t social Values of significance ....*Some* of the *remedies* fo student's unrest, therefore, go beyond the education *system* Bu even if we leave them out, there are *two* major things that th education system itself can and must do :—

... that *contribute*

(3) परीक्षा प्रणाली
Examination System

परीक्षा प्रणाली के दोषों से आज सभी अवगत हैं। माध्यमिक शिक्षा के अन्त में जब असफलता मिलती है तो उसके ऊपर इसका कुप्रभाव पड़ता है और यही कारण है कि आज प्रत्येक माता-पिता अथवा अभिभावक के हृदय में परीक्षा प्रणाली के सम्बन्ध में एक टीस है। आज बालक भाग्य और उसका भावी भविष्य उसकी मानसिक योग्यता पर अवलम्बित नहीं है बल्कि परीक्षाफल पर आधारित है। आज परीक्षा अपराध बन गई है और बालकों के अपराधी होने का बहुत कुछ श्रेय परीक्षा पद्धति को ही है। सन् 1952 से 1960 के परीक्षाफलों से यह स्पष्ट होता है कि सामान्यतया 48 प्रतिशत बालक प्रतिवर्ष असफल रहते हैं। तालिका नं० 7.6 से पूर्णतयास्पष्ट है।

तालिका नं० 7.6

मेट्रिक तथा समकक्ष परीक्षाओं का परीक्षाफल[1]

वर्ष	प्रविष्ट छात्रों की संख्या	उत्तीर्ण छात्रों की संख्या	उत्तीर्ण प्रतिशत
1951--52	583,470	261,059	44 7
1952–53	724,799	33·,760	46 2
1953–54	818,620	397,005	48 5
1955–55	830,001	400,014	48 2
1954–56	920,026	429,494	46 7
1956-57	1,012,309	466,764	46 1
1957–58	1,079,966	521,552	48 3
1958–59	1,175,706	530,136	45·1
1959–60	1,349,465	572,369	42·4

1. S. N. Mukerjee *Education in India To-day and Tomorrow* p. 139

के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकास का कोई ध्यान नहीं है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने भी पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते हुए स्पष्ट किया था कि जो शिक्षा हमारे शालाओं में दी जाती है वह जीवन से पृथक् है। पाठ्यक्रम को जिन परम्परागत शिक्षण विधियों के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है उससे बालक को विश्व घटनाओं का ज्ञान नहीं हो पाता और न ही अन्तर्दृष्टि विकसित हो पाती है।[1] यही कारण है कि बालक में सृजनात्मक चिन्तन और मौलिक विचार उत्पन्न नहीं हो पाते।

भारतीय शिक्षा आयोग[2] ने माध्यमिक शाला पाठ्यक्रम को उद्देश्यपूर्ण बनाने हेतु कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये हैं। पाठ्यक्रम में सुधार लाने के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं को आवश्यक बताया है—

(1) पाठ्यक्रम में अनुसंधान

Research in Curriculum

पाठ्यक्रम के संशोधन हेतु सर्वप्रथम व्यवस्थित अनुसन्धान की आवश्यकता है

---

1. The education given in our schools is isolated from life The curriculum as formulated and as presented through the traditional methods of teaching does not give the students insight into the everyday world in which they are living. When they pass out of school, they feel ill adjusted and can not take their place confidently and competently in the community.

Secondary Education Commission, 1953, p. 22

2. For upgrading the school curriculum, a number of important steps have to be taken. The more important of these have been indicated below—

(i) *Research in Curriculum*—The first is the need of systematic curricular research so that the revision of the curriculum may be worked out as a well coordinated programme of importance on the basis of the finding of experts instead of being rushed through hapazardly and in a piece meal fashion.

(ii) *Preparation of Text Books and other Teaching Aids*—Basic to the success of any attempt at curriculum improvement is the preparation of suittable text books, teachers guides and other teaching and learning materials These define the goals and the content of the new programmes in terms meaningful to the school, and as actual tools used by the teacher and the pupil, they lend substance and significance to the proposed changes.

(iii) *In-service Education of Teachers*—In addition to this, it is necessary to make the teacher understand the chief features of the new curriculum with a view to, developing improved teac competence, better teaching skills, and a more sensitive awaren of the teaching-learning process in the changed situation. Accdingly, an extensive programme of in servic ducation consisti of seminars and refresher couises, shoul nged the teachers to the revised curriculum

Report of the Education

जिससे विशेषज्ञों के निर्णयों द्वारा प्रचलित पाठ्यक्रम मे परिवर्तन लाया जा सके। आजकल बहुत से राज्यो मे निरर्थक पाठ्यक्रम है जिसके कारण माध्यमिक स्तर पर वांछित उपलब्धियाँ प्राप्त नहीं हो पाती। इस प्रकार के अनुसन्धानों की सुविधा विश्वविद्यालयो, प्रशिक्षण महाविद्यालयो और राज्य शिक्षण संस्थानों में होनी चाहिए। इन अनुसन्धानों मे पाठ्यक्रम विशेषज्ञों का सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए।

(2) पाठ्यक्रम पर आधारित शिक्षण सामग्री एवं पाठ्य पुस्तकें
Preparation of Text books and other Teaching Aids

पाठ्यक्रम का विकास एव सफलता मुख्यत: अच्छी पाठ्य-पुस्तकों, अध्यापक निर्देशकों, और शिक्षण सामग्री पर आधारित है। नवीन योजना तथा उद्देश्यों की सार्थकता से ही पाठ्यक्रम मे परिवर्तन करना सम्भव है।

(3) शाला के अध्यापकों की शिक्षा
In service Education of Teachers

इसके अतिरिक्त पाठ्यक्रम में परिवर्तन तथा अध्यापकों की शिक्षण कला को विकसित करने हेतु यह आवश्यक है कि नवीन पाठ्यक्रम से अध्यापकों को परिचित कराया जाये जिससे नवीन स्थितियों मे शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के अन्तर्गत आगरूकता लाई जा सके। इसके लिये शालाओं के अध्यापकों को विचार गोष्ठी के माध्यम से शिक्षित किया जाये जिससे परिवर्धित पाठ्यक्रम से परिचित कराया जा सके।

(2) अनुशासनहीनता
Indiscipline

माध्यमिक शिक्षा स्तर पर छात्रों में अनुशासन की बहुत कमी है। पिछले कुछ वर्षों से छात्रों ने अनुशासनहीनता के अनेकों नग्न प्रदर्शन किये हैं। छात्रों द्वारा हिंसा, परीक्षा मे असवैधानिक कार्य, पुलिस के साथ झगड़े, राष्ट्रीय सम्पत्ति को आग लगाना, अध्यापकों को पीटना एव अनेकों असामाजिक कार्य करना मात्र के छात्रों का दैनिक कार्यक्रम बन गया है। आज हमें यह सोचने की आवश्यकता है कि इस अमद्र व्यवहार का कारण क्या है? यदि ध्यान से देखा जाये तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते है कि हमारी शिक्षा व्यवस्था मे कमी है। अनुपयुक्त पाठ्यक्रम सबसे प्रमुख कारण है क्योंकि वर्तमान पाठ्यक्रम छात्रों की अतिरिक्त शक्ति (Surplus Energy) तथा भावी व्यावसायिक समस्याओं को सुलझाने में असमर्थ है। इससे विद्यार्थियों में आनाशा वादी स्वाभाविक और परिणामस्वरूप वे असामाजिक कार्यों को करके सन्तुष्टि अनुभव करते हैं। इसके अतिरिक्त वर्तमान शिक्षा प्रक्रिया में छात्रों के लिए चेतावनीपूर्ण क्रिया-कलापों की कमी है।

इस समस्या के समाधान हेतु भारतीय शिक्षा आयोग (1966) ने सर्व

यही बताया कि इस समस्या का समाधान तभी हो सकता है जबकि शैक्षिक प्रक्रिया मे सुधार किया जाये । शिक्षा का उद्देश्य छात्रों मे स्वतः अनुशासन प्रदान करना होना चाहिए । यह तभी सम्भव है जब कि छात्रो को अधिक से अधिक शैक्षिक सुविधाएँ प्रदान की जायें और छात्रों मे रुचि जाग्रत की जाये । इसके लिये यह प्रयत्न आवश्यक है कि शिक्षा के सभी स्तरों मे सुधार किया जाये । जब तक यह सब नही किया जाये तब तक इस समस्या का समाधान असम्भव है ।[1]

---

1 Briefly there have been many ugly strikes and demonstrations–often without any justification–leading to violence, walk-out from examination halls, ticketless travel, clashes with the police and sometimes, even manhandling of teachers .... —....Urgent steps are, therefore, needed to curb these trends and to ensure that, whatever else education may or may not aim at doing, it should at least strive to en [illegible] to learn and practise [illegible] y to civilized norms [illegible] for social Values of [illegible] But student's unrest, therefore, go beyond [illegible] even if we leave them out, there are two major things that the education system itself can and must do :—

—remove the educational deficiencies that contribute to it and

—set up an adequate consultative and administrative machinery to prevent the occurrence of such incidents.

The first of these [illegible] ment of the educational process, is the hear [illegible] which [illegible] ected education cultivates shoul [illegible] ntrol. from within which does [illegible] ed to Moreover, such discipline can grow [illegible] and rises out of interest and the pursuit of deeper goals in life. In other words, the incentives to positive devotion to scholarship In other words, the incentives to positive discipline have to come from the opportunities that the institution presents and the intellectual and social demands it makes on the students..........—We have also stressed the need side by side for providing a better standard of student services Unless this is done, a radical cure to the problem is not possible.

.. .. —What we have to strive to generate is a spirit of comradeship between teachers and students based on mutual affection and esteem and on a common allegiance to the pursuit of truth, of excellence in many directions and of the good of the society as a whole If this spirit could be created, many of the problems of discipline which bedevil our academic life at present will become easier to solve and, will, we hope, disappear in course of time.

EI p. 297.

(3) परीक्षा प्रणाली

Examination System

परीक्षा प्रणाली के दोषों से आज सभी अवगत हैं। माध्यमिक शिक्षा के अन में जब असफलता मिलती है तो उसके ऊपर इसका कुप्रभाव पड़ता है और यह कारण है कि आज प्रत्येक माता-पिता अथवा अभिभावक के हृदय में परीक्षा प्रणाल के सम्बन्ध मे एक टीस है। आज बालक भाग्य और उसका भावी भविष्य उसक मानसिक योग्यता पर अवलम्बित नहीं है बल्कि परीक्षाफल पर आधारित है। आ परीक्षा अपराध बन गई है और बालकों के अपराधी होने का बहुत कुछ श्रेय परीक्ष पद्धति को ही है। सन् 1952 से 1960 के परीक्षाफलों से यह स्पष्ट होता है ि सामान्यतया 48 प्रतिशत बालक प्रतिवर्ष असफल रहते हैं। तालिका नं० 7 6 पूर्णतयास्पष्ट है।

तालिका नं० 7.6

मेट्रिक तथा समकक्ष परीक्षाओं का परीक्षाफल[1]

वर्ष	प्रविष्ट छात्रों की संख्या	उत्तीर्ण छात्रों की संख्या	उत्तीर्ण प्रतिश
1951-52	583,470	261,059	44 7
1952-53	724,799	33',760	46 2
1953-54	818,620	397,005	48 5
1955-55	830,001	400,014	48 2
1954-56	920,026	429,494	46 7
1956-57	1,012,309	466,764	46 1
1957-58	1,079,966	521,552	48·3
1958-50	1,175,706	530,136	45·1
1959-60	1,349,465	572,369	42·4

1. S. N, Mukerjee *Education in India To-day and Tomorro* p.13

परीक्षा के पश्चात् वाह्य परीक्षा का जो प्रमाण पत्र दिया उसमें छात्र की उसी प्रगति का विवरण हो जिन विषयों में वह उत्तीर्ण हो परन्तु सम्पूर्ण परीक्षा में उत्तीर्ण अथवा अनुत्तीर्ण की कोई टीका टिप्पणी न हो। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के प्रमाण पत्र के अतिरिक्त एक लेखा पत्र अवश्य दे जिसमें छात्र द्वारा पृथक् पृथक् विषयों में प्राप्तांक का विवरण हो। यदि छात्र अपनी श्रेणी को विकसित करना चाहे तो उसे सम्पूर्ण परीक्षा अथवा पृथक् विषयों में पुन. परीक्षा देने का अवसर प्रदान करना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) ने भी शिक्षा आयोग (1966) की भाँति मूल्यांकन की नवीन पद्धति पर प्रकाश डाला था, जिसके कारण आन्तरिक और वाह्य परीक्षाओं के सुधार के लिए कुछ समय के लिए आन्दोलन भी आया जिसके फलस्वरूप भारतीय सरकार ने 1958 में केन्द्रीय परीक्षा यूनिट की स्थापना की। इससे पिछले सात वर्षों में काफी सफलता प्राप्त हुई है। मूल्यांकन की नवीन धारणा से माध्यमिक शिक्षा स्तर पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। मूल्यांकन यूनिटों ने 12 राज्यों तथा एक केन्द्रीय प्रदेश में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है। परन्तु जब तक सम्पूर्ण देश के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड मूल्यांकन की नवीन पद्धति को नहीं अपनायेंगे तब तक छात्रों की असफलताएँ राष्ट्रीय सम्पत्ति की हानि के रूप में होती रहेंगी। राष्ट्रीय धन को बचाने के लिए परीक्षा पद्धति में सुधार अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा आयोग[1] के अनुसार यह कार्य अत्यन्त कठिन है और नवीन साधनों को अपनाने में समय लगेगा तभी माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य और सीखने के अनुभव प्रभावित हो सकेंगे। अभी तक माध्यमिक शिक्षा बोर्डों के द्वारा वाह्य परीक्षा के दोषों को दूर नहीं किया गया है।

(4) प्रशिक्षित अध्यापक
Trained Teachers

माध्यमिक शिक्षा कार्यक्रम की न्यूनता प्रशिक्षित अध्यापकों पर ही निर्भर करती है। माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति तब तक नहीं हो जब तक उन्हें अप्रशिक्षित अध्यापक ही पढ़ाते रहेंगे। यद्यपि तीन पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षकों के प्रशिक्षण की सुविधाओं को बढ़ाने के प्रयत्न किये हैं और चौथी पंचवर्षीय योजना

1. But the task is a stupendous one, and it will take considerable time for the new measures to make their impact on objectives learning experiences and evaluation procedures in school education. The improvements already made in the external examination by different Boards have not removed all its major defects. The objectives have not yet been enlarged to include the testing of application and ...

रीक्षा के पश्चात् वाह्य परीक्षा का जो प्रमाण पत्र दिया उसमें छात्र की उसी प्रगति का विवरण हो जिन विषयों में वह उत्तीर्ण हो परन्तु सम्पूर्ण परीक्षा में उत्तीर्ण अथवा अनुत्तीर्ण की कोई टीका टिप्पणी न हो। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के प्रमाण पत्र के अतिरिक्त एक लेखा पत्र अवश्य दे जिसमें छात्र द्वारा पृथक् पृथक् विषयों में प्राप्तांक का विवरण हो। यदि छात्र अपनी श्रेणी को विकसित करना चाहे तो उसे सम्पूर्ण परीक्षा अथवा पृथक् विषयों में पुन: परीक्षा देने का अवसर प्रदान करना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) ने भी शिक्षा आयोग (1966) की भाँति मूल्यांकन की नवीन पद्धति पर प्रकाश डाला था, जिसके कारण आन्तरिक और वाह्य परीक्षाओं के सुधार के लिए कुछ समय के लिए आन्दोलन भी आया जिसके फलस्वरूप भारतीय सरकार ने 1958 में केन्द्रीय परीक्षा यूनिट की स्थापना की। इससे पिछले सात वर्षों में काफी सफलता प्राप्त हुई है। मूल्यांकन की नवीन धारणा से माध्यमिक शिक्षा स्तर पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। मूल्यांकन यूनिटों ने 12 राज्यों तथा एक केन्द्रीय प्रदेश में कार्य करना प्रारम्भ कर दिया है। परन्तु जब तक सम्पूर्ण देश के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड मूल्यांकन की नवीन पद्धति को नहीं अपनायेंगे तब तक छात्रों की असफलताएँ राष्ट्रीय सम्पत्ति की हानि के रूप में होती रहेगी। राष्ट्रीय धन को बचाने के लिए परीक्षा पद्धति में सुधार अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा आयोग[1] के अनुसार यह कार्य अत्यन्त कठिन है और नवीन साधनों को अपनाने में समय लगेगा तभी माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य और सीखने के अनुभव प्रभावित हो सकेंगे। अभी तक माध्यमिक शिक्षा बोर्डों के द्वारा वाह्य परीक्षा के दोषों को दूर नहीं किया गया है।

(4) प्रशिक्षित अध्यापक
Trained Teachers

माध्यमिक शिक्षा कार्यक्रम की स्थूलता प्रशिक्षित अध्यापकों पर ही निर्भर करती है। माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति तब तक नहीं हो जब तक उन्हें अप्रशिक्षित अध्यापक ही पढ़ाते रहेंगे। यद्यपि तीन पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षकों के प्रशिक्षण की सुविधाओं को बढ़ाने के प्रयत्न किये हैं और चौथी पंचवर्षीय योजना

---

1 ... the task is a stupendous one, and it will take ... new measures to make their impact on ... evaluation procedures in school ...s already made in the external exami... have not removed all its major defects. ...een enlarged to include the testing of ...g abilities

Education Commission, 1966, p. 243.

ों भी शिक्षकों के प्रशिक्षणार्थ सुविधाओं को बढ़ाने का अनुमान है तथापि माध्यमि
शिक्षा की आवश्यकता पूर्ति करने न असमर्थ रहे हैं। वास्तविकता यह है कि
स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् अध्यापकों की व्यवसायिक शिक्षा को उपेक्षित दृष्टि
देखा गया है जबकि विभिन्न आयोगों तथा अनेकों संगोष्ठियों, सम्मेलनों
अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए अनेकों सुझाव प्रस्तुत किये थे परन्तु इस दिश
बहुत कम कार्य हो सका है। जब तक अध्यापकों के प्रशिक्षण पर ध्यान नहीं दि
जायेगा तब तक माध्यमिक शिक्षा का स्तर ऊँचा उठना असम्भव है।

देश की बदलती हुई सामाजिक व्यवस्था के लिए यह अत्यन्त अनिवा
कि विज्ञान और वाणिज्य अध्यापकों को प्रशिक्षित किया जाये। आज हमें
रूप से उन छात्रों की आवश्यकता है जो विज्ञान के क्षेत्र में दक्ष हों तथा वि
वैज्ञानिक दृष्टिकोण हो, यह तभी सम्भव है जबकि हमारे छात्रों को प्रशि
अध्यापकों से समुचित शिक्षा प्राप्त हो सके।

शिक्षा आयोग (1966) ने इसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा
शिक्षा के लिए अध्यापकों का व्यावसायिक शिक्षा का स्थूल कार्यक्रम अत्यन्त
श्यक है। अध्यापक शिक्षा पर व्यय करने से अधिक लाभ हो सकता है
इसके लिए कम आर्थिक साधनों की आवश्यकता होती है और जिससे
व्यक्तियों की शिक्षा को सुधारा जा सकता है।[1]

इसके सम्बन्ध में आयोग ने निम्नलिखित दोष बताये हैं—

(i) पाठ्यक्रम में सजीवता एवं वास्तविकता का अभाव,
(ii) प्रशिक्षण महाविद्यालयों में योग्य शिक्षकों का अभाव,
(iii) परम्परागत प्रशिक्षण का होना,
(iv) शिक्षण विधियों की वर्तमान शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप
असमर्थता
(v) पाठ्यक्रम का शिक्षा समस्याओं से सम्बन्ध न होना।

सुझाव हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

(i) अध्यापक शिक्षा में सुधार,
(ii) प्रशिक्षण काल में अभिवृद्धि,
(iii) प्रशिक्षण संस्थाओं के कार्यक्रमों में सुधार,

---

1. A sound programme of professional education is essential for the qualitative improvement of educat ment in teacher education can yield very rich divide the financial resources required are small when meas the resulting improvements in the education of millions.

Report of the Education Commission

(iv) प्रशिक्षण महाविद्यालयों का विश्वविद्यालयों से सम्बन्ध,

(v) पाठ्यक्रम का शिक्षा समस्याओं से सम्बन्ध।

'अध्यापक शिक्षा' पर हम पृथक रूप से किसी अध्याय में विस्तृत चर्चा करेंगे परन्तु यहां केवल इतना ही स्पष्ट करना है कि माध्यमिक शिक्षा को सार्थकता प्रदान करने लिए प्रशिक्षित अध्यापकों की नितान्त आवश्यकता है।

(5) एकरूपता का अभाव
Lack of uniformity

माध्यमिक शिक्षा स्तर में एकरूपता का अभाव है। उदाहरणार्थ गुजरात, महाराष्ट्र का कुछ भाग, उत्तर प्रदेश आदि ने उच्चतर माध्यमिक स्तर को स्वीकार नहीं किया। जबकि महाराष्ट्र, विदर्भ, मध्यप्रदेश, हैदराबाद, राजस्थान आदि ने उच्चतर माध्यमिक स्तर को स्वीकार किया है।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) ने माध्यमिक शिक्षा की निम्नलिखित व्यवस्था की सिफारिश की :—

(i) मिडिल अथवा जूनियर माध्यमिक अथवा सीनियर बेसिक स्तर जिसका कार्यकाल तीन वर्ष होना चाहिए,

(ii) उच्चतर माध्यमिक स्तर जिस की समयावधि चार वर्ष होनी चाहिए।[1]

उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति हेतु माध्यमिक शिक्षा आयोग ने इण्टरमीजिएट स्तर को समाप्त करने की सिफारिश की।[2]

माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझावों पर विचार करने के लिए भारतीय सरकार ने राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों तथा माध्यमिक शिक्षा बोर्डों से विचार-विमर्श किया। सन् 1955 में केन्द्रीय शिक्षा सलाहाकार समिति तथा उपकुलपतियों के सम्मेलन ने निम्नलिखित शिक्षा व्यवस्था का सुझाव दिया—

(i) आठ वर्ष की प्रारम्भिक शिक्षा-इस स्तर में सामान्य रूप से 6 से 14 वर्ष के बालक होंगे।

(ii) तीन वर्ष की उच्चतर माध्यमिक शिक्षा—जिसमें सामान्य रूप से 14 से 17 वर्ष के बालक होंगे।

(iii) उच्चतर माध्यमिक कक्षा के पश्चात् तीन वर्ष की विश्वविद्यालय शिक्षा।

---

1 *Secondary Education Commission*, 1953, p. 33

2. *Ibid* p. 32

कुछ लोगों का विचार है कि उच्चतर माध्यमिक शिक्षा को ग्यारह वर्ष करने से शिक्षा के स्तर में कमी आयेगी इसीलिए माध्यमिक स्तर को बारह वर्ष का ही रखा जावे। राज्य शिक्षा मन्त्रियों, उपकुलपतियों तथा अन्य शिक्षा विद् का सम्मेलन[1] जो नई दिल्ली में 10-12 नवम्बर, 1963 को हुआ निम्नलिखित सुझाव दिये :—

'देश में माध्यमिक शिक्षा की स्थिति को देखते हुए गुणात्मक रूप से ई स्थिति को सुधारने हेतु, अच्छी पाठ्य पुस्तकों और प्रशिक्षित अध्यापकों की आवश्यकता के अतिरिक्त यह अत्यन्त आवश्यक है कि समस्त स्तरों में एक रूपता हो अतः सम्मेलन निम्नलिखित बिन्दुओं पर सहमति प्रगट करता है—

(i) देश को 12 वर्षीय माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्य की ओर अग्रसर होना चाहिए, यद्यपि आर्थिक एवम् मानव शक्ति की दृष्टि से सभी राज्यों में निकट भविष्य में यह सम्भव नहीं हो सके ;

(ii) देश में माध्यमिक शिक्षा की समाप्ति के पश्चात् इन्टरमीडिएट परीक्षा का स्तर प्राप्त करना चाहिए।

(iii) विश्वविद्यालयों म
सामान्यतः 17 वर्ष

(iv) सम्पूर्ण देश में प्रथम स्नातक कोर्स 3 वर्ष का होना चाहिए।

उपरोक्त सम्पूर्ण विवेचन से हमारा मन्तव्य यह है कि कुछ शिक्षा शास्त्रियों का विचार है कि माध्यमिक स्तर को ग्यारह वर्ष के स्थान पर बारह वर्ष का कर दिया जाये, इसके विपरीत कुछों का विचार है कि बारह वर्ष करना निरर्थक है और आर्थिक दृष्टि से अनुचित है।

शिक्षा आयोग (1966) ने इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये हैं:—

(i) एक वर्ष से तीन वर्ष तक पूर्व प्राथमिक शिक्षा,

(ii) आठ वर्ष तक प्राथमिक शिक्षा जिसमे प्रारम्भिक प्राथमिक स्तर चार अथवा पाँच का हो और उच्चतर प्राथमिक स्तर तीन अथवा दो वर्ष का हो।

(iii) सामान्य शिक्षा के रूप में उच्चतर माध्यमिक स्तर को दो वर्षों का रखा जाये अथवा एक से तीन वर्षों तक व्यावसायिक शिक्षा।

(iv) माध्यमिक शालाएँ दो प्रकार की हों, उच्च शालाएँ जिसका 10 वर्ष का शिक्षाक्रम हो और उच्चतर माध्यमिक शाला जिसमे 11 अथवा 12 वर्ष का शिक्षाक्रम हो।

कहने का तात्पर्य यह है कि माध्यमिक स्तर को एकरूपता प्रदान करना नितान्त आवश्यक है चाहे वह दस वर्षीय हो अथवा बारह वर्षीय। माध्यमिक शिक्षा कितने वर्ष की हो—यह एक विवादग्रस्त प्रश्न है? शिक्षा आयोग[1] की सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि आयोग ने भी समस्त देश में एकरूपता पर बल दिया है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् माध्यमिक शिक्षा की प्रगति, भावी सम्भावित विकास, समस्याओं आदि पर विचार करने के पश्चात् अब हमे यह विचार करना

---

1. 'The Commission has shown great wisdom in keeping the first degree stage at the present 3 years ... ... The abolition of the one year Pre-University course is the most urgently needed reform but its replacement by the 2 year Higher Secondary course will not yield the expected benefit if this is done in secondary course which has already 10 classes. Even from the psychological point it is wrong to have a mixed age group from 6 to 16 in one institution. We would all have welcomed a clear and forthright recommendation that this should be entrusted to independent junior colleges or to existing under graduate colleges rather than to secondary schools.

Dr. D S. Reddi, *Deccan Chronicle*, July 17, 1966.

है कि राष्ट्रीय स्तर पर माध्यमिक शिक्षा की क्या विशेषताएँ होनी चाहिए। भाखिर उस शिक्षा का क्या लाभ जो विद्यार्थियों में राष्ट्रीय चरित्र निर्माण न कर सके और देश के विद्यार्थी राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुसार अपना योग प्रदान कर सकने में असमर्थ हों। अतः स्वतन्त्रता के इतने वर्षों के पश्चात् हमें माध्यमिक शिक्षा की उन विशेषताओं पर अवश्य विचार करना चाहिए जो राष्ट्रीय स्तर के लिए आवश्यक हैं।

7 05 राष्ट्रीय स्तर पर माध्यमिक शिक्षा की विशेषताएँ

Characteristics of Secondary Education at National Level

राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा का सम्बन्ध व्यक्तियों के जीवन, उनकी आवश्यकताओं एवम् महत्वकांक्षाओं से होना चाहिए। इसके लिए शिक्षा को साधन के रूप मे स्वीकार करना होगा। हमारे राष्ट्रीय विकास की गति के क्षीण होने का कारण यह है कि वर्तमान शिक्षा के उद्देश्य एवम् पाठ्यक्रम राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुरूप नही हैं। यही कारण है कि हमे चारों ओर निराशा, असन्तोष, वैमनस्यता और आक्रोश दृष्टिगत हो रहा है अतः यह आवश्यक है कि राष्ट्रीय स्तर पर माध्यमिक शिक्षा की विशेषताओं के विषय मे विचार करें।

सक्षेप में राष्ट्रीय स्तर पर माध्यमिक शिक्षा की निम्नलिखित होनी चाहिए :—

(1) शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय एकता पर बल

Emphasis on National unity by Education

राष्ट्रीय स्तर पर माध्यमिक शिक्षा की सर्वप्रथम विशेषता यह होनी चाहिए कि जो समस्त राष्ट्र को एक सूत्र में बाध सके। भूतपूर्व केन्द्रीय शिक्षा मन्त्री श्री छागला ने[1] राज्य शिक्षा मन्त्रियो के सम्मेलन मे शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय एकता पर बल देते हुए कहा था कि शिक्षा को राष्ट्रीय एकता पर बल देना चाहिए और समस्त भारतीय शिक्षा सस्थाओं को जातीयता और साम्प्रदायिकता की भावना को दूर करना चाहिए।

---

1. "What do I mean when I talk of a national system of education. ? In the fir-t place I think of education that emphasises the unity of our country. I think of all - Indian institutions - the more the better for our country—institutions which will get over differences of caste and communities."

[illegible] of the State Education

M. C. Chag
Minister's

माध्यमिक शिक्षा स्तर मे छात्र एवम् छात्राओं की आयु इस प्रकार की होती है जबकि उनमें अच्छे संस्कारों को भरा जा सकता है। यही वह समय है जिसमें भावी जीवन की आदर्तों का निर्माण होता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी इस आयु का विशेष महत्व है अत यह आवश्यक है कि इस आयु मे राष्ट्रीय चरित्र की भावना प्रत्येक विद्यार्थी मे हो। यही हमारे देश की सबसे पहली और महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

(2) शिक्षा द्वारा प्रजातान्त्रिक भावनाओं का विकास
Development of Democratic Feelings by Education

माध्यमिक शिक्षा अधिकाश नागरिको के लिए शैक्षिक जीवन का अन्त होता है। राष्ट्रीय आवश्यकताओं को ध्यान मे रखते हुए यह नितान्त आवश्यक है कि हमारे प्रत्येक विद्यार्थी मे आदर्श नागरिक-सुलभ गुणो का विकास प्रजातान्त्रिक भावनाओं पर आधारित हो। प्रजातान्त्रिक मूल्यों की अभिवृद्धि केवल माध्यमिक शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव है। शिक्षा द्वारा बालकों मे चिन्तन करने की शक्ति, नवीन विचारों को ग्रहण करने की शक्ति, सहनशीलता, न्याय करने की माँग, देश भक्ति आदि अनेक गुणों का विकास किया जा सकता है।

(3) शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय पद्धति का विकास
Emergence of National System by Education

माध्यमिक शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय पद्धति का विकास होना आवश्यक है। शिक्षा में वह बल होना चाहिए जिसके आधार पर कोई भी व्यक्ति यह कह सके कि भारतीय शिक्षा पद्धति का भी अस्तित्व है। ब्रिटिश शिक्षा-पद्धति, अमरीकन शिक्षा पद्धति अथवा सोवियत शिक्षा पद्धति का अन्तर आसानी से देखा जा सकता है। वह क्या है जो हमें उस अन्तर को स्पष्ट करने मे सहायक होता है? क्या हम यह कह सकते हैं कि भारतीय शिक्षा पद्धति भी अपनी भिन्नता के कारण अस्तित्व रखती है?"[1]

इस प्रश्न का उत्तर उस समय मिल सकता है जबकि हमारी शिक्षा राष्ट्रीय पद्धति का विकास कर सके।

---

1. "Though we can not precisely define the term, we can recognise what it stands for. For example, we can readily distinguish the British System of education from the American system or the soviet system of education from both. What is it that gives them their hall mark, their distinction. ? Can we say that the educational system of India carries its own distinction on its own signature. ?"

Raja Roy Singh, *Emerging Problems of Indian Education*, p 64.

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. Connell, I.
   The Foundations of Secondary Education, Australian Council for Educational Research, Melbourne, [illegible].
2. Ford Foundations
   Teachers and Curricula in Secondary Schools
3. Government of India
   Reconstruction of Secondary Education, Publication Division Delhi, 1962.
4. ... — —
   Report of the Secondary Education Commission, Publication Division, Delhi, 1953.
5. ... — —
   Report of the Secondary Education Commission, Ministry of Education, Delhi, 1966.
6. Jha, S. N.
   Secondary Education, The Indian Press Publications P. Ltd., 1960
7. Mathur, V S.
   Education and Future of India, 1961.
8. Mukerji, S. N.
   Education in India To-day & Tomorrow, Acharya Book Depot Baroda, 1964.
9. Saiyidain, K. G
   Problems of Educational, Reconstruction, Asia Publishing House, New Delhi, 1962
10. Shrimali, K. L.
    Problems of Education in India, Publication Division New-Delhi, 1961.
11. Shrivastava, B. D.
    The Development of Modern Indian Education, Orient Longmans, New Delhi, 1963.

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

(1) Trace the development of Higher Secondary Education in India. What special problems confront the educationists in organizing Secondary Education.

(2) The Secondary Schools are the backbone of a country's national life, from here are trained the nation's potential leaders and experts in all walks of life. How would you like to reorganize the present system of Secondary Education to fulfil this purpose ?

(B. T., 1955)

(3) What in your opinion are the major problems of Secondary Education in India and in Rajasthan ? What attempts have been made in recent times to tackle them ? To what extent do you agree with the solutions suggested ?

आपके विचार मे भारत में तथा राजस्थान में माध्यमिक शिक्षा की कौन २ सी प्रमुख समस्याएं हैं ? हाल ही मे उनके समाधान के क्या क्या प्रयत्न किये गये हैं ? उन दिये गये सुझावों से आप कहाँ तक सहमत हैं ?

(राजस्थान विश्वविद्यालय, 1967)

(4) With reference to the nature and type of the social order that we envisage for the future. What in your opinion are the new needs and requirements of the nation to which secondary education should be geared ?

भविष्य के सामाजिक स्वरूप की कल्पना करते हुए विवरण कीजिए कि आपके विचार में राष्ट्र की कौन सी नवीन आवश्यकताएं हैं जिनके अनुकूल माध्यमिक शिक्षा को होना चाहिए ?

(राजस्थान विश्वविद्यालय, 1966)

(5) Estimate the effect of Reorganisation of Secondary Education in Rajasthan. What suggestions do you have to offer for complete success in the scheme ?

(Rajasthan University, 1962)

(6) Comment upon the view that the present system of Secondary Education in India is the gift of the British regime and needs drastic changes. What modifications would you like to introduce to suit our present needs ?

भारत में माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान प्रणाली ब्रिटिश राज्य की देन और उसमे परिवर्तनों की आवश्यकता है। इस कथन की विवेचना कीजिए आधुनिक आवश्यकताओं के अनुरूप आप कौन से परिवर्तन करना चाहेंगे ?

(B. T., 195

(7) There is no standard definition of Secondary Educati for India. In terms of what would you define secondary educati and secondary stage of education ? If the different states are p mitted to adopt their own definitions with modifications, wh variations would you permit in the general definition suggest by you ?

(Agra University, 196

अध्याय आठ

Chapter Eight

पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण

Diversification of Curriculum

अध्ययन बिन्दु

Learning Points

* 8.01 पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण हेतु प्रयत्न
  Efforts for Diversification of Curriculum
  1. भारतीय शिक्षा आयोग (1882)
  2. हर्टाग समिति (1929)
  3. सप्रू कमेटी (1934)
  4. वुड-ऐबट रिपोर्ट (1936-37)
  5. आचार्य नरेन्द्र देव समिति (1939)
  6. सार्जेण्ट रिपोर्ट (1944)
  7. माध्यमिक शिक्षा पुर्नसगठन समिति (1952-53)
  8. माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53)
* 8.02 पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण क्यो ?
  Why Diversification of Curriculum ?
  1. वैयक्तिक भिन्नता
  2. सामाजिक परिवर्तन
  3. विद्यार्थियों की आवश्यकता हेतु
  4. राष्ट्रीय उत्थान हेतु
* 8.03 पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण के पक्ष मे विचार
  Views in Favour of Diversification of Curriculum

पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण

DIVERSIFICATION OF CURRICULUM

आधुनिक समय में माध्यमिक शिक्षा का सबसे बड़ा दोष उसका
है। आज की प्रगति, ज्ञान का विकास और नवीन विचारधाराओं के क
आवश्यक हो गया है कि विद्यालय पाठ्यक्रम में वांछित परिवर्तन किये जा
माध्यमिक स्तर पर सुधार किया जा सके। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात्
स्थिति को सुधारने के लिए यह अनुभव किया गया कि माध्यमिक शिक्षा
क्रम में परिवर्तन लाया जावे जिससे देश का सामाजिक, राजनैतिक, औ
चारित्रिक विकास हो सके और सभी भावी नागरिक माध्यमिक स्तर स
के पश्चात् देश की प्रगति में अपना योग प्रदान कर सकें। विविध प्रकार
प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि बालकों की अभिरुचियों और
के अनुसार शिक्षा प्रदान की जावे इसके परिणाम स्वरूप ही पाठ्यक्रम के

विचारधारा प्रवाहित हुई। भारत सरकार ने माध्यमिक शिक्षा
[illegible] समितियों और आयोगों की नियुक्ति की जिनसे माध्यमि
[illegible] तैयार बनाई जा सके। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व
[illegible] समितियों एवं आयोगों ने सुझा

8.01 पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण हेतु प्रयत्न
Efforts for Diversification of Curriculum

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व एवं पश्चात् पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण हेतु
निम्नलिखित प्रयत्न हुए—

(1) भारतीय शिक्षा आयोग (1882)
Indian Education Commission (1882)

भारतीय शिक्षा के इतिहास में सर्वप्रथम शिक्षा की सम्पूर्ण समस्या
अध्ययन सन् 1882 में भारतीय शिक्षा आयोग द्वारा किया गया। आयोग
सुझाव दिया कि परम्परागत पाठ्यक्रम द्वारा विद्यार्थियों का सर्वांङ्ग विकास
नहीं है और प्रस्तुत पाठ्यक्रम से आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो सकत
आयोग ने पाठ्यक्रम को दो भागों में विभाजित करने का सुझाव दिया—

(i) साहित्यिक पाठ्यक्रम

(ii) व्यावसायिक अथवा जीविकोपार्जन सम्बन्धी पाठ्यक्रम

(2) हर्टाग समिति (1929)
Hartog Committee (1929)

इस समिति ने भारतीय शिक्षा आयोग के पाठ्यक्रम सम्बन्धी सु
अनुमोदन किया और पाठ्यक्रम के जीविकोपार्जन सम्बन्धी उद्देश्य पर ब
समिति ने सुझाव दिया कि मिडिल स्तर का पाठ्यक्रम संकुचित है जिससे
जीवनोपयोगी कार्य नहीं कर सकता। अतः मिडिल स्कूलों के पाठ्यक्रम क
कर हाई स्कूल की शिक्षा में औद्योगिक एवम् व्यावसायिक विषयों का पा
स्थान दिया जाये। माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में इस प्रकार के वैकल्पि
रखे जायें जिससे विद्यार्थियों का भावी जीवन सुखमय हो सके और इ
आवश्यक है कि तकनीकी और औद्योगिक शालाएं खोली जायें।[1]

(3) सप्रू कमेटी (1934)
Sapru Committee (1934)

यू० पी० प्रान्त की सरकार ने सन् 1934 में सर तेज बहादुर
अध्यक्षता में एक समिति की नियुक्ति की। समिति ने अपने प्रतिवेदन में ह
कि माध्यमिक शिक्षा स्तर पर विद्यार्थियों का एक मात्र उद्देश्य सर्टीफि

---

1 The diversion of more boys to industrial and co
careers at the end of the middle stage, for which provisio
be made by alternative courses in that stage, preparatory t
instruction in technical and industrial schools.

Hartog Repo

करना मात्र रह गया है और इसमे उनके जीवन की वास्तविकताओं का कोई सम
नहीं है । जिससे बेकारी की समस्या दिन प्रतिदिन बढती जा रही है । इस सम
का केवल एक ही उपाय है और वह यह कि माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम
विभिन्नीकरण कर दिया जाये जिससे विद्यार्थी उच्च शिक्षा की ओर भी अग्रसर
सकें और व्यावसायिक दक्षता भी प्राप्त कर सकें ।[1]

(4) वुड–ऐबट रिपोर्ट (1936–37)

Wood–Abbot Report (1936-37)

वुड और ऐबट ने तत्कालीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था की जाँच की औ
बेकारी की समस्या के समाधान स्वरूप शिक्षा के पुनर्संगठन की आवश्यकता पर ब
दिया । सामान्य शिक्षा के सम्बन्ध में पाठ्यक्रम की विविधता पर बल देते हुए य
सुझाव दिया गया कि प्राथमिक स्तर के पाठ्यक्रम में परिवर्तन लाया जावे और
पुस्तकीय ज्ञान के स्थान पर बालकों की रुचियों और प्रवृत्तियों का आधार
माना जावे । ग्रामीण क्षेत्रों का पाठ्यक्रम ग्रामीण आवश्यकताओं और परिस्थितियों
के अनुसार होना चाहिए । माध्यमिक स्तर पर कला एवम् हस्तकला की शिक्षा का
प्रावधान होना चाहिए ।

रिपोर्ट में व्यावसायिक शिक्षा पर विशेष बल दिया गया और इसके
सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिये गये :—

(i) देश की औद्योगिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु व्यावसायिक शिक्षा का विकास होना अनिवार्य है ।

(ii) व्यावसायिक शिक्षा का पूर्ण होना अत्यन्त अनिवार्य है अतः व्यावसायिक शिक्षा के साथ सामान्य शिक्षा भी होनी चाहिये । व्यावसायिक शिक्षा का प्रारम्भ कुछ सामान्य शिक्षा के पश्चात् होना चाहिए ।

(iii) व्यावसायिक शिक्षा के विकास हेतु उद्योगपतियों को सहायता करनी चाहिए ।

---

1. In situation like this the real remedy is to provide diversified courses of study at the secondary stage and to make that stage more practical and complete in itself and more closely related to the vocational requirements of different types of studies. At the secondary stage, side by side, with the general courses leading to the university there should be parallel courses offering instructions in technical, commercial, industrial

(iv) व्यावसायिक शिक्षा के प्रसार हेतु प्रत्येक प्रान्त में व्यावसायिक शिक्षा सलाहार बोर्ड होना चाहिए जो कुटीर उद्योगों, कपड़ा उद्योग तथा इन्जीनियरिंग की शिक्षा हेतु व्यवस्था करे।

(v) वाणिज्य को प्राथमिक और माध्यमिक शालाओं में वैकल्पिक विषय बनाया जाये।

(vi) विभिन्न उद्योगों की शिक्षा हेतु पालीटेकनिक शालाएं खोली जायें।

(vii) दो प्रकार की व्यावसायिक शालाएं खोली जायें—

1. जूनियर व्यावसायिक शालाएं 2 सीनियर व्यावसायिक शालाएं

उपरोक्त सुझावों से स्पष्ट है कि सामान्य एवम् व्यावसायिक शिक्षा सम्बन्धी सुझाव अत्यन्त महत्वपूर्ण थे और भारत की तत्कालीन परिस्थितियों के अनुरूप थे। पाठ्यक्रम को विविध स्वरूप प्रदान किया गया था।

(5) आचार्य नरेन्द्र देव समिति (1939)

Acharya Narendra Deo Committee

समिति ने विद्यार्थियों के सर्वाङ्गीण विकास हेतु शैक्षिक सुविधाओं के प्रसार के लिए सुझाव दिये। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से वैयक्तिक भिन्नता को आधार मानकर पाठ्यक्रम में विभिन्नता लाने की आवश्यकता पर बल दिया और पाठ्यक्रम को विभिन्न वर्गों में विभाजित करने का सुझाव दिया—

सामान्य वर्ग

(i) साहित्यिक
(ii) कलात्मक
(iii) वाणिज्य

विज्ञान वर्ग

(i) व्यावसायिक कृषि
(ii) टेकनालाजी
(iii) वैज्ञानिक पाठ्यक्रम

समिति ने सुझाव दिया कि पाठ्यक्रम का विश्लेषण किया जाये और तत्कालीन आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाये।

(6) सार्जेन्ट रिपोर्ट (1944)

Sargent Report (1944)

रिपोर्ट में हाई स्कूलों को दो भागों में विभाजित किया गया—

(i) साहित्यिक हाईस्कूल (Academic High School)
(ii) प्राविधिक हाईस्कूल (Technical High School)

साहित्यिक हाई स्कूलों में सामान्य विषयों के अध्ययन की व्यवस्था होगी और प्राविधिक हाईस्कूलों में काष्ठ कला, धातु कला, इन्जीनियरिंग एवम् वाणिज्य सम्बन्धी विषयों की व्यवस्था होगी। रिपोर्ट में स्पष्टतः कहा गया कि पाठ्यक्रम प्रत्येक दशा में परिस्थितियों के अनुसार विविध होना चाहिए न कि विश्वविद्यालयों के लिए अथवा परीक्षा मात्र के लिए।[1]

(7) माध्यमिक शिक्षा पुनर्संगठन समिति (1952—53)
Secondry Education Reorgnaiss Committee (1952-53)

समिति ने पुनः आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में पाठ्यक्रम की व्यावहारिकता के लिए सुझाव दिये। पाठ्य विषयों के चयन हेतु विद्यार्थियों के लिए मार्ग दर्शन आवश्यक बताया। समिति ने बहुउद्देशीय शालाओं की स्थापना के लिए भी सुझाव दिये।

(8) माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53)
Secendary Education Commission (1952-53)

आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण हेतु एक स्पष्ट रूपरेखा प्रस्तुत की। आयोग के विचारानुसार माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम छात्रों की योग्यता एवम् अभिरुचियों के आधार पर बनाया जावे। इसके लिए पाठ्यक्रम का विविध होना अत्यन्त आवश्यक है। संक्षेप में पाठ्यक्रम की रूप रेखा निम्नलिखित प्रकार प्रस्तुत की गई—

अनिवार्य विषय

1. मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा अथवा मातृभाषा तथा शास्त्रीय भाषा का मिश्रित पाठ्यक्रम।

2 निम्नलिखित भाषाओं में से एक भाषा :—

(i) हिन्दी (उन विद्यार्थियों के लिए जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है)
(ii) प्रारम्भिक अंग्रेजी (उन विद्यार्थियों के लिए जिन्होंने मिडिल स्तर तक अंग्रेजी नहीं पढ़ी है।)

(iii) उच्च अंग्रेजी

1. The curriculum in all cases should be as varied as circumstances permit and should not be unduly restricted by the requirements of universities or examining bodies.

Sargent Report, p. 27

(iv) कोई भारतीय भाषा (हिन्दी के अतिरिक्त)
(v) आधुनिक विदेशी भाषा (अंग्रेजी के अतिरिक्त)
(vi) एक शास्त्रीय भाषा

प्रथम दो वर्षों के लिए समाज विज्ञान का सामान्य पाठ्यक्रम।

प्रथम दो वर्षों के लिए गणित तथा सामान्य विज्ञान।

निम्नलिखित में से कोई एक शिल्प।

(i) कताई बुनाई
(ii) काष्ठ कला
(iii) धातु कार्य
(iv) बागवानी
(v) सिलाई
(vi) कढ़ाई
(vii) मुद्रण
(viii) प्रतिरूपण

...ल्पिक विषय

...निम्नलिखित सात समूहों में से एक समूह के तीन विषय[1]

मानव विज्ञान (Humanities)
विज्ञान (Science)
) प्राविधिक (Technical)
वाणिज्यक (Commercial)
कृषि (Agriculture)
) ललित कलाएँ (Fine Arts)
) गृह विज्ञान (Domestic Science)

...योग ने तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार एक आदर्श विविध पाठ्य...
...योजना प्रस्तुत की थी। पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण मनोवैज्ञानिक...
...र आधारित था।

...स प्रकार हम देखते हैं कि माध्यमिक स्तर पर अनेकों आयोगों और...
...ने पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण हेतु सुझाव दिये। शिक्षा आयोग...
...56) ने पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण पर बल नहीं दिया है। यद्यपि आयोग...

---

[1]. विस्तृत विवेचन के लिए इसी पुस्तक का अध्याय छठा देखिये।

ने सृजनात्मक क्रियाओं, कार्यानुभवों, और माध्यमिक शिक्षा को महत्वपूर्ण बताया है तथापि विविध पाठ्यक्रम की रूप रेखा को प्रस्तुत नहीं किया गया है। सम्भवतः आयोग ने पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण को महत्व प्रदान नहीं किया जिसकी नितान्त आवश्यकता थी।

8.02 पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण क्यों ?

Why Direstification of Corriculom ?

प्रायः यह प्रश्न पूछा जाता है कि पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण क्यों हो ? यद्यपि हम इस प्रश्न का उत्तर उपरोक्त आयोगों और समितियों के सुझावों में आंशिक रूप से पा चुके हैं तथापि विषय के महत्वपूर्ण होने के कारण यह आवश्यक कि इसका विशद विवेचन किया जावे। सुविधा की दृष्टि से इस प्रश्न का उत्तर निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर दिया जा सकता है—

(1) वैयक्तिक भिन्नता

Individual Differences

वैयक्तिक भिन्नता के कारण यह नितान्त आवश्यक है कि विविध पाठ्यक्रम की व्यवस्था हो। शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकासों के कारण प्रत्येक विद्यार्थी एक दूसरे से भिन्न होता है। सभी विद्यार्थियों की रुचि और अभिवृत्ति भिन्न होती है। किसी विद्यार्थी की साहित्य के प्रति जागरूकता होती है तो किसी की विज्ञान के प्रति। कहने का तात्पर्य यह है कि सभी विद्यार्थियों में कोई न कोई विलक्षणता अवश्य होती है—और यदि हम इस आधारभूत सिद्धान्त को भी स्वीकार करते हैं तो पाठ्यक्रम की विभिन्नता को भी स्वीकार करना चाहिए।

(2) सामाजिक परिवर्तन

Social Change

शिक्षा का उत्तरदायित्व विद्यार्थियों में वातावरण के प्रति समायोजन कराना मात्र ही नहीं है बल्कि उसमें वांछित सामाजिक परिवर्तन करने की क्षमता प्रदान करना भी है। आज जब हम अन्य प्रगतिशील देशों की ओर देखते हैं तो हमें आभास होता है कि हम उनसे कितने वर्ष पिछड़े हुए हैं। इस पिछड़ेपन का प्रमुख कारण हमारी शिक्षा व्यवस्था की दुर्बलता है जो शिक्षा व्यवस्था अंग्रेज छोड़कर गये थे उसमें अभी तक बहुत;कम अन्तर आया है, और इसी का कारण है कि हम अभी तक आवश्यकतानुसार प्रगति नहीं कर पाये हैं। यदि हमें प्रगति करनी है तो देश की आने वाली पीढ़ी के लिए इस प्रकार के पाठ्यक्रम की रूपरेखा बनानी होगी जिसमें उनकी अनुसार शिक्षा प्रदान की जा सके। यह तभी सम्भव है कि माध्यमिक शिक्षा के हम जागरूक हों और पाठ्यक्रम में समस्त दशाओं की उपस्थिति करने में

समर्थ हो सकें जिनसे भावी नागरिकों को लाभ होने की सम्भावना हो। अतः पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण करना आवश्यक है।

(3) विद्यार्थियों की आवश्यकताओं हेतु
For the Needs of Students

पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण से विद्यार्थियों की आवश्यकता की पूर्ति होती है। माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार हमारी माध्यमिक शालाएँ एक मार्गीय नहीं होनी चाहिए बल्कि उनके अन्दर शैक्षिक कार्यक्रमों की विविधता होनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों की विभिन्न अभिवृत्तियों, रुचियों और योग्यताओं के अनुसार शिक्षा प्रदान की जा सके तथा अनिवार्य शिक्षा की समाप्ति तक उनमें दक्षता आ सके। शालाओं में अधिक व्यापक पाठ्यक्रम की सुविधा होनी चाहिये जिसमें सामान्य और व्यावसायिक विषय हों और विद्यार्थियों को अपनी आवश्यकताओं के अनुसार विषयों को चुनने के अवसर प्राप्त होने चाहिए।[1] कहने का तात्पर्य यह है कि विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुसार पाठ्क्रम की व्यवस्था का होना मनोवैज्ञानिक और शैक्षिक आधारस्वरूप नितान्त आवश्यक है।

(4) राष्ट्रीय उत्थान हेतु
For National Prosperity

सम्पूर्ण शिक्षा का उद्देश्य राष्ट्रीय उत्थान हेतु शैक्षिक अवसर प्रदान करना है, जिसमें माध्यमिक शिक्षा का तो यह विशिष्ट उद्देश्य है कि इसके द्वारा राष्ट्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सभी प्रकार के आदर्श नागरिकों का निर्माण हो सके। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने राष्ट्रीय जीवन में माध्यमिक शिक्षा के उत्तरदायित्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि वास्तव में राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक चरण–कला, विज्ञान, उद्योग और वाणिज्य आदि के लिए समस्त देश को कुशल नेता प्रदान करने का विशिष्ट कार्य माध्यमिक शिक्षा का ही है। वर्तमान एक पक्षीय शैक्षिक व्यवस्था से नेतृत्व प्राप्त होना सम्भव नहीं है और इसीलिए पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण आवश्यक है।[2] अतः राष्ट्रीय उत्थान हेतु हमें सभी प्रकार के व्यक्तियों को

---

1. ·········That our secondary schools should no longer be 'single track' institutions but should offer a diversity of educational programmes calculated to meet varying aptitudes, interests and talents which come into prominence towards the end of the period of compulsory education. They should provide more comprehensive courses which will include both general and vocational subjects and pupils should have an opportunity to choose from them according to their needs

   — *Report of the Secondary Education Commission*, 1953, p. 38.

2. In fact it is the special function of Secondery Education to provide the country with the second line of its leaders in all

आवश्यकता है जो अपनी पूर्ण शक्तियों से यथायोग्य सहयोग प्रदान क
तब तक असम्भव है जब तक पाठ्यक्रम का विविध स्वरूप न हों।

8.03 पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण के पक्ष में विचार

Views in Favour of Diversification of Curriculum

उपरोक्त समस्त बिन्दुओं के आधार पर यह तो निश्चित रूप ं
सकता है कि प्रत्येक विद्यार्थी को जीवन की वास्तविकताओं के समीप
का ही उत्तरदायित्व है। हमारी शिक्षा का यह सबसे प्रमुख दोष रहा है
से विद्यार्थी को पुस्तकीय ज्ञान की ओर उन्मुख कर दिया जाता है। इस
का विकास एक पक्षीय हो जाता है और वास्तविक जीवन की अनुभूति
रहने के कारण वह अपने भावी जीवन को एक अपरिचित की भाँति पा
उसे जीवन की वास्तविकताओं से शून्य शिक्षा प्राप्त हुई है।

यदि हमें वास्तव में अपनी आने वाली पीढ़ी का मार्ग प्रशस्त कर
देश की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करना है तो निरर्थक, संकुचित औ
पाठ्यक्रम के स्थान पर वास्तविक, विस्तृत और सारगर्भित पाठ्यक्रम क
बनानी होगी, जिसका आधार किशोरों की आवश्यकताओं की पूर्ति,
योग्यता, शारीरिक विकास, रुचियाँ और अभिवृत्तियाँ होगी। हमें एक ऐसा
बालकों के समक्ष प्रस्तुत करना होगा जो उनके जीवन में पूर्णता, वास्तवि
भावी जीवन का कार्यक्षेत्र, राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुसार दक्षत
नागरिक गुण और कर्त्तव्य परायणता आदि को विकसित करने में सहाय
और सभी शक्तियों को विकसित कर सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण करने ं
हो सके। यह तभी सम्भव है जबकि हम अपने पाठ्यक्रम में विविधता ला
सन्तति के लिए अधिकाधिक शैक्षिक अवसर प्रदान कर सकने में समर्थ हो स

ग्रन्थ - सूची

Bibliography

1. Bobbitt J. Franklin,

   The Curriculum of Modern Education, Mc Graw Hill Book Co., Inc., New York, 1941.

2. Giles, H. H. & others,

   Exploring the Curriculum, Progressive Education Association, Harper and Bros, New York, 1942

3. Gwynn, J, Minor,

   Curriculum Principles and Social Trends, The Macmillan Co., New York, 1929.

4. Harap & Others,

   The Changing Curriculum, Appleton Century Co., New York, 1937

5. *Report of the Secondary Education Commission*, Government of India, Ministry of Education, 1953.

6. *Report of the Secondary Education Reorganization Committee*, Uttar Pradesh, Superintendent, Printing and Stationary, U. P., 1953

7. Smith, Othanels, William O, & Others,

   Fundamentals of Curriculum Development, World Book Co., New York, 1950.

आवश्यकता है जो अपनी पूर्ण शक्तियों से यथायोग्य सहयोग तब तक असम्भव है जब तक पाठ्यक्रम का विविध स्वरूप न।

8.03 पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण के पक्ष में विचार

Views in Favour of Diversification of Curriculum

उपरोक्त समस्त बिन्दुओं के आधार पर यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि प्रत्येक विद्यार्थी को जीवन की वास्तविकताओं के समीप लाना शिक्षा का ही उत्तरदायित्व है। हमारी शिक्षा का यह सबसे प्रमुख दोष रहा है कि प्रारम्भ से विद्यार्थी को पुस्तकीय ज्ञान की ओर उन्मुख कर दिया जाता है। इससे विद्यार्थी का विकास एक पक्षीय हो जाता है और वास्तविक जीवन की अनुभूतियों से वंचित रहने के कारण वह अपने भावी जीवन को एक अपरिचित की भाँति पाता है क्योंकि उसे जीवन की वास्तविकताओं से शून्य शिक्षा प्राप्त हुई है।

यदि हमें वास्तव में अपनी आने वाली पीढ़ी का मार्ग प्रशस्त करना है और देश की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति करना है तो निरर्थक, संकुचित और पुस्तकीय पाठ्यक्रम के स्थान पर वास्तविक, विस्तृत और सारगर्भित पाठ्यक्रम की रूपरेखा बनानी होगी, जिसका आधार किशोरों की आवश्यकताओं की पूर्ति, मानसिक योग्यता, शारीरिक विकास, रुचियाँ और अभिवृत्तियाँ होंगी। हमें एक ऐसा पाठ्यक्रम बालकों के समक्ष प्रस्तुत करना होगा जो उनके जीवन में पूर्णता, वास्तविक भावी जीवन का मार्गदर्शन, राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुसार नागरिक गुण और कर्त्तव्य परायणता आदि को विकसित करने और सभी शक्तियों को विकसित कर सन्तुलित व्यक्तित्व का [illegible] हो सके। यह तभी सम्भव है जबकि हम अपने पाठ्यक्रम में वि[illegible] सम्पत्ति के लिए अधिकाधिक शैक्षिक अवसर प्रदान कर सकने में

---

walks of national life—art, science, ind[illegible] present educational system is not p[illegible] which is yet another argument for its

अध्याय नौ
Chapter Ninth
माध्यमिक स्तर पर निर्देशन व समुपदेशन, पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षक निर्देशिकाएँ और शिक्षण सामग्री
Guidance & Counselling, Text Books, Teachers Guides and Instructional Material at Secondary Stage

अध्ययन बिन्दु

Learning Points

* 9.01 निर्देशन व समुपदेशन

    Guidance & Counselling

    निर्देशन सेवाओं की वर्तमान स्थिति

    1. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन का केन्द्रीय कार्यालय
    2. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन के राजकीय कार्यालय
    3. माध्यमिक शालाओं में शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन

    माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के निर्देशन एवं समुपदेशन हेतु सुझाव

    शिक्षा आयोग (1966) के निर्देशन एव समुपदेशन हेतु सुझाव

* 9.02 पाठ्य पुस्तकें शिक्षक-निर्देश पुस्तकें और शिक्षण सामग्री

    Text-Books, Teacher's Guides and Teaching Material

    पाठ्य पुस्तकों के गम्भीर दोष

    पाठ्य पुस्तकों के सुधार हेतु माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव

    सुझावों की आलोचना

    पाठ्य-पुस्तकों, शिक्षक निर्देशिकाओं (Teacher's Guides) और शिक्षण सम्बन्धी शिक्षा आयोग (1966) के सुझाव

    निम्न स्तर की वृद्धि के कारण

    पाठ्य-पुस्तकें सम्बन्धी सुझाव

    शिक्षक निर्देशिकाओं से सम्बन्धित सुझाव

    आवश्यक शिक्षण सामग्री सम्बन्धी सुझाव

    आलोचनात्मक मूल्यांकन

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. *Discuss the functions of the 'Core subjects' and the electives in the Secondary School Curriculum, and say what subjects or groups of subjects are to be included under each category. Explain how the aims of Secondary Education are to be realised through this curriculum*

(Rajasthan, 1963)

2. *Suppose that you are the Head of a Higher Secondary institution. Choose a subject and justify its place in the curriculum. Show to what extent the object of keeping the subject in the curriculum is realised, and point out the weaknesses which are observed to remain and the way you will remedy them.*

(Rajasthan, 1964)

3. *Explain fully what is meant by 'Diversified Courses'*

(Agra, 1950)

4. *Write a note on 'Value of Multilateral Courses'*

(L. T., 1959)

5. स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व एवम् पश्चात् पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण हेतु क्या क्या प्रयत्न किये गये ? संक्षिप्त विवरण दीजिये ।

6. माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण की क्या आवश्यकता है । इसके पक्ष में अपने विचार प्रस्तुत कीजिये ।

7. 'बालकों के सर्वांग विकास हेतु यह नितान्त आवश्यक है कि पाठ्यक्रम में उनकी अभिरुचि, बौद्धिक स्तर, अभिवृत्ति एवम् कार्यकुशलता को विशिष्ट स्थान दिया जाये ।'

उपरोक्त कथन के संदर्भ में स्पष्ट कीजिये कि माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण हो अथवा नहीं । यदि हाँ तो क्यों, यदि नहीं तो क्यों नहीं ?

अध्याय नौ

Chapter Ninth

माध्यमिक स्तर पर निर्देशन व समुपदेशन, पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षक निर्देशिकाएँ और शिक्षण सामग्री

Guidance & Counselling, Text Books, Teachers Guides and Instructional Material at Secondary Stage

अध्ययन बिन्दु

Learning Points

* 9.01 निर्देशन व समुपदेशन

Guidance & Counselling

निर्देशन सेवाओं की वर्तमान स्थिति

1. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन का केन्द्रीय कार्यालय
2. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन के राजकीय कार्यालय
3. माध्यमिक शालाओं में शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के निर्देशन एवं समुपदेशन हेतु सुझाव

शिक्षा आयोग (1966) के निर्देशन एव समुपदेशन हेतु सुझाव

* 9.02 पाठ्य पुस्तकें शिक्षक-निर्देश पुस्तकें और शिक्षण सामग्री

Text-Books, Teacher's Guides and Teaching Material

पाठ्य पुस्तकों के गम्भीर दोष

पाठ्य पुस्तकों के सुधार हेतु माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव

सुझावों की आलोचना

पाठ्य-पुस्तकों, शिक्षक निर्देशिकाओं (Teacher's Guides) और शिक्षण सम्बन्धी शिक्षा आयोग (1966) के सुझाव

निम्न स्तर की वृद्धि के कारण

पाठ्य-पुस्तकें सम्बन्धी सुझाव

शिक्षक निर्देशिकाओं से सम्बन्धित सुझाव

आवश्यक शिक्षण सामग्री सम्बन्धी सुझाव

आलोचनात्मक मूल्यांकन

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. Discuss the functions of the 'Core subjects' and the electives in the Secondary School Curriculum, and say what subjects or groups of subjects are to be included under each category. Explain how the aims of Secondary Education are to be realised through this curriculum.

(*Rajasthan, 1963*)

2. Suppose that you are the Head of a Higher Secondary institution. Choose a subject and justify its place in the curriculum. Show to what extent the object of keeping the subject in the curriculum is realised, and point out the weaknesses which are observed to remain and the way you will remedy them.

(*Rajasthan, 1964*)

3. Explain fully what is meant by 'Diversified Courses.'

(*Agra, 1960*)

4. Write a note on 'Value of Multilateral Courses.'

(*L. T., 1959*)

5. स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व एवम् पश्चात् पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण हेतु क्या क्या प्रयत्न किये गये ? संक्षिप्त विवरण दीजिये।

6. माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण की क्या आवश्यकता है। इसके पक्ष में अपने विचार प्रस्तुत कीजिये।

7. 'बालकों के सर्वांग विकास हेतु यह नितान्त आवश्यक है कि पाठ्यक्रम में उनकी अभिरुचि, बौद्धिक स्तर, अभिवृत्ति एवम् कार्यकुशलता को विशिष्ट स्थान दिया जाये।'

उपरोक्त कथन के संदर्भ में स्पष्ट कीजिये कि माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण हो अथवा नहीं। यदि हाँ तो क्यों, यदि नहीं तो क्यों नहीं ?

अध्याय नौ
Chapter Ninth

माध्यमिक स्तर पर निर्देशन व समुपदेशन, पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षक निर्देशिकाएँ और शिक्षण सामग्री
Guidance & Counselling, Text Books, Teachers Guides and Instructional Material at Secondary Stage

अध्ययन बिन्दु
Learning Points

* 9.01 निर्देशन व समुपदेशन

  Guidance & Counselling

  निर्देशन सेवाओं की वर्तमान स्थिति

  1. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन का केन्द्रीय कार्यालय
  2. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन के राजकीय कार्यालय
  3. माध्यमिक शालाओं में शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन

  माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के निर्देशन एवं समुपदेशन हेतु सुझाव

  शिक्षा आयोग (1966) के निर्देशन एव समुपदेशन हेतु सुझाव

* 9.02 पाठ्य पुस्तकें शिक्षक-निर्देश पुस्तकें और शिक्षण सामग्री

  Text-Books, Teacher's Guides and Teaching Material

  पाठ्य पुस्तकों के गम्भीर दोष

  पाठ्य पुस्तकों के सुधार हेतु माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव

  सुझावों की आलोचना

  पाठ्य-पुस्तकों, शिक्षक निर्देशिकाओं (Teacher's Guides) और शिक्षण सम्बन्धी शिक्षा आयोग (1966) के सुझाव

  निम्न स्तर की वृद्धि के कारण

  पाठ्य-पुस्तकें सम्बन्धी सुझाव

  शिक्षक निर्देशिकाओं से सम्बन्धित सुझाव

  आवश्यक शिक्षण सामग्री सम्बन्धी सुझाव

  आलोचनात्मक मूल्यांकन

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. Discuss the functions of the 'Core subjects' and the ectives in the Secondary School Curriculum, and say what subjects · groups of subjects are to be included under each category. xplain how the aims of Secondary Education are to be realised rough this curriculum

(Rajasthan, 1963)

2. Suppose that you are the Head of a Higher Secondary stitution. Choose a subject and justify its place in the curriculum. ow to what extent the object of keeping the subject in the curri- lum is realised, and point out the weaknesses which are observed remain and the way you will remedy them.

(Rajasthan, 1964)

3. Explain fully what is meant by 'Diversified Courses'

(Agra, 1960)

4. Wr... note on 'Value of Multilateral Courses'

(L. T., 1959)

5. स्वतन्त्र... प्राप्ति से पूर्व एवम् पश्चात् पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण क्या क्या प्रयत्न किये गये ? संक्षिप्त विवरण दीजिये।

6. माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण की क्या आवश- । है। इसके पक्ष में अपने विचार प्रस्तुत कीजिये।

7. 'बालकों के सर्वांग विकास हेतु यह नितान्त आवश्यक है कि पाठ्य- उनकी अभिरुचि, बौद्धिक स्तर, अभिवृत्ति एवम् कार्यकुशलता को विशिष्ट दिया जाये।'

उपरोक्त कथन के संदर्भ में स्पष्ट कीजिये कि माध्यमिक स्तर पर म का विभिन्नीकरण हो अथवा नहीं। यदि हाँ तो क्यों, यदि नहीं तो ?

अध्याय नौ
Chapter Ninth

माध्यमिक स्तर पर निर्देशन व समुपदेशन, पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षक निर्देशिकाएँ और शिक्षण सामग्री
Guidance & Counselling, Text Books, Teachers Guides and Instructional Material at Secondary Stage

अध्ययन विन्दु
Learning Points

* 9.01 निर्देशन व समुपदेशन

  Guidance & Counselling

  निर्देशन सेवाओं की वर्तमान स्थिति

  1. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन का केन्द्रीय कार्यालय
  2. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन के राजकीय कार्यालय
  3. माध्यमिक शालाओं में शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन

  माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के निर्देशन एवं समुपदेशन हेतु सुझाव

  शिक्षा आयोग (1966) के निर्देशन एवं समुपदेशन हेतु सुझाव

* 9 02 पाठ्य पुस्तकें शिक्षक-निर्देश पुस्तकें और शिक्षण सामग्री

  Text-Books, Teacher's Guides and Teaching Material

  पाठ्य पुस्तकों के गम्भीर दोष

  पाठ्य पुस्तकों के सुधार हेतु माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव

  सुझावों की आलोचना

  पाठ्य-पुस्तकों, शिक्षक निर्देशिकाओं (Teacher's Guides) और शिक्षण सम्बन्धी शिक्षा आयोग (1966) के सुझाव

  निम्न स्तर की वृद्धि के कारण

  पाठ्य-पुस्तकें सम्बन्धी सुझाव

  शिक्षक निर्देशिकाओं से सम्बन्धित सुझाव

  आवश्यक शिक्षण सामग्री सम्बन्धी सुझाव

  आलोचनात्मक मूल्यांकन

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. Discuss the functions of the 'Core s... electives in the Secondary School Curriculum, and say... or groups of subjects are to be included under ea... Explain how the aims of Secondary Education are to... through this curriculum

(Raja...

2. Suppose that you are the Head of a Higher... institution. Choose a subject and justify its place in the c... Show to what extent the object of keeping the subject in... culum is realised, and point out the weaknesses which are... to remain and the way you will remedy them.

(Rajasthan...

3. Explain fully what is meant by 'Diversified Course...

(Agra, ...

4. Write a short note on 'Value of Multilateral Courses...

(L. T., ...

5. स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व एवम् पश्चात् पाठ्यक्रम के विभिन्नीक... हेतु क्या क्या प्रयत्न किये गये ? संक्षिप्त विवरण दीजिये।

6. माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण की क्या आव... यकता है। इसके पक्ष में अपने विचार प्रस्तुत कीजिये।

7. 'बालकों के सर्वांग विकास हेतु यह नितान्त आवश्यक है कि पाठ्य... क्रम में उनकी अभिरुचि, बौद्धिक स्तर, अभिवृत्ति एवम् कार्यकुशलता को विशिष्ट... स्थान दिया जाये।'

उपरोक्त कथन के संदर्भ में स्पष्ट कीजिये कि माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण हो अथवा नहीं। यदि हाँ तो क्यों, यदि नहीं तो क्यों नहीं ?

अध्याय नौ
Chapter Ninth

माध्यमिक स्तर पर निर्देशन व समुपदेशन, पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षक निर्देशिकाएँ और शिक्षण सामग्री

Guidance & Counselling, Text Books, Teachers Guides and Instructional Material at Secondary Stage

अध्ययन बिन्दु
Learning Points

* 9.01 निर्देशन व समुपदेशन

  Guidance & Counselling

  निर्देशन सेवाओं की वर्तमान स्थिति

  1. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन का केन्द्रीय कार्यालय
  2. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन के राजकीय कार्यालय
  3. माध्यमिक शालाओं में शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन

  माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के निर्देशन एवं समुपदेशन हेतु सुझाव

  शिक्षा आयोग (1966) के निर्देशन एवं समुपदेशन हेतु सुझाव

* 9.02 पाठ्य पुस्तकें शिक्षक-निर्देश पुस्तकें और शिक्षण सामग्री

  Text-Books, Teacher's Guides and Teaching Material

  पाठ्य पुस्तकों के गम्भीर दोष

  पाठ्य पुस्तकों के सुधार हेतु माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव

  सुझावों की आलोचना

  पाठ्य-पुस्तकों, शिक्षक निर्देशिकाओं (Teacher's Guides) और शिक्षण सम्बन्धी शिक्षा आयोग (1966) के सुझाव

  निम्न स्तर की वृद्धि के कारण

  पाठ्य-पुस्तकें सम्बन्धी सुझाव

  शिक्षक निर्देशिकाओं से सम्बन्धित सुझाव

  आवश्यक शिक्षण सामग्री सम्बन्धी सुझाव

  आलोचनात्मक मूल्यांकन

माध्यमिक स्तर पर निर्देशन व समुपदेशन, पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षक निर्देशिकाएँ और शिक्षण सामग्री

GUIDANCE & COUNSELLING, TEXT BOOKS, TEACHERS' GUIDES & INSTRUCTIONAL MATERIAL AT SECONDARY STAGE

हमारी माध्यमिक शालाओं की शिक्षा व्यवस्था में अनेकों दोष हैं जिनमें से निर्देशन व समुपदेशन का अभाव, पाठ्य-पुस्तकों का निम्न स्तर, शिक्षक निर्देशिकाओं का अभाव, शिक्षण सामग्री की व्यवस्था का न होना आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। माध्यमिक स्तर पर वांछित सुधार लाने के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि उपरोक्त समस्त दोषों को दूर किया जावे और उपयुक्त व्यवस्था करने का प्रयत्न किया जावे। प्रस्तुत अध्याय में हम इन सभी मुख्य बिन्दुओं पर विस्तृत रूप से विचार करेंगे।

9.01 निर्देशन व समुपदेशन
Guidance & Counselling

माध्यमिक स्तर पर निर्देशन और समुपदेशन का निजी महत्व है। पश्चिमी देशों की शैक्षिक प्रक्रिया में निर्देशन का महत्वपूर्ण स्थान है। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि अमेरिका की शिक्षा में निर्देशन आन्दोलन द्वारा काफी प्रगति हुई है। निर्देशन द्वारा केवल शैक्षिक प्रगति ही नहीं बल्कि जीवन के सभी क्षेत्रों,

सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक सभी में प्रगति सम्भव है। यही कारण
आज निर्देशन का महत्व बहुत बढ़ गया है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है
निर्देशन वह यन्त्र है जिससे शैक्षिक, सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति
है क्योंकि निर्देशन का मूल स्रोत मानवीय आवश्यकताएँ होती हैं। मा
शक्तियों का सदुपयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि उसे निश्चित
दृष्टिकोण और भावी जीवन की रूपरेखा का आभास हो। इसके लिये आवश्य
कि उसे सम्बन्धित क्षेत्रों का निर्देशन प्रदान किया जावे। यदि हम आज शि
में बेरोजगारी की समस्या को देखें तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता
नौकरियों का अभाव नहीं है बल्कि शिक्षित वर्ग में कार्य न करने की दक्षत
अभाव है क्योंकि जो शिक्षा प्रदान की गई अथवा की जा रही है वह निर्देश
है, वस्तुतः जहाँ निर्देशन नहीं है वहाँ अनिश्चितता है और अनिश्चितता का
सदैव अन्धकारमय होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को
जीवन के प्रति सही दृष्टिकोण बनाने में निर्देशन की आवश्यकता होती है
रूप से निर्देशन द्वारा व्यक्ति को दो बातों का आभास होता है, प्रथम उस
कितनी सामर्थ्य और क्षमता है दूसरे इनका अधिकाधिक सदुपयोग कैसे कि
सकता है। यदि इसी बिन्दु को शैक्षिक दृष्टिकोण से देखा जाये तो शिक्षा क
उद्देश्य व्यक्ति को यह आभास कराना है कि उसकी शक्ति द्वारा समाज को
प्रकार लाभान्वित किया जा सकता है और शक्ति का सही लाभ निर्देशन द
संभव है। अतः शिक्षा में निर्देशन का महत्वपूर्ण स्थान है। परन्तु यह हमारा
कि हमारे देश की माध्यमिक शालाओं में निर्देशन के प्रति सही दृष्टिकोण वि
नहीं हुआ है और इसी कारण अनेकों समस्याएँ उपस्थित होगई हैं।

निर्देशन सेवाओं की वर्तमान स्थिति
Present Position of Guidnace Services

1. शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन का केन्द्रीय कार्यालय
Central Bureau of Educational & Vocationol Guidance

अक्टूबर सन् 1954 में केन्द्रीय सरकार द्वारा सेन्ट्रल इन्स्टीट्यू
एजूकेशन देहली में शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन हेतु केन्द्रीय कार्या
स्थापना हुई। इसका मुख्य उद्देश्य सदुपदेशकों (Counsellors) तथा
अध्यापकों (Career Masters) को प्रशिक्षण देना है। इसके अतिरिक्त
सम्बन्धी साहित्य का सृजन, विचार गोष्ठियों का आयोजन, राजकीय
कार्यालयों का मार्ग प्रदर्शन और विभिन्न प्रकार की बुद्धि परीक्षाओं तथा
मापन विधियों को तैयार करना है। कहने का तात्पर्य यह है कि मुख
इसका कार्य राष्ट्रीय स्तर पर योजना बनाना और समन्वय करना है
देशव्यापी जागरण के अभाव में इसका समुचित उपयोग नहीं हो सका है

द्यालयों मे नियुक्त होते हैं उनका वेतन क्रम निश्चित है। राजस्थान में निर्देशन ार्यालय बीकानेर मे है जो कि विभिन्न प्रकार के परीक्षण तैयार करता है। पहले यावसाय अध्यापकों के लिए ग्रीष्म काल मे प्रशिक्षण की व्यवस्था थी। आजकल ाध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर ने व्यापक आन्तरिक मूल्यांकन योजना प्रारम्भ कर ी है और निर्देशन कार्यालय विभिन्न प्रकार की बुद्धि परीक्षाओं एवम् व्यक्तित्व ापन विधियों को तैयार कर रहा है। राजस्थान में माध्यमिक स्तर पर व्यापक ान्तरिक मूल्याकन के प्रारम्भ कर देने से निर्देशन कार्यों मे काफी गति आयेगी, ेसी सम्भावना है।

परन्तु अभी बहुत से इस प्रकार के राज्य हैं जहाँ निर्देशन शून्य माध्यमिक शिक्षा दी जा रही है। सम्पूर्ण देश मे माध्यमिक शिक्षा स्तर पर निर्देशन सेवाओं का होना नितान्त आवश्यक है। राज्य सरकारों को चाहिए कि यथासम्भव सभी शालाओं में ये सुविधाएँ प्रदान की जायें जिससे बालक अपने भावी जीवन के सम्बन्ध मे विचार कर सके।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के निर्देशन एव समुपदेशन हेतु सुझाव

Recommendations of Secondary Education Commission (1953) Regarding Guidance & Counselling

जैसाकि हम पिछले अध्याय मे कह आये हैं कि माध्यमिक शिक्षा आयोग ने उच्चतर माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण का महत्वपूर्ण सुझाव दिया था। पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण तभी सम्भव है जबकि विषयों के चयन में अध्यापकों द्वारा छात्रों को निर्देशन प्राप्त हो सके। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु आयोग ने माध्यमिक शालाओं में निर्देशन और समुपदेशन हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये :—

1. शिक्षा अधिकारियों द्वारा शैक्षिक निर्देशन पर अधिक ध्यान दिया जावे।
2. विभिन्न प्रकार के व्यावसायों तथा उद्योगों के ज्ञान प्रदान करने हेतु सम्बन्धित फिल्म तैयार किये जायें और छात्रों को विभिन्न उद्योगों मे वास्तविक कार्य देखने के लिये ले जाया जावे।
3. सभी विद्यालयों मे प्रशिक्षित निर्देशको तथा व्यावसाय अध्यापकों की नियुक्ति की जावे और उनकी सेवाओं से पूर्ण लाभ उठाया जावे।
4. निर्देशन अधिकारियों तथा व्यावसाय शिक्षकों के प्रशिक्षण की व्यवस्था केन्द्रीय सरकार को करनी चाहिए।
5. व्यावसायो की जानकारी देने के लिये 'व्यावसाय सम्मेलनों' (Career Conferences) का आयोजन किया जावे और इन सम्मेलनों मे शिक्षकों, अभिभावकों आदि को आमन्त्रित किया जावे।

6. माध्यमिक स्तर पर प्रत्येक बालक को शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन प्रदान किया जाये।

शिक्षा आयोग (1966) के निर्देशन और समुपदेशन हेतु सुझाव
Recommendations of Education Commission (1966) Regarding Guidance & Counselling

कोठारी आयोग ने निर्देशन और समुपदेशन के महत्व को स्वीकार करते हुए बालकों के समायोजन और विकास के लिये इन सेवाओं को नितान्त आवश्यक बताया है। 'निर्देशन केवल मात्र विशिष्ट मनोवैज्ञानिक अथवा समाज सेवाओं के रूप में बाहरी सीमाओं तक ही सीमित नहीं होना चाहिए बल्कि इसे शिक्षा का अभिन्न अङ्ग बनाना चाहिए। यह सामान्य आदर्शों से पृथक् बालकों के लिये ही नहीं बल्कि सब बालकों के लिये आवश्यक है। यह एक निरन्तर प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य व्यक्ति में समय-समय पर निर्णय करने की क्षमता तथा समायोजन की क्षमता का विकास करना है।[1]

माध्यमिक स्तर पर निर्देशन का प्रमुख कार्य किशोर विद्यार्थियों की पहचान तथा उनकी योग्यता तथा रुचियों का विकास करना है। यह विद्यार्थियों को उनकी सामर्थ्य, योग्यतानुसार शाला कार्य करने की क्षमता, शैक्षिक एवं व्यावसायिक अवसरों की सूचना, सम्बन्धित सूचनाओं पर आधारित योजना, शाला और घर में वैयक्तिक तथा सामाजिक समायोजन की समस्याओं का समाधान करने की क्षमता प्रदान करना है। इसके अतिरिक्त निर्देशन सेवाओं से प्रधानाध्यापकों तथा अध्यापकों को अपने विद्यार्थियों के लिए प्रभावशाली ढंग से शिक्षित करने के अवसर भी प्राप्त होते हैं।[2]

---

1. Guidance, therefore, should be regarded as an integral part of education and not a special psychological or social service which is peripheral to educational purposes. It is meant for all students, not just for those who deviate from the norm in one direction or the other. It is also a continuous process aimed at assisting the individual to make decisions and adjustments from time to time.

Report of the Education Commission, 1966, p 235.

2. One of the main functions of guidance at the secondary level is to aid in the identification and development of the abilities and interests of adolescent pupils. It helps these pupils to understand their own strengths and limitations and to do scholastic work at the level of their ability, to gain information about educational and vocational opportunities and requirements, to make realistic educational and vocational choices and plans based on a [illegible] consideration of all relevant

जैसा कि हम पिछले पृष्ठों में कह आये हैं कि माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के सुझाव के अनुसार केन्द्रीय सरकार ने सन् 1954 में शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन कार्यालय की स्थापना की जिसका उद्देश्य माध्यमिक स्तर पर निर्देशन आन्दोलन को बढ़ाना और सम्बन्धित सलाह देना था। आजकल विभिन्न राज्यों में 13 कार्यालय कार्य कर रहे हैं। तीसरी पंचवर्षीय योजना की समाप्ति तक सम्पूर्ण देश में केवल 3000 माध्यमिक शालाओं में निर्देशन सेवाओं की व्यवस्था थी जो कि देश की कुल माध्यमिक शालाओं की संख्या की 13 प्रतिशत थी। इन 3000 शालाओं में भी व्यवसाय अध्यापक का कार्य केवल सूचना प्रदान करना ही है, जिसका स्पष्ट अर्थ है कि हमारे देश में निर्देशन सेवायें नगण्य रही हैं।

शिक्षा आयोग ने देश व्यापी निर्देशन आन्दोलन के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये हैं :—

1. समस्त माध्यमिक शालाओं के लिये न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रम तैयार किया जाये।
2. निर्देशन हेतु दस माध्यमिक शालाओं के लिये एक समुपदेशक की नियुक्ति की जाये और शाला के समस्त शिक्षक उसे सहयोग प्रदान करें।
3. प्रत्येक जिले में कम से कम एक शाला को निर्देशन का विस्तृत कार्यक्रम निर्धारित करने को कहा जावे।
4. माध्यमिक शाला के सभी शिक्षकों को प्रशिक्षण काल में निर्देशन की धारणा से अवगत कराया जाये और जो अध्यापक इसका अधिक अध्ययन करना चाहें उन्हें यह सुविधा प्रदान की जाये। प्रत्येक प्रशिक्षण महाविद्यालय में कम से कम एक अध्यापक ऐसा अवश्य हो जो शालाओं के समुपदेशकों को प्रशिक्षण दे सके।
5. निर्देशन कार्यकर्त्ताओं के व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिये उचित प्रबन्ध होना चाहिए। अधिक समयावधि के पाठ्यक्रम की व्यवस्था विश्वविद्यालय द्वारा होनी चाहिए।

अन्य सामान्य सुझाव
Other General Proposals

1. निर्देशन और समुपदेशन सम्बन्धी समस्याओं पर देश की परिस्थितियों के अनुसार अनुसन्धान कराया जाये।

---

problems of personal and social adjustment in the school and th home. Guidance services also help headmasters and teachers t understand their students as individuals and to create situation in which the students can learn more effectively.

Ibid, p. 23

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि मार्ग-प्रदर्शन
अत्यन्त महत्व है। मार्ग-प्रदर्शन की उपयोगिता और सार्थक
आवश्यक है कि माध्यमिक स्तर पर सम्बन्धित अनुसन्धा
शैक्षिक परिस्थितियों मे मार्ग-प्रदर्शन की सेवाएं प्राय: निरर्थक
मे विभिन्न प्रकार के परीक्षण हैं न ही प्रशिक्षित मार्ग-निर्देशक
यह है कि माध्यमिक शालाओं मे मार्ग-प्रदर्शन का कार्य सन्तोष
नितान्त आवश्यक है कि राज्य सरकारें अधिकाधिक मार्ग-प्र
विस्तार करें जिसमे सन्तोषप्रद संख्या मे अध्यापक प्रशिक्षित हो
स्तर पर प्रत्येक छात्र का मार्ग-प्रदर्शन किया जा सके।

9.02 पाठ्य-पुस्तकें, शिक्षक-निर्देश पुस्तकें और शिक्ष
Text Books, Teacher's Guides and Teaching

सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया मे पाठ्य-पुस्तकों का निजी महत्व
उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु पाठ्य पुस्तकें भी साधन के रूप मे सहायक हैं
पुस्तक के महत्व को स्पष्ट करते हुए शिक्षा आयोग का विचार है
पाठ्य पुस्तक जो एक योग्य, अनुभवी और प्रतिभावान विशेषज्ञ द्वारा
जिसका मुद्रण उत्तम होता है, जिसमे यथास्थान चित्र और उपयुक्त
छात्रों मे प्रेरणा का संचार करती है एवं अध्यापक को सहायता प्रदान
अच्छी पाठ्य-पुस्तकें और अन्य शिक्षण तथा सीखने की सामग्री शिक्षा
ऊँचा उठाने मे अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हो सकते हैं।[3]

परन्तु यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि हमारे यहां उत्तम पाठ्य
अभाव है और विषयों के अधिकारी पाठ्य पुस्तकों का सृजन नहीं करते
सी पाठ्य-पुस्तकें स्तरानुसार प्रकाशित होती हैं वे प्रकाशकों की बेईमानी
हो जाती हैं जिसके परिणामस्वरूप लेखकों को पुस्तकों के सृजन में रुचि नहीं

---

3. A good text-book, written by a qualified and com
specialist in the subject, and produced with due regard to
of printing, illustrations and general get up stimulates the
interest and helps the teacher considerably in his work.
provision of quality text-books, and other teaching and
materials, can thus be an effective program

अच्छी पाठ्य-पुस्तकों, उत्तम अध्यापक निर्देशिकाओं तथा उचित शिक्षण सामग्री के अभाव में सम्पूर्ण शिक्षण व्यवस्था अस्त व्यस्त हो जाती है और वांछित शैक्षिक उपलब्धियाँ प्राप्त नहीं हो पातीं; फलतः शिक्षा का स्तर गिरने लगता है। माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि पाठ्य-पुस्तकों की दशा में सुधार हो, उत्तम शिक्षक-निर्देश पुस्तिकाएँ प्रकाशित हों और प्रभावशाली शिक्षण सामग्री का उपयोग हो। पाठ्य-पुस्तकों की दशा पर, स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात विभिन्न समितियों, सम्मेलनों तथा आयोगों ने ध्यान आकर्षित कराया। सर्व प्रथम द्वितीय आचार्य नरेन्द्र समिति (1953) ने पाठ्य-पुस्तकों की स्थिति का अध्ययन किया और उसके सुधार हेतु महत्वपूर्ण सुझाव दिये। इसके पश्चात् माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) ने पाठ्य-पुस्तकों के गिरते हुए स्तर को ऊँचा उठाने के लिये उनका राष्ट्रीयकरण करने का सुझाव दिया। तत्पश्चात फोर्ड फाउण्डेशन (1954) के कार्य-क्रमानुसार एक दल ने भारतीय पाठ्य-पुस्तकों की स्थिति को देखा जिसने पाठ्य-पुस्तकों की समिति बनाने का सुझाव दिया। सन् 1966 में शिक्षा आयोग ने पाठ्य-पुस्तकों के सुधार हेतु महत्वपूर्ण सुझाव दिये।

पाठ्य-पुस्तकों के गम्भीर दोष
Grave Defects of Text Books

माध्यमिक शिक्षा आयोग[1] ने पाठ्य-पुस्तकों के गिरते हुए स्तर पर खेद प्रगट किया और पाठ्य-पुस्तकों में निम्नलिखित दोष बताये हैं :—

1. पाठ्य-पुस्तकों की सामग्री विद्यार्थियों की रुचि और योग्यता के अनुसार नहीं होती।
2. पाठ्य-पुस्तकों का सृजन इकाई के अनुसार नहीं होता जिससे एक पाठ का दूसरे पाठ से सम्बन्ध नहीं रह पाता।
3. पाठ्य-पुस्तकों की छपाई असन्तोषजनक होती है जिसके कारण विद्यार्थी-गण उनके प्रति निष्क्रय हो जाते हैं।
4. पाठ्य-पुस्तकों में चित्र और रेखाचित्र उपयुक्त नहीं होते और उन्हें गलत ढंग से प्रस्तुत किया जाता है।

1. Most of the books submitted and prescribep are poor specimens in every way--the paper is u ually bad, the printing is [illegible]
ing an attractively produced publication.
Report of the Secondary Education Commission, 1952-53, p 96.

5. इन पुस्तकों में केवल तथ्यों की प्रधानता दी जाती है और सरल शब्दों को रुचिपूर्ण ढंग से नहीं संजोया जाता।

6. प्रायः पाठ्य पुस्तकों के लेखक शाला परिस्थितियों से अनभिज्ञ होते हैं जिसके कारण वे पुस्तकें वांछित व्यवहार परिवर्तन करने में असमर्थ रहती हैं और अध्यापकों की शिक्षण आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पातीं।

7. पाठ्य-पुस्तकें प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तों, राष्ट्रीय भावात्मक एकता और अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना से शून्य होती हैं जिसके कारण वांछित उपलब्धियाँ प्राप्त नहीं हो पातीं।

8 अनेक पाठ्य-पुस्तक समितियाँ निष्पक्ष भाव से पाठ्य-पुस्तकों का चयन नहीं करतीं जिसके कारण निम्न स्तर की पुस्तकों को निरर्थक रूप से सहयोग प्राप्त हो जाता है।

9. शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषाएं हो जाने के कारण पाठ्य-पुस्तकों के लेखन और प्रकाशन में स्पर्द्धा समाप्त हो गई है क्योंकि लेखकों और प्रकाशकों की संख्या कम हो जाने से साधन सीमित हो गये हैं।

पाठ्य-पुस्तकों के सुधार हेतु माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव
Recommendations of Secondary Education Commission for Reform of Text Books.

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने समस्त दोषों को ध्यान में रखते हुए कुछ महत्व-पूर्ण सुझाव दिये जो निम्नलिखित हैं :—

1. प्रत्येक राज्य में एक 'शक्तिशाली पाठ्य-पुस्तक समिति' होनी चाहिये जिसका कार्यकाल पाँच वर्ष होना चाहिए और कार्य करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

2. शक्तिशाली पाठ्य-पुस्तक समिति में सात सदस्य रक्खे इस प्रकार हो :—
   हाईकोर्ट का जज
   लोक-सेवा आयोग का सदस्य
   राज्य के किसी विश्वविद्यालय का उपकुलपति
   राज्य के शालाओं के प्रधानाध्यापक/प्रधानाध्यापिका
   प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री
   शिक्षा सचालक
   उपरोक्त समिति को अग्रलिखित कार्य सौंपे गये :—

(i) प्रत्येक विषय की पाठ्य पुस्तकों का विवेचन करने हेतु विशेषज्ञों की नियुक्ति करना।

(ii) पाठ्य-पुस्तकों के सृजन हेतु विशेषज्ञ विद्वानों को निमन्त्रित करना।

(iii) अन्य राज्यों की समितियों से सम्पर्क रखना।

(iv) लेखकों के लिये उचित पारिश्रमिक की व्यवस्था करना।

(v) प्रकाशन से प्राप्त धन की पृथक् व्यवस्था कर कोष स्थापित करना।

(vi) बचे हुए धन को नीचे लिखे अनुसार खर्च करना :—

- निर्धन और प्रतिभाशाली छात्रों को छात्रवृत्ति देना।
- सब विद्यार्थियों के लिये भोजन अथवा दूध देना।
- माध्यमिक शिक्षा स्तर के सुधार में व्यय करना।

3. पाठ्य-पुस्तक समिति को कला का प्रशिक्षण देने के लिये नवीन चित्रकला विद्यालय खोलने चाहिए जहाँ पाठ्य-पुस्तकों के लिये अच्छे चित्र बनाने का प्रशिक्षण दिया जा सके।

4. केन्द्रीय और राज्य सरकारें चित्रों के ब्लाकों के संग्रहालय स्थापित करें जहाँ से प्रकाशकों को दिये जा सकें और चित्रों के स्तर को सुधारा जा सके।

5. एक विषय के लिये एक से अधिक पाठ्य-पुस्तकें निर्धारित की जायें और शाला अधिकारियों को स्वतन्त्रता दी जाये कि वे अपनी इच्छानुसार कोई भी पुस्तक चुनें।

6. भारत के धर्म निरपेक्ष राज्य होने के कारण पाठ्य-पुस्तकों में किसी धर्म अथवा समुदाय विशेष के प्रति घृणास्पद तथ्यों को स्थान न दिया जाये।

7. पाठ्य-पुस्तकों और अन्य अध्ययन की पुस्तकों (अध्यापक निर्देशिका आदि) को जल्दी-जल्दी न बदला जाये।

सुझावों की आलोचना

Criticism of Recommandations

इसमें कोई सन्देह नहीं कि माध्यमिक शिक्षा आयोग द्वारा दिये गये पाठ्य-पुस्तक सम्बन्धी समस्त सुझाव अत्यन्त उपयोगी हैं तथापि कुछ सुझाव अतिशयोक्तिपूर्ण भी हैं जैसे 'शक्तिशाली पाठ्य-पुस्तक समिति' (High Power Committee) की नियुक्ति। जिन पदाधिकारियों को इस कमेटी में रखा गया है उनका कोई उपयोग

नहीं है क्योंकि इन व्यक्तियों का माध्यमिक शिक्षा से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसके अतिरिक्त इन समस्त महानुभावों का एक स्थान पर एकत्रित होना भी कठिन है, यदि एकत्रित हो भी गये तो पाठ्य-पुस्तकों के चयन की आशा करना व्यर्थ है।

कहने का तात्पर्य यह है कि माध्यमिक शिक्षा आयोग ने जिन आदर्शों को सम्मुख रखकर इस समिति का निर्माण किया वे आदर्श रूप में तो स्तुति योग्य अवश्य हैं परन्तु वास्तविकता से बहुत दूर हैं। इसके अतिरिक्त न तो इस समिति का निर्माण व्यवहारिक रीति से और न ही शैक्षिक दृष्टि से उचित ही है। इस समिति के निर्माण के अतिरिक्त जितने भी सुझाव हैं वे प्राय: सन्तोषप्रद हैं और आज हम यह कह सकते हैं कि माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझावों के आधार पर ही बहुत से राज्यों में पाठ्य-पुस्तकों की दशा में सुधार हुआ है और राष्ट्रीयकरण की ओर उचित कदम भी उठा है।

पंजाब में पुस्तक लेखन, प्रकाशन और वितरण व्यवस्था सरकार का उत्तरदायित्व है। बिहार में पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण हो चुका है। उत्तर प्रदेश में कक्षा आठ तक की समस्त पुस्तकें सरकार द्वारा प्रकाशित होती हैं। आन्ध्र प्रदेश में प्राथमिक स्तर तक की पुस्तकों का प्रकाशन सरकार द्वारा होता है। उड़ीसा और बम्बई राष्ट्रीयकरण के विरुद्ध हैं। राजस्थान में पाठ्य पुस्तकों का प्रकाशन और वितरण माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के हाथ में है। माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव के अनुसार राजस्थान में शक्तिशाली पाठ्य पुस्तक समिति है जिसमें उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश, राजस्थान लोक सेवा आयोग का एक सदस्य और राष्ट्रीयकरण बोर्ड का अध्यक्ष होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझावों के पश्चात् पाठ्य-पुस्तकों की हीन दशा सुधारने का प्रयास किया गया है। कुछ राज्यों ने तो आंशिक अथवा पूर्ण रूप से पाठ्य पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया है और जिन राज्यों में राष्ट्रीयकरण नहीं हो पाया है उनमें पाठ्य पुस्तकों की दशा सुधारने के लिये प्रयत्न किये गये हैं।

पाठ्य पुस्तकों, शिक्षक निर्देशिकाओं और शिक्षण सामग्री सम्बन्धी शिक्षा आयोग (1964–66) के सुझाव

Recommendations of Education Commission 1964-66 Regarding Text Books, Teachers' Guides & Teaching Materials

जैसा कि हम पहले [illegible] चुके हैं कि [illegible] द्वारा पाठ्य पुस्तकों के [illegible] हुई है। [illegible] पुस्तकों की दशा [illegible] [illegible] में [illegible] सुधार किया है।

निम्न स्तर की वृद्धि के कारण
Causes of Proliferation of Low Standard

आयोग के अनुसार इसके निम्नलिखित कारण हैं :—

1 पाठ्य-पुस्तकों के सृजन में विद्वानों की रुचि नहीं होती और इसी कारण यह कार्य उन व्यक्तियों द्वारा होता है जो इस कार्य को करने की उपयुक्त योग्यता नहीं रखते ।

2 पाठ्य-पुस्तकों के चयन में कुप्रवृत्तियों को प्रयोग में लाया जाता है ।

3. अनेकों प्रकाशकों द्वारा सन्दिग्ध आदतों के कारण ।

4. पाठ्य-पुस्तकों के प्रस्तुतीकरण तथा उत्पादन में अनुसन्धान के अभाव के कारण ।

5 प्राईवेट प्रकाशकों द्वारा (जो केवल बचत में ही रुचि रखते हैं) शिक्षक निर्देशिकाओं (Teachers' Guides) आदि सहायक पुस्तकों का प्रकाशन नहीं किया जाता ।

पाठ्य-पुस्तकें सम्बन्धी सुझाव
Recommendations Regarding Text-Books

1. पाठ्य-पुस्तकों की दशा सुधारने के लिये राष्ट्रीय स्तर पर कार्यक्रम बनाया जाये और प्रतिभावान लेखकों को पुस्तकों के सृजन हेतु प्रोत्साहित किया जाये ।

2 राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् (National Council of Educational Research & Training) के सिद्धान्त एवं कार्य योजना के अनुसार अन्य क्षेत्रों में भी पाठ्य-पुस्तकों की दशा सुधारने हेतु कार्य हो ।

3. पाठ्य-पुस्तकों के उत्पादन का शिक्षा मन्त्रालय द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र का कार्य स्वीकार करना चाहिए और इसके लिये स्वायत्त संगठन (Autonomous Organization) की स्थापना करनी चाहिए ।

4. प्रत्येक राज्य में पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के लिये पृथक् रूप से विशेष समितियों की नियुक्ति होनी चाहिए ।

5 पाठ्य-पुस्तकों की तैयारी और मूल्यांकन का समस्त भार राज्य के शिक्षा विभाग का होना चाहिए ।

6 पाठ्य-पुस्तकों के बेचने के लिये राज्यों में सहयोगी भण्डार होने चाहिए ।

7. पाठ्य-पुस्तकों का उत्पादन एक निरन्तर प्रक्रिया है अतः पाठ्य-पुस्तकों के परिवर्द्धित संस्करण सामयिक रूप से समयानुसार निकलने चाहिए ।

8. प्रत्येक विषय मे कम से कम तीन या चार पाठ्य-पुस्तकें होनी चाहिए और शाला की आवश्यकतानुसार अध्यापकों को किसी भी पुस्तक का चयन करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए।
9. राज्य द्वारा पाठ्य-पुस्तकों के सृजन में योग्य लेखक आकर्षित नहीं होते क्योंकि राज्य द्वारा उदार पारिश्रमिक नहीं दिया जाता और यही कारण है कि निजी कार्य (Private Enterprise) राजकीय कार्य पर विजय प्राप्त कर लेता है। अत यह आवश्यक है कि प्राईवेट कार्य की तुलना मे राज्य द्वारा अधिक उदार पारिश्रमिक की व्यवस्था हो जिससे अच्छे लेखकगण आकर्षित हो सकें।
10. पाठ्य-पुस्तको का उत्पादन लाभ के आधार पर नही होना चाहिए, इसका एक मात्र उद्देश्य अच्छी पुस्तकों का सृजन होना चाहिए जिससे कम कीमत पर पुस्तकें प्राप्त हो सके।
11. पाठ्य-पुस्तको पर केवल मात्र पाच पैसे की वृद्धि करने से सम्बन्धित अनुसन्धान, शिक्षक निर्देशिकाए (Teachers' Guides) तथा सहायक सामग्री (Ancillary aids) पर धन व्यय किया जा सकता है और शिक्षक निर्देशिकाओ एवम् अन्य शिक्षण सामग्री द्वारा पाठ्य पुस्तकों की पूर्ति हो सकती है।
12. पाठ्य-पुस्तकों के सृजन के लिए अधिकाधिक रुचि उत्पन्न करने के लिए योग्य व्यक्तियो से पाण्डुलिपियाँ प्राप्त की जानी चाहिए और लेखकों से उचित प्रबन्ध करने के पश्चात पुस्तकों का प्रकाशन करना चाहिए।

शिक्षक-निर्देश-पुस्तकें सम्बन्धी सुझाव

Recommendations Regarding Teachers' Guides

सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया मे केवल मात्र अच्छी पाठ्य-पुस्तकें ही पर्याप्त न है। पाठ्य-पुस्तकों के साथ साथ अच्छी शिक्षक-निर्देश-पुस्तके भी होनी चाहिए शिक्षक निर्देशिकाओं द्वारा अध्यापक को पूर्ण सहायता प्राप्त होनी चाहिए संयुक्त राज्य अमेरिका में तो स्नातक डिग्री प्राप्त अध्यापकों को भी गणित, वि और सामाजिक अध्ययन आदि विषयों में अधिक जानकारी प्रदान करने के निर्देशिकाओं का प्रयोग किया जाता है। हमारे देश के अल्प ज्ञान प्राप्त अप्रशिक्षित अध्यापकों के लिए तो यह नितान्त आवश्यक है कि उनकी सहाय [illegible] इन पुस्तकों का निर्माण किया [illegible]

हमारी तो यह [illegible] शिक्षा बोर्ड द्वारा शिक्षक निर्देश [illegible]

को दिया जाये। इन निर्देशिकाओं में विस्तृत रूप से विषय से सम्बन्धित सुझाव होने चाहिए और प्राय: सभी इकाई योजनाएं और पाठ योजनाएं होनी चाहिए। राजस्थान में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवम् प्रशिक्षण परिषद की पाठ्यक्रम, विधि और पाठ्य-पुस्तक विभाग की सहायता से कुछ विचार गोष्ठियों का आयोजन किया था परन्तु यह योजना अभी तक कार्यरूप में परिणित नहीं हो पाई है। कोठारी आयोग ने शिक्षक निर्देशिकाओं का उपयोग प्राथमिक स्तर के अध्यापकों के लिए अत्यन्त आवश्यक बताया है परन्तु हमारी राय में माध्यमिक स्तर तक के अध्यापकों के लिए इन निर्देशिकाओं का उत्पादन होना चाहिए जिससे अध्यापकों के ज्ञान में अभिवृद्धि की जा सके और प्रतिवर्ष एक ही प्रकार की विषय सामग्री को परोसने की आदत को समाप्त किया जा सके।

आवश्यक शिक्षण सामग्री सम्बन्धी सुझाव

Recommendations Regarding Essential Teaching Aids

यह कथन कोई अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि हमारे देश की अधिकांश शालाएँ शिक्षण सामग्री से शून्य हैं। अच्छे श्याम पट, पुस्तकालय, मानचित्र और चार्ट, विज्ञान सम्बन्धी आवश्यक सामग्री आदि किसी की भी व्यवस्था सन्तोषप्रद नहीं है। जब तक हमारे देश में इन न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होगी तब तक शिक्षा का स्तर ऊँचा उठना प्राय: असम्भव है। शिक्षा आयोग ने शिक्षण सामग्री निम्न-लिखित सुझाव दिये हैं :—

1. प्रत्येक श्रेणी के विद्यालय में न्यूनतम शिक्षण सामग्री होनी चाहिए और इनकी प्राप्ति के लिये शीघ्र कदम उठाने चाहिए।
2. प्रगतिशील देशों में प्रयुक्त होने वाली शिक्षण विधियों का प्रयोग करना नितान्त आवश्यक है।
3. शिक्षण विधियों के प्रयोग के लिए फिल्म, रेडियो, टेप-रिकार्डर और अन्य दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग किया जाये।
4. अत्यधिक महँगी शिक्षण सामग्री को निकटवर्ती विद्यालय मिलकर खरीदें।

आलोचनात्मक मूल्यांकन

Critical Evaluation

शिक्षा आयोग (1964-66) के समस्त सुझावों पर विचार करने के पश्चात यह अवश्य कहा जा सकता है कि पाठ्य-पुस्तकों के लिये राष्ट्रीय स्तर निश्चित कार्यक्रम की रूपरेखा बनाना नितान्त आवश्यक है। केन्द्रीय स्तर पर कार्य सम्पादित करने से पाठ्य पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण हो जायेगा, क्या इस कार्यक्रम से निजी

कार्य (Private Enterprise) हतोत्साहित नहीं होगा ? क्या पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से समस्त देश में एकरूपता लाना सम्भव है ? क्या केन्द्रीय सरकार अथवा राज्य सरकार सम्पूर्ण उत्तरदायित्वों को निभाने में सफल हो सकेगी ? क्या पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से प्रतियोगिता की भावना को हानि नहीं पहुँचेगी ? क्या इस प्रकार सृजनात्मक कार्य सम्भव हो सकेगा ?

ये कुछ प्रश्न हैं जिनका उत्तर प्राप्त होना नितान्त आवश्यक है। परन्तु इन समस्त प्रश्नों का अर्थ यह नहीं कि पाठ्य-पुस्तकों के सुधार हेतु सरकार कुछ भी न करे। आखिर पाठ्य-पुस्तकों का सम्पूर्ण कार्यभार तो सरकार को ही वहन करना होगा, परन्तु इसके लिये परिपूर्ण कार्यक्रम बनाना नितान्त आवश्यक है।

हमारी राय में केन्द्रीय सरकार द्वारा आदर्श पाठ्य-पुस्तकों का उत्पादन नितान्त आवश्यक है। इसके लिये सरकार द्वारा पाठ्य-पुस्तकों से सम्बन्धित न्यूनतम निर्धारित मान्यताएं निश्चित कर देनी चाहिए और प्रतियोगिता की भावना स्वरूप निजी कार्य करने वाली संस्थाओं को आमन्त्रित किया जाना चाहिए। राज्य सरकारों को यह पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वे अपनी परिस्थितियों के अनुकूल पाठ्य-पुस्तकों को परिमार्जित कर सकें। इससे लेखकों को भी प्रोत्साहन मिलेगा और पाठ्य-पुस्तकों की हीन दशा में सुधार भी हो सकेगा।

कहने का तात्पर्य यह है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रस्तावित पाठ्य-पुस्तकों का आदर्श स्वरूप राज्य सरकारों के लिये उत्तेजना पूर्ण होना चाहिए। पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन में व्याप्त भ्रष्टाचार समाप्त होना चाहिए। पाठ्य-पुस्तक के चयन का आधार उसकी श्रेष्ठता होनी चाहिए।

ग्रन्थ - सूची

Bibliography

1. Government of India,
   Report of the Education Commission (1964-66), Delhi, 1966.
2. ………………—
   Report of the Secondary Education Commission, Publication Division, Delhi, 1953
3. Report of a Study by an International Team,
   Teachers and Curricula in Secondary Schools, Ford Foundation, Delhi, 1954.

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. What are the recommendations of the Secondary Education Commission and Education Commission (1966) regarding guidance and counselling at Secondary stage ?

माध्यमिक स्तर पर निर्देशन और समुपदेशन के लिए माध्यमिक शिक्षा आयोग और शिक्षा आयोग (1966) ने क्या सुझाव दिये है ?

2. 'Guidance should be regarded as an integral part of education and not a special psychological or social service which is peripheral to educational purpose.'

In the light of the above remark of Education Commission (1966), discuss what is the importance of guidance sevices in the schools.

'निर्देशन केवल मात्र विशिष्ट मनोवैज्ञानिक अथवा समाज सेवाओं के रूप में बाहरी सीमाओं तक ही सीमित नहीं होना चाहिये बल्कि इसे शिक्षा का अभिन्न अंग बनाना चाहिये।

शिक्षा आयोग (1966) के उपरोक्त कथन के संदर्भ में निर्देशन सेवाओं का शाला में क्या महत्व है ?

3. What is the system of prescribing and/or recommending text-books for secondary stage in your state ? Are you satisfied with that system ? If not, why, and what is your alternative suggestion for the same. ?

आपके प्रान्त में माध्यमिक शालाओं के लिए पाठ्य-पुस्तकें निर्धारित करने या उनकी सिफारिश करने की क्या प्रणाली है ? क्या आप उस प्रणाली से सन्तुष्ट हैं ? यदि नहीं, तो बताएं कि क्यों और साथ ही उसके बदले की दूसरी प्रणाली भी सुझाएं।

(राजस्थान विश्वविद्यालय, 1966)

4. What is your opinion about nationalization of text-books at secondary stage ?

चार हैं ?

(राजस्थान विश्वविद्यालय, 1967)

'The provision cf quality text books, and other teachin g materials, can thus be an effective programme fo lards'.

In the light of the above statement how far the provi lity text book", teacher's guides and teaching materia *ful in raising the educational standards ?*

च्छी पाठ्य-पुस्तकें और अन्य शिक्षण तथा सीखने की साम चा उठाने में अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हो सकते हैं।

रोक्त कथन के सदर्भ में यह बताईये कि अच्छी पाठ्य तकाओं और शिक्षण सामग्री का प्रावधान शैक्षिक स्तर प्रकार सहायक सिद्ध हो सकता है ?

अध्याय दस

Chapter Tenth

परीक्षा प्रणाली में सुधार की आवश्यकता

और

मूल्यांकन की नवीन विधियाँ

Need for Reform in Examination System

&

New Methods of Evaluation

अध्ययन बिन्दु

Learning points

* 10.01 वर्तमान परीक्षा प्रणाली के दोष

  (Defects of Present Examination System)

  1 प्रमाणिकता और विश्वसनीयता का अभाव

  2. अपूर्ण ज्ञान एवं संयोग पर आधारित

  3 विकास के एक पक्ष का प्रतिरूप

  4. सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया पर परीक्षा का आधिपत्य

  5. विद्यार्थियों के सम्पूर्ण विकास पर बुरा प्रभाव

* 10.02 परीक्षा-पद्धति में सुधार की आवश्यकता ?

  (Need for Examination Reform) ?

  1 शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु

  2 शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन हेतु

  3 सर्वांग विकास की सूचना हेतु

* 10 03 मूल्यांकन का क्षेत्र

  (Scope of Evaluation)

  1. शारीरिक विकास

  2. ज्ञानार्जन सम्बन्धी उपलब्धि

3. व्यक्तिगत और सामाजिक गुण

4. रुचियाँ और अभिवृत्तियाँ

5. पाठ्येतर प्रवृत्तियाँ

* 10.04 मूल्यांकन की नवीन विधियाँ

(New Methods of Evaluation)

परीक्षा सुधार का नवीन कार्यक्रम

* 10.05 माध्यमिक शिक्षा आयोग की सिफारिशें

(Recommendations of Secondary Education Commission)

* 10.06 शिक्षा आयोग (1964–66) की सिफारिशें

(Recommendations of Education Commission 1964–66)

परीक्षा-प्रणाली में सुधार की आवश्यकता और मूल्यांकन की नवीन विधियाँ

NEED FOR REFORM IN EXAMINATION SYSTEM & NEW METHODS OF EVALUATION

वर्तमान भारतीय शिक्षा की समस्याओं में प्रचलित परीक्षा-प्रणाली भी विराट समस्या के रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित है। आज प्राथमिक स्तर से विश्व-विद्यालय स्तर तक की समस्त परीक्षाओं में विद्यार्थियों का एक मात्र उद्देश्य किसी भी तरह परीक्षा पास करना हो गया है जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा के अन्य उद्देश्य वर्तमान परीक्षा की दूषित पद्धति की बलिवेदी पर होम हो गये हैं और शनैः-शनैः सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया से ज्ञानात्मक पक्ष समाप्त होता जा रहा है। हमारे सम्पूर्ण समाज में अनुशासनहीनता, राजनैतिक अस्थिरता, स्वार्थपरता और अन्य असामाजिक कार्यों का प्रमुख कारण शैक्षिक विवेक-शून्यता है तथा इसका प्रत्यक्ष उत्तरदायित्व परीक्षा-प्रणाली पर है। कहने का तात्पर्य यह है कि वर्तमान परीक्षा-पद्धति ने

सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया के कलेवर को दूषित कर दिया है और यही कारण है भारत के युवक और युवतियाँ [illegible] जितना ही प्रवेश करते हैं [illegible] विज्ञानवेत्ता, [illegible] और [illegible] भावों से परिपूर्ण होते हैं । इसी कारण स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् [illegible] आयोग, मुदालियर आयोग और कोठारी आयोग ने भारत [illegible] सुधारों परीक्षा-प्रणाली में सुधार की आवश्यकता पर विशेष बल दिया है । प्रस्तुत में परीक्षा-प्रणाली के दोष, सुधार सम्बन्धी आवश्यकता की और मूल्यांकन की विधियों पर विचार करेंगे ।

10.01 वर्तमान परीक्षा-प्रणाली के दोष
Defects of Present Examination System

जहाँ तक परीक्षा-प्रणाली के दोषों का प्रश्न है उसके विषय में यह नि रूप से कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में परीक्षा-पद्धति एक असफ हो गई है । यह व्यक्ति के सर्वांगीण रूप के परिणामों की सूचक न होकर, मा का प्रमाण-पत्र बन गई है । इसके द्वारा मौलिकता और सृजनात्मकता का प न होकर केवल मात्र शाब्दिक रटने की प्रवृत्ति का परीक्षण किया जाता है । र के शब्दों में यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है परीक्षाएँ सृजनात्मक का शत्रु हैं ।[1] कहने का तात्पर्य यह है कि वर्तमान परीक्षा-प्रणाली अपनी बुरा कारण आलोचना का पात्र बन गई है । संक्षेप में वर्तमान परीक्षा-प्रणाली के नि लिखित दोष हैं —

1. प्रमाणिकता और विश्वसनीयता का अभाव
   Lack of Validity & Reliability

वर्तमान परीक्षाओं का सबसे बड़ा दोष उनका अप्रमाणिक और अविश्वस पन है । इसका प्रमुख कारण यह है कि इनमें परीक्षण के समस्त उद्देश्यों की पू नहीं की जाती । माध्यमिक स्तर पर प्रायः निबन्धात्मक प्रश्न पूछे जाते हैं जि कारण परीक्षक के अंकों में विभिन्नता का होना स्वाभाविक है । यदि एक उत्त पुस्तिका को पृथक्-पृथक् परीक्षकों को दिया जाये तो सबके अङ्क अलग-अलग होते हैं इसके अतिरिक्त यह भी देखने में आया है कि यदि एक ही परीक्षक को दो ब उत्तर-पुस्तिका जाँचने को दी जाये तो प्राप्तांक पृथक् होंगे । हेटेड के शोध से यह सिद्ध हो चुका है कि जो विद्यार्थी अध्यापक के अधिक प्रिय होते हैं उन्हें अधि अङ्क प्राप्त होते हैं और जो छात्र अप्रिय होते हैं उन्हें उनके ज्ञान की तुलना में क

1 'It goes without saying that examinations are the enemie creative work—'

—W. H. Ryburn

द्ध प्राप्त होते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि परीक्षकों की व्यक्तित्वता (Subjectivity) के परीक्षण पर विशेष प्रभाव पड़ता है। एशबर्न के मतानुसार 40% सफल अथवा असफल परीक्षार्थियों का परिणाम इस बात पर निर्भर करता है कि कौन प्रश्न-पत्र पढ़ता है और 10% इस बात पर निर्भर करता है कि प्रश्न-पत्र कब पढ़े गए ?[1]

परीक्षाओं की अविश्वसनीयता के उदाहरण स्टार्च और इलियट के अनुसन्धानों से स्पष्ट होते हैं। उन्होंने एक परीक्षार्थी के उत्तरों की कुछ नकलें की और पृथक-पृथक परीक्षकों के पास भेज दी। प्राप्तांकों मे 50% से 98% तक नम्बर दिये गये।

इस प्रकार यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि वर्तमान परीक्षा-प्रणाली अविश्वसनीय एवम् अप्रमाणिक है और इसका एक मात्र कारण व्यक्तिगत विभिन्नता है जिसको परीक्षा की वर्तमान प्रणाली मे दूर किया जाना सम्भव नही। यदि इसी प्रकार परीक्षा पद्धति रही तो परीक्षार्थियो के भाग्य के साथ खिलवाड़ होना निश्चित रूप से सम्भव है।

2. अपूर्ण ज्ञान एवं सयोग पर आधारित
Based on Incomplete Knowledge and Chance

वर्तमान परीक्षा पद्धति का एक अन्य दोष अपूर्ण ज्ञान और सयोग पर आधारित होना भी है। आज विद्यार्थी को सम्पूर्ण विषय के ज्ञान की आवश्यकता नहीं है क्योंकि परीक्षा में सामान्यतः पाँच प्रश्न करने होते हैं, पाच प्रश्नो के लिये सम्पूर्ण पुस्तक का अध्ययन करना विद्यार्थी को उचित प्रतीत नही होता और वह सम्भावना के आधार पर ही कुछ चुने हुए प्रश्नो के उत्तर तैयार करना ही श्रेयस्कर समझता है, जिससे अपूर्ण ज्ञान को प्रोत्साहन मिलता है।

इसके अतिरिक्त वर्तमान परीक्षा पद्धति से बालक के बौद्धिक पक्ष का आभास नहीं होता। एक मूढ़ बुद्धि छात्र भी परीक्षा में ऊँचे अंक प्राप्त कर सकता है क्योंकि सयोग से यदि उसके तैयार किये हुए प्रश्न ही परीक्षा मे आ गये तो निश्चित रूप से उसे लाभ होगा। इसी प्रकार एक प्रतिभाशाली छात्र सयोगवश बहुत कम अंक प्राप्त कर सकता है। संक्षेप मे वर्तमान परीक्षा पद्धति दूषित है।

3. विकास के एक पक्ष का प्रतिरूप
Symbol of Single Aspect of Development

आन्तरिक एवं बाह्य परीक्षाएँ बालक की शैक्षिक उपलब्धि और बौद्धिक

---

1. Passing or failing of about 40°/₀ depends on who reads the papers and of about 10°/₀ depends upon when the papers are read'
—Ashburn—

प्रवृत्ति की ही जाँच करने का प्रयत्न करती है। इन परीक्षाओं द्वारा बालक के विकास के अन्य पक्षों का परीक्षण नहीं होता, यदि इनके द्वारा परीक्षण होता भी है तो अप्रत्यक्ष रूप से[1]। शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य बालकों में बौद्धिक कुशलताओं का प्रतिपादन करना ही नहीं है बल्कि शारीरिक स्वास्थ्य, ज्ञान सम्बन्धी उपलब्धि, व्यक्तिगत और सामाजिक गुण जैसे भावात्मक स्थिरता, उत्तरदायित्व की भावना, श्रम शक्ति सहयोग की भावना, सामाजिक सेवा की भावना, अनुशासन, नियमितता, स्वच्छता, वांछित रुचियाँ जैसे साहित्यिक, कलात्मक, वैज्ञानिक और महत्वपूर्ण अभिवृत्तियों जैसे अध्ययन, अध्यापकों, विद्यालय कार्यक्रमों, विद्यालय सम्पत्ति आदि की ओर एवं सर्वांग विकास हेतु पाठ्येत्तर प्रवृत्तियों में भाग लेना आदि की जाँच के लिये उचित व्यवस्था करना भी है।

कहने का तात्पर्य यह है कि आज की शिक्षा का उद्देश्य केवल मात्र बौद्धिक क्षमता प्रदान करना ही नहीं है बल्कि व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना भी है जब कि आज की परीक्षा प्रणाली केवल आंशिक रूप से बौद्धिक क्षमता की ही जाँच करती है और अन्य विकास के अन्य पक्षों की जाँच करने में असमर्थ रहती है।

4. सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया पर परीक्षा का आधिपत्य

Dominance of Examination on Whole Educational Process

आजकल सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया पर परीक्षा का पूर्ण रूपेण आधिपत्य हो गया है। समस्त विद्यार्थियों का उद्देश्य नैतिक अथवा अनैतिक रूप से परीक्षा में उत्तीर्ण होना ही रह गया है। अध्यापक की शिक्षण कला परीक्षाफल की चार दीवारी तक सीमित रह गई है। वर्तमान शैक्षिक प्रक्रिया में पाठ्यक्रम और शिक्षण विधियाँ परीक्षाओं की दासता में ग्रस्त हो चुकी हैं। यही कारण है कि आज का विद्यार्थी सस्ती पुस्तकें, कुञ्जियाँ और गैस पेपर पढ़ना ही उचित समझता है। जिससे शिक्षा का स्तर दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा है। आज की स्थिति में परीक्षाओं द्वारा पाठ्यक्रम को निर्देशित किया जाता है जबकि वास्तविकता ठीक इसके विपरीत होनी चाहिए।

शाला के समस्त वातावरण में परीक्षाएँ इस प्रकार छा गई हैं कि छात्र और अध्यापक के लिए परीक्षाएँ ही एक मात्र प्रेरक शक्ति हो गई है। छात्रों के शैक्षिक जीवन का एक मात्र केन्द्र बिन्दु परीक्षाएँ उत्तीर्ण करना हो गया है। जब तक शाला का कोई भी कार्यक्रम प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से परीक्षा से सम्बन्धित

---

1. Both are intended to test mainly the academic attainments of a pupil and his progress in intellectual pursuits. They do not test the other aspects of the pupil's development, or if they do it is only indirectly

Report of the Secondary Education Commission p. 145.

नहीं किया जाता, तब तक वह प्राय असफल रहता है।[1] माध्यमिक शिक्षा आयोग के उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट है कि सम्पूर्ण शैक्षिक जीवन में परीक्षाओं का आतंक है।

5. विद्यार्थियों के सम्पूर्ण विकास पर बुरा असर
Bad Influence on Students' Development

परीक्षा के भय का बालकों के विकास पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। परीक्षा के दिनों में अत्यधिक परिश्रम करने के कारण विद्यार्थी शारीरिक दृष्टि से अवरुद्ध हो जाते हैं। संवेगात्मक रूप से इन दिनों विद्यार्थियों में अस्थिरता आ जाती है, निराशा, उदासीनता, मनमाना आदि के कारण वे अस्त व्यस्त हो जाते हैं। परीक्षा का कुप्रभाव बालक के नैतिक और सामाजिक विकास पर भी पड़ता है। विद्यार्थी का एक मात्र उद्देश्य परीक्षा में उत्तीर्ण होना होता है। प्राय परीक्षा के दिनों में अनैतिक और असामाजिक कार्यों की प्रचुरता रहती है। परीक्षा भवन में नकल करना, अध्यापकों के साथ मारपीट, परीक्षकों के पास सीधी पहुँच आदि इस प्रकार के कृत्य है जो विद्यार्थी के अनैतिक और असामाजिक कृत्य कहे जा सकते हैं।

जब विद्यार्थियों में अनैतिकता और असामाजिकता की भावना विकसित होने लगती है तो अनुशासनहीनता का प्रारम्भ हो जाता है। आज के विद्यार्थियों में उत्तरोत्तर बढ़ती हुई अनुशासनहीनता का सर्व प्रधान कारण—दूषित परीक्षा पद्धति ही है क्योंकि हमारे देश में परीक्षाओं को उत्तीर्ण करने पर ही भावी जीवन की रूपरेखा अवलम्बित है। एक विद्यार्थी जो पूरे वर्ष असामाजिक और अनैतिक कार्य करता है, परीक्षा में अवधैधानिक तरीकों से अच्छे अंक प्राप्त करता है, परिणामतः उसका मार्ग, जीवन अंकों की अधिकता से सुखमय हो जाता है। इसका प्रभाव अन्य विद्यार्थियों पर भी पड़ता है जिससे सम्पूर्ण सामाजिक जीवन कुकृत्यों से प्रभावित हो जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि परीक्षा ही विद्यार्थियों में कलुषित भावनाएँ भरने की उत्तरदायी है।

उपरोक्त बिन्दुओं से यह तो स्पष्ट है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में कोई परिवर्तन करना है तो सर्वप्रथम परीक्षा पद्धति को ही परिवर्तित करना होगा।

---

1. They have so pervaded the entire atmosphere of school life that they have become the main motivating force for all effort on the part of pupil as well as teacher. It is not often clearly realised that a pupil's effort throughout his education is concentrated almost wholly on how to get through the examinations Unless a subject is included in the examination scheme, the pupil is not interested in it If any school activity is not related directly or indirectly to the examination, is fail to enlist his enthusiasm

Ibid, p. 146

आज हम प्रायः छात्राध्यापक एवम् छात्राध्यापिकाओ को यह कहते हुए सुनते है कि शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयो मे जो शिक्षण विधियाँ पढ़ाई जाती है उनका वास्तविक शिक्षण में कोई सम्बन्ध नही है। यह धारणा गलत है, क्योंकि इसमें शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों द्वारा बताई गई शिक्षण विधियां गलत नहीं हैं बल्कि वर्तमान परीक्षा प्रणाली दूषित है जिसके कारण आज का अध्यापक ज्ञान दान के स्थान पर विद्यार्थियो को विषपान करा रहा है। परीक्षा प्रणाली ही अध्यापक को बाध्य करती है कि वास्तविक शिक्षण विधियों के स्थान पर सस्ते नोट्स एवम् अवाछित तरीको से परीक्षा पास करने तथा दूषित शिक्षण विधियों को प्रयोग मे लाया जाये। 'लिखित परीक्षाएँ हमारी शिक्षा प्रणाली पर अत्यन्त निष्ठुर हो गई है। लिखित परीक्षाओ की महत्ता इतनी अधिक बढ़ गई है कि हम अध्यापको पर अविश्वास करने लगे हैं, सस्ती नौकरियो की ओर दौड़ते हैं जबकि बेईमानी और पक्षपात को परीक्षाओ से बढ़ावा मिलता है।[1]

10.02 परीक्षा पद्धति में सुधार की आवश्यकता ?
Need for Examination Reform ?

यह सर्वमान्य तथ्य है कि विद्यार्थियो के ज्ञान को परख करने के लिए कोई कसौटी अवश्य होनी चाहिए। परीक्षा ही वह साधन है जो विद्यार्थियों और अध्यापकों को सचेत कर निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचाने मे सहायता करती है। परीक्षा की महत्ता को स्वीकार करते हुए परीक्षा पद्धति मे सुधार की आवश्यकता है जिसके निम्नलिखित कारण हैं —

1. शैक्षणिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु
For Fulfilment of Educational Objectives

शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि उचित परीक्षा पद्धति को अपनाया जाये। विद्यार्थियों मे वांछित आदतो, उचित अभि-वृत्तियों, शिक्षण विधियों की उपयुक्तता और व्यवहार परिवर्तन के लिए यह आवश्यक है कि वर्तमान परीक्षा-पद्धति मे सुधार कर उचित परीक्षा पद्धति अपनाई जाये।

2. शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन हेतु
For Educational & Vocational Guidance

विद्यार्थी द्वारा सभी विषयों के परीक्षा पत्रों के आधार पर शैक्षिक और

1 The written examination has become a tyrant in our ... [illegible] arises ... with the ... nearly ... [illegible] ...ity, 1951

व्यावसायिक निर्देशन सम्भव है । उचित परीक्षा पद्धति न केवल बौद्धिक विकास बल्कि विद्यार्थी की कुशलताओं, योग्यताओं, रुचियों, अभिवृत्तियों सृजनात्मक चिन्तन आदि का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ होती है। इन्हीं सूचनाओं के आधार पर शैक्षिक एवम् व्यावसायिक निर्देशन दिया जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि वास्तविक निर्देशन देने के लिए परीक्षा-पद्धति में सुधार की नितान्त आवश्यकता है क्योंकि वर्तमान परीक्षा प्रणाली सामान्यतया बौद्धिक स्तर की अस्पष्ट सूचना ही प्रदान कर पाती है जिससे निर्देशन सम्भव नहीं।

3. सर्वांग विकास की सूचना हेतु
For Information of Harmonious Development

परीक्षा पद्धति में सुधार की आवश्यकता इसलिए भी है कि इसके द्वारा बालक की सर्वांग विकास की सूचना नहीं मिल पाती। अतः यह आवश्यक है कि विद्यार्थी की ज्ञान सम्बन्धी सूचना के साथ-साथ उसके अन्य क्षेत्रों में सम्पन्न विकास की सूचना भी प्राप्त हो सके। विद्यार्थी के व्यक्तित्व विकास हेतु यह आवश्यक है कि सम्बन्धित व्यक्तिगत सूचना,[1] पारिवारिक पृष्ठ-भूमि सम्बन्धी सूचना[2], शारीरिक स्वास्थ्य सम्बन्धी सूचना,[3] बुद्धि सम्बन्धी सूचना,[4] ज्ञान उपलब्धि की सूचना,[5] व्यक्तिगत एवं सामाजिक गुण तथा रुचियां एवं अभिवृत्ति से सम्बन्धित सूचना[6] प्राप्त की जा सके। वर्तमान परीक्षा-पद्धति इन सभी सूचनाओं को देने में असमर्थ है अतः यह नितान्त आवश्यक है कि इसमें वांछित सुधार किया जाय।

उपरोक्त बिन्दुओं से यह तो स्पष्ट है कि वर्तमान परीक्षा पद्धति में सुधार की अत्यन्त आवश्यकता है। सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया की सफलता और असफलता का पता परीक्षा द्वारा ही लगाया जा सकता है। इसीलिए यह बहुत जरूरी है कि परीक्षा पद्धति में सुधार लाया जाये जिससे उद्देश्यों की पूर्ति हो सके और यह तब तक सम्भव नहीं है जब तक मूल्यांकन का क्षेत्र निर्धारित निश्चित न कर लें।

10 03 मूल्यांकन का क्षेत्र
Scope of Evaluation

जैसा कि हम कह चुके हैं कि मूल्यांकन क्रमिक प्रक्रिया है। इसके अन्तर्गत समस्त मानवीय पहलुओं का अध्ययन करना आवश्यक है जिसके आधार पर निश्चित

1. Personal Information.
2. Information Regarding Family Background.
3. Information Regarding Physical Health.
4. Information Regarding Intelligence.
5. Scholastic Achievement.
6. Information Regarding Personal & Social Qualities and Interests & Attitudes.

र्ई पर पहुँचा जा सके। सामान्य रूप मे मूल्याकन के क्षेत्र मे निम्नलिखित
को समाहित किया जा सकता है —

रिक विकास

ysical Development

विद्यार्थियो के शारीरिक विकास की निश्चित सूचना प्राप्त करना नितान्त
है । इसके लिये जहा तक सम्भव हो किसी योग्य डाक्टर द्वारा स्वास्थ्य
नी चाहिए । साधारणतया सत्र मे तीन बार स्वास्थ्य से सम्बन्धित समस्त
प्राप्त की जानी चाहिए । इसके अतिरिक्त कुछ शारीरिक दोष जैसे दोष-
ट, सुनने मे कठिनाई, गदे दात गदे नाखून आदि की सूचना अध्यापक स्वय
कर सकते है । शारीरिक स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्त सूचनाएं सचित
पत्र[1] मे अंकित होनी चाहिए और प्रगति पत्र मे इसका समावेश होना
समसे अभिभावको को सभी स्वास्थ्य-सम्बन्धी सूचनाएं प्राप्त हो सकें ।
तात्पर्य यह है कि शारीरिक विकास का मापन सभी विद्यालयो मे होना
कि इसका मूल्याकन के क्षेत्र मे अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है ।

शैक्षिक दृष्टिकोण से यह नितान्त महत्वपूर्ण है कि छात्र की स्वास्थ्य संबंधी
एं जैसे स्वास्थ्य इतिहास, शारीरिक सौष्ठव, शारीरिक असमर्थताएं
होती रहे । प्राय शारीरिक दोषो के कारण अनियमित और ज्ञान
क्षेत्र की प्रगति अवरुद्ध हो जाती है । शारीरिक असमर्थताओ का विद्यार्थी
विकास पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है ।
क किशोर एव किशोरी मे स्वास्थ्य का सामान्य विकास अत्यन्त महत्वपूर्ण
र. मूल्याकन के क्षेत्र मे प्रत्येक शाला का पुनीत कर्त्तव्य है कि स्वास्थ्य
मस्त सूचनाओ का अभिलेखन किया जाये ।

सम्बन्धी उपलब्धि

stic Achievement

न शैक्षिक प्रक्रिया मे ज्ञानार्जन को सर्वोपरि महत्त्व प्रदान किया जाता
एकमात्र कारण यह है कि अब तक बाह्य परीक्षा को ही महत्त्व प्रदान
ता है और मूल्याकन के अन्य क्षेत्रो की सर्वथा उपेक्षा की जाती है ।
ह नितान्त आवश्यक हो गया है कि ज्ञान प्राप्ति का एक मात्र आधार
ही नहीं होनी चाहिए । अत यह आवश्यक है कि छात्र के दैनिक
ज्ञान, ज्ञान के उपयोग की क्षमता, कार्य मे कुशलता आदि का
कहने का तात्पर्य यह है कि ज्ञानार्जन सम्बन्धी समस्त उपलब्धि को
क्षेत्र मे समाहित करते हुए अभिलिखित किया जाये और केवल बाह्य

[1] ...ulative Record

वाह्य परीक्षा को ही सफलता का आधार न मानकर वर्ष भर की ज्ञानार्जन उपलब्धि को अभिलिखित किया जाये ।

3. व्यक्तिगत और सामाजिक गुण
Personal & Social Qualities

बौद्धिक तत्व को किसी सीमा विशेष तक ही सीमित नही किया जा सकता । बौद्धिक पक्ष के अनेक स्वरूप हैं जो शैक्षिक प्रगति को सकरात्मक रूप से प्रभावित करते हैं । श्रम की महत्ता, सहयोग, भावात्मक स्थिरता, उत्तरदायित्व की भावना, सामाजिक सेवा, अनुशासन, नियमितता, स्वच्छता, समय का ध्यान आदि गुण शैक्षिक जीवन मे अत्यधिक महत्वपूर्ण है । ये समस्त व्यक्तिगत और सामाजिक गुण विद्यार्थी के ज्ञान एव कौशल को प्रभावित करते हैं । व्यक्तिगत और सामाजिक गुणो का मूल्याकन करना नितान्त आवश्यक है । प्रत्येक विद्यार्थी की प्रगति एव जीवन की सफलता इन्ही गुणों पर निर्भर रहती है । कहने का तात्पर्य यह है कि इन समस्त गुणो को मूल्याकन के कार्यक्रम मे समाहित करना नितान्त आवश्यक है ।

4. रुचियाँ और अभिवृत्तियाँ
Interests and Attitudes

रुचियो और अभिवृत्तियो का प्रदर्शन मानवीय व्यवहारो से होता है । विद्यार्थी मे जैसी रुचिया और अभिवृत्तिया होती हैं उसी के अनुरूप वह व्यवहार करता है । अत रुचिया और अभिवृत्तिया मानव विकास का एक महत्वपूर्ण अग हैं । यदि बालको की रुचियो और अभिवृत्तियो में वाछित परिमार्जन किया जाये तो निश्चित ही उनके सस्कारो को परिष्कृत किया जा सकता है । रुचियो मे सामान्य रूप से कलात्मक, सगीतात्मक वैज्ञानिक और सामाजिक सेवा आदि को समाहित किया जा सकता है । अभिवृत्तियो के अन्तर्गत अध्ययन, शिक्षक शाला एव अन्य वाछित सामग्रियों के प्रति विद्यार्थियो की अभिवृत्तियो को समाहित कर सकते हैं । अत मूल्याकन के क्षेत्र मे रुचियो और अभिवृत्तियो को भी सम्मिलित करना आवश्यक है ।

5. पाठ्येतर प्रवृत्तियाँ
Co-curricular Activities

सम्पूर्ण शैक्षणिक व्यवस्था मे पाठ्येतर प्रवृतियो का महत्वपूर्ण स्थान है । [illegible] के साथ-साथ रुचियो, अभिवृत्तियों और वाछित गुणो के [illegible], मे [illegible] आता है । मूल्याकन की व्यापक योजना मे पाठ्येतर [illegible] मे [illegible] तथा खेल कूद आदि को समाहित किया जा [illegible] है

उपरोक्त बिन्दुओ से यह स्पष्ट है कि बालक के सर्वांगीण विकास हेतु
की विस्तृत योजना बनाना नितान्त आवश्यक है जिसमे शारीरिक, मान-
सामाजिक और संवेगात्मक विकास को सम्मिलित करना नितान्त आवश्यक
शिक्षा के उद्देश्यो की व्यापकता को ध्यान मे रखते हुए शिक्षा का अर्थ केवल
ज्ञान की प्राप्ति से न लेकर सम्पूर्ण जीवन के कार्यकलापो से लेना नितान्त
क है। इसके लिए यह आवश्यक है कि मूल्यांकन का नवीन कार्यक्रम बनाया
जो नवीन विधियो पर आधारित हो।

10.04 मूल्यांकन की नवीन विधियाँ
New Methods of Evaluation

जैसा कि हम स्पष्ट कर चुके है कि मूल्यांकन सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया का एक
त्वपूर्ण अंग है और शिक्षा के उद्देश्यो की प्राप्ति के लिए आवश्यक साधन है।
यांकन के द्वारा केवल मात्र बालको मे व्यवहार परिवर्तन ही नही बल्कि शिक्षण
धियो मे सुधार भी सम्भव है। इसके द्वारा शैक्षिक उपलब्धि का सही मापन तो
ता ही है, इसके अतिरिक्त शिक्षण प्रक्रिया मे सुधार होता है। कहने का तात्पर्य
ह है कि मूल्यांकन का शिक्षा व्यवस्था मे अद्वितीय स्थान है। परन्तु हमारे देश मे
अभी तक निबन्धात्मक पद्धति को ही अपनाया जाता रहा है और अन्य देशो मे
मूल्यांकन के क्षेत्र मे हुए नवीन प्रयोगो और नवीन विधियो पर विशेष ध्यान दिया
गया है। बालको के समग्र विकास हेतु यह नितान्त आवश्यक है कि हम मूल्यांकन
प्रक्रिया मे सभी पक्षो के मूल्यांकन को स्थान दे और मूल्यांकन की उन विधियो को
प्रयोग मे लायें जो विश्वसनीय हो, वस्तुनिष्ठ हो तथा व्यावहारिक हो। लिखित
परीक्षा द्वारा छात्रो के सम्पूर्ण विकास क्षेत्रो का मूल्यांकन सम्भव नही है, इसके लिए
आवश्यक है कि अन्य विधियो जैसे निरीक्षण, मौखिक परीक्षा, क्रियात्मक परीक्षा
तथा अन्य विधियो को प्रयोग मे लाया जाये।

मूल्यांकन की नवीन विधियो को प्रयोग मे लाते समय हमे निम्नलिखित
महत्वपूर्ण बिन्दुओ पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। दूसरे शब्दो मे हम यह
कहते है कि मूल्यांकन विधियो को निम्नलिखित कसौटी पर खरा उतरना नितान्त
आवश्यक है —

1. विश्वसनीयता
Reliability

विधि का विश्वसनीय होना नितान्त आवश्यक है। विश्वसनीय विधि से [illegible]
[illegible]
[illegible] नहीं कर सकता।

2. वैधता
Validity

परीक्षा का वैध होना भी आवश्यक है। वैधता का सामान्य अर्थ है परीक्षा मे शुद्धता और साधकता का विद्यमान होना। विश्वसनीयता के साथ वैध होना आवश्यक नही है परन्तु वैध होने के लिए विश्वसनीय होना आवश्यक है। उदाहरणार्थ किसी विषय की अनेको बार परीक्षा लेने पर सदैव एक ही फल की प्राप्ति विधि की विश्वसनीयता की द्योतक तो होगी परन्तु सम्भव है कि उस परीक्षा विधि द्वारा वांछित योग्यता का मापन ही न हो रहा हो, ऐसी स्थिति मे परीक्षा विश्वसनीय तो होगी परन्तु वैध नही।

3. वस्तुनिष्ठता
Objectivity

परीक्षा में वस्तुनिष्ठता का होना नितान्त आवश्यक है। वस्तुनिष्ठता का विश्वसनीय एवं वैधता से घनिष्ठ सम्बन्ध होना आवश्यक है। परीक्षा मे वस्तुनिष्ठता का सामान्य अर्थ है—प्रत्येक प्रश्न का निश्चित मूल्यांकन होना तथा प्रत्येक प्रश्न का निश्चित उत्तर प्राप्त होना।

4. भेदकरण
Discrimination

भेदकरण से तात्पर्य है—विभिन्न बौद्धिक क्षमता वाले विद्यार्थियों मे भेद करने की क्षमता। विभेदकारी प्रश्नो मे यह क्षमता होनी चाहिए जिससे प्रतिभाशाली, सामान्य और सामान्य मे नीचे के बौद्धिक योग्यता वाले बालकों का पता लगाया जा सके।

5. व्यापकता
Comprehensiveness

परीक्षा में व्यापकता का अर्थ है—सम्पूर्ण विषय क्षेत्र का प्रतिनिधित्व। जैसा कि हम पिछले पृष्ठो मे कह चुके हैं कि वर्तमान परीक्षा पद्धति का सबसे बड़ा दोष व्यापकहीनता है अर्थात् निबन्धात्मक प्रश्नो मे सम्पूर्ण विषय को समाहित नही किया जाता क्योंकि सामान्य रूप से दस प्रश्न पूछे जाते हैं और यह विद्यार्थी के संयोग पर निर्भर करता है कि वह उस विषय के अल्प अध्ययन से कितने अंक प्राप्त करें। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रश्न पत्र पूरे पाठ्यक्रम पर आधारित होना चाहिए।

सफल मूल्यांकन हेतु यह आवश्यक है कि किसी भी परीक्षा को बनाने से पूर्व हम यह देख लें कि उसमें उपरोक्त विशेषताएँ हैं अथवा नही। यह तो हम सभी स्वीकार करते हैं कि शिक्षा मे परीक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है और वर्तमान

उपरोक्त बिन्दुओं से यह स्पष्ट है कि बालक के सर्वांगीण विकास मूल्यांकन की विस्तृत योजना बनाना नितान्त आवश्यक है जिसमें शारीरिक, मा सिक, सामाजिक और संवेगात्मक विकास का सम्मिलित करना नितान्त आव है। शिक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या को ध्यान में रखते हुए शिक्षा का अर्थ के विषय ज्ञान की प्राप्ति से न लेकर सम्पूर्ण जीवन के कार्यकलापों से लेना नित आवश्यक है। इसके लिए यह आवश्यक है कि मूल्यांकन का नवीन कार्यक्रम बना जाये जो नवीन विधियों पर आधारित हो।

10.04 मूल्यांकन की नवीन विधियाँ
New Methods of Evaluation

जैसा कि हम स्पष्ट कर चुके हैं कि मूल्यांकन सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया का ए महत्वपूर्ण अंग है और शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक साधन है मूल्यांकन के द्वारा केवल मात्र बालकों में व्यवहार परिवर्तन ही नहीं बल्कि शिक्ष विधियों में सुधार भी सम्भव है। इसके द्वारा शैक्षिक उपलब्धि का सही मापन होता ही है, इसके अतिरिक्त शिक्षण प्रक्रिया में सुधार होता है। कहने का तात्प यह है कि मूल्यांकन का शिक्षा व्यवस्था में अद्वितीय स्थान है। परन्तु हमारे देश अभी तक निबन्धात्मक पद्धति को ही अपनाया जाता रहा है और अन्य देशों मूल्यांकन के क्षेत्र में हुए नवीन प्रयोगों और नवीन विधियों पर विशेष ध्यान दिय गया है। बालकों के समग्र विकास हेतु यह नितान्त आवश्यक है कि हम मूल्यांक प्रक्रिया में सभी पक्षों के मूल्यांकन को स्थान दें और मूल्यांकन की उन विधियों क प्रयोग में लायें जो विश्वसनीय हों, वस्तुनिष्ठ हों तथा व्यावहारिक हों। लिखि परीक्षा द्वारा छात्रों के सम्पूर्ण विकास क्षेत्रों का मूल्यांकन सम्भव नहीं है, इसके लिए आवश्यक है कि अन्य विधियाँ जैसे निरीक्षण, मौखिक परीक्षा, क्रियात्मक परीक्षा तथा अन्य विधियों को प्रयोग में लाया जावे।

मूल्यांकन की नवीन विधियों को प्रयोग में लाते समय हमें महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। दूसरे सकते हैं कि मूल्यांकन विधियों को निम्नलिखित कसौटी पर खरा आवश्यक है:—

1. विश्वसनीयता
Reliability

विधि का विश्वसनीय होना नितान्त आवश्यक है। वि अन्तर्गत विद्यार्थी द्वारा प्राप्तांक सभी स्थिति में अन्य खानों के रहते हैं। ऐसी स्थिति में परीक्षक की संवेगात्मक अस्थिरता अथ धारणा किसी प्रकार से परीक्षाफल को प्रभावित नहीं कर सक

* नवीन उद्देश्य निरूपणता एवम् परीक्षण हेतु शिक्षण प्रक्रिया में
परिवर्तन किया जाये ।

* नवीन मूल्यांकन की धारणा को अधिकाधिक प्रोत्साहन देने के
माध्यमिक स्तर के समस्त अध्यापकों को इससे परिचित कराया ज

* इस कार्यक्रम को समस्त शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में आ
दिया जाये जिससे समस्त छात्राध्यापक एवम् छात्राध्यापिका
सम्बन्धित ज्ञान दिया जा सके ।

* परीक्षण और शिक्षण को नवीन उद्देश्यों से निरूपित करने के लिए
क्रम को परिवर्धित किया जाये ।

10 05 माध्यमिक शिक्षा आयोग की सिफारिशें
Recommendations of Secondary Education Comm

आयोग ने परम्परागत परीक्षा पद्धति को अनुचित एवम् निरर्थक
तथा परीक्षा सुधार हेतु निम्नलिखित सिफारिशें कीं—

1. वाह्य परीक्षाओं की संख्या में कमी की जाये । निबन्धात्मक प
की व्यक्तिवता कम करने के लिए नवीन प्रकार के प्रश्न पूछे जा
2. परीक्षा में प्रश्न सम्पूर्ण विषय सामग्री से पूछे जायें ।
3. परीक्षा में वस्तुनिष्ठ जाँचों का अधिकाधिक प्रयोग किया जाय ।
4. विद्यार्थियों के कार्यों का अन्तिम मूल्यांकन करते समय अ
मूल्यांकन तथा संचित अभिलेख को उचित महत्व प्रदान किया
5. वाह्य परीक्षा में पूरक परीक्षा की प्रणाली का प्रयोग किया जाय
6. छात्रों का अन्तिम मूल्यांकन आन्तरिक परीक्षाओं तथा विद्याल
लेखों पर आधारित होना चाहिए ।
7. वाह्य एवम् आन्तरिक परीक्षाओं में मूल्यांकन का आधार पा
मापदण्ड (Five Point Scale) होना चाहिए ।
8. परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात यदि कोई विद्यार्थी चाहे
अतिरिक्त विषय की अनुमति प्रदान की जानी चाहिए ।

उपरोक्त सुझावों से यह स्पष्ट है कि माध्यमिक शिक्षा आयोग ने
महत्वपूर्ण सुझाव दिये । बालक के सर्वांग विकास के मूल्यांकन हेतु यह आ
कि वाह्य और आन्तरिक परीक्षाओं, नियतकालिक जाँचों, विद्यालय अ
आदि को उचित महत्व प्रदान किया जाय । यह प्रसन्नता का विषय है कि
के सुझावों के अनुसार कुछ माध्यमिक शिक्षा बोर्डों ने इस ओर प्रभावशा
किया है ।

10 06 शिक्षा आयोग (1964-66) की सिफारिशें

Recommendations of Education Commission (1964-66)

कोठारी आयोग ने मूल्यांकन को शिक्षा प्रणाली का महत्वपूर्ण अंग बनाया है। मूल्यांकन के द्वारा केवल मात्र बालकों के व्यवहार और आदतों में परिवर्तन ही नहीं होता बल्कि इससे शिक्षण विधियों में सुधार भी होता है। मूल्यांकन पद्धति में सुधार लाने तथा कार्यक्रम को विस्तृत बनाने हेतु आयोग ने अग्रलिखित सिफारिशें कीं —

1 मूल्यांकन के नवीन कार्यक्रम द्वारा लिखित परीक्षाओं को सुधारा जाय एव उन्हें अधिक विश्वसनीय बनाया जाय।

2 छात्रों के समस्त विकास क्षेत्रों को मापने का प्रयत्न किया जाय, इसके लिए आवश्यक है कि उन विधियों का पता लगाया जाय जिससे छात्रों के शारीरिक, मानसिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, संवेगात्मक विकास का मूल्यांकन हो सके क्योंकि लिखित परीक्षाओं में यह सम्भव नहीं है।

3 पूर्व प्राथमिक स्तर पर वांछित कुशलताओं, योग्यताओं, आदतों एव व्यवहारों में परिवर्तन करने के लिए उचित मूल्यांकन पद्धति को अपनाया जाय।

4 उच्चतर माध्यमिक स्तर पर लिखित परीक्षाओं के अतिरिक्त मौखिक और निदानात्मक परीक्षाओं को उपयोग में लाया जावे।

5 सभी पक्षों में प्रगति देखने के लिए संचित अभिलेख पत्रों का प्रयोग किया जाये।

6. प्राथमिक स्तर की समाप्ति पर वाह्य परीक्षा की व्यवस्था हो और उत्तीर्ण छात्रों को प्रमाण-पत्र (Certificate) दिया जाय।

7. छात्रवृत्तियाँ और योग्यता प्रमाण-पत्र विशिष्ट जाँचों के आधार पर दिये जाने चाहिये।

8. वाह्य परीक्षाओं को अधिकाधिक वस्तुनिष्ठ बनाया जाये।

- प्रयोगात्मक विद्यालयों की स्थापना की जानी चाहिए। इन विद्यालयों को यह स्वतन्त्रता दी जाय कि वे अपना पाठ्यक्रम और सम्बन्धित पाठ्य-पुस्तकों का चयन कर सकें, एव मूल्यांकन के लिए नवीन विधियों का प्रयोग कर सकें। कक्षा दस के पश्चात् पृथक् परीक्षाएँ लेने का अधिकार प्रदान किया जाय सफल छात्रों को प्रयोगात्मक परीक्षाओं की सिफारिश के आधार पर राज्य माध्यमिक शिक्षा बोर्ड द्वारा प्रमाण-पत्र दिये जाने चाहियें।

- व्यापक आन्तरिक मूल्यांकन योजना (Comprehensive Internal Evaluation Scheme) बनाई जाय जिसमें बालकों के समस्त पक्षों का मूल्यांकन किया जाय।

11. बाह्य परीक्षाओं के साथ ही आन्तरिक जाँचों जैसे निरीक्षण, मौखिक परीक्षा, रुचियों, योग्यताओं, अभिवृत्तियों आदि को जाँचने के लिए विभिन्न प्रमापीकृत जाँचों का प्रयोग किया जाय।

कोठारी आयोग द्वारा दी गई उपरोक्त सिफारिशें वास्तव में महत्वपूर्ण हैं। वर्तमान परीक्षा-पद्धति के दोषपूर्ण होने के कारण विद्यार्थियों में दिन प्रतिदिन अनुशासनहीनता बढ़ती जा रही है, वास्तविक प्रतिभा वाले बालकों का चयन नहीं हो पाता जिसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था में अराजकता फैल गई है। हमने अभी तक निबन्धात्मक प्रणाली को ही अपनाया है। हमारे देश में समुचित नवीन मूल्यांकन विधियों का प्रयोग नहीं हुआ है। कोठारी आयोग ने संचित अभिलेख और आन्तरिक मूल्यांकन के सुझावों द्वारा बालक के सर्वाङ्ग विकास की जाँच प्रस्तुत की है जो अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आन्तरिक मूल्यांकन योजना सम्बन्धी सुझाव अति उत्तम है, इससे केवल वास्तविक मूल्यांकन ही नहीं बल्कि अनुशासनहीनता भी कम होगी। यह प्रसन्नता का विषय है कि कुछ राज्यों में आन्तरिक मूल्यांकन के आरम्भ करने हेतु विचार हो रहा है। राजस्थान में माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने पाठ्यक्रम एवं मूल्यांकन विभाग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान और प्रशिक्षण परिषद्, देहली के सहयोग से परीक्षा सुधार का एक व्यापक कार्यक्रम आरम्भ किया है। इसके अतिरिक्त आन्तरिक मूल्यांकन की प्रणाली को सुधारने के लिए एक व्यापक योजना आरम्भ कर दी है। इस योजना का परीक्षण राज्य के कुछ चुने हुए विद्यालयों में 1965 से 1967 तक किया गया। इन विद्यालयों के अध्यापकों तथा प्रधानाध्यापकों ने आन्तरिक मूल्यांकन के सम्बन्ध में विभिन्न उपकरण तथा प्रक्रियाएँ विकसित की तथा अपने अपने विद्यालयों में उनका परीक्षण किया। विभिन्न क्षेत्रों में छात्रों की प्रगति के मूल्यांकन के लिए मापदण्ड निश्चित करने के अतिरिक्त उन्होंने निदानात्मक जाँच-पत्र, इकाई परीक्षा-पत्र तैयार किए। बोर्ड एवं मूल्यांकन व पाठ्यक्रम विभाग ने इस योजना को अन्तिम रूप दिया। बोर्ड की वर्तमान संचितवृत्त प्रणाली के अनुसार आन्तरिक परीक्षाओं में प्राप्तांक बोर्ड परीक्षा के प्राप्तांकों में जोड़े जाते हैं। यह प्रथा 1969 की माध्यमिक स्कूल परीक्षा एवं हायर सेकेण्डरी परीक्षाओं से निरस्त कर दी जायगी। विद्यालयों को आन्तरिक मूल्यांकन का प्रमाण-पत्र जिन पर बोर्ड की मुद्रा अङ्कित होगी 1969 से देने का अधिकार होगा।[1] यदि अन्य राज्यों के शिक्षा बोर्ड भी मूल्यांकन का नवीन कार्यक्रम प्रारम्भ कर दें तो माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र की अनेकों समस्याओं का समाधान सम्भव है।

---

1. Board of Secondary Education, Rajasthan, Ajmer, *Manual of Instructions on Comprehensive Internal Assessment*, Department of Curriculum & Evaluation, N. C. E. R. T., New Delhi—16

विश्वविद्यालय प्रश्न
University Questions

1. [illegible] reform is to be suggested regarding the [illegible]

Examine the major defects in the examination system in the light of the above statement.

'यदि शिक्षा प्रणाली के सम्बन्ध में किसी एक सुधार का सुझाव दिया जाय, तो वह केवल मूल्यांकन से सम्बन्धित है।'

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग

उपरोक्त कथन के सम्बन्ध मे वर्तमान परीक्षा प्रणाली के दोष बताओ।

2. How far do you think that there is a need for examination reform ?

परीक्षा पद्धति में सुधार की आवश्यकता के विषय में आपका क्या विचार है ?

3. 'The whole purpose of the proposal is to reform the existing examination by making it less formal, reducing its burden on the pupils' mind, and increasing its validity as a measure of educational attainment.'

(Education commission, 1966.)

Suggeste measures of reform in examination system.

'वर्तमान समय मे सुधार करने का उद्देश्य उन्हें कम औपचारिक बनाना, विद्यार्थियों के मस्तिष्क से भार कम करना और वैधता बढ़ाना है जिससे शैक्षिक उपलब्धि का मापन किया जा सके।'

(शिक्षा आयोग, 1966)

उपरोक्त कथन के सन्दर्भ मे परीक्षा प्रणाली के सुधार हेतु सुझाव दीजिए।

4. The cumulative Record is a systematic accumulation of significant factual information about an individual which when progressively developed and maintained over a sufficient period of

अध्याय ग्यारहै
Chapter Eleventh
भारतवर्ष में उच्च (विश्वविद्यालय) शिक्षा का विस्तार
Expansion of Higher (University) Education in India

अध्ययन बिन्दु
Learning Point

* 11.01 प्राचीन काल में उच्च शिक्षा
  Higher Education in Ancient Period.
* 11.02 मध्यकाल मे उच्च शिक्षा
  Higher Education in Mediaeval Period.
* 11 03 ब्रिटिश काल में उच्च शिक्षा
  Higher Education in British Period;
  1. प्रारम्भिक ब्रिटिश शासन से 1857 तक
  2. सन् 1857 से 1917 तक
  3. सन् 1917 से 1947 तक
* 11.04 स्वतन्त्र भारत मे उच्च शिक्षा
  Higher Education in Free India
  1. भारत में विश्वविद्यालय
  2. उच्च शिक्षा का प्रसार
  3. केन्द्रीय विश्वविद्यालय
  4. ग्रामीण उच्च शिक्षा

भारतवर्ष में उच्च (विश्वविद्यालय) शिक्षा का विस्तार

EXPANSION OF HIGHER (UNIVERSITY) EDUCATION IN INDIA

उच्च शिक्षा का विस्तार प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति से प्रारम्भ होता है। यद्यपि प्राचीन अथवा मध्यकालीन उच्च शिक्षा का आधुनिक उच्च शिक्षा पर कोई भी प्रभाव नहीं है तथापि भारत का एशियाई देशों से जो सांस्कृतिक सम्बन्ध है उसका श्रेय प्राचीन उच्च शिक्षण संस्थाओं को ही है। अतः भारत मे उच्च शिक्षा का विस्तार प्राचीन भारतीय शिक्षा-पद्धति से देखना अधिक श्रेयस्कर है।

11.01 प्राचीनकाल में उच्च शिक्षा
Higher Education in Ancient Period

प्राचीन भारत मे उच्च शिक्षा का प्रावधान था। वैदिक युग मे परिषदों द्वारा उच्च शिक्षा प्रदान की जाती थी। परिषदो मे अनेकों विद्वान एकत्र होते थे और शास्त्रार्थ करते थे। तक्षशिला प्राचीन भारतीय शिक्षा का केन्द्र था। तक्षशिला गांधार प्रदेश की राजधानी थी एवम् भरत ने इसकी नींव डाली थी और अपने [illegible] बसाया था।

उच्च शिक्षा संस्थाओं का सुसंगठित प्रारम्भ बौद्ध काल में हुआ। काशी (वाराणसी), नालन्दा (बिहार), तक्षशिला (पश्चिम बंगाल), विक्रमशिला और जगद्दला तथा ओदन्तपुरी (बंगाल), जयन्दरा बिहार (काश्मीर), काँची (मद्रास), वल्लभी (सौराष्ट्र) आदि इन प्रसिद्ध शिक्षा केन्द्रों के अतिरिक्त कुछ और भी शिक्षा केन्द्र थे जिनमें मुख्यतः चिनपति और जालधर के बौद्ध विहार (पंजाब), मणिपुर बिहार (उत्तर प्रदेश), मद्रबिहार, अमरावती (आंध्र प्रदेश), सालोत्गी विद्यापीठ (बम्बई), एन्नामियरम देवालय विद्यापीठ और व्यंकटेश पेरुमल देवालय तथा तिरुवोरियूर विद्यापीठ (दक्षिण भारत) आदि विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे शिक्षा केन्द्र भी रहे होंगे जो काल के गाल में समा गये और जिनके अवशेष मात्र भी शेष नहीं रहे।

उपरोक्त उद्धरणों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि प्राचीन युग में हमारे देश के अन्तर्गत उच्च शिक्षा की अत्यन्त ही सुव्यवस्थित एवं सुसंगठित दशा थी। इन शिक्षा केन्द्रों ने केवल भारत के ही नहीं बल्कि सुदूर देशों के छात्रों को भी आकर्षित किया एवम् अन्तर्राष्ट्रीय महत्व प्राप्त किया। समय के कुचक्र ने हमारे विद्या मन्दिरों को अधिक समय तक न रहने दिया और आज केवल कुछ शिक्षा केन्द्रों के अवशेष मात्र हैं जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्राचीन काल में उच्च शिक्षा की अत्यन्त ही सुव्यवस्थित व्यवस्था थी।

11.02 मध्यकाल में उच्च शिक्षा
Higher Education in Mediaeval Period

मध्यकाल में शिक्षा का स्वरूप बिलकुल परिवर्तित हो गया। भारतीय संस्कृति पर आधारित प्राचीन शिक्षा शनैः-शनैः लोप होने लगी। मध्यकाल में उच्च शिक्षा हेतु, 'मदरसे' खोले गये। अरबी भाषा में 'दरस' का अर्थ है 'भाषण करना' अतः मदरसों में भाषण द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती थी जिनमें उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी। इन मदरसों को मुसलमान बादशाह अथवा उनके प्रतिनिधि खोलते थे। दिल्ली, आगरा, लखनऊ, रामपुर, लाहौर, अजमेर, जौनपुर आदि में प्रतिष्ठित मदरसे थे। इन मदरसों में इतिहास, दर्शनशास्त्र, अरबी, फारसी, धर्म, राजनीति एवम् व्याकरण का अध्ययन किया जाता था। सामान्यतया शिक्षा का माध्यम अरबी था। कुछ मदरसों में विशिष्ट विषयों की भी व्यवस्था थी, उदाहरणार्थ रामपुर तर्कशास्त्र और चिकित्सा के लिए, लखनऊ धर्म-शास्त्र के लिए और लाहौर गणित एवम् खगोल के लिए विख्यात थे।

शनैः-शनैः देश की राजनीतिक और सामाजिक स्थिति में परिवर्तन आया, फलस्वरूप सत्तरहवीं और अट्ठारहवीं शताब्दी में उच्च शिक्षा के केन्द्र लोप होने लगे।

तालिका नं० 11.1
1857 में कॉलेज[1]

प्रान्त	सामान्य शिक्षा के कॉलेज	मेडिकल कॉलेज	सिविल इंजीनियरिंग कॉलेज
बंगाल			
सरकार द्वारा संचालित	7	1	—
मिशनरी द्वारा संचालित	7	—	—
बम्बई			
सरकार द्वारा संचालित	2	1	—
मिशनरी द्वारा संचालित	—	—	—
पश्चिमोत्तर प्रान्त			
सरकार द्वारा संचालित	4	—	1
मिशनरी द्वारा संचालित	—	—	—
मद्रास			
सरकार द्वारा संचालित	1	1	—
मिशनरी द्वारा संचालित	2	—	—
कुल योग	23	3	1

2. सन् 1857 से 1917 तक
From 1857 to 1917

सन् 1854 के वुड के घोषणा-पत्र के द्वारा सर्वप्रथम शिक्षा सम्बन्धी नीति स्पष्ट हुई। घोषणा पत्र में विश्वविद्यालय खोलने की सिफारिश की गई। इसी सिफारिश पर जनवरी 24, 1857 को विश्वविद्यालयों की स्थापना सम्बन्धी बिल

1. S Nurullah and J. P. Naik, *History of Education in India*, Macmillan Bombay, 1951, p 279

पर गवर्नर जनरल के हस्ताक्षर हुए। सर्वप्रथम कलकत्ता विश्वविद्यालय तत्पश्चात बम्बई और मद्रास विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। इन तीनों विश्वविद्यालय को संगठन स्वरूप लन्दन विश्वविद्यालय को आदर्श माना गया। कलकत्ता विश्वविद्यालय के चान्सलर स्वयं गवर्नर थे। अन्य दोनों विश्वविद्यालयों के चान्सलर वहाँ के गवर्नर थे। चान्सलर की सहायता के लिए वाइस चान्सलर[1] एवम् फैलोज[2] की व्यवस्था की गई। तीनों विश्वविद्यालयों में कला, कानून, चिकित्सा और इन्जिनियरिंग सकायों की स्थापना की गई। सन् 1882 मे पंजाब और 1887 मे इलाहाबाद विश्वविद्यालय खोले गये। इन समस्त विश्वविद्यालयों का कार्य केवल सम्बन्धित कॉलिजों और स्कूलों के विद्यार्थियों की परीक्षा लेना था। सन् 1881–82 मे महाविद्यालयो की कुल संख्या 68 थी।

सन् 1864 मे लखनऊ मे लखनऊ कैनिंग कॉलिज, 1861 मे तिनावेली कॉलिज मद्रास, 1872 मे म्योर सेन्ट्रल कलिज और 1875 मे सर सैयद अहमद खाँ द्वारा अलीगढ़ मे मुस्लिम एंग्लो ओरियण्टल कॉलिज की स्थापना की गई। बंगाल के तीन स्कूलों को कॉलिज बना दिया गया।

1901–2 मे महाविद्यालय शिक्षा की तीव्रता से वृद्धि हुई। इस समय तक महाविद्यालयो की कुल सख्या 179 हो गई।

सन् 1899 मे लार्ड कर्जन भारत के गवर्नर जनरल नियुक्त किये। इस समय राष्ट्रीयता की भावना से ओत प्रोत समाज सुधारक भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा की माँग कर रहे थे। लाहौर मे दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कॉलिज, हरिद्वार मे स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा स्थापित गुरुकुल और सेन्ट्रल हिन्दू महाविद्यालय बनारस राष्ट्रीय शिक्षा हेतु तथा इण्डियन नेशनल कांग्रेस भारत की स्वाधीनता हेतु आन्दोलन कर रहे थे। इन्ही दिनों देश दो दुर्भिक्षों का भी सामना कर चुका था अत लार्ड कर्जन का भारतीय शिक्षा की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक था। इसी लिए लार्ड कर्जन ने 27 जनवरी, 1902 ई० को भारतीय *विश्वविद्यालय कमीशन की नियुक्ति की* क्योंकि उसके मतानुसार विश्वविद्यालय के दो कार्य होने चाहिएं, प्रथम ज्ञान का प्रसार दूसरा मानव जाति को शिक्षित करना। अत विश्वविद्यालयो का कार्य केवल परीक्षा सबधी व्यवस्था करना ही नहीं होना चाहिए बल्कि शिक्षण और अनुसंधान करना भी होना चाहिए अत: भारतीय विश्वविद्यालयो मे परिवर्तन करना आवश्यक समझा जा रहा था।

विश्वविद्यालय कमीशन ने विश्वविद्यालयों की दशा का अध्ययन किया और ... दिये—

गठन किया जाये सीनेट की अवधि 5 वर्ष हो और उसका आकार छोटा कर दिया जाये।

* सिंडीकेट के सदस्यों की संख्या 9 से बढ़ाकर 15 कर दी जाये।
* विश्वविद्यालयों के विधान में इस प्रकार से परिवर्तन किया जाये जिससे शिक्षण कार्य की व्यवस्था हो सके।
* सम्बन्धित महाविद्यालयों को मान्यता प्रदान करने के नियमों में अधिक कड़ाई लायी जाये।
* विश्वविद्यालयों की सीनेटों में महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के अध्यापकों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए।
* विश्वविद्यालयों का सम्बन्धित महाविद्यालयों पर कड़ा निरीक्षण होना चाहिए।
* महाविद्यालयों के पाठ्यक्रमों तथा परीक्षा प्रणाली में वांछित परिवर्तन किया जाये।
* छात्रों के निवास हेतु उचित छात्रावास की व्यवस्था होनी चाहिए।
* विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जाये।
* प्रत्येक महाविद्यालय में एक प्रबंधकारिणी समिति हो जो महाविद्यालयों की व्यवस्था करें तथा भवन एवम् छात्रावास आदि का समुचित निर्माण कराये।

यद्यपि उपरोक्त सिफारिशों का भारतीय जनता ने विरोध किया तथापि लार्ड कर्जन ने 10 मार्च, 1904 को एक शिक्षा विधेयक प्रस्तुत किया जो 21 मार्च 1904 को कानून बन गया। इस विधेयक के महत्वपूर्ण बिन्दु निम्नलिखित थे—

* विश्वविद्यालयों के कार्य क्षेत्र को बढ़ा दिया गया।
* सीनेट के आकार को सीमित कर फैलोज की न्यूनतम संख्या 50 और अधिकतम 100 करदी गयी, जिसका कार्यकाल 5 वर्ष कर दिया गया।
* पुराने विश्वविद्यालयों - कलकत्ता, बम्बई और मद्रास के निर्वाचित सदस्यों की संख्या 20 और पंजाब एवम् इलाहाबाद के निर्वाचित सदस्यों की संख्या 15 निश्चित कर दी गई।
* सिण्डीकेट को विधिवत स्वीकृति प्रदान कर उनमें अध्यापकों के प्रतिनिधित्व की उचित व्यवस्था की गई।
* महाविद्यालयों के मान्यता प्राप्त करने के नियमों को कड़ा कर दिया गया।
* महाविद्यालयों के प्रादेशिक क्षेत्राधिकार की सीमाएं निर्धारित करने का अधिकार गवर्नर जनरल को प्रदान किया गया।

उपरोक्त विश्वविद्यालय अधिनियम (1904) का भारतीय जनता द्वारा घोर विरोध किया गया। भारतीय नेता यह सोचने लगे कि लार्ड कर्जन की शिक्षानीतियाँ सरकारी नियन्त्रण द्वारा उच्च शिक्षा के मार्ग में बाधाएं हैं। विश्वविद्यालयों पर

विश्वविद्यालयों में विभिन्न फैकल्टीज की स्थापना की जाये।

विश्वविद्यालयों के पारस्परिक सम्बन्धों को बढ़ाने के लिए अन्तविश्व-विद्यालीय बोर्ड की स्थापना की जाये।

उपरोक्त सुझावों के परिणामस्वरूप निम्नलिखित नवीन विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई।

उस्मानिया विश्वविद्यालय (1918), अलीगढ़ विश्वविद्यालय (1920), ढाका ... ल्ली विश्वविद्यालय (1926), आगरा विश्वविद्यालय (1927), अन्नामलई विश्वविद्यालय (1929), ट्रावनकोर विश्व-विद्यालय (1937), उत्कल विश्वविद्यालय (1943), सागर विश्वविद्यालय (1946), राजपूताना विश्वविद्यालय (1947)।

सन् 1920 में महाविद्यालयों की कुल संख्या 231 थी जिनमें छात्रों की संख्या 59,591 थी। सन् 1947 तक महाविद्यालयों की संख्या 933 हो गई जिनमें पढ़ने वाले छात्रों की संख्या 199,253 थी।

11.04 स्वतन्त्र भारत में उच्च शिक्षा
Higher Education In Free India

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश में उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिए अनेकों विश्वविद्यालय खोले गये, जिसके कारण महाविद्यालयों एवम् छात्रों की संख्या में आशातीत वृद्धि हुई, परन्तु देश की जनसंख्या को देखते हुए यह विकास बहुत कम था। राष्ट्रीय परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए 4 नवम्बर, 1948 को भारतीय सरकार ने विश्वविद्यालय आयोग की नियुक्ति की जिसके अध्यक्ष डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन थे। इस आयोग का कार्य क्षेत्र[1] भारतीय विश्वविद्यालयी शिक्षा के सम्बन्ध में एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करना था जिससे देश की वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विकास और प्रसार के लिए वांछित सुझाव दिये जा सकें।

आयोग ने अपने कार्यक्षेत्र के अनुरूप 6 दिसम्बर, 1948 से कार्य आरम्भ किया और 25 अगस्त, 1949 को अपना प्रतिवेदन सरकार के सम्मुख प्रस्तुत किया। आयोग द्वारा प्रस्तावित सुझावों से प्रभावित होकर केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने 22 व 23 अप्रैल, 1950 की विशेष बैठकों में समस्त सुझावों को कार्यान्वित करने का निश्चय किया। आयोग के अन्य सुझावों से सबसे महत्वपूर्ण सुझाव विश्वविद्यालय अनुदान आयोग[2] की स्थापना करना था और इसी के अनुरूप

1. To Report on Indian University Education and suggest improvements and extensions that may be desirable to suit present and future requirements to the Country.
The Report of the University Education Commission, 1948-49, Govt. of India, New Delhi, p. 1.
2. University Grants Commission.

।56 में इसे कार्य रूप में परिणत भी किया गया। विश्वविद्यालय अनुदान आ
रा 70 विश्वविद्यालयों तथा 10 विश्वविद्यालय मानी गई संस्थाओं को अ
या जाता है। यह अनुदान विज्ञान विषयों, मानविकी और समाज वि
न्जीनियरी और शिल्प विज्ञान, केन्द्रीय विश्वविद्यालयों को अनुरक्षण अनुदान,
न्याण, छात्रवृत्तियाँ तथा अधिवृत्तियाँ (फेलोशिप) आदि के रूप में विभिन्न वि
द्यालयों तथा उनसे सम्बन्धित महाविद्यालयों को दिया जाता है। विश्वविद्
नुदान आयोग द्वारा केन्द्रीय विश्वविद्यालयों को शत प्रतिशत और राज्य वि
द्यालयों को उनकी विकास योजनाओं के लिए सहभागिता के आधार पर अ
या जाता है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात उच्च शिक्षा का विकास जानने के लिए
चत होगा कि हम निम्नलिखित बिन्दुओ पर विचार करें—

1. भारत मे विश्वविद्यालय
2. उच्च शिक्षा का प्रसार
3. केन्द्रीय विश्वविद्यालय
4. ग्रामीण उच्च शिक्षा

1. भारत में विश्वविद्यालय

Universities In India

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय भारत मे कुल 19 विश्वविद्यालय थे जो 1968
 बढ़कर 70 हो गये हैं। यद्यपि विकास की गति तेज है तथापि यह विकास देश
आवश्यकताओं की पूर्ति करने में असमर्थ है। हमारे देश में कुल विश्वविद्यालयों
र उनसे सम्बन्धित महाविद्यालयों की संख्या तालिका नं० 11.2 के अनुसार है।

तालिका नं० *11.2*

विश्वविद्यालयों एवम् महाविद्यालयों की संख्या

	विश्वविद्यालय	स्थापना वर्ष	प्रकार	महाविद्यालयों की संख्या
	2	3	4	5
	कलकत्ता विश्वविद्यालय	1857	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	188
	बम्बई विश्वविद्यालय	,,	संघीय और अध्यापन	58
	मद्रास विश्वविद्यालय	,,	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	157
	इलाहाबाद विश्वविद्यालय	1887	आवासी और अध्यापन	6
	बनारस हिन्दु विश्व-विद्यालय	1916	,,	18
	मैसूर विश्वविद्यालय	,,	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	63
	पटना विश्वविद्यालय	1917	आवासी और अध्यापन	
	उस्मानिया विश्वविद्यालय	1918	सम्बद्ध करने वाला और [illegible]	

1	2	3	4	5
9	अलीगढ़ मुस्लिम विश्व-विद्यालय	1921	आवासी और अध्यापन	4
10	लखनऊ विश्वविद्यालय	,,	,,	18
11	दिल्ली विश्वविद्यालय	1922	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	41
12	नागपुर विश्वविद्यालय	1923	,,	84
13	आन्ध्र विश्वविद्यालय वाल्टेयर	1926	,,	61
14	आगरा विश्वविद्यालय	1927	सम्बद्ध करने वाला	143
15	अन्नमलै विश्वविद्यालय	1929	आवासी और अध्यापन	
16	केरल विश्वविद्यालय त्रिवेन्द्रम	1937	संघीय और अध्यापन	140
17	उत्कल विश्वविद्यालय, वरीबिहार, भुवनेश्वर	1943	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	72
18	सागर विश्वविद्यालय	1946	,,	67
19	राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर	1947	,,	75
20	पंजाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़	1947	,,	149
21	गोहाटी विश्वविद्यालय	1948	,,	75
22	जम्मू और काश्मीर विश्व विद्यालय श्रीनगर	1948	,,	34
23	रुड़की विश्वविद्यालय	1949	आवासी और अध्यापन	
24	पूना विश्वविद्यालय	1949	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	46
25	महाराजा सयाजीराव बड़ौदा विश्वविद्यालय बड़ोदा	1949	आवासी और अध्यापन	6
26	कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़	1949	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	53
27	गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद	1949	,,	125
28	एस एन डी.टी. महिला विश्वविद्यालय, बम्बई	1951	,,	17
29	बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर	1952	,,	44
30	श्री वेंकटेश्वर विश्व-विद्यालय, तिरुपति	1954	,,	28

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एक्ट के अनुसार विश्वविद्यालय की मानी गई संस्थाएँ
Institutions Deemed to be Universities Under U. G. C. Act.

1. भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलौर	1958
2. भारतीय कृषि अनुसंधान, नई दिल्ली	1958
3. भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन विद्यालय, नई दिल्ली	1961
4. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार	1962
5. जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली	1962
6. गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद	1963
7. काशी विद्यापीठ, वाराणसी	1963
8. टाटा समाज विज्ञान संस्थान, बम्बई	1964
9. बिड़ला शिल्पविज्ञान और विज्ञान संस्थान, पिलानी	1964
10. भारतीय खनन विद्यालय, धनबाद (इण्डियन स्कूल ऑफ माइन्स)	—

2. उच्च शिक्षा का प्रसार
Expansion of Higher Education

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात उच्च शिक्षा का प्रसार द्रुत गति से ... तालिका नं. 11.3 से यह तथ्य स्पष्ट है। कोठारी आयोग का सुझाव है ... शिक्षा के प्रसार हेतु सुविधाओं का आयोजन मानव शक्ति की आवश्यकताओं ... रोजगार के अवसरों को ध्यान में रखते हुए होना चाहिए। इसके अतिरिक्त ... जो प्रसार अब तक हुआ है उससे स्तर में बहुत कमी आई है। अतः उच्च शि... प्रसार में मानव शक्ति सम्बन्धी आवश्यकताओं, रोजगार के अवसरों और ... स्तर को बनाये रखना नितान्त आवश्यक है। सन् 1965-66 में पूर्व स्नात... स्नातकोत्तर स्तरों पर छात्रों की संख्या 10 लाख थी। देश में शिक्षा की ... हुई मांग को देखते हुए सन् 1985-86 तक यह संख्या 40 लाख करनी ... है, परन्तु सीमित आर्थिक साधनों को ध्यान में रखते हुए इस मांग को पूर... असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

1	2	3	4	5
50	रवीन्द्र भारती विश्व-विद्यालय, कलकत्ता	1962	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	20
51	मगध विश्वविद्यालय बोधगया	1962	,,	34
52	जोधपुर विश्वविद्यालय	1962	आवासी और अध्यापन	2
53	उदयपुर विश्वविद्यालय	1962	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	11
54	इन्दौर विश्वविद्यालय	1964	सम्बद्ध करने वाला	17
55	जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर	1964	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	30
56	जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर	1964	अध्यापन और आवासी	8
57	रविशंकर विश्वविद्यालय रायपुर	1964	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	44
58	कृषि विज्ञान विश्व-विद्यालय मल्लेश्वरम्, बंगलोर	1964	आवासी और अध्यापन	3
59	आंध्र प्रदेश कृषि विश्व-विद्यालय, राजेन्द्रनगर, हैदराबाद	1964	,,	6
60	बंगलौर विश्वविद्यालय	1964	संघीय	31
61	विश्वभारती, शान्ति निकेतन	1951	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	17
62	शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर-4	1962	,,	51
63	डिब्रूगढ़ विश्वविद्यालय राजामैदा, डिब्रूगढ़	1965	,,	34
64	कानपुर विश्वविद्यालय	1965	,,	—
65	सौराष्ट्र विश्वविद्यालय	1965	,,	—
66	दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत	1965	,,	—
67	मेरठ विश्वविद्यालय	1966	,,	34
68	मदुरै विश्वविद्यालय	1966		
69	बहरामपुर विश्वविद्यालय	1967		
70	संबलपुर विश्वविद्यालय			

1	2	3	4	5
50	रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय, कलकत्ता	1962	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	20
51	मगध विश्वविद्यालय बोधगया	1962	,,	34
52	जोधपुर विश्वविद्यालय	1962	आवासी और अध्यापन	2
53	उदयपुर विश्वविद्यालय	1962	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	11
54	इन्दौर विश्वविद्यालय	1964	सम्बद्ध करने वाला	17
55	जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर	1964	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	30
56	जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर	1964	अध्यापन और आवासी	8
57	रविशंकर विश्वविद्यालय रायपुर	1964	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	44
58	कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय मल्लेश्वरम्, बंगलौर	1964	आवासी और अध्यापन	3
59	आंध्र प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, राजेन्द्रनगर, हैदराबाद	1964	,,	6
60	बंगलौर विश्वविद्यालय	1964	संघीय	31
61	विश्वभारती, शान्ति निकेतन	1951	सम्बद्ध करने वाला और अध्यापन	17
62	शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर–4	1962	,,	51
63	डिब्रूगढ़ विश्वविद्यालय राजामेटा, डिब्रूगढ़	1965	,,	34
64	कानपुर विश्वविद्यालय	1965	,,	—
65	सौराष्ट्र विश्वविद्यालय	1965	,,	—
66	दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय, सूरत	1965	,,	—
67	मेरठ विश्वविद्यालय	1966	,,	—
68	मदुरै विश्वविद्यालय	1966	,,	34
69	बहरामपुर विश्वविद्यालय	1967	,,	—
70	संबलपुर विश्वविद्यालय, सबलपुर	1967	,,	—

महाविद्यालय की संख्या=2565

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एक्ट के अनुसार विश्वविद्यालय की मानी गई संस्थाएँ

Institutions Deemed to be Universities Under U. G. C. Act.

1. भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलौर
2. भारतीय कृषि अनुसंधान, नई दिल्ली
3. भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन विद्यालय, नई दिल्ली
4. गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
5. जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली
6. गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद
7. काशी विद्यापीठ, वाराणसी
8. टाटा समाज विज्ञान संस्थान, बम्बई
9. बिड़ला शिल्पविज्ञान और विज्ञान संस्थान, पिलानी
10. भारतीय खनन विद्यालय, धनबाद
    (इण्डियन स्कूल ऑफ माइन्स)

2. उच्च शिक्षा का प्रसार

Expansion of Higher Education

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात उच्च शिक्षा का प्रसार द्रुत गति तालिका नं० 11.3 से यह तथ्य स्पष्ट है। कोठारी आयोग का सुझाव शिक्षा के प्रसार हेतु सुविधाओं का आयोजन मानव शक्ति की आवश्य रोजगार के अवसरों को ध्यान में रखते हुए होना चाहिए। इसके अति जो प्रसार अब तक हुआ है उससे स्तर में बहुत कमी आई है। अतः उ प्रसार में मानव शक्ति सम्बन्धी आवश्यकताओं, रोजगार के अवसरों स्तर को बनाये रखना नितान्त आवश्यक है। सन् 1965-66 में पूर्व स्नातकोत्तर स्तरों पर छात्रों की संख्या 10 लाख थी। देश में शिक्षा हुई माग को देखते हुए सन् 1985-85 तक यह संख्या 40 लाख बढ़ने है, परन्तु सीमित आर्थिक साधनों को ध्यान में रखते हुए इस मांग को असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

तालिका सं० *11.3*

उच्च शिक्षा में छात्रों की संख्या (1950–51 से 1965–66)[1]

संख्या सौ में

	1950–51			1955–56			1960–61			1965–66		
	लड़के	लड़कियाँ	योग	लड़के	लड़कियाँ	योग	लड़के	लड़कियाँ	योग	लड़के	लड़कियाँ	योग
कला, वाणिज्य, विज्ञान												
1. पूर्व स्नातक-कला, विज्ञान	153	22	175	249	46	295	313	82	396	550	147	697
2. पूर्वस्नातक-वाणिज्य	16	—	16	27	—	27	38	—	38	61	1	62
योग	169	22	191	276	46	322	351	82	434	611	148	759
स्नातकोत्तर												
3. एम.ए. और एम.एस.सी.	14	2	17	21	4	25	38	9	47	62	16	78
4. अनुसंधान	1	—	1	2	—	3	4	1	4	6	1	8
योग	15	2	18	23	4	28	42	10	51	68	17	86
व्यावसायिक												
पूर्वस्नातक	46	4	50	74	7	82	131	15	147	195	33	227
स्नातकोत्तर एवं अनुसंधान	4	—	4	6	1	7	12	1	13	20	2	22
योग	50	5	54	80	8	89	143	16	160	215	35	240
कुलयोग	234	28	263	379	58	439	536	108	645	894	200	1094
जनसंख्या की कुल छात्र संख्या का प्रतिशत (आयुक्रम 18–23)	1·2	0·1	0·7	1·7	0·3	1·0	2·2	0·5	1·4	3·3	0·8	2·1

1. *Report of Education Commission*, 1964–66, p. 300
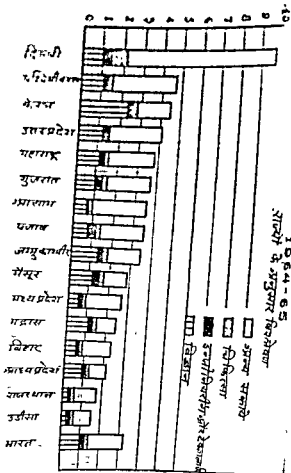
तालिका नं० 11.3 से यह स्पष्ट होता है कि पिछली तीन पंचवर्षीय योज नाओं में उच्च शिक्षा का विकास सभी क्षेत्रों मे हुआ है। कला, वाणिज्य और विज्ञा की पूर्वस्नातक कक्षाओं मे 1950-51 में छात्रों की संख्या 101,000 थी ज 1965-66 में बढ़कर 759,000 हो गई अर्थात् औसत वार्षिक वृद्धि 9 प्रतिशत थी।

स्नातकोत्तर (कला एवम् विज्ञान) और अनुसन्धान के छात्रों की संख्य 1950-51 में 18,000 थी, जो 1965-66 मे क्रमशः बढ़कर 86,000 हो ग अर्थात् औसत वार्षिक वृद्धि 11 प्रतिशत रही।

व्यावसायिक शिक्षा (कृषि, अध्यापक प्रशिक्षण, इन्जीनियरिंग, टेक्नालाजं विधि, चिकित्सा, पशु चिकित्सा) प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या 1950-51 54,000 थी और 1965-66 मे 249,000 थी। औसत वार्षिक वृद्धि 10 प्रतिशत हुई अर्थात् यह वृद्धि कला और विज्ञान स्तरों से अधिक थी।

यदि सम्पूर्ण उच्च शिक्षा के विकास को देखा जाये तो यह कहा जा सकत है कि औसत वार्षिक वृद्धि 10 प्रतिशत रही। विश्वविद्यालय के छात्रों की सख्य का राज्यों के अनुसार विश्लेषण पृष्ठ 212 पर देखें।

3. केन्द्रीय विश्वविद्यालय
Central Universities

केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के विस्तार हेतु कुछ महत्वपूर्ण विकास कार्य हुए उनमे कुछ का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वद्यालय
Aligarh Muslim University

सितम्बर 1, 1967 को छात्रों की सख्या 6,667 थी। इसी सत्र से सेमिस्ट पद्धति आरम्भ की गई है। कला, विज्ञान और वाणिज्य सकायों में आनर्स पाठ्यक्रम आरम्भ कर दिया है। इन्जीनियरिंग मे उन छात्रों के लिए जो डिप्लोम प्राप्त हैं और जिन्हे कुछ अनुभव है, एक अंशकालिक इन्जीनियरी डिग्री भी आरम कर दी गई है।

बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय
Banaras Hindu University

सत्र 1967-68 में विश्वविद्यालय के छात्रों की सख्या 9540 थी। अने संकायों में सेमिस्टर पद्धति आरम्भ कर दी गई है। विश्वविद्यालय परिषद् ने हिन्द को शिक्षा का माध्यम स्वीकार किया है, इस निर्णय को कार्यान्वित करने हेतु हिन्द माध्यम बोर्ड की स्थापना की है जो आवश्यक साहित्य प्रकाशित करेगा।

इसीलिए यह आवश्यक है ग्रामीण क्षेत्रों के लिए वांछित शिक्षा का आयो[illegible] दिया जाये। इसके लिये समय-समय पर विचार भी किया गया। हण्टर कमी[illegible] लार्ड कर्जन, सैडलर कमीशन और हर्टाग कमेटी आदि ने स्वतन्त्रता प्राप्ति से[illegible] इस शिक्षा के महत्व पर पर्याप्त बल दिया। सन् 1948 में विश्वविद्यालय शि[illegible] आयोग ने भी कृषि विश्वविद्यालों के आरम्भ करने का सुझाव दिया।

सन् 1956 में ग्रामीण उच्च शिक्षा की योजना प्रारम्भ की गई। इस [illegible] का उद्देश्य ग्रामीण नवयुवकों को ग्रामीण सभ्यता में माध्यमिक स्तर के प[illegible] उच्च शिक्षा प्रदान करना और ग्राम्य जीवन के प्रति वांछित दृष्टिकोण विक[illegible] करना था। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय एवम् राज्य सरकारों के ग्रामीण कार्यक्र[illegible] भाग लेने के लिए प्रशिक्षित करना भी था।

इस समय देश के विभिन्न भागों में तेरह ग्रामीण संस्थान हैं—

1. हनुमान मढी	(मद्रास)
2. रामपुरा	(पंजाब)
3. गारगोती	(महाराष्ट्र)
4. सानोसरा	(गुजरात)
5. बिरोली	(बिहार)
6. जामिया नगर	(दिल्ली)
7. श्री निकेतन	(बंगाल)
8. गांधीग्राम	(मद्रास)
9. वर्धा	(मध्य प्रदेश)
10. उदयपुर	(राजस्थान)
11. अमरावती	(महाराष्ट्र)
12. चित्रपुरी	(उत्तर प्रदेश)
13. कोयम्बटूर	(मद्रास)

इनसे 11 राष्ट्रीय ग्रामीण उच्च शिक्षा परिषद् से सम्बन्ध है। शेष [illegible] जामिआ ग्रामीण संस्थान, नई दिल्ली और विद्या भवन ग्रामीण संस्थान, [illegible] क्रमश: जामिआ मिलिया इस्लामिया और उदयपुर विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हैं[illegible]

कोठारी आयोग ने भी कृषि शिक्षा के सभी अंगों पर ध्यान दिया [illegible] अग्रलिखित सुझाव दिये हैं—

* प्रत्येक राज्य में कम से कम एक कृषि विश्वविद्यालय की स्थापन[illegible] चाहिये। इसके अन्तर्गत वर्तमान आवश्यकताओं को ध्यान में र[illegible] पाठ्यक्रमों का निर्धारण होना चाहिये।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. Basu A. N.

   University Education in India, Book Emporium 1944.

2. Dongerkery, S. R.

   Thoughts on University Education, Popular Book Depot, Bombay, 1955.

3. Government of India,

   Report of University Education Commission, Publication Division, Delhi, 1949.

4. ——————————

   Report of Education Commission, Publication Division, Delhi, 1966

5. *Hindusthan Varshiki, (1968-69)*

   Hindustan Samachar, Mandi House, New Delhi-1, 1968

6. Mukerji S N,

   Education in India To-day & Tomorrow, Acharya Book Depot, Baroda, 1964.

7. Nurullah S. & J. P. Naik

   History of Education in India, Macmillan & Co. Bombay, 1951.

---

* 12.03 *अनुशासन और सामाजिक समायोजन की समस्या*

Problem of Discipline & Social Adjustment

अनुशासनहीनता और सामाजिक कुसमायोजन के कारण

1. *नैतिक शिक्षा का अभाव*
2. *महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों का दूषित* वातावरण
3. अध्यापकों में नेतृत्व का अभाव
4. राजनैतिक दलों द्वारा विद्यार्थियों का शोषण
5. महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में शैक्षिक सुविधाओं का अभाव

समस्या का समाधान

1. नैतिक शिक्षा
2. माता पिता, राजनैतिक दलों और जनता के *सहयोग की आवश्यकता*
3. शैक्षिक सुविधाओं की आवश्यकता
4. आत्म अनुशासन

उच्च शिक्षा की समस्याएँ

PROBLEMS OF HIGHER EDUCATIO

विश्वविद्यालयों का निर्माण मानवता, सहनशीलता, वैचारिक सत्य की खोज के लिए होना है। विश्वविद्यालय अथवा उच्च शिक्षा मानव जाति को उत्थान के मार्ग की ओर अग्रसर करना है जिससे हम मार्ग प्रशस्त हो और विश्व की परिवर्तित परिस्थितियों में अपना सक्रिय कर सके। विश्वविद्यालय पूर्णतः उच्च शिक्षा के पवित्र मन्दिर हैं जिसके रूप से दो उद्देश्य हैं—प्रथम, देश के नवयुवक और नवयुवतियों को किसी के लिए प्रशिक्षित करना तथा दूसरे बिना किसी शीघ्र उपयोगिता के लि अनुसधान में सहायता प्रदान करना। न समस्त उद्देश्यों की प्राप्ति तभी जबकि हमारे देश के विश्वविद्यालयों में सभी प्रकार की सुविधाएँ हों। सु तभी प्राप्त की जा सकती है जबकि उच्च शिक्षा के मार्ग में बाधाएँ न हों दुर्भाग्यवश हमारे देश की स्थिति कुछ भिन्न है। भारतीय विश्वविद्यालयों के अनेकों समस्याएँ हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाइस वर्ष पश्चात भी हम इन सम को सुलझाने में असमर्थ रहे हैं। आज उच्च शिक्षा के मार्ग में जो मूल समस्य उनमें चयन, स्तर, अनुशासन और सामाजिक समायोजन की समस्याएँ मुख प्रस्तुत अध्याय में हम इन समस्याओं और उनके समाधान की चर्चा करेंगे।

12.01 चयन की समस्या

The Problem of Selection

बनाया गया है, यह अभी तक अनिवार्य क्यों नहीं हुई—यह अन्य प्रश्न है और इसकी चर्चा हम दूसरे पाठ में कर चुके हैं, परन्तु यहाँ हमारा अभिप्राय केवल मात्र यह है कि प्राथमिक शालाओं में बालकों की संख्या प्रतिदिन बढ़ रही है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव माध्यमिक शिक्षा पर पड़ रहा है। माध्यमिक स्तर पार करने के पश्चात विश्वविद्यालयों में प्रवेश की समस्या प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है।

इसमें संदेह नहीं कि सभी को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि सभी प्रकार के छात्रों को विश्वविद्यालयों अथवा महाविद्यालयों में प्रवेश दिया जाना आवश्यक है। न तो यह व्यावहारिक ही है और न शैक्षिक ही। यदि हम प्राप्त आंकड़ों के आधार पर सन् 1916-17 से 1963-64 तक विश्वविद्यालयों के छात्रों की बढ़ती हुई संख्या देखें तो यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उसमें अत्यधिक वृद्धि हुई है। तालिका 12.1 से यह स्पष्ट है कि 1916-17 में छात्रों की कुल संख्या 61,145 थी जो कि 1963-64 में 13,84,697 हो गई और 1970-71 तक यह 19 लाख से ऊपर हो जायेगी। पूर्व अनुभवों और सीमित साधनों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इतनी बढ़ती हुई संख्या को शिक्षित करना कठिन अवश्य हो जायेगा। इसके लिए यह आवश्यक है कि विश्वविद्यालयों और सम्बन्धित महाविद्यालयों द्वारा वस्तुनिष्ठ चयन पद्धति को अपनाया जाये। 'सभी विद्यार्थियों को विश्वविद्यालय जीवन की पूर्ण सुविधाएं प्रदान करना असम्भव एवम् आवश्यक है। हमें इस हेतु छात्रों का चयन करना होगा परन्तु हमें यह भी देखना होगा कि कोई गरीबी के कारण इससे वंचित न रह जाये, यदि वह वास्तव में इस लाभ से उठाने योग्य है।'[1]

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के भूतपूर्व अध्यक्ष डा० सी० डी० देशमुख के अनुसार 'यदि उच्च शिक्षा के सीमित साधनों को व्यर्थ नहीं करना है तो विश्वविद्यालयों में छात्रों का प्रवेश चयन द्वारा ही होना चाहिए।'[2] इसका सबसे प्रमुख कारण यही है कि अयोग्य छात्रों के कारण अनुत्तीर्ण छात्रों की संख्या में वृद्धि होती है जिससे राष्ट्र का धन व्यर्थ होता है। जिसके परिणामस्वरूप समय, धन और मानवीय प्रयासों का अपव्यय होता है। 'प्राप्त आंकड़ों से यह ज्ञात होता है कि

1. It is impossible and unnecessary to provide all the students with the full benefits of University life. We have to be selective while seeing that no one, however poor is excluded from this benefit it he will really benefit from it.

Chagla, *Convocation address delivered in Delhi University*, 1964.

2. 'That admission to Universities should be on a selective basis if the limited resources available for higher education were not to be fittered away.

Dr. C. D. Deshmukh, Chairman, U. G. C., 1960

तालिका

विभिन्न संकायों के अनुसार विश्वविद्यालयों

Faculty Wise Total University

(1916-17 से

वर्ष	कुल संख्या	कला	विज्ञान	वाणिज्य	इंजीनियरिंग और टैक्नालाजी
1	2	3	4	5	6
1916—17	61,145	29,655	22,304	—	383
1926—27	92,262	64,747	28,611	832	1,506
1936—37	1,26,371	61,289	41,221	2,239	2,459
1942—43	1,84,164	86,225	60,985	7,540	3,574
1946—47	2,65,814	1,24,667	85,735	20,322	5,348
1947—48	2,65,017	1,17,609	89,043	22,589	6,793
1948—49	3,23,081	1,40,719	1,14,340	21,685	8,662
1949—50	3,66,986	1,63,075	1,23,345	32,306	10,414
1950—51	3,96,745	1,80,806	1,27,168	34,067	12,094
1951—52	4,59,024	2,12,923	1,42,666	41,458	13,900
1952—53	5,12,853	2,53,494	1,48,676	46,279	14,162
1953—54	5,80,218	2,93,677	1,62,234	53,124	15,613
1954—55	6,51,479	3,33,412	1,82,161	58,718	16,935
1955—56	7,12,697	3,61,004	1,97,475	64,167	19,699
1956—57	7,69,468	3,95,672	2,10,039	66,674	21,237
1957—58	8,27,341	4,15,3[illegible]3	2,29,899	69,570	27,534
1958—59	9,28,622	4,61,081	2,56,145	78,762	32,809
1959—60	9,97,137	4,72,183	2,92,190	84,127	39,324
1960—61	10,30,384	4,87,016	2,94,329	92,802	45,139
1961—62	11,55,380	4,99,974	3,36,722	1,25,142	58,168
1962—63	12,72,666	5,32,660	3,86,374	1,29,951	68,589
1963—64	13,84,697	5,70,049	4,35,925	1,30,579	73,015

र 12.1 के अनुसार

ों की कुल संख्या

rolment

963–64 तक]

मेडिकल	कृषि	पशु चिकित्सा	शिक्षा	विधि	अन्य
7	8	9	10	11	12
2,409	——	——	61	5,272	446
4,485	537	——	796	9,220	1,526
5,215	885	——	2,603	8,028	2,432
6,615	1,820	106	2,118	5,863	300
8,847	4,302	——	2,006	9,774	4,843
8,205	4,280	398	2,675	10,316	4,009
14,311	4,215	958	3,724	9,620	4,847
13,640	4,848	885	3,307	11,363	3,623
15,260	4,744	——	4,135	13,649	4,822
16,942	4,856	——	4,982	16,746	4,551
17,929	4,798	——	6,104	17,118	4,293
18,756	5,053	——	7,046	18,706	6,000
19,767	6,378	——	8,609	19,401	5,918
21,405	8,230	——	11,371	20,162	8,284
23,431	10,385	3,572	13,000	20,707	4,747
2,559	12,475	4,139	14,357	22,424	6,039
27,537	16,828	4,624	15,297	24,376	11,263
30,949	21,306	5,021	16,609	25,986	9,442
34,139	23,389	4,788	18,990	27,240	2,552
39,569	24,704	5,214	21,718	29,401	14,678
49,546	31,427	5,524	25,636	28,944	14,013
54,708	41,116	6,624	26,727	29,571	8,084

संसार में विश्वविद्यालय स्तर पर जितना अपव्यय भारत में होता है इतना अन्यत्र कहीं नहीं।'[1]

उपरोक्त सदर्भ में यह स्पष्ट कर देना अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि इंगलैण्ड में उच्च शिक्षा का कुल अपव्यय 14% है, जबकि भारतवर्ष में अपव्यय का प्रतिशत बहुत ऊँचा है। बम्बई विश्वविद्यालय के रेक्टर ने अपने अध्ययन में पाया कि स्नातक स्तर पर निश्चित समयावधि में केवल 25% छात्र ही सफलता प्राप्त करते हैं। बड़ौदा विश्वविद्यालय में हुए अध्ययन से ज्ञात होता है कि 33% छात्र अपनी शिक्षा पूर्ण करे बिना ही विश्वविद्यालय छोड़ जाते हैं।

भारतीय विश्वविद्यालयों में परीक्षाफलों पर हुए अनेको तात्कालिक अध्ययनों से यह ज्ञात होता है कि बी० ए०, बी० एस० सी०, बी० कॉम स्तर में 50% छात्र अनुत्तीर्ण होते हैं और स्नातकोत्तर स्तर पर 20 और 30% छात्र असफल रहते हैं।'[2]

यद्यपि छात्रो की असफलता के अनेको कारण हैं जैसे अपूर्ण पुस्तकालय, दूषित शिक्षण विधियाँ, अध्यापको के ज्ञान की अपूर्णता आदि परन्तु इसका मुख्य कारण छात्रों के प्रवेश के समय वस्तुनिष्ठ चयन पद्धति को न अपनाना ही है।

विश्वविद्यालयो में प्रवेश हेतु वांछित चयन पद्धति के विषय में सभी शिक्षा शास्त्री एकमत नहीं हैं। कुछ लोगो का मत है कि प्रवेश हेतु किसी भी प्रकार की चयन पद्धति को न अपनाकर सभी माध्यमिक परीक्षा उत्तीर्ण छात्रों को महाविद्यालय अथवा विश्वविद्यालयो में प्रवेश दिया जाये, क्योंकि माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम के पश्चात सभी छात्रों को नौकरी मिलना सम्भव नहीं है। विश्वविद्यालयों में छात्रों की संख्या सीमित करने हेतु एक समिति की नियुक्ति की और प्रवेश के समय चयन करना आवश्यक बताया परन्तु समिति ने अपने प्रतिवेदन में स्पष्ट किया 'कि 17 से 21 वर्ष की आयु में छात्रों को किसी भी प्रकार की शिक्षा देना आवश्यक है क्योंकि इसके बिना वे बेकारी के कारण शहर की गलियों में निरर्थक घूमते हैं और राज्य के लिए समस्याएँ उत्पन्न करते हैं।'[3]

1. 'It appeared from the figures available, that the degree of wastage in India of University education was the highest in the world.' *Ibid*

2. 'Several recent studies of examination results in Indian universities indicate that the failure rate at the B A, B. Sc., B. Com, level is generally of the order of 50% and that at the Post-graduate stage it ranges between 20 and 30%.'

Reqort on Standards of University Education, 1965.

3. 'That it was much better that students got some kind of education at the very impressionaqle age of 17 to 21 rather than being lift unemployed or unemployable roaming in the streets of he city, and creating problems for the state'

इसके अतिरिक्त हमारे देश में उच्च शिक्षा प्राप्त करना सामाजिक हैसियत ी जाती है। हमारे समाज के रीति-रिवाजों में जो व्यक्ति जितना अधिक पढ़ा ा होता है उसे उतना ही सम्मान दिया जाता है चाहे उसमें योग्यता हो अथवा हो। लड़कियों के वैवाहिक सम्बन्ध भी प्राप्त शिक्षा के आधार पर होते हैं। अतः सामाजिक परम्पराओं के कारण भी आज प्रत्येक विद्यार्थी उच्च शिक्षा प्राप्त रना चाहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि विश्वविद्यालय में प्रवेश के समय चयन या जाये अथवा नहीं, यह एक विवादास्पद प्रश्न है।

समस्या का समाधान

Solution of the Problem

शिक्षा के गिरते हुए स्तर, असफल छात्रों की बढ़ती हुई संख्या (देखिये तालिका नं० 12.2), शिक्षितों की बेकारी और राष्ट्रीय धन की हानि को देखते हुए ह अत्यन्त आवश्यक है कि एक चयनात्मक प्रवेश प्रणाली को स्वीकार किया जाये। च्च शिक्षा केवल उन छात्रों को दी जाये जो उसे प्राप्त करने योग्य हैं और लाभ उठाने की सामर्थ्य रखते हैं।

उपरोक्त संदर्भ में देश के अधिकतम विश्वविद्यालयों ने छात्रों की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुए कुछ तरीके अपनाये हैं। उदाहरणार्थ दिल्ली, जादवपुर, उस्मानिया, पटना और श्री वैंकटेश्वर विश्वविद्यालयों ने चयन हेतु कुछ विशेष मापदण्ड अपनाये हैं। देहली विश्वविद्यालय ने चयन हेतु बी. एस. सी. और कला तथा विज्ञान के आनर्स में प्रवेश पाने के लिए पूर्व परीक्षाओं में 45% अंकों को मापदण्ड माना

तालिका न० 12.2

विभिन्न परीक्षाओं के फल[1]

Results of Various Examinations

परीक्षा	परीक्षा देने वाले		उत्तीर्ण छात्र संख्या		उत्तीर्ण प्रतिशत	
	1959–60	1960–61	1959–60	1960–61	1959–60	1960–61
प्रीयूनीवर्सिटी	1,53,885	2,14,997	64,848	92,288	42·2	42·9
इंटर (कला)	2,36,146	2,01,340	87,615	80,754	37·1	40·1
इंटर (विज्ञान)	96,188	84,370	41,526	34,977	43 2	40·0
बी. ए.	1,35,347	1,42,273	58,452	65,138	43·2	45·8
बी एस सी	50,506	61,666	22,397	27,814	44·3	45·1
एम. ए.	19,854	23,276	10,343	18,984	82·3	81·4
एम.एस सी.	5,010	6,304	3,971	4,737	79 3	75·1
पूर्व व्यावसायिक	13,920	7,475	6,145	4,670	44·1	62·5

1. *Education in India*, Vol. No. 1, 1960—61, p. 182

है। जादवपुर विश्वविद्यालय ने प्री. यूनिवर्सिटी अथवा उच्चतर माध्यमिक परीक्षा मे द्वितीय श्रेणी की एकमात्र मापदण्ड को मान्यता प्रदान की है। इसी प्रकार अन्य विश्वविद्यालयों ने भी अलग-अलग प्रवेश प्रणाली हेतु कुछ मापदण्ड बनाये हैं।

कुछ विश्वविद्यालयों ने छात्रों की संख्या को कम करने के लिए न्यूनतम आयु निश्चित कर दी है। तालिका सं० 12 3 में विभिन्न विश्वविद्यालयों के आयु मापदण्ड को स्पष्ट किया गया है। इसके अतिरिक्त कुछ विश्वविद्यालयों ने विभिन्न कक्षाओं में छात्रों की संख्या को निश्चित कर दिया है।

तालिका सं० 12 3

विभिन्न विश्वविद्यालयों में प्रवेश हेतु न्यूनतम आयुक्रम
Minimum Age Range to Take Admission in Various Universities

विश्वविद्यालय	आयु	प्रवेश हेतु कक्षा
आंध्र प्रदेश	14 वर्ष 6 महीने	प्री-यूनिवर्सिटी
अन्नमलै	"	"
बड़ौदा	15 वर्ष	प्रीपेरेटरी
दिल्ली	"	पी० यू० सी०
गुजरात	"	"
जादवपुर	15 वर्ष 6 महीने	स्नातक प्रथम वर्ष
कर्नाटक	"	"
कुरुक्षेत्र	"	"
मद्रास	"	"
राजस्थान	16+वर्ष	"
सागर	"	"
विश्वभारती	"	"

उपरोक्त चयनात्मक प्रवेश प्रणाली में वस्तुनिष्ठता का अभाव है और इसी
राजनैतिक अथवा अन्य दबावों के कारण अयोग्य छात्रों को भी प्रवेश प्राप्त
ता है। अतः चयन की समस्या का समाधान करने के लिए विश्वविद्यालय
न आयोग की 'परीक्षा सुधार' समिति ने यह सुझाव दिया था कि माध्यमिक
की अन्तिम परीक्षा में दो अतिरिक्त प्रश्न पत्र आरम्भ कर दिये जायें, प्रथम
विद्यालय में प्रयुक्त होने वाली भाषा से सम्बन्धित और दूसरा बौद्धिक परि-
ता से सम्बन्धित, परन्तु अधिकांश विश्वविद्यालयों ने इसके सम्बन्ध में व्यावहारिक
नाईयाँ बताईं और सन् 1961–62 की उप-कुलपतियों के अधिवेशन ने भी इस
व को निरस्त कर दिया।

चयनात्मक प्रवेश प्रणाली को वस्तुनिष्ठ बनाने के लिए हम अन्य देशों में
लित परीक्षणों को प्रयोग कर सकते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में छात्रों के चयन
कॉलिज बोर्ड द्वारा कुछ परीक्षाएं प्रयोग में लाई जाती हैं जिन्हें विद्यालय अभि-
परीक्षा[1] कहा जाता है। ये परीक्षाएं सरल भी हैं और वस्तुनिष्ठ भी हैं।
लैंड में भी राबिन्स समिति[2] ने इस प्रकार की परीक्षाओं को विद्यार्थियों के चयन
लिए प्रयोग हेतु सुझाव दिया था। हमारे देश में यद्यपि इस प्रकार की वस्तुनिष्ठ
क्षाओं का अभाव है तथापि एन० सी० ई० आर० टी दिल्ली[3] और इण्डियन
टिसटीकल इन्सटी यूट, कलकत्ता के सामूहिक प्रयास से इन परीक्षाओं को तैयार
या जा सकता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक विश्वविद्यालय का मनोविज्ञान विभाग
इन परीक्षाओं को तैयार करे। इस कुछ वर्षों में वस्तुनिष्ठ परीक्षाएं भी तैयार
सकेंगी और छात्रों की अत्यधिक सख्या पर भी नियन्त्रण हो सकेगा।

परन्तु छात्रों के चयन से एक समस्या सामने आयेगी, उन छात्रों का क्या
गा जिन्हें उच्च शिक्षा हेतु प्रवेश नहीं मिलेगा। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाय
उनके व्यक्तित्व पर इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा जिसके परिणाम स्वरूप उनमें
नाशा और हीनता की भावनाएं आ जायेंगी। इसीलिए ऐसे छात्रों के विषय में
सोचना आवश्यक है। हमारी दृष्टि में इसके लिए निम्नलिखित उपाय किये जा
कते हैं—

1 माध्यमिक स्तर पर कुछ प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किये जाये जिससे सम्बन्धित योग्यता और रुचि वाले छात्र विश्वविद्यालयों में जाने की अपेक्षा इन प्रशिक्षण केन्द्रों में जाकर भावी व्यवसाय हेतु तैयार हो सकें और देश की प्रगति में अपना सहयोग प्रदान कर सकें।

---

1. Scholastic Aptitude Tests (SAT)
2. Robbins Committee's Report, England.
3. National Council of Educational Research and Training, Delhi.

को शिक्षा के अवसर भी प्राप्त हो सकें। इ
स्पष्ट करते हैं कि अभी तक हमारे देश में उच्चशि
करने वाले लोगों को ही प्राप्त है, इसके आवश्य
है कि ये सुविधाएँ सभी को प्राप्त होनी चाहिए
को छात्रों के चयन करने में सरलता हो सके।
कठिनाइयों के कारण उच्च शिक्षा प्राप्त करने के
समान शैक्षिक अवसर प्राप्त हो सके।

अन्त में सम्पूर्ण विवेचन के आधार पर हम यह स्पष्ट
में चयन की समस्या का समाधान आवश्यक है। छात्रों को महावि
विद्यालयों में प्रवेश देने के लिए चयनात्मक प्रवेश-प्रणाली को
कोठारी आयोग ने भी इस पक्ष की पुष्टि की है।

चयन के सम्बन्ध में कोठारी आयोग के सुझाव
Suggestions of Kothari Commission Regardin

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में छात्रों की बढ़ती हुई संख्या
आयोग ने विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि उच्च शिक्षा की
देश की जनशक्ति सम्बन्धी आवश्यकताओं तथा रोजगार के अ
रखकर किया जाना आवश्यक है। स्नातक एवं स्नातकोत्तर
संख्या जो सन् 1965–66 में 10 लाख थी, उसे बढ़ाकर सन् 1
लाख हो जायेगी। अतः इसके लिए आवश्यक है कि छात्रों की
किया जाये और प्रवेश के समय चयन पद्धति को अपनाया जाये।

* विश्वसनीय चयनात्मक विधि को अपनाया जाये। अन
ने भी उच्च शिक्षा के गुणात्मक विकास हेतु अनुसंधानों
को अपनाया है। आयोग ने इसके सम्बन्ध में निम
दिये हैं—

1. शिक्षा संस्थाओं में अध्यापकों तथा अन्य सुविधाओं क
आधार पर यह देखा जावे कि संस्था में कितने छात्रों
जा सकता है। शिक्षा के स्तर हेतु इस पर ध्यान देन
श्यक है।
2. विश्वविद्यालयों द्वारा प्रवेश योग्यता का निर्धारण,
3. महाविद्यालय विशेष में प्रवेश की इच्छुक छात्रों में से
चुनाव हेतु विश्वसनीय विधि।

12 02 स्तर की समस्या
The Problem of Standards

विश्वविद्यालय वह पवित्र स्थान है जहाँ राष्ट्र के तरुणो और नागरिकों के व्यक्तित्व को भावी जीवन हेतु ढाला जाता है। तरुणो की श्रेष्ठता और योग्यता प्राप्त उच्च शिक्षा पर निर्भर करती है। दुर्भाग्य का विषय है कि भारतीय विश्व-विद्यालयों द्वारा जो शिक्षा प्रदान की जा रही है वह वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है। इसका एक मात्र कारण शिक्षा के स्तरो की गिरावट है। कवि की ये पंक्तियाँ आज की स्थिति मे सत्य प्रतीत होती हैं—

> Where is the wisdom we have lost in knowledge ?
> Where is the Knowledge we have lost in information ?
> The cycles of Heaven in twenty Centuries,
> Bring us farther from God and nearer to the dust[1]

उच्च शिक्षा के स्तरो का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है परन्तु साथ ही अत्यन्त कठिन है। यह कहा जाता है कि पिछले कुछ वर्षों से विश्व विद्यालयो का स्तर शनै शनै गिरता जा रहा है। आज का सामान्य व्यक्ति भी यह कहता है कि 15 या 20 वर्ष पूर्व की शिक्षा आज की तुलना मे अधिक श्रेयस्कर थी और उस समय के विद्यार्थियो का बौद्धिक स्तर भी ऊँचा था। इसके अतिरिक्त एक दोष यह भी बताया जाता है कि विभिन्न परीक्षाओं के परीक्षाफलों मे प्रथम और द्वितीय श्रेणी मे उत्तीर्ण होने वाले छात्रो की संख्या में उत्तरोत्तर कमी आती जा रही है और तृतीय श्रेणी मे वृद्धि होती जा रही है। तालिका न० 12.4 से इस तथ्य की पुष्टि होती है।

तालिका न० 12.4
विभिन्न परीक्षाओं मे श्रेणियों का प्रतिशत
Percentage of Divisions in Various Examinations

वर्ष	बी. ए			बी एस सी.			बी ए.			एम एस. सी.		
	I	II	III	I	II	III	I	II	III	I	II	III
1952	1 2	28 8	70 0	6 3	35 0	58 7	5·2	40·9	53 9	23 5	55 8	20 7
1957	0·8	26 4	72 8	7·1	34 8	58 1	4·6	37·2	58 2	22·3	53 9	23 8
1962	1·0	24·2	74 8	8 5	39 6	51 9	3 7	41 3	55·0	24·6	57 2	18 2

1 *Report of the University Education Commission*, p. 35

अनेकों विश्वविद्यालयों में जो पाठ्यक्रम निश्चित किये गये हैं वे शैक्षिक उद्देश्यों की पृष्ठभूमि में ठीक प्रकार से परिभाषित नहीं हैं। इसका स्पष्ट अर्थ है कि वर्तमान स्थितियों में शिक्षा के उद्देश्य कुछ और हैं और पाठ्यक्रम छात्रों को कहीं और ले जाता है। इसका प्रत्यक्ष प्रभाव शैक्षिक स्तर पर पड़ता है क्योंकि जो शिक्षा देश की आवश्यकताओं की पूर्ति न करे—उस शिक्षा से कोई लाभ नहीं है। प्रायः लोगों को यह कहते सुना गया है कि आज की उच्च शिक्षा के निम्न स्तरों के कारण ही छात्रों को व्यवसाय नहीं मिल पाते। यदि हम इस कथन पर ध्यान दें तो सत्यता के दर्शन होते हैं क्योंकि विश्वविद्यालय की शिक्षा का एक उद्देश्य यह भी है कि उसके द्वारा छात्रों में सामान्य व्यावसायिक कौशल का विकास हो सके। जिससे छात्र समाज के लाभदायक सदस्य के रूप में देश की आवश्यकताओं के अनुरूप अपना सक्रिय योग प्रदान कर सकें।

सघीय लोक सेवा आयोग ने अपने सातवें प्रतिवेदन में स्पष्ट किया है कि, "छात्रों को लिखित परीक्षाओं के स्तर पर परीक्षकों ने जो विचार व्यक्त किये हैं, वे अत्यन्त ही शोचनीय हैं। सामान्यतया छात्रों के उत्तरों में विषय का ज्ञानात्मक पक्ष दृष्टिगोचर नहीं होता और उनके उत्तर रटने की प्रक्रिया पर आधारित रहते हैं। साक्षात्कार के समय उनके विषय के ज्ञान का सही पता लगता है।" ... ... अतः गम्भीर होकर यह सोचने की आवश्यकता है उत्तरोत्तर शैक्षिक स्तरों के गिरने का क्या कारण है। इसके लिए यह भी देखना चाहिए कि वर्तमान शिक्षा व्यवस्था छात्रों के बौद्धिक, चारित्रिक और व्यक्तित्व को विकसित करने के लिए वांछित सुविधायें प्रदान करता है अथवा नहीं।[1] तालिका न० 12.5 से उपरोक्त तथ्य की पुष्टि होती है। तालिका के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि उत्तीर्ण परीक्षार्थियों की प्रतिशत संख्या उत्तरोत्तर घटी है। ये तथ्य भी इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि उच्च

शिक्षा का स्तर दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा है। अतः यह नितान्त आवश्यक है कि स्तर के निरन्तर गिरावट के कारणों को जाना जाये।

तालिका सं० 12 5

भारतीय प्रशासकीय सेवाओं के परीक्षाफल[1]

Examination Results of Indian Administrative Service[1]

(1957–62)

वर्ष	परीक्षा मे बैठने वाले परीक्षार्थियो की सख्या	उत्तीर्ण परीक्षार्थियों की सख्या	प्रतिशत
1957	5,216	1,010	19·4
1958	6,297	680	10·8
1959	6,514	750	11·5
1960	4,849	110	12·6
1961	4,680	623	13·3
1962	4,446	434	9·8

स्तर के गिरावट के कारण

Causes of Overall Deterioration in Standards

जैसा कि हम पिछले पृष्ठों मे कह चुके हैं कि उच्च शिक्षा के स्तरों का सही मूल्यांकन करना नितान्त आवश्यक है। किसी भी देश की समृद्धि और उज्ज्वल भविष्य शिक्षित नवयुवकों और नवयुवतियो पर निर्भर करता है। हमें उच्च शिक्षा का केवल सख्यात्मक विकास ही नहीं करना है बल्कि गुणात्मक विकास भी करना है। यह तभी सम्भव है जब उच्च शिक्षा का स्तर ऊँचा हो, परन्तु इसके मार्ग मे कुछ बाधाएँ हैं जो इस प्रकार हैं—

1. समान प्रवेश नीति का अभाव

Lack of Similar Admission Policy

हम अध्ययन बिन्दु न० 12.01 मे स्पष्ट कर चुके हैं कि विश्वविद्यालयों मे विद्यार्थियों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है। विभिन्न भारतीय विश्वविद्यालयों

1. *Ibid.*

ने अपनी-अपनी पृथक प्रवेश नीतियाँ बना रखी हैं जो वि
मात्र हैं। जो थोड़ी बहुत औपचारिकताएँ निभाई भी जाती हैं
नहीं है।

सन् 1955 में केन्द्रीय शिक्षा सलाहाकार बोर्ड ने नई
पारित किया था—

> "प्रथम स्नातक पाठ्यक्रम 3 वर्ष का होना चाहिए औ
> प्रवेश हेतु न्यूनतम आयु 17+ होनी चाहिए।[1]

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी इस प्रस्ताव पर
निम्नलिखित सुझाव दिया—

> "विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में प्रवेश लेने हेतु न्यूनत
> करना वांछनीय होगा। इसका निश्चय हो चुका है कि न्यू
> निर्धारित की जाये, परन्तु शीघ्र ही कुछ कठिनाईयोंवश
> है, इसीलिए यह निश्चित किया गया कि वर्तमान में सभ
> को सुझाव दिया जाये कि प्रथम स्नातक पाठ्यक्रम के लि
> 16+ निर्धारित कर दी जाये।[2]

उपरोक्त सुझाव सन् 1961 में प्राचार्यों की समिति में भी
परन्तु आज तक भी सभी विश्वविद्यालयों ने इस सुझाव को कार्यरू
किया है। अतः एकरूपता का प्रश्न ही नहीं उठता। प्रवेश नीति
होने के कारण निम्न योग्यता के छात्रों की अधिकता हो जाती है
प्रभाव शैक्षिक स्तर पर पड़ता है।

2. 12 वर्षीय विद्यालय शिक्षा की अवहेलना
To Neglect 18 Years Schooling

इण्टरमीडिएट कॉलिजों से दो उद्देश्यों की पूर्ति होती है–प्रथम वि

---

1. "The first degree course should be of 3 years ... should be the minimum age for entry into the University."
Central Advisory Board of Education, resolution at it ... held in New Delhi in January, 1955

2. It would be desirable to prescribe a minimum ... admission to university courses. It was agreed that whil... ld be difficult imm... d that it might be ... as a first step, ... mission to the first ... courses."
Report on "Standards of University Education, Uni...

अथवा महाविद्यालयों में प्रवेश लेने से पूर्व विद्यार्थियों को सभी सकायों का प्रशिक्षण प्राप्त हो जाता है और स्वयमेव ही अधिकांश योग्य विद्यार्थियों का चयन हो जाता है क्योंकि उक्त शिक्षा में प्रवेश करने से पूर्व उसे दो बाह्य परीक्षाओं (हाई स्कूल और इण्टरमीडिएट) को उत्तीर्ण करना होता है। इण्टरमीडिएट कार्य प्रणाली का दूसरा उद्देश्य यह है कि इस परीक्षा के उपरान्त विद्यार्थियों में इतनी मानसिक परिपक्वता आ जाती है कि वे किसी भी व्यवसाय में प्रवेश कर सकते हैं। इसीलिए सन् 1919 में सेडलर आयोग ने इण्टरमीडिएट कालिजों को खोलने का सुझाव दिया था। सन् 1949 में राधाकृष्णन आयोग ने भी सुझाव दिया था कि 'इण्टरमीडिएट कॉलिजों में 12 वर्षीय पाठ्यक्रम को समाप्त करने के पश्चात ही विश्वविद्यालय पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जाये। सभी प्रान्तों में साधन सम्पन्न इण्टरमीडिएट कालिजों (कक्षा 9 से 12 अथवा 6 से 12) की स्थापना की जाये।'[1] योजना आयोग की शिक्षा समिति ने भी अगस्त 1960 को यह सुझाव दिया कि स्कूल कोर्स की कार्यविधि 12 वर्ष होनी चाहिये न कि 11 वर्ष और प्राथमिक स्तर से उच्च शिक्षा स्तर का कार्यकाल 14 वर्ष (11+3) की अपेक्षा 15 वर्ष (12+3) होना चाहिये क्योंकि विश्वविद्यालयों में 18 वर्ष का परिपक्व विद्यार्थी ही जाना चाहिये इसके पक्ष में एक तर्क यह है कि सैडलर और राधाकृष्णन आयोग ने भी इसी कार्यप्रणाली की सिफारिश की थी और जो स्कूल शिक्षा के लिए 11 वर्षीय कार्य प्रणाली स्वीकार की गई है वह अस्वस्थ समझौता है।[2] अखिल भारतीय माध्यमिक अध्यापक फैडरेशन 1962 ने 12 वर्षीय शाला पाठ्यक्रम के विषय में स्पष्ट किया कि 11 वर्षीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय योजना पूर्णरूपेण असफल रही है। इसीलिए यह सिफा- ... कि 5-7 ... का पाठ्यक्रम स्वीकार किया जाये जिसका अर्थ है,

... admission to the University Courses
... of the present intermediate examination
... of 12 years of study at a school and on
'In each ... a large number of well-
... lleges (with class IX to
...
... ucation Commisson, 1949.

...on ... urse should be 12 years and
...hat t... education from primary to
...lev... years (12+3) instead of 14
very ... mature students of the stage
... argument in support of this
...d ... endation of the Sadler Commi-
... Commission and that 11 year
... accepted ... dered
... 1960.

वर्ष का प्राथमिक स्तर, 3 वर्ष का जूनियर सैकण्डरी स्तर और 4 वर्ष का उच्चतर
द्यमिक स्तर।'[1] राज्य शिक्षा मन्त्रियो, उप-कुलपतियो और प्रसिद्ध शिक्षा
स्त्रियों की बैठक मे नवम्बर, 1963 को यह प्रस्ताव पारित किया कि उच्च
क्षा के स्तर मे गिरावट आने का एक मूल कारण 11 वर्षीय शाला पद्धति अपनाना
ी है। इसी विचार को सन् 1964 मे राज्य शिक्षा मन्त्रियों के सम्मेलन मे पुन
विचार के लिए रक्खा गया और इस सम्मेलन मे भी स्नातक स्तर के प्रवेश हेतु 12
वर्षीय शाला कार्यकाल की सिफारिश की गई।

उपरोक्त समस्त आयोगो, प्रतिवेदनो और शैक्षिक गोष्टियो के विचारो से यह
स्पष्ट होता है कि 11 वर्षीय शाला पद्धति का उच्च शिक्षा पर प्रभाव पड़ा है और
कुछ अशो मे स्तर की गिरावट का कारण उच्चतर माध्यमिक शालाएँ भी रही हैं।
हमारी स्वयं की धारणा भी यही है कि विश्वविद्यालय मे प्रवेश करने से पूर्व यह अत्यंत
आवश्यक है कि प्रत्येक छात्र 12 वर्ष के माध्यमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम समाप्त करे
और उसकी न्यूनतम आयु 18 वर्ष हो।

3 विश्वविद्यालयों मे शिक्षण सुविधाओं की कमी
Lack of Teaching Facilities in Universities

विश्वविद्यालयो मे शैक्षिक स्तर के गिरावट का कारण यह भी है कि उन
शिक्षण सुविधाओ की कमी है। विश्वविद्यालयो के सम्बन्धित महाविद्यालयो मे छा
की सख्या मे प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है। छात्रों की सख्या के वृद्धि के अनुरूप शैक्षि
सुविधाएँ प्रदान नही की जा रही हैं, क्योंकि छात्र और अध्यापकों का अनु
सतुलित नही है। ट्यूटोरियल पद्धति को आरभ नही किया गया है। एक कक्षा मे
अधिक छात्र बैठते हैं कि उसे कक्षा न कहकर भीड़ कह देना अधिक उत्तम हो
बहुत से सम्बन्धित महाविद्यालय तो पारियों (Shifts) मे चलते हैं जिन्हें दे
ऐसा आभास होता है जैसे कि आज के महाविद्यालय फैक्टरियाँ हो गये हों
कथन की पुष्टि निम्नलिखित तथ्यो से हो सकती है।

प्राप्त आँकड़ो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि 1965-
अध्यापकों की कुल सख्या 60,031 थी जिनमे से 10,430 अध्यापक विश्ववि
के विभिन्न विभागो के थे और अन्य सम्बन्धित महाविद्यालयों के थे। छात्रों क

1 The seminar was unanimously of the opinion that I
class Higher Secondary School Scheme has failed It the
recommends the pattern of 5-3-4 comprising five years of p
education, followed by 3 years of Junior or lower seconda
4 years of higher secondary stage

The All India Secondary Teachers Federation, (Semi
Secondary Education 1962.

सख्या 10 लाख थी। इसका अर्थ यह हुआ कि अध्यापक और छात्रों का अनुपात 1 : 17 3 था। चवालीस विश्वविद्यालयों के प्राप्त आकड़ों के आधार पर तालिका नं० 12.6 मे अध्यापक छात्र अनुपात को स्पष्ट किया गया है, जिससे स्पष्ट आभास होता है कि अधिकाश विश्वविद्यालयों मे अध्यापक छात्र अनुपात बहुत अधिक है अत: स्तर मे गिरावट आना स्वाभाविक है।

तालिका नं० 12 5

विश्वविद्यालयों में अध्यापक छात्र अनुपात[1]

Staff Students Ratio in Universities

श्रेणी	अध्यापक छात्र अनुपात	विश्वविद्यालयो की सख्या (श्रेणी के अनुसार)
A	1 10	4
B	1 : 10 एवम् 1 . 20	33
C	1 . 20	17

इसके अतिरिक्त महाविद्यालयो मे पुस्तको की सुविधाये सन्तोषप्रद नही है। सामान्य रूप से पुस्तकों की सख्या छात्रो के अनुपात मे बहुत कम होती है, कुछ पुस्तकालयों के भवन ही इस प्रकार के होते हैं कि वहाँ एकाग्रचित्त होकर पढ़ना तो अलग, बैठने तक को जगह नहीं होती जबकि स्नातकोत्तर और अनुसधान के विद्यार्थियों के लिए तो पुस्तकालय ही वरदान होते हैं।

विश्वविद्यालयो मे पुस्तकालयो की अच्छी व्यवस्था होती है, परन्तु वहाँ छात्र उसका उपयोग नही करते। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा नियुक्त एक समिति ने अपने प्रतिवेदन मे बताया कि 70 प्रतिशत से अधिक छात्र पुस्तकालय सुविधाओं से लाभान्वित होना ही नहीं चाहते क्योंकि अधिकतर छात्रों को यह अभिवृत्ति विकसित हो जाती है कि परीक्षा से दो या तीन महीने पहले पढ लेना ही आवश्यकता से अधिक है अत. उनके अनुसार पुस्तकालय मे जाकर समय नष्ट करना निरर्थक है। जिस देश के नवयुवको का पुस्तकालयों के प्रति इस प्रकार का व्यवहार हो, उस देश की शिक्षा का क्या भविष्य होगा यह स्वय ही सिद्ध है।

1. 1962-63 के आँकड़ों के अनुसार।

4. अध्यापन विधा का अवांछनीय स्वरूप
Undesirable Nature of Teaching Methods

उच्च शिक्षा के स्तर की गिरावट का एक कारण अध्यापन विधा का प्रयोग भी है। साधारणतया महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में व्याख्यान विधि ही प्रयोग की जाती है। अध्यापकों द्वारा निश्चित व्याख्यानों की पूर्ति कर देना ही कर्त्तव्य का पालन समझा जाता है। हमारी समझ में तो बहुत ही कम ऐसे अध्यापक होंगे जो सीखने की प्रक्रिया के अनुसार अपनी बौद्धिक कुशलता के द्वारा छात्रों को लाभान्वित करने का प्रयास करते होंगे। कुछ लोगों का तो यहाँ तक कहना है कि अधिकांश अध्यापक अपने व्याख्यानों को इतना सम्भाल कर रखते हैं कि जीवन भर उनमें कोई परिवर्तन नहीं आता। इसका स्पष्ट अर्थ यह हुआ कि नवीन ज्ञान का इस प्रकार के अध्यापकों के शिक्षण में कोई महत्व नहीं है।

दोष केवल अध्यापकों तक ही सीमित नहीं है। इस प्रकार के तरुण अध्यापक भी हैं जो कक्षा में जाने से पूर्व बहुत ही तन्मयता से व्याख्यान को सन्दर्भ पुस्तकों की सहायता से तैयार करते हैं और प्रतिभाशाली छात्रों के मस्तिष्क पर अपने व्याख्यान द्वारा प्रभाव छोड़ते हैं परन्तु अधिकांश विद्यार्थी निष्क्रिय श्रोताओं के समान केवल मात्र शारीरिक तौर पर ही उपस्थित रहते हैं। आज के अधिकांश छात्र अध्यापक के शैक्षिक व्यक्तित्व से प्रभावित न होकर केवल सस्ती पुस्तकों पर अवलम्बित रहते हैं।

संक्षेप में हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि अध्यापकों द्वारा केवल मा व्याख्यान विधि से ज्ञान प्रदान करना और छात्रों द्वारा ज्ञान की खोज एवम् विच विमर्श किये बिना ही व्याख्यानों को सुनना शिक्षण विधि की उपयोगिता नहीं जब तक हमारे विश्वविद्यालयों में अथवा महाविद्यालयों में ऐसा होता रहेगा तब स्तर में सुधार आना असम्भव है।

5. विभिन्न विश्वविद्यालयों में अनेक परीक्षा पद्धतियाँ
Various Examination Practices in Different Universitie

हमारे देश में अनेकों प्रकार के विश्वविद्यालय हैं और प्रत्येक विश्वविद्या में अनेकों सकायें हैं। इन सकायों में विभिन्न परीक्षा पद्धतियों को व्यवहार में लाया जाता है और उनकी अनेकों समस्याएँ हैं। इन समस्याओं का अभी तक समाधान नहीं हो सका है, यही कारण है कि उच्च शिक्षा का स्तर शनैः शनैः गिर रहा है। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण सुझाव दिया था, "हम यह दृढ़ता से कह सकते हैं कि यदि विश्वविद्यालय शिक्षा में एक भी सुधार करना है तो वह परीक्षाओं में सुधार किया जाना चाहिए।"[1]

---

1. "We are convinced that if we are do suggest any single reform in University Education, it should be that of Examinations." *University Education Commission*, 1948-49.

कोठारी शिक्षा आयोग ने भी परीक्षा सम्बन्धी समस्या का अध्ययन किया और यह सुझाव दिया कि "वर्तमान पद्धति द्वारा छात्रों का भविष्य केवल मात्र एक ही बाह्य परीक्षा के द्वारा वर्ष के अन्त में निश्चित किया जाता है, इसी कारण वे अध्यापकों को कम से कम महत्व देते हैं और पूरे वर्ष स्वतन्त्र रूप से अध्ययन करने की अपेक्षा वार्षिक परीक्षा के लिए कुछ तथ्यों को रट लेना ही श्रेयस्कर समझते हैं। इन हानिकारक बाह्य परीक्षाओं का प्रभाव उच्च शिक्षा के स्तर पर इतना अधिक हो गया है कि परीक्षा में सुधार किया जाना अत्यन्त आवश्यक है जिससे शिक्षण में उन्नति की जा सके।"[1] उच्च शिक्षा के स्तरों की गिरावट और परीक्षा प्रणाली के दोषों पर सन् 1954 से गम्भीरतापूर्वक विचार होता रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने सन् 1957 में डा० ब्लूम को निमन्त्रित किया और सन् 1958 में उसमानिया, पूना, पटना, अलीगढ़ विश्वविद्यालयों में परीक्षा प्रणाली सुधार पर आवश्यक विचार विमर्श एवम् गोष्ठियाँ भी हुईं। सन् 1958 में भारतीय शिक्षा शास्त्रियों का एक दल अमेरिका भी गया। परीक्षाओं में आवश्यक सुधार करने के लिए बड़ौदा, गोहाटी, त्रिवेन्द्रम विश्वविद्यालयों में परीक्षा अनुसंधान इकाईयों की स्थापना भी की गई। वर्तमान परीक्षा प्रणाली के दोषों की गम्भीरता पर विचार करने के लिए सन् 1967-68 में एन० सी० ई० आर० टी० के पाठ्यक्रम एवम् मूल्यांकन विभाग के प्रयास से बंगलोर, बड़ौदा, दक्षिण गुजरात के विश्वविद्यालय अध्यापकों ने अपने प्रतिवेदन में स्पष्ट किया कि उच्च शिक्षा के स्तरों में जो गिरावट आ रही है उसका मूल कारण वर्तमान परीक्षा प्रणाली है। अत उच्च शिक्षा स्तर पर परीक्षा प्रणाली में सुधार होना बहुत आवश्यक है।

परीक्षा सुधार हेतु व्यापक योजना पर विचार करने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान, दिल्ली में पाठ्यक्रम एवम् मूल्यांकन विभाग ने मार्च 18-21, सन् 1968 को तीन सकायों (कला, विज्ञान, वाणिज्य) के वरिष्ठ सदस्यों को आमन्त्रित किया जो पाँच विश्वविद्यालयों—बंगलोर, मेरठ, राजस्थान, सरदार पटेल विश्वविद्यालय और दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय के प्राध्यापक थे। सम्बन्धित प्रतिवेदन और

---

1. 'In the present system when the future of students is totally decided by one external examination at the end of the year, [illegible] tle independent [illegible] am desparately [illegible] external exami- [illegible] is so great that [illegible] gress and has to [illegible]

Kothari Education Commission, 1964-66.

अतः यह नितान्त आवश्यक है कि विभिन्न पाठ्यक्रमों में से वे-अंश हटा दिये जायें जिनकी कोई क्रियात्मक महत्ता नहीं है एवम् जो बहुत पुराने ज्ञान और अनुसंधानों पर आधारित हैं। इसके स्थान पर नवीन ज्ञान को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु यह बहुत आवश्यक है कि अखिल भारतीय विचार गोष्ठी का आयोजन किया जाये जिसमें केवल हमारे देश के ही अध्यापक और शिक्षा शास्त्री न हों बल्कि विदेशों के लब्ध प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय आचार्यों को आमन्त्रित किया जाये। जब तक हम अपनी तुलना अन्य देशों से नहीं करेंगे और विदेशों के विकासात्मक दृष्टिकोण को नहीं अपनायेंगे तब तक स्तर में सुधार होना सम्भव नहीं।

यह प्रसन्नता का विषय है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सक्रिय प्रयास से इस दिशा में एक नवीन आन्दोलन आया है और विभिन्न विश्वविद्यालयों में कुछ विशिष्ट विषयों के स्तरों को उच्च बनाने के लिए कुछ केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इन केन्द्रों का उद्देश्य उच्चतम सम्भावित स्तरों को प्राप्त करना है।

3. माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम के विभिन्नीकरण की आवश्यकता
Need for Diversification of Curriculum at Secondary Stage

आधुनिक समय में माध्यमिक शिक्षा का सबसे बड़ा दोष उसका पाठ्यक्रम है, यदि यह कहा जाये तो अतिश्योक्ति न होगी कि उच्च शिक्षा के स्तर को गिराने में माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम ने बहुत सहयोग प्रदान किया है। सन् 1953 में माध्यमिक शिक्षा की समाप्ति तक प्रत्येक विद्यार्थी में जीवन क्षेत्र में प्रवेश करने की क्षमता आ जानी चाहिए और इसके लिए आवश्यक है कि माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम में विभिन्नीकरण किया जाये जिससे माध्यमिक स्तर की शिक्षा समाप्त करने पर प्रत्येक विद्यार्थी अपनी अभिरुचि और योग्यता के अनुसार व्यवसाय चुन सकें। इस सुझाव के प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से दो लाभ हैं, प्रथम शिक्षितों में बेरोजगारी की समस्या का समाधान होता है और दूसरे विश्वविद्यालयों में प्रवेश की समस्या का समाधान होता है। यद्यपि यह सुझाव अत्यन्त ही मूल्यवान था और इसी सुझाव के कारण बहुउद्देशीय शालाओं की स्थापना भी हुई परन्तु समस्त देश में इसके अनुसार कार्य नहीं हुआ। परन्तु उच्च शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण कर विद्यार्थियों में व्यावसायिक दक्षता का विकास किया जाए जिससे विश्वविद्यालयों में केवल वे ही विद्यार्थी जा सकें, जिन्हें उच्च शिक्षा की वास्तव में आवश्यकता है। यदि यह किया जाना सम्भव हुआ तो निश्चित ही उच्च शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने में कुछ सहायता मिल सकेगी।

अथवा

10 वर्ष स्कूल शिक्षा, 2 वर्ष इन्टरमीडिएट/जूनियर कॉलिज,
3 वर्ष स्नातक शिक्षा

मई, 1964 में आचार्यों के अधिवेशन मे भी उच्च शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए यह निश्चित किया गया कि प्रथम स्नातक प्रमाण पत्र 15 वर्ष की अवधि के पश्चात प्रदान किया जाये, पहले 12 वर्षों को किसी भी सुविधाजनक तरीके से उपयोग मे लाकर 3 वर्ष का स्नातक पाठ्यक्रम होना नितान्त आवश्यक है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि विश्वविद्यालय शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए विश्वविद्यालय प्रवेश से पूर्व माध्यमिक स्तर की कार्यावधि 12 वर्ष होनी चाहिए और प्रथम स्नातक पाठ्यक्रम 3 वर्ष का होना चाहिए।

5. स्नातकोत्तर और अनुसंधान हेतु वांछित आवश्यकताएँ
Desirable Needs of Postgraduate Studies & Research

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात स्नातकोत्तर शिक्षा का काफी विकास हुआ है। यह सन्तोष का विषय है कि स्नातकोत्तर स्तर पर अनुत्तीर्ण छात्रों की सख्या स्नातक स्तर की अपेक्षा कम है। तालिका न० 12.6 से यह स्पष्ट है कि चौदह वर्षों में अनुत्तीर्ण छात्रो की सख्या 30 प्रतिशत से अधिक नही बढी है। डा० डी० एस० कोठारी के शब्दों मे शिक्षा के सभी स्तरों मे गुणात्मकता का विशेष महत्व है, परन्तु जहाँ तक स्नातकोत्तर शिक्षा और अनुसधान का प्रश्न है वहाँ तो 'द्वितीय उत्तम' भी विशेष महत्वपूर्ण नहीं। हमे उससे भी अधिक अच्छे की प्राप्ति का प्रयास करना चाहिए।[1] इसमे सन्देह नही कि स्नातकोत्तर स्तर का विश्वविद्यालय मे विशेष स्थान है क्योंकि इसके पश्चात ही मर्मज्ञ, वैज्ञानिक, नेता और अनुसधान कर्त्ता विकसित होते हैं। अत. यह आवश्यक है कि इस स्तर के प्रति पूर्ण सावधानी के साथ विकासात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाये जिससे विश्वविद्यालय शिक्षा का स्तर ऊँचा हो सके। सक्षेप मे इस स्तर की निम्नलिखित वांछित आवश्यकताएँ हैं—

* स्नातकोत्तर कक्षाएँ केवल उन्हीं महाविद्यालयों में आरम्भ की जायें जो सभी आवश्यक सुविधाओं को जुटाने में समर्थ हों।

---

1. 'Quality is important at all stages of education, but when it comes to postgraduate studies and research even the second best' is not good enough-it will not do, we must go in for the best attainable.

Dr. D. S. Kothari, *Convocation address to Visva-Bharti*, November 24, 1963.

* स्नातकोत्तर शिक्षा को सही अर्थों में उन्नतिशील बनाने हेतु यह आवश्यक है कि महाविद्यालयों में इन कक्षाओं को खोलने से पूर्व विश्वविद्यालयों

तालिका नं॰ 12.6

स्नातकोत्तर स्तर पर उत्तीर्ण छात्रों का प्रतिशत

Percentage of Successful Candidates at Post Graduate Level

	एम. ए			एम. एस सी. और एम. एस. सी. होम साइन्स		
वर्ष	प्रविष्ट संख्या	उत्तीर्ण संख्या	उत्तीर्ण प्रतिशत	प्रविष्ट संख्या	उत्तीर्ण संख्या	उत्तीर्ण प्रतिशत
1949	4,654	3,632	78·0	1,137	846	74·4
50	5,940	4,423	74 7	1,267	984	77·7
51	8,123	5,969	73·5	1,723	1,398	81 1
52	8,404	6 467	77 0	2,085	1,641	78 7
53	9,256	7,038	76 0	2,234	1,780	79 7
54	10,488	7,880	75 2	2,772	2,146	77 4
55	11,754	8,886	75·6	3,108	2,348	75·5
56	13,630	9,528	70 0	3,263	2,520	77 5
57	13,009	10,483	80 6	3,652	2,933	80 3
58	14,355	11,670	81 3	3,724	2,942	79 0
59	17,462	13,997	80 2	4,376	3,508	80 2
60	19,053	15,662	82·2	4,398	3,513	79 9
61	23,013	18,926	82·2	6,108	4,721	77 3
62	25,217	21,003	83 3	6,726	5,195	77 2

को चाहिए कि वे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से परामर्श करें जिससे बाहरी दबाव के कारण स्नातकोत्तर कक्षाएं न खुल सकें।

* अनुसंधान के स्तर सन्तोषप्रद हैं तथापि विश्वविद्यालयों को चाहिए कि उन्हें और वस्तुनिष्ठ बनायें।

* इस हमारे देश मे 33 विश्वविद्यालयो मे अनुसंधान विभाग है। इन विभागों को चाहिए कि वे 14 राष्ट्रीय अनुसंधानशालाओं जैसे राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला नई दिल्ली, राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला पूना, केन्द्रीय विद्युत इन्जीनियरिंग अनुसधान संस्था भावनगर, केन्द्रीय विद्युत रासायनिक खोज सस्था मद्रास, केन्द्रीय चर्म अनुसधान संस्था मद्रास, केन्द्रीय ड्रग रिसर्च संस्था लखनऊ, केन्द्रीय खाद्य पदार्थ तकनीकी अनुसन्धान संस्था मैसूर, केन्द्रीय ग्लास तथा सिरेमिक अनुसधान संस्था कलकत्ता, केन्द्रीय ईंधन अनुसधान संस्था दिग्वानी धनबाद, राष्ट्रीय धातु प्रयोगशाला जमशेदपुर और राष्ट्रीय बोटेनीकल गार्डन लखनऊ आदि से तथा 88 रिसर्च इन्स्टीट्यूट से सहयोग प्राप्त करें जिससे अनुसन्धान का कार्य अखिल भारतीय स्तर का हो सके।

* विश्वविद्यालयों को चाहिए कि वे वैज्ञानिक अनुसन्धानों पर अधिक व्यय करें क्योंकि आज देश को वैज्ञानिक उन्नति की आवश्यकता है।

* अन्य विषयो जैसे शिक्षा, भाषाएं, दर्शनशास्त्र, ज्योतिष, अर्थशास्त्र और राजनीति शास्त्र आदि मे भी अनुसन्धान की सुविधाओं को बढाया जाये।

उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर कहा जा सकता है कि उच्च शिक्षा के स्तर को सुधारने के लिए स्नातकोत्तर स्तर पर और अनुसन्धान स्तर पर बहुत कुछ करना शेष है, तभी हम ससार के अन्य प्रगतिशील देशों के साथ चल सकने में समर्थ हो सकते हैं।

6 परीक्षा सुधार हेतु व्यापक योजना की आवश्यकता
Need for Comprehensive Scheme of Examination Reform

विश्वविद्यालय शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए यह भी आवश्यक है कि विद्यमान परीक्षा प्रणाली मे सुधार किया जाये और मूल्यांकन की नवीन विधियों को प्रयोग में लाया जाये। आज विश्वविद्यालय स्तर का विद्यार्थी भी किसी तरह परीक्षा पास करना चाहता है जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा के सभी उद्देश्य बर्तमान परीक्षा की दूषित पद्धति की बलिवेदी पर होम हो गये हैं। वर्तमान परीक्षा प्रणाली में प्रमाणिकता और विश्वसनीयता का अभाव है, ये अपूर्ण ज्ञान और सयोग पर आधारित है, विकास के एक पक्ष का परीक्षण करती है एवम् विद्यार्थी के सर्वा-

हीन विकास पर बुरा प्रभाव डालती है। इन दोनों को दृष्टिगत रखते हुए यह आवश्यक है कि परीक्षा पद्धति में सुधार हो।

इसके लिए जरूरी है कि मूल्यांकन पद्धति को स्वीकार किया जाये क्योंकि मूल्यांकन एक क्रमिक प्रक्रिया है। इसमे मूल रूप से तीन तथ्य होते हैं—प्रथम दार्शनिक तथ्य, दार्शनिक तथ्यों की पृष्ठभूमि मे उद्देश्य निहित होते हैं। इसके द्वारा हमे ज्ञात होता है कि शिक्षा और मूल्यांकन किस ओर निर्दिष्ट होने चाहिए। शैक्षिक उद्देश्यों से शैक्षिक उपलब्धि का अर्थ समझने मे सहायता मिलती है, जिसका मूल्यांकन के लिए समझना नितान्त आवश्यक है। मूल्यांकन का दूसरा सम्बन्ध मापन से होता है जिसमे विश्वसनीयता, वैधता, वस्तुनिष्ठता, व्यापकता और भेदकरण सम्मिलित होते हैं। मूल्यांकन का तीसरा सम्बन्ध मानवीय सम्बन्धो, सीखने और व्यक्तित्व के मनोविज्ञान से है। मूल्यांकन को सही अर्थों मे तभी स्वीकार किया जा सकता है जबकि परीक्षा मे सुधार कर व्यापक योजना को क्रियान्वित किया जाये।

परीक्षा सुधार के व्यापक कार्यक्रम में निम्नलिखित मूल सिद्धान्तों का समावेश किया जाना आवश्यक है—

1. परीक्षा पद्धति शिक्षण के उद्देश्यों पर आधारित होनी चाहिए। सफल मूल्यांकन हेतु यह जरूरी है कि परीक्षा का मूलाधार समस्त मानसिक योग्यताएँ, कुशलताएँ, रुचियाँ और अभिवृत्तियाँ होनी चाहिए।
2. प्रश्न पत्रो मे निबन्धात्मक प्रश्नो की संख्या कम करनी चाहिए और यथासम्भव वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की सख्या मे वृद्धि होनी चाहिए।
3. प्रश्न पत्र बनाते समय निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान मे रखना आवश्यक है—
   * सम्पूर्ण पाठ्यक्रम में से प्रश्न पूछे जायें।
   * उद्देश्यों के अनुरूप ही समस्त प्रश्नो का स्वरूप निर्धारित किया जाना चाहिये।
   * समस्त प्रश्नो के उत्तर निश्चित एवम् विवाद रहित होने चाहिये।
   * प्रश्न पत्र मे सरलता और कठिनाई को यथोक्त स्थान दिया जाना चाहिये।
4. परीक्षा पद्धति मे आन्तरिक एवम् बाह्य मूल्यांकन को समाविष्ट किया जाये जिससे विद्यार्थी का समग्र मूल्यांकन सम्भव हो सके।

यदि वर्तमान परीक्षा पद्धति मे आवश्यक [illegible] कर उपरोक्त सुझावों के अनुसार कार्य किया जाये तो निश्चित ही उच्च शि[illegible]

[illegible] है।

समग्र रूप से सुधार तभी सम्भव है जबकि उपरोक्त समस्त समाधानों पर विचार कर, सभी विश्वविद्यालय स्तर की समस्या के प्रति जागरूक हों और आवश्यक कदम यथाशीघ्र उठाये जायें।

12.03 अनुशासन और सामाजिक समायोजन की समस्या
Problem of Discipline & Social Adjustment

आज विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में प्राय अनुशासनहीनता और उच्छृङ्खलता के दर्शन होते हैं। छात्रों की अनुशासनहीनता और सामाजिक कुसमायोजन केवल विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों तक ही सीमित न होकर अन्य सामाजिक क्षेत्रों में भी फैल गई है। बाहरी क्षेत्रों में जहाँ थोडी भी निरकुशता होती है, उसमें छात्रों का नाम पहले आता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज का छात्र पहले की अपेक्षा अधिक अनुशासनहीन और कुसमायोजित हो गया है; परन्तु क्यों ? क्या आज के छात्र के साथ ही कोई जन्मजात बुराई हो गई है जो पहले छात्र के साथ नहीं थी ? यदि हाँ ! तो इस समस्या का कोई समाधान नहीं, यदि ऐसा नहीं है तो इस अनुशासनहीनता और कुसमायोजन के कुछ कारण अवश्य होने चाहिये। यदि कारण हैं तो उन्हें दूर भी किया जा सकता है।

अनुशासनहीनता और सामाजिक कुसमायोजन के कारण
Causes of Indiscipline & Social Maladjustment

हमारी दृष्टि में विश्वविद्यालय स्तर पर अनुशासनहीनता के निम्नलिखित कारण हैं—

1. नैतिक शिक्षा का अभाव
Lack of Moral Education

छात्र देश की अमूल्य निधि है जिसमे विश्वविद्यालय का छात्र तो देश का कर्णधार है। किन्तु नैतिकता के अभाव में शिक्षा भी अधूरी है और छात्रों का व्यक्तित्व भी असंतुलित है। आज ऐसा आभास होता है जैसे हमारे समाज के उच्च आदर्श कहीं छिप गये हों। स्वतन्त्रता के पश्चात हमारे देश में यथार्थवाद का बोलबाला और अनैतिकता की आँधी इतने वेग से आई कि हम अपने आध्यात्मिक मूल्यों को खो बैठे। एक समय था जबकि हमारे देश का प्रत्येक नर एवम् नारी आध्यात्मिक भावनाओं से ओत प्रोत था और सम्पूर्ण भारतीय जीवन पर धर्म का साम्राज्य था। आज का भारतीय समस्त नैतिक मूल्यों को भूल बैठा है—यही कारण है कि आज समाज में अनुशासनहीनता का साम्राज्य है। फिर छात्र सामाजिक प्राणी है अतः उसका अनुशासनहीन होना अस्वाभाविक क्यों ? सक्षेप मे विद्यार्थियों के अन्तर्गत नैतिकता का ह्रास अनुशासनहीनता और कुसमायोजन का प्रमुख कारण है।

2. महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों का दूषित वातावरण
Coggery Environment of Colleges & Universities

अबोध से बालक, बालक से सुकुमार, सुकुमार से किशोर, किशोर से युवा हुआ विद्यार्थी जब महाविद्यालय और विश्वविद्यालय के प्रांगण में प्रवेश करता है तो अपने को अत्यन्त विचित्र वातावरण में पाता है। इन 'विश्व' और 'महा' शब्दों से अलंकृत विद्यामन्दिरों में वह अपने भविष्य का निर्माण करना चाहता है परन्तु यहाँ के प्रतिकूल पाठ्यक्रम, दोषपूर्ण परीक्षा-पद्धति, अयोग्य अध्यापक, जातिवाद और कृत्रिम माटकीय वातावरण से उसमें अवांछनीय अभिवृत्तियाँ विकसित हो जाती हैं जिसके कारण विद्यालय जीवन के संचित कटु अनुभव जो ग्यारह अथवा बारह वर्षों से दबे हुए थे, एकाएक ज्वालामुखी के रूप में फूट पड़ते हैं और जिनका शिकार सर्वप्रथम महाविद्यालय अथवा विश्वविद्यालय होता है तत्पश्चात समाज। ऐसी स्थिति में विद्यार्थियों का अनुशासनहीन होना कहाँ तक अस्वाभाविक है।

3. अध्यापकों में नेतृत्व का अभाव
Lack of Leadership among Teachers

प्रायः ऐसा कहा जाता है कि जब किसी को कोई व्यवसाय नहीं मिलता तो वह अध्यापन व्यवसाय स्वीकार करता है। यह बात केवल माध्यमिक स्तर के शिक्षकों तक ही सीमित हो, ऐसी बात नहीं है, महाविद्यालय और विश्वविद्यालय के अध्यापक भी बहुत कुछ अर्थों में इसी बीमारी के शिकार होते हैं। अतः इस प्रकार के अध्यापक सामाजिक रूप से कुसमायोजित अवश्य होते हैं—जो सामाजिक कुसमायोजन से ग्रस्त होगा, उसमें तिरस्कार और हीनता की भावना का आना स्वाभाविक है। जो समाज अथवा वातावरण से तिरस्कृत है, उसमें नेतृत्व की शक्ति का विकास हो ही नहीं सकता। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से एक व्यक्ति उस समय सामाजिक रूप से कुसमायोजित हो जाता है जब उसकी इच्छा सन्तुष्ट नहीं हो पाती अथवा उसकी प्रगति अवरुद्ध हो जाती है।[1] अध्यापक की स्थिति भी ठीक इसी प्रकार है अतः नेतृत्व की भावना के विकसित होने का प्रश्न ही नहीं उठता। जहाँ अध्यापक के नेतृत्व की शक्ति नहीं है वहाँ छात्रों का अनुशासन हीन और सामाजिक कुसमायोजित होना स्वाभाविक है।

4. राजनैतिक दलों द्वारा विद्यार्थियों का शोषण
Exploitation of Students by Political Parties

प्रजातन्त्र बहुमत का शासन होता है, बहुमत बनाने के लिए सबसे सरल

---

1. A person becomes socially maladjusted whenever the satisfaction of a need is thwarted or progress toward a goal is, blocked. Such a condition arouses tension.
Ratan Lal Sharma, *Social Maladjustment : Its Causes and Remedies*, p. 40.

विधि छात्रों की अभिवृत्तियों को परिवर्तित करना है और उनकी स्वाभाविक शक्ति को शोषित करना है। उच्च शिक्षा का विद्यार्थी इसके लिए सबसे उपयोगी है और इसीलिए हमारे देश में राजनैतिक दलों द्वारा विद्यार्थियों को उत्तेजित किया जाता है और जब आयु के तकाजे के कारण वे उत्तेजित हो जाते हैं तो उन्हें असामाजिक कार्य करने के लिए बाध्य किया जाता है।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अनुसार, 'दुर्भाग्यवश कुछ राजनैतिक दल अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु महाविद्यालय के छात्रों का शोषण करते हैं। आयोग ने कलकत्ता यात्रा के समय देखा कि छात्रों को रक्त पात और अराजकता फैलाने के लिए राजनैतिक दलों ने किस प्रकार प्रयोग किया। यह कार्य असामाजिक और हिंसक व्यक्तियों का था, इसके लिए छात्रों अथवा विश्वविद्यालयों को उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता।'[1]

5. महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में शैक्षिक सुविधाओं का अभाव
Lack of Educational Facilities in Colleges & Universities

छात्रों के अनुशासनहीन और सामाजिक कुसमायोजन के सबसे प्रबल कारण महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में शैक्षिक सुविधाओं का अभाव है। कोठारी आयोग के अनुसार, 'छात्रों के भद्दे और असभ्य प्रदर्शन का कारण शिक्षण और अधिगम की अपर्याप्त सुविधाएँ, छात्रों और अध्यापकों के सम्बन्ध, अध्यापकों का छात्रों की समस्याओं में अरुचिकर रुख, पाठ्यक्रम की अपूर्णता, प्राचार्यों में व्यवहार कुशलता का अभाव, अध्यापकों की राजनीति आदि है।'[2] राधाकृष्णनन् आयोग ने

---

1 Unfortunately, some political cliques and even anarchial elements are continuing to exploit college students for their purposes. During the visit of the Commission to Calcutta, a riot was started in which students were apparently used as pawns and which issued in blood-shed and lawlessness that continued two or three days. This disorder was the work of anti social and Violent elements, and neither the University nor students could be held responsible.

Report of the University Education Commission, 1948-49, p 380.

2 There is a variety of causes which has brought about these ugly expressions of uncivilized behaviour e g the uncertain further facing educated young men leading to a sense of frustration which breeds irresponsibility the mechanical and unsatisfactory nature of many curricular programmes, the totaly inadequate facilities [illegible]

Universities. ......'

Report of the University Education Commission, 1961-66 p 297.

2. माता-पिता, राजनैतिक दलों और जनता के सहयोग की आवश्यकता
Need of Cooperation from Parents, Political Parties and Public

जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि अनुशासन और व्यवस्थापन की समस्या का उत्तरदायित्व किसी कारण विशेष पर ही नहीं है बल्कि सम्पूर्ण समाज मे व्याप्त अनेकों बुराईयाँ इसका कारण है। अत यदि केवल शिक्षा के माध्यम से ही इस समस्या का समाधान करना है तो असम्भव है—इसके लिए यह नितान्त आवश्यक है कि समाज के सभी वर्ग सहयोग प्रदान करें—हमारा आशय विशेष रूप से राजनैतिक दलों से है। विश्वविद्यालय आयोग के अनुसार 'शासक और अध्यापक शिक्षा क्षेत्र में सन्तोषप्रद जीवन स्थापित नहीं कर सकते। उनको माता-पिता, राजनैतिक नेताओं, जनता और प्रेस के सहयोग की आवश्यकता है।'

3. शैक्षिक सुविधाओं की आवश्यकता
Need for Education Facilities

शैक्षिक सुविधाओं की प्राप्ति नितान्त आवश्यक है। अभाव पाप को जन्म देता है। असमर्थता व्यक्ति मे अपराधी भावनों को जन्म देती है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से उपरोक्त कथन सत्य है। शैक्षिक सुविधाओं का अभाव समस्याओं को जन्म देता है, अत आवश्यक है कि पुस्तकालयों, क्रीड़ा स्थलों, अन्य सहायक सामग्री आदि की उचित व्यवस्था हो।

4. आत्म-अनुशासन
Self Discipline

उच्च शिक्षा को आत्म-अनुशासन की भावना को जागृत करना चाहिए—यह वह अनुशासन है जो अन्त द्वारा निर्दिष्ठ होता है। यह तभी सम्भव है जबकि छात्र अध्ययन मे रुचि लें और विद्या की प्राप्ति हेतु सतत प्रयत्नशील हों। यदि आत्म अनुशासन आ जाये तो अनुशासन की कोई समस्या ही नहीं है।

अन्त में हम यही कह सकते हैं कि उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर इस भयंकर समस्या का समाधान सम्भव है।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. Basu A. N

   University Education in India, Book Emporium, 1944.

2. Kothari, D S

   Some Aspects of University Education U G C New Delhi 1962

3. *Report of the working Group for Developing A Comprehensive Scheme of Examination, Reform in University Education*, National Institute of Education, New Delhi, 1968.

4. *Report on Evaluation in Higher Education*,

   University Grants Commission, New Delhi, 1961.

5. *Report on Standards of University Education*,

   University Grants Commission, New Delhi, 1965.

6. *Report of University Education Commission*,

   Manager Publication, Govt of India, Delhi, 1949.

7. *Report of the Education Commission*,

   Ministry of Education, Govt. of India, 1966

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. What are the needs for expansion of higher education in India? In what sectors should expansion be accelerated Support your an wer by the recommendations of Indian Education Commission.

2. 'It is said that during the last few years University standards have generally suffered ...

> What measures should be taken to raise the standards of the University Education.

3. The Indian Universities as they exi t to-day, despite many admirable features, do not fully satisfy the requirements of the national of education. Comment upon this view.

4. What are the problems of higher education in India? What measures can be taken to solve these problem.

5. 'Universities in India have to be internationally minded. If they are to benefit from the vast expansion of knowledge that is taking place in different parts of the world to day, their channels of Communication and reception have to be kept open.

> In the light of the above statement, What should be done in our Univerisities to make them active participants in the work of the world community of learning.

अध्याय तेरह
Chapter Thirteenth
अध्यापक शिक्षा
Teacher Education
अध्ययन बिन्दु
Learning Points

- 13.01 अध्यापक शिक्षा की परिवर्तित धारणा
  Changing Concept of Teacher Education
  धारणा में परिवर्तन के कारण
- 13.02 स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् अध्यापक शिक्षा
  Teacher Education After Independence.
  1 शाला अध्यापकों की योग्यताएं
  2 अध्यापकों की संख्या
  3. प्रशिक्षित अध्यापक
  4 शिक्षक प्रशिक्षण शालाएं
  5. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय
- 13.03 विभिन्न स्तरों के लिए अध्यापकों की प्रारम्भिक व्यावसायिक तैयारी
  Initial Professionl Preparation of Teachers For Various Levels
  1 पूर्व प्राथमिक स्तर हेतु प्रशिक्षण
  2. प्राथमिक स्तर हेतु प्रशिक्षण विद्यालय
  3. माध्यमिक स्तर हेतु प्रशिक्षण महाविद्यालय
  4. शिक्षा के क्षेत्रीय महाविद्यालय
  5. स्नातकोत्तर प्रशिक्षण महाविद्यालय
  6. समाकलन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम
  7. विशेष प्रशिक्षण केन्द्र
     (अ) शारीरिक शिक्षा
     (ब) सौन्दर्य शास्त्र सम्बन्धी शिक्षा
     (स) भाषा अध्यापकों के प्रशिक्षण विद्यालय
     (द) गृह-विज्ञान

* 13.04 सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा
  Inservice Teacher Education.
    (अ) सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा के उद्देश्य एवं लक्ष्य
      1. व्यावसायिक क्षमता में वृद्धि
      2. शैक्षिक लाभों की प्राप्ति
      3. नवीन ज्ञान की सम्भावनाएं
    (ब) शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिए सेवाकालीन शिक्षा
      1. प्राथमिक शाला के अध्यापक और सेवाकालीन शिक्षा
      2. माध्यमिक शाला के अध्यापकों को सेवाकालीन शिक्षा
      3. उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों को सेवाकालीन शिक्षा
    (स) सेवाकालीन शिक्षा की विधियाँ
* 13.05 अध्यापक शिक्षा की समस्याएं और समाधान
  Problems & Solutions of Teacher Education
      1. प्रशिक्षण कार्यक्रमों और स्कूल कार्य मे सम्बन्ध विहीनता
      2. अध्यापकों का सामाजिक, आर्थिक और व्यावसायिक स्तर
        सामाजिक स्तर
        आर्थिक स्तर
        व्यावसायिक स्तर
      अध्यापकों के स्तर को विकसित करने की आवश्यकता
      भारतीय शिक्षा (कोठारी) आयोग की सिफारिशें
        वेतन क्रम
        पदोन्नति की आवश्यकता
        सेवा-निवृत्ति लाभ

अध्यापक शिक्षा

TEACHER EDUCATION

शिक्षा मे गुणात्मक उन्नति हेतु अध्यापको की शिक्षा का महत्वपूर्ण कार्यक्र
बनाना नितान्त आवश्यक है। अध्यापक शिक्षा पर किये हुए व्यय और प्रयत्नों
अनुपात मे प्राप्त लाभों की मात्रा वही अधिक होती है। अध्यापक शिक्षा के प्रा
हेतु जितने धन की आवश्यकता है वह लाखो और करोडो व्यक्तियों को उन्नत शि
प्रदान करने की तुलना मे बहुत कम है। एक प्रशिक्षित अध्यापक अपने जीवन
मे हजारों छात्रों को दीक्षित करता है अर्थात् एक अध्यापक को प्रशिक्षित कर
लिए खर्च किया हुआ कुछ धन हजारों छात्रो को शिक्षित करने की तुलना में
कम है।

आज नवीनतम एवम् गतिशील पद्धतियों की आवश्यकता है, यह तभी
सम्भव है जबकि अध्यापकों को उसके अनुरूप प्रशिक्षण दिया जाये। इससे दो लाभ
सम्भव हैं, प्रथम अध्यापकी मे व्यावसायिक क्षमता का विकास, और द्वितीय शिक्षा
मे अपेक्षित क्रान्ति का शुभारम्भ। हमारी तो यह निश्चित धारणा है कि जो भी
नवीन प्रयोग और शिक्षा मे वाछित परिवर्तन करना हो उसे अध्यापक शिक्षा से ही
प्रारम्भ किया जाये।

13.01 अध्यापक शिक्षा की परिवर्तित धारणा
Changing Concept of Teacher Education

अध्यापको के प्रशिक्षण हेतु कोई विशिष्ट व्यवस्था नहीं थी
च्च शिक्षा के कुछ छात्रों को गुरु द्वारा प्रशिक्षण प्रदान किय

जाता था। उस समय अध्यापक शिक्षा की सर्वप्रथम धारणा 'पित्ताचार्य'[1] की थी 'पित्ताचार्य'[1] का तात्पर्य उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे उन प्रतिभाशाली छात्रों से था अन्य छात्रों के शिक्षण में गुरु की सहायता करते थे। एक तरीके से यह कहा सकता है कि प्राचीन काल में गुरु द्वारा कुछ प्रतिभाशाली छात्रों को अप्रत्यक्ष रूप अध्यापन हेतु प्रशिक्षण प्रदान किया जाता था और वे छात्र गुरु की अनुपस्थिति अन्य छात्रों को पढ़ाने की समुचित व्यवस्था करते थे।

'पित्ताचार्य' की धारणा के पश्चात् अध्यापक शिक्षा की धारणा में कु परिवर्तन हुआ। शिक्षकों को प्रशिक्षण देने के लिए 'छात्रनायक पद्धति'[2] का आरम्भ हुआ। इस पद्धति का अर्थ था कि छात्रों के नायक द्वारा शिक्षण कार्य करना। अध्या पकों को प्रशिक्षण प्रदान करने की इस विधि का प्रारम्भ उन्नीसवीं शताब्दी के पू हो चुका था। इस पद्धति के अनुरूप सम्पूर्ण कक्षा अथवा शाला को कुछ समूहों विभाजित कर दिया जाता था। प्रत्येक समूह में कुछ छात्र होते थे और एक समू का एक नायक होता था। नायक का कर्तव्य था कि वह अपने समूह का शिक्षण क और इसकी सूचना अध्यापक को दे। यद्यपि इस समय तक किसी प्रकार की सैद्धा न्तिक शिक्षा का प्रावधान नहीं था तथापि क्रियात्मक प्रशिक्षण कई वर्षों तक प्रा होता था क्योंकि ये नायक अपने अध्यापक के समान ही आदर्श शिक्षण प्रदान क का प्रयास करते थे। सन् 1787 में डा. एण्ड्रैल ने मद्रास में इस प्रणाली को स्वी कार किया और इस पद्धति पर एक पुस्तक[3] लिखी जिसने ब्रिटिश शिक्षा शास्त्रि का ध्यान आकर्षित किया। तत्पश्चात इसे अध्यापक पद्धति[4] भी कहा जाने लगा।

अध्यापक शिक्षा की परिवर्तित धारणाओं के आधार पर यह कहा जा सक है कि भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति ने ही अध्यापकों के प्रशिक्षण का शुभारम्भ किया जो धीरे-धीरे संसार के अन्य देशों में थोड़े थोड़े परिमार्जन के साथ स्वीका किया जाने लगा। हमारे देश में सर्वप्रथम सीरामपुर में डेनिश मिशनरियों के पा रियों ने एक शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय की स्थापना की तत्पश्चात बम्बई, मद्रा और कलकत्ता में कुछ केन्द्र खोले गये।

सन् 1854 में वुड घोषणा पत्र ने यह सुझाव दिया कि इंगलैंड के आ पर भारत में भी प्रशिक्षण विद्यालय खोले जायें। सन् 1882 में भारतवर्ष के अ गंत, 106 नार्मल स्कूल थे जिनमें 3886 प्रशिक्षार्थियों को प्रशिक्षित किया गया।

1. Pittacharya

the Male Asylu

5. *Report of the Indian Education Commission*, p 134

अध्यापक शिक्षा की वास्तविक स्थापना 1882 से ही प्रारम्भ हुई जिसके परिणाम-स्वरूप उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक मद्रास, लाहौर, इलाहाबाद, कुरसांग, राज-मुन्द्री और जबलपुर में प्रशिक्षण महाविद्यालय प्रारम्भ हो चुके थे और 50 प्रशि-क्षण विद्यालय खुल चुके थे। सन् 1922 में नार्मल स्कूलों की कुल संख्या 1072 थी और प्रशिक्षण महाविद्यालयों की कुल संख्या 12 थी। देश के स्वतन्त्र होने से पूर्व सन् 1947 में तीन प्रकार की प्रशिक्षण संस्थाएँ थीं—

(1) नार्मल शालाएँ (Normal Schools)—इसके अन्तर्गत प्रारम्भिक शालाओं के लिए अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाता था और मिडिल पास छात्र एवं छात्राएँ प्रवेश लेने के अधिकारी थे।

(2) प्रशिक्षण शालाएँ (Training Schools)—इसके अन्तर्गत मिडिल स्कूलों के लिए अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाता था और मैट्रिक पास छात्र एवं छात्राएँ प्रवेश ले सकते थे।

(3) प्रशिक्षण महाविद्यालय (Training Colleges)—इसके हाई स्कूलों के लिए अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया जाता था और बी. ए. अथवा एम. ए. ही प्रवेश ले सकते थे।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि धार-णाओं में समयानुसार परिवर्तन आया जो इस प्रकार है—

* छात्र-अध्यापक पद्धति (1801–1882)
  Pupil-Teacher System (1801–1882)
** अध्यापक प्रशिक्षण (1882–1947)
  Techer Training (1882–1947)
*** अध्यापक शिक्षा (स्वतन्त्रता के पश्चात्)
  Teacher Education After Independence)

धारणा में परिवर्तन के कारण
Causes of Changes in Concept

जैसा कि हम पहले कह आये हैं कि धारणाओं में आवश्यकतानुसार कुछ परिवर्तन हुए और स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात हमने नवीन धारणा को स्वीकार किया। इसके कई कारण थे जो इस प्रकार हैं—

1. स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा के सभी क्षेत्रों में विकास करना था। अत: देश की आवश्यकताओं के अनुरूप हमें शैक्षिक कार्यक्रमों में कुछ परिवर्तन करने आवश्यक थे। अध्यापकों के प्रशिक्षणार्थ हमें शिक्षा की आवश्यकता थी अत: 'अध्यापक प्रशिक्षण' के स्थान पर 'अध्यापक शिक्षा' की नई धारणा को स्वीकार करना आवश्यक था।

2. अध्यापक शिक्षा के दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक आधार भारतीय शिक्षा शास्त्रियों को सम करने थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व प्रशिक्षण के समी सिद्धान्त विदेशी शिक्षा शास्त्रियों के बनाये हुए थे। अतः धारणा में परिवर्तन अस्वाभाविक था।
3. अध्यापक शिक्षा की धारणा समस्त संसार में परिवर्तित हो रही थी 'अध्यापक शिक्षा' का अर्थ विस्तृत था जबकि 'अध्यापक प्रशिक्षण' का अर्थ सीमित था। 'अध्यापक शिक्षा' जीवन के समस्त पहलुओं को प्रभावित करती है।
4. डब्ल्यू. एच. किलैपेट्रिक के मतानुसार 'ट्रेनिंग' तो सरकस में काम करने वालों और जानवरों को दी जाती है, अध्यापकों को तो 'शिक्षित' किया जाता है। अतः 'प्रशिक्षण' के स्थान पर 'शिक्षा' को स्वीकार किया जाना उचित ही है।
5. वैसिक शिक्षा का पृथक अनुशासन स्वीकार करते हुए यह अनिवार्य था कि हम 'प्रशिक्षण' के स्थान पर 'शिक्षा' को स्वीकार करें।
6. इसी धारणा को विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948–49) माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952–53), भारतीय शिक्षा आयोग (1964–66) द्वारा स्वीकार किया गया। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के अनुसार, 'वास्तविक शिक्षा केवल मात्र कुछ पाठों को पढ़ना और रटना ही नहीं है, बल्कि जीवनयापन और सोउद्देश्यपूर्ण क्रियाएं करना है[1]।'

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि अध्यापन की दक्षता को विकसित करने के लिए आज 'शिक्षा' की आवश्यकता है, न कि 'प्रशिक्षण' की।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात अध्यापक शिक्षा
(Teacher Education After Independence)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात शिक्षा के सभी क्षेत्रों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं उनमें अध्यापक शिक्षा के परिवर्तन भी महत्वपूर्ण हैं। सभी प्रगतिशील देशों ने अध्यापक शिक्षा की महत्ता को स्वीकार किया है। अतः हमारे देश की प्रगति हेतु यह नितान्त आवश्यक था कि अध्यापकों की शिक्षा का भी प्रसार किया जाये।

---

1. 'A real education is not so much a motter of lessons to be learnt and memorized as of a life to be lived and purposeful activities to be shared.'

Report of the University Education Commission, p. 21[illegible]

शालाओं के अध्यापकों की योग्यताएँ
1950-51 और 1965-66
लोअर प्राथमिक शालाएँ
उच्चतर प्राथमिक शालाएँ
माध्यमिक शालाएँ
1965-66
1950-51
90
80
70
60
50
40
30
20
10
0
स्नातक और स्नातकोत्तर
मैट्रिक और स्नातक से कम
मैट्रिक से कम
स्नातक और स्नातकोत्तर
मैट्रिक और स्नातक से कम
मैट्रिक से कम
स्नातक और स्नातकोत्तर
मैट्रिक और स्नातक से कम
मैट्रिक से कम
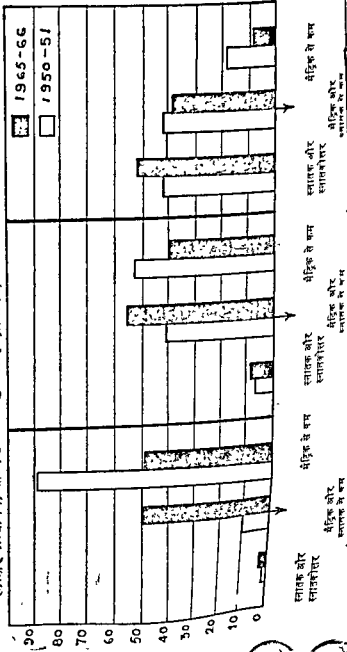
1. शाला अध्यापकों की योग्यताऐं
Qualificatoins of School Teachers

स्वतन्त्रता से पूर्व अध्यापकों की योग्यताऐं अत्यन्त ही न्यून थीं। ग्राफ द्वारा इस स्थिति को स्पष्ट किया गया है। तालिका न० 13.1 से यह स्थिति और भी स्पष्ट है। माध्यमिक शालाओं के अन्तर्गत 1950–51 में स्नातक अथवा उससे अधिक केवल 40·1% अध्यापक थे, 1965 में इन अध्यापकों का प्रतिशत 50·2 था।

तालिका न० 13.1

प्राथमिक अध्यापकों की सामान्य शिक्षा

(1950–51 से 1965–66)

वर्ष	स्नातक और उससे अधिक	माध्यमिक शिक्षा और स्नातक से कम	माध्यमिक शिक्षा से कम	कुल योग
		लोअर प्राथमिक शालाऐं		
1950-51				
पुरुष	898	44,730	410,009	455,637
	(0·2)%	(9 8)%	(90 0)%	(100)%
महिलाएं	410	9,670	72,201	82,281
	(0 5)%	(11·8)%	(87·7)%	(100)%
योग	1,308	54,400	482,210	537,918
	(0 3)%	(10·1)%	(89·6)%	(100)%
1965-66	(अनुमानित)			
पुरुष	7,100	430,650	412, 250	850,000
	(0·8)%	(50 7)%	(48 5)%	(100)%
महिलाऐं	3,400	94,350	102,250	200,000
	(1·7)%	(47·2)%	(51·1)%	(100)%
योग	10,500	525,000	514,500	1,050,000
	(1 0)%	(50 0)%	(49 0)%	(100)%

उच्चतर प्राथमिक शालाएँ

1050-51				
पुरुष	3,020 (5·4)%	31,267 (43·1)%	37,422 (51·5)%	72,609 (100)%
महिलाएँ	887 (6 0,%	4,323 (33 5)%	7,677 (59·6)%	12,887 (100)%
योग	4,807 (5·6)%	35,600 (41·6)%	45,000 (52 8)%	85,496 (100)%
1065-66 (अनुमानित)				
पुरुष	23,500 (6·2)%	212,200 (55 8)%	144,300 (38·0)%	360,000 (100)%
महिलाएँ	7,700 (5·5)%	68·600 (40 0)%	63,700 (45·5)%	140,000 (100)%
योग	31.200 (6 0)%	280,800 (54·0)%	208,400 (40 0)%	520,00 (100)

2. अध्यापकों की संख्या

Number of Teachers

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात अध्यापकों की संख्या में वृद्धि हुई है। अध्
की संख्या में वृद्धि छात्रों की संख्या पर निर्भर करती है। पूर्व-प्राथमिक स्
सन् 1050–51 में अध्यापकों की संख्या केवल मात्र 666 थी जो 1065–
बढ़कर 65,000 हो गई। प्राथमिक स्तर पर 1050–51 में कुल संख्
हजार थी जो 1065–60 में 1050 हजार हो गई। उच्च एवम् उच्चतर मा
स्तर पर अध्यापकों की संख्या में तीन गुनी वृद्धि हुई है। संक्षेप में इस समय
देश में माध्यमिक स्तर के अध्यापकों की कुल संख्या दस लाख है जिसमें
चौथाई महिलाएँ हैं। तालिका न० 13.2 में अध्यापकों की संख्या को
योजनाओं के आधार पर स्पष्ट किया गया है।

तालिका न० 13.2
अध्यापकों की संख्या
(1950–51 से 1965–66)

विभिन्न स्तरों के अध्यापक	लिंग एवं योग	1950–51	1955–56	1960–61	1965–6
पूर्व प्राथमिक शालाओं के अध्यापक	—	866	1880	4000	6500
प्राथमिक शालाओं के अध्यापक (हजार में)	पुरुष	456	574	615	850
	स्त्री	82	117	127	200
	योग	538	691	742	1050
मिडिल शालाओं के अध्यापक (हजार मे)	पुरुष	73	124	261	380
	स्त्री	13	24	84	140
	योग	86	148	344	520
उच्च/उच्चतर माध्यमिक शालाओं के अध्यापक (हजार में)	पुरुष	107	155	235	345
	स्त्री	20	35	62	95
	योग	127	190	296	440
प्रशिक्षण शालाओं के अध्यापक	पुरुष	3511	4942	6826	—
	स्त्री	1287	1431	1755	—
	योग	4798	6373	8581	—

3. प्रशिक्षित अध्यापक

Trained Teachers

सन् 1947 मे प्राथमिक एवम् माध्यमिक शालाओं में आधे से अधि अध्यापक अप्रशिक्षित थे । सन् 1968 तक सामान्य तौर पर लोअर प्राथमिक स्तर 68%; उच्च प्राथमिक स्तर के 72% और माध्यमिक स्तर पर 71% अध्याप प्रशिक्षित हैं । विभिन्न राज्यों में सन् 1965–66 के अन्तर्गत प्रशिक्षित अध्यापकों क कुल संख्या और प्रतिशत, सम्बन्धित ग्राफ और तालिका न० 13 3 मे स्पष्ट किय गया है ।

तालिका न० 13.3
राज्यों मे प्रशिक्षित अध्यापकों की सख्या और प्रतिशत
Number & Percentage of Trained Teachers in the States
(1965–66)

राज्यों के नाम	माध्यमिक स्तर	उच्च प्राथमिक स्तर	लोअर प्राथमिक स्तर
1. आंध्र प्रदेश	34,215 (82·4)	15,625 (80·5)	86,501 (90 0)
2. आसाम	9,210 (18 6)	14,810 (22 4)	37,500 (55·0)
3. बिहार	24,398 (60 2)	32,918 (72 5)	90·363 (82·7)
4. गुजरात	22,290 (66 4)	83,640 (61 4)	उच्च प्राथमिक मे सम्मिलित
5. जम्मु व काश्मीर	4,613† (25·6)	3,467† (54 2)	4,874† (54 0)
6. केरल	22,031 (89 0)	39,406 (82·7)	59,703 (93 0)
7. मध्य प्रदेश	107 016 (69·0)	27,961* (72 0)	679,006 (80·0)
8. मद्रास	48,194* (86·3)	50,440* (93·1)	76,638* (96·7)
9. महाराष्ट्र	48 590 (71 4)	131,500 (74 8)	उच्च प्राथमिक में सम्मिलित
10. मैसूर	10,334 (59 5)	91,952 (60 9)	उच्च प्राथमिक मे सम्मिलित
11. नागालैंड	309 (15 0)	745 (8 7)	1,764 (20 5)
12. उड़ीसा	8,461* (52·0)	10,322* (31 0)	48 379* (60 0)
13. पंजाब	26,234 (96 0)	14 911* (55 0)	34,402* (40 0)
14. राजस्थान	12,671* (60 0)	[illegible] (71 0)	41,600 (75 0)
15. उत्तर प्रदेश	33,311 (81 9)	[illegible] (57 1)	162,173 (73 3)
16. पश्चिमी बंगाल	40,238 (35 6)	[illegible] (16 2)	[illegible] (14 3)

[illegible]
(† 1961-62 की स्थिति)

4. शिक्षक प्रशिक्षण शालाएं
Teachers' Training Shools

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् शिक्षक प्रशिक्षण शालाओं की स
वृद्धि हुई है। छात्रों की अपेक्षा छात्राओं की संख्या अधिक बढ़ी है।
के शिक्षण हेतु यह और भी आवश्यक है कि महिला अध्यापकों की सं
वृद्धि हो। तालिका न० 13.4 से शिक्षक प्रशिक्षण शालाओं की प्र
आभास होता है।

तालिका न० 13.4

शिक्षक प्रशिक्षण शालाएं

मद		1964-47	1950-51	1955-56	1960-6
1. शालो की संख्या	पुरुषों के लिए	443	567	678	881
	महिलाओं हेतु	206	215	252	257
	योग	649	782	930	1138
2 विद्यार्थियों की संख्या	लड़के	27662	52069	65033	91130
	लड़कियाँ	11111	17994	25881	31562
	योग	38773	70063	90914	122685
3. कुल खर्चा (हजार रु० में)	लड़के	6294	11468	15506	20409
	लड़कियाँ	2807	3761	4251	6402
	योग	9101	15229	19757	34811

5. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय
Teachers' Trainipg Colleges

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय हमारे देश में कुल 42 महाविद्यालय थे। प्राप्त आकड़ों के आधार पर 1965-66 में इनकी संख्या बढ़कर 269 हो गई। इस समय इनकी संख्या में कुछ और वृद्धि हुई है। जहाँ तक छात्रों की संख्या का प्रश्न है, उसमें भी काफी प्रगति हुई है, जिसकी सम्भावित वृद्धि ग्यारह गुनी है। छात्र एवम् छात्राओं के अनुपात में भी सन्तोषप्रद वृद्धि हुई। तालिका न० 13.5 में इस स्थिति को और भी स्पष्ट किया गया है।

तालिका न० 13 5

शिक्षक—प्रशिक्षण महाविद्यालय

मद		1946-47	1950-51	1955-56	1960-61	1965-6
1. महाविद्यालयों की संख्या		42	53	107	—	269
2. छात्र संख्या	पुरुष	—	3851	9962	—	20000
	महिला	—	1930	4318	—	10000
	योग	3095	5781	14280	—	30000
3. खर्चा (हजार रु० में)		2201	3547	6566	21514	24000

13.03 विभिन्न स्तरों के लिए अध्यापकों की प्रारम्भिक व्यावसायिक तैयारी
Initial Professional of Teachers for Various Levels

विभिन्न स्तरों के लिए अध्यापकों के प्रारम्भिक व्यावसायिक प्रशिक्षण हेतु हमारे देश में सामान्य रूप से निम्नलिखित प्रशिक्षण संस्थाएं विद्यमान हैं—

1. पूर्व प्राथमिक स्तर हेतु प्रशिक्षण
Training for Pre-Primary Level

हमारे देश में मुख्य रूप से तीन प्रकार की पूर्व-प्राथमिक शालाएँ हैं

(अ) माण्टेसरी शालाएं (Montessori Schools)

(ब) किन्डर गार्टन (Kindergartens)

(स) पूर्व-बेसिक शालाएँ (Pre Basic Schools)

किंडरगार्टन, नर्सरी, मान्टसरी के प्रशिक्षण में सामान्य रूप से समान और बाल मनोविज्ञान, आरोग्य विज्ञान, बाल शिक्षण पद्धति, संगीत, चित्र अथवा हस्त शिल्प अथवा शारीरिक व्यायालय आदि का ज्ञान प्रशिक्षण काल में दिया जाता है।

पूर्व बुनियादी स्तर के प्रशिक्षण में निम्नलिखित विषयों को सम्मिलित किया गया है—सामुदायिक जीवन का संगठन, समाज-प्रशिक्षण, बाल शिक्षा का इतिहास, पूर्व-बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्त कार्य संगठन, बाल स्वास्थ्य, संगीत, कला और शिल्प।

2. प्राथमिक स्तर हेतु प्रशिक्षण विद्यालय
Training Schools for Primary Stage

प्राथमिक स्तर पर अध्यापक प्रशिक्षण काल एक अथवा दो वर्ष है। प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए न्यूनतम योग्यता मैट्रिक/ हायर सेकेन्डरी निर्धारित की गई है। इस समय हमारे देश में दो प्रकार के प्राथमिक प्रशिक्षण विद्यालय हैं—बुनियादी, गैर बुनियादी। सम्पूर्ण देश में सन् 1956–57 में बुनियादी प्रशिक्षण विद्यालयों की संख्या 676 थी और गैर बुनियादी विद्यालयों की 196 थी। सन् 1965–66 पुरुषों के लिए प्रशिक्षण विद्यालयों की संख्या 1000 थी और महिलाओं के लिए प्रशिक्षण विद्यालयों की संख्या 300 थी जिनमें 110,000 पुरुषों और 50,000 महिलाओं ने प्रशिक्षण प्राप्त किया।

राजस्थान में 1950–51 में पुरुषों के लिए 12 और महिलाओं के लिए 3 शिक्षण विद्यालय थे। सन् 1963–64 में यह संख्या बढ़कर पुरुषों के लिए 46 और महिलाओं के लिए 12 हो गई। तालिका नं० 13.6 से राजस्थान में प्रशिक्षण विद्यालयों की स्थिति का सही आभास होता है। सन् 1968–69 में प्रशिक्षण विद्यालयों को बन्द कर दिया है।

तालिका नं॰ 13.6
राजस्थान में शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय[1]
Teachers' Training Schools in Rajasthan

वर्ष	शालाओं की संख्या			छात्रों की संख्या			प्रति विद्यार्थी औसत व्यय
	लड़के	लड़कियाँ	योग	लड़के	लड़कियाँ	योग	
1950-51	12	3	15	98?	305	1287	311 7
1955-56	11	2	13	1015	162	1177	522 6
1960-61	51	4	55	6031	547	6578	501·2
1961-62	45	5	50	5392	644	6038	539 6
1962-63	45	6	51	5160	977	6137	570 7
1963-64	46	12	58	—	—	—	—

इस प्रशिक्षण के पश्चात उत्तीर्ण छात्रों को विश्वविद्यालय अथवा शिक्षा विभाग द्वारा प्रमाण-पत्र या डिप्लोमा प्रदान किए जाते हैं विभिन्न राज्योंमें प्रशिक्षण की अवधि और प्रमाण-पत्रों के नाम भिन्न हैं (देखिये तालिका 13.7 ।)

तालिका नं॰ 13 7
विभिन्न राज्यों द्वारा प्रशिक्षण का प्रमाण पत्र और अवधि

स्थान का नाम	प्रमाण-पत्र का नाम	प्रशिक्षण अवधि
1. बम्बई	टी॰ डी॰	एक वर्ष
2. बड़ोदा	,, ,,	,, ,,
3 गुजरात	,, ,,	,, ,,
4. कर्नाटक	,, ,,	,, ,,
5. पूना	,, ,,	,, ,,
6. मैसूर	टी॰ सी॰	,, ,,
7. कलकत्ता	एल॰ टी॰	,, ,,
8. नागपुर	डिप॰ टी॰	दो वर्ष
9. सागर	,, ,,	,, ,,
12. बिहार	सी॰ टी॰	,, ,,
11. मद्रास	टी॰ एम॰ एस	,, ,,
12. उत्तर प्रदेश	जे॰ टी॰ सी॰	,, ,,

1. *Progress of Education Rajasthan*, Govt of Rajasthan, 1964p. 9.

3. माध्यमिक स्तर हेतु प्रशिक्षण महाविद्यालय
Training Colleges for Secondary Stage

अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में स्नातकों अथवा इससे अधिक शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी ही प्रवेश ले सकते हैं। शिक्षा की स्नातक उपाधि सामान्यतया विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदान की जाती है जिसे बी. टी., बी. एड अथवा डिप. एड. कहते हैं। उत्तर प्रदेश मे बी. एड. के अतिरिक्त एल. टी. का प्रमाण पत्र भी शिक्षा विभाग द्वारा दिया जाता है जिसकी अवधि एक अथवा दो वर्ष है। इन महाविद्यालयों का उद्देश्य माध्यमिक शालाओं के लिए अध्यापकों को व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करना है।

राजस्थान मे सन् 1969–70 मे क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय के अतिरिक्त सोलह महाविद्यालय थे जिनमे से दो राजकीय और चौदह गैर सरकारी थे। प्राप्त आँकडो के आधार पर सन् 1963–64 तक राजस्थान में शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों की स्थिति को तालिका नं० 13.8 मे स्पष्ट किया गया है।

तालिका नं० 13.8

राजस्थान मे शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय[1]
Teachers Training Colleges in Rajasthan

वर्ष	महाविद्यालयों की सख्या	छात्रों की सख्या			निकास			प्रति विद्यार्थी औसत खर्च
		लड़के	लड़कियाँ	योग	लड़के	लड़कियाँ	योग	
1950–51	2	1.5	20	165	180	26	206	612 0
1955–56	3	286	25	311	260	26	286	404·3
1960–61	4	441	62	503	438	48	486	885 9
1661–62	5	531	95	626	530	97	627	873·5
1962–63	6	627	125	752	510	95	605	774·8
1963–64	7	—	—	-	—	—	-	—

इस सम्पूर्ण देश मे 260 प्रशिक्षण महाविद्यालय हैं जिनमे से 75 राज्य सरकारों द्वारा, 150 निजी संस्थाओं द्वारा और अन्य विश्वविद्यालयों द्वारा संचालित होते हैं। हमारे देश मे दो प्रकार के शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय हैं —

1. Ibid, p. 10

1. परम्परागत महाविद्यालय (Traditional Colleges)
2. बुनियादी महाविद्यालय (Basic Colleges)

परम्परागत शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों मे निम्नलिखित सैद्धान्तिक प्रश्न-पत्र हैं.—

(अ) शिक्षा के दार्शनिक एव सामाजिक आधार
(Philosophical & Sociological Foundations of Education)

(ब) शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार एव मूल्यांकन
(Psychological Foundations of Education & Evaluation)

(स) विद्यालय सगठन एव स्वास्थ्य शिक्षा
(School Organization & Health Education)

(द) दो विषयों की अध्यापन विधियाँ
(Methods of Teaching of two School subjects)

(ए) भारतीय शिक्षा की तात्कालिक समस्याएं
(Current Problems of Indian Education)

उपरोक्त सैद्धान्तिक प्रश्न पत्रों में विश्वविद्यालयों ने अपनी सुविधानुसार कुछ परिवर्तन भी कर रक्खे हैं। राजस्थान विश्वविद्यालय ने स्वास्थ्य शिक्षा को भारतीय शिक्षा समस्याओं के साथ और विद्यालय सगठन को शिक्षा के दार्शनिक एव सामाजिक आधार के साथ सम्मिलित कर दिया है। इसके अतिरिक्त स्नातक स्तर पर लिये हुए वैकल्पिक विषयों मे से दो विषयों की अध्यापन विधियाँ भी पृथक रूप से दो प्रश्न-पत्र हैं। अन्य भारतीय विश्वविद्यालयों ने उपरोक्त पाठ्यक्रम को आंशिक परिवर्तन द्वारा स्वीकार कर रखा है।

सैद्धान्तिक प्रश्न-पत्रों के अतिरिक्त प्रत्येक विद्यार्थी को निर्धारित संख्या के अनुरूप अध्यापन-अभ्यास करना पड़ता है।

सैद्धान्तिक और अध्यापन अभ्यास के अतिरिक्त यदि कोई विद्यार्थी चाहे तो विशिष्ट प्रश्न पत्र की योग्यता भी प्राप्त कर सकता है। सामान्यत: भारतीय विश्वविद्यालयों मे निम्नलिखित विषय प्रचलित हैं:—

1. शाला पुस्तकालय सगठन (School Library Organization)
2. शैक्षिक और व्यवसायिक निर्देशन (Educational & Vocational Guidance)
3. ग्राम्य शिक्षा (Rural Education)
4. दृश्य श्रव्य शिक्षा (Audio Visual Education)
5. मापन एवं मूल्यांकन (Measurement & Evaluation)

6. समाज शिक्षा (Social Education)
7. बुनियादी शिक्षा (Basic Education)
8. स्वास्थ्य शिक्षा (Physical Education)
9. कला एवं उद्योग (Art & Crafts)
10. पिछड़े बालकों की शिक्षा (Education for Backward Childr
11. सहगामी क्रियाओं का सगठन

(Organization of Co-curricular Activit

बुनियादी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों का पाठ्यक्रम भिन्न विश्वविद्या ने अपनी सुविधानुसार बना रखा है। परन्तु बुनियादी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्या के आचार्यों की समिति ने निम्नलिखित पाठ्यक्रम निश्चित किया था —

(I) सैद्धान्तिक—(i) बुनियादी शिक्षा के सदर्भ में शिक्षा दर्शन और शि समाज-शास्त्र
(ii) शिक्षा मनोविज्ञान
(iii) शिक्षा प्रशासन और निरीक्षण अथवा प्रयोगिक शिक्षा एवं शिक्षा अनुसन्धान
(iv) बुनियादी शिक्षण पद्धतियाँ
(v) उद्योग कार्य का अभ्यास और सिद्धान्त

(II) मुख्य उद्योग—निम्नलिखित में से कोई एक बुनियादी उद्योग
(i) कृषि (पशु पालन)
(ii) कताई और बुनाई
(iii) गत्ते, लकड़ी और धातु कार्य

सहायक उद्योग—(i) गृह निर्माण
(ii) कताई (उनके लिए जिन्होंने कताई मुख्य उद्योग के रूप में नहीं ली है)
(iii) साग-सब्जी बागवानी (उनके लिए जिन्होंने मुख्य उद्योग में कृषि नहीं ली है)
(iv) चमड़े का काम (Leather work)
(v) मधुमक्खी पालन (Beekeeping)
(vi) मिट्टी के बर्तन बनाने का काम (Pottery)

लोकोपयोगी कार्य—(i) [illegible]

(iii) वैयक्तिक और सामूहिक परीक्षाओं का परिचालन।

(iv) शिक्षण सामग्री का संकलन और निर्माण

(v) बुनियादी शालाओं के लिए सहायक सामग्री का निर्माण।[1]

4 शिक्षा के क्षेत्रीय महाविद्यालय
The Regional Colleges of Education

बहुउद्देशीय माध्यमिक विद्यालयों की स्थापना के पश्चात् यह अनुभव किया या कि प्रयोगात्मक विषयों के शिक्षण हेतु योग्य अध्यापकों का अभाव था। सके साथ यह भी विचार किया गया कि विद्यमान शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय वल मात्र परम्परागत अध्यापकों को प्रशिक्षण देने में समर्थ है और वाणिज्य, ज्ञान तथा अन्य प्रयोगात्मक विषयों के प्रशिक्षण देने में असमर्थ हैं। देश की प्रगति तु यह भी अनुभव किया गया कि औद्योगिक विकास हेतु यह अत्यन्त अनिवार्य है क योग्य और प्रशिक्षित अध्यापकों द्वारा देश के भावी नागरिकों को विज्ञान और तल्प विज्ञान में दीक्षित किया जाये। अतः उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्त करने के लिए क्षेत्रीय महाविद्यालयों की स्थापना की गई। इस समय हमारे देश में चार क्षेत्रीय महाविद्यालय कार्य कर रहे हैं जो कि अजमेर भुवनेश्वर, भोपाल और मैसूर में स्थित हैं। पिछले वर्ष इन महाविद्यालयों के कार्यक्षेत्र का पुनर्विलोकन करने के लिए एक समीक्षा समिति का गठन हुआ था, आशा है निकट भविष्य में इन क्षेत्रीय महाविद्यालयों के कार्य-क्षेत्र में कुछ परिवर्तन आये। अजमेर (राजस्थान) में स्थित क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय में भाषा शिक्षण के प्रशिक्षण हेतु एक नवीन पाठयक्रम आरम्भ किया गया है जिसकी अपनी शैक्षिक महत्ता है और आशा है कि इससे कुशल भाषा अध्यापक तैयार हो सकेंगे।

इन चारों महाविद्यालयों में निम्नलिखित क्षेत्र सम्मिलित हैं :—

1. क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, अजमेर (राजस्थान)
Regional College of Education Ajmer (Raj)
(उत्तरी क्षेत्र हेतु) जम्मु-काश्मीर, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश।

2. क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय भुवनेश्वर (उड़ीसा)
Regional College of Education, Bhubaneswar (Orrissa)

---

1. शिक्षा मंत्रालय, पंचवर्षीय योजना (Schemes of Educational elopment, P. 4–5

(पूर्वी क्षेत्र हेतु) बिहार, उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल, आसाम, मणीपुर, त्रिपुरा।

3. क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, भूपाल (मध्य प्रदेश)
   Regional College of Educatoin Bhopal (M. P.)
   पश्चिमी क्षेत्र हेतु) महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, गुजरात।
4. क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, मैसूर, (मैसूर)
   Regional College of Education Mysore (Mysore)
   (दक्षिणी क्षेत्र हेतु) आंध्र-प्रदेश, मैसूर, मद्रास, केरल।

इन सभी क्षेत्रीय महाविद्यालयों मे पाठ्यक्रम इस प्रकार हैं—

1 स्नातकों के लिए शिल्प विज्ञान, कृषि, गृह विज्ञान, वाणिज्य, विज्ञान एवम् उद्योग शिक्षण हेतु एक-वर्षीय पाठ्यक्रम।
2. सेवा कालीन कार्यक्रम
3. उद्योग के अध्यापकों के लिए विशिष्ट पाठ्यक्रम
4. पत्राचार द्वारा बी. एड।
5. स्नातकोत्तर प्रशिक्षण महाविद्यालय
   Post Graduate Training College

इस स्तर मे एम. एड और पी एच. डी का पाठ्यक्रम सम्मिलित है। एम. ड. शिक्षण की सुविधा 28 विश्वविद्यालयों मे है जिनमें 19 विश्वविद्यायों में प्रवेश ने हेतु न्यूनतम योग्यता बी. टी. बी. एड. एल टी और व्यावसायिक अनुभव है।

कुछ विश्वविद्यालयो मे एम. ए / एम. एस. सी. की व्यवस्था है, जैसे लकत्ता और गोहाटी विश्वविद्यालयो मे एम. ए / एम. एस. सी. (शिक्षा) की वस्था है जो दो वर्ष का पाठ्यक्रम है। शिक्षा मे अनुसन्धानों को बढ़ाना नितान्त वश्यक है।

6 समाकलन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम
(Integrated Training Course)

भारतवर्ष में सर्वप्रथम कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में समाकलन प्रशिक्षण पाठ्यम आरम्भ किया गया। इसमे प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण मैट्रिक छात्रों को प्रवेश दिया ता है जिन्हें 4 वर्ष की अवधि तक सामान्य एवं व्यावसायिक शिक्षा प्रदान की ती है। और उत्तीर्ण छात्रों को बी ए., बी. एड. अथवा बी. एस. सी., बी॰ एड की पाधि प्रदान की जाती है। विश्व के प्रगतिशील देश जैसे अमेरिका, रूस आदि में सी प्रकार अध्यापक शिक्षा प्रदान की जाती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस ठ्यक्रम को उत्तीर्ण करने के पश्चात जो अध्यापक निकलेंगे वे अन्य अध्यापकों से

हमारे देश में इसी पाठ्यक्रम को चारों क्षेत्रीय महाविद्यालयों ने भी स्वीकार किया है। अन्तर केवल इतना है कि यहाँ प्रवेश हेतु न्यूनतम योग्यता हायर सेकेन्डरी है और अवधि 4 वर्ष है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक विद्यार्थी को पहले तीन वर्षों में 75 रु० मासिक छात्रवृत्ति मिलती है और चौथे और अन्तिम वर्ष में 100 रु० मासिक छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है।

7. विशेष प्रशिक्षण केन्द्र

कुछ केन्द्र द्वारा अध्यापकों को विशेष प्रशिक्षण भी दिये जाते हैं जो निम्नलिखित हैं—

(अ) शारीरिक शिक्षा (Physical Education)—शारीरिक शिक्षा प्रशिक्षण में दो स्तर होते हैं—स्नातक स्तर और स्नातकोत्तर स्तर। दोनों प्रशिक्षणों की अवधि एक वर्ष होती है। सन् 1963 में हमारे देश में इसके लिए 18 महाविद्यालय थे और 46 विद्यालय थे।

(ब) सौन्दर्य शास्त्र सम्बन्धी शिक्षा (Aesthetic Education)—प्रमुख केन्द्र निम्नलिखित हैं—

1. जे. जे. स्कूल आफ आर्टस, बम्बई — कला
2. स्कूल आफ आर्टस, बड़ौदा — संगीत, कला
3. कला क्षेत्र, अड्यार, मद्रास — नृत्य
4. विश्वभारती, शान्ति निकेतन — संगीत, नृत्य, कला
5. टीचर्स कालेज आफ म्यूजिक, मद्रास — संगीत
6. इंस्टीट्यूट आफ आर्टस एजूकेशन, दिल्ली — कला, हस्तशिल्प (जामिया मिलिया इस्लामिया)

(स) भाषा अध्यापकों के प्रशिक्षण महाविद्यालय (Training Colleges for Language Teachers)—भाषा शिक्षण हेतु भी कुछ महाविद्यालय की व्यवस्था है जिनमें दो महाविद्यालय-प्रथम हिन्दी अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण महाविद्यालय, आगरा दूसरा इन्स्टीट्यूट आफ इंगलिश, हैदराबाद-यह केवल अंग्रेजी के अध्यापकों को प्रशिक्षण प्रदान करता है। राजस्थान में भी इसी प्रकार का एक इन्स्टीट्यूट है जो अजमेर में है।

(द) गृह विज्ञान (Home Science)—इसके प्रमुख केन्द्र निम्नलिखित हैं—

1. लेडी इरविन कॉलेज, दिल्ली
2. गवर्नमेंट कालेज आफ होम साइन्स फार वीमेन्स, इलाहाबाद
3. डोमेस्टिक साइन्स ट्रेनिंग कालेज, हैदराबाद

माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) के मतानुसार शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों के कार्यक्रम कितने भी सुन्दर क्यों न हों, उनसे अच्छे अध्यापक नहीं बनाये जा सकते। उनसे केवल ज्ञान, कौशल और अभिवृत्तियों की वृद्धि होती है जिससे आत्मविश्वास और कुछ व्यावसायिक अनुभव प्राप्त होता है। कार्यक्षमता में वृद्धि तभी सम्भव है जब वास्तविक अनुभवों के आधार पर नवीन ज्ञान प्राप्त किया जा सके।

2. शैक्षिक लाभों की प्राप्ति
(Attainment of Educational Benefits)

अध्यापक का समस्त जीवन उसके शिक्षण पर आधारित होता है। सफल शिक्षण तभी सम्भव है जबकि उसे अपने विषय का विपद ज्ञान हो विषय का ज्ञान व्यक्तिगत अध्ययन, अनुभव और स्वयं की दूसरे से तुलना करने पर एवं विद्वानों के संसर्ग से सम्भव है। सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा से अध्यापक को अपने विषय का नवीन ज्ञान, दूसरे के अनुभवों के लाभ, आत्मलोचन, विचारों का आदान-प्रदान और शैक्षिक समस्याओं का समाधान प्राप्त होता है।

3. नवीन ज्ञान की सम्भावनाएँ
(Possibilities of New Knowledge)

हमारे देश का सामान्य अध्यापक चाहे वह शाला अथवा किसी भी प्रकार के महाविद्यालय का हो दिन प्रतिदिन आलसी होता जा रहा है और नवीन ज्ञान के प्रति तो बिलकुल भी जागरूक नहीं है। प्रशिक्षण महाविद्यालयों में तो यह बहुत बड़ी समस्या है कि 75% छात्राध्यापकों की आयु 35 वर्ष से अधिक होती है और जब वे प्रशिक्षणार्थ आते हैं तो उनके ज्ञान का स्तर देखकर दुःख होता है। इसके अतिरिक्त प्रशिक्षण महाविद्यालयों के प्राध्यापक भी नवीन ज्ञान को प्राप्त करने का प्रयास नहीं करते और शिक्षण काल में केवल एक बार व्याख्यान तैयार करते हैं और जीवन भर उन्हीं को पढ़ाते रहते हैं। जिस देश के प्रशिक्षण महाविद्यालयों की दशा इतनी सोचनीय है उस देश के अध्यापकों की क्या दशा होगी यह स्वयं सिद्ध है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यदि यह कहा जाये कि आज के अध्यापक ने जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त किया है वह अपनी परीक्षाओं को उत्तीर्ण करने तक ही सीमित है। यदि इस प्रकार के अध्यापक से यह आशा की जाये कि वह स्वयं ही नवीन ज्ञान प्राप्त कर छात्रों के सम्मुख परोसेगा तो मेरे विचार से यह मान्यता व्यर्थ ही होगी। अतः यह अत्यन्त अनिवार्य है कि अध्यापकों को सेवारत काल में अभिनवन, अल्पकालीन सघन पाठ्यक्रम द्वारा कार्यशाला का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान किया जाये। यदि स्वतन्त्रता के 22 वर्षों के पश्चात भी आज हमारे देश के अध्या

पक्षों की यह शोचनीय दशा है तो इसके लिए जागरूक होना नितान्त आवश्यक है कि वह अपने ज्ञान का अभिनवन करे, अपनी अभिवृत्तियों को वांछित स्वरूप प्रदान करे, शिक्षा की समस्याओं के प्रति जागरूक हो और सेवाकालीन शैक्षिक कार्यक्रमों द्वारा नवीन ज्ञान प्राप्त करे।

अन्त में हम कोठारी आयोग (1964–66) के कथन से पूर्णरूपेण सहमत कि प्रत्येक व्यवसाय में प्रारम्भिक प्रशिक्षण के पश्चात विशेष अध्ययन और प्रशि... की आवश्यकता होती है। शिक्षण व्यवसाय में भी इसकी नितान्त आवश्यकता है क्योंकि ज्ञान के क्षेत्र में निरन्तर परिवर्तन हो रहे हैं।[1]

सेवाकालीन शिक्षा के कुछ मनोवैज्ञानिक लाभ भी हैं। जब अध्यापक किसी सेमीनार अथवा गोष्ठी में सम्मिलित होते हैं तो उनमें सुरक्षा की भावना, पारस्परिक सम्बन्धों की अभिवृद्धि, सामूहिकता, और व्यावसायिक दक्षता की भावनाओं का विकास होता है।

(ब) शिक्षा के विभिन्न स्तरों के लिए सेवाकालीन शिक्षा (In Service Education for Various Educational Levels)

सेवाकालीन शिक्षा की समस्त शैक्षिक स्तरों के लिए आवश्यकता है, अतः यह अनिवार्य है कि सभी स्तरों पर अध्यापकों का अभिनवन हो, जिसकी रूपरेखा निम्नलिखित है—

1. प्राथमिक शाला के अध्यापक और सेवाकालीन शिक्षा (Primary School Teachers and Inservice Education)

हमारे देश में प्राथमिक शाला के अध्यापकों के लिए सेवाकालीन शिक्षा पर बहुत कम ध्यान दिया गया है। अनेकों इस प्रकार के राज्य हैं जिन्होंने प्राथमिक शाला के अध्यापकों को निरन्तर रूप से देखा है। प्रथम तो अप्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या बहुत अधिक है, दूसरे सेवाकालीन शिक्षा का कोई प्रावधान नहीं किया गया है। स्टेट इंस्टीट्यूट आफ एजूकेशन का यह प्रथम कर्तव्य है कि प्राथमिक शाला के अध्यापकों के लिए यथासम्भव ग्रीष्मकालीन संस्थानों, अल्पकालीन सघन पाठ्य... और गोष्ठियों का आयोजन करे जिससे प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे आवश... आधुनिक परिवर्तनों से अध्यापकों को परिचित किया जा सके। स्टेट इन्स्टीट...

---

1. In all professions there is a need to provide furt... training and special Courses of study, on a continu... basis, after initial professional preparation. The n... is most urgent in the teaching profession becaus... the rapid advance in all fields of knowledge and c... nuing evolution of pedagogical theory and practice. *Report of Education Commission* 1964-66 p. 84

आफ एजूकेशन, उदयपुर (राजस्थान) इस दृष्टि से पूर्ण सक्रिय है और यथासम्भव सेवाकालीन शिक्षा का आयोजन किया जा रहा है।

2. माध्यमिक शाला के अध्यापकों को सेवाकालीन शिक्षा
(In-service Education of Secondary School Teachers)

माध्यमिक शाला के अध्यापकों का विशेष उत्तरदायित्व है क्योंकि उन्हें किशोरावस्था के विद्यार्थियों को शिक्षित करना होता है। इसके लिए नितान्त आवश्यक है कि माध्यमिक विद्यालयों के अध्यापकों को सेवाकालीन शिक्षा के लिए ग्रीष्मकालीन संस्थाओं का प्रबन्ध किया जाये। अधिक उचित हो यदि विषयानुसार सेवाकालीन शिक्षा का प्रावधान किया जा सके। इसके लिए यह भी आवश्यक है कि प्रत्येक अध्यापक अपनी पाँच वर्ष की सेवा अवधि में कम से कम दो या तीन मास की सेवाकालीन शिक्षा अवश्य प्राप्त करे। यद्यपि नेशनल कौंसिल आफ एजूकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग के प्रयास से सेवाकालीन शिक्षा हेतु कुछ विषयों पर ग्रीष्मकालीन संस्थाओं का आयोजन किया जाने लगा है, तथापि अध्यापकों की संख्या को देखते हुए अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

कोठारी आयोग के अनुसार सेमीनार अथवा ग्रीष्मकालीन संस्थाओं का तब तक कोई लाभ नहीं है जब तक इन कार्यक्रमों में अनुसरण कार्यक्रम (Follow up programme) को क्रमिक रूप में न जोड़ा जाये। पिछले तीन वर्षों में जितने ग्रीष्मकालीन संस्थाओं का आयोजन हुआ, उसका प्रभाव निश्चित रूप से अधिक होता यदि शिक्षा विभागों और माध्यमिक शिक्षा बोर्डों में उचित समन्वय होता। यही कारण है कि अभी तक पाठ्यक्रमों, वाह्य परीक्षा प्रणाली और अन्य शाला समस्याओं का उचित समाधान नहीं हो सका है।

3. उच्च शिक्षा स्तर के अध्यापकों को सेवाकालीन शिक्षा
In service Education for the teacher's of higher Education

विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों, प्रशिक्षण संस्थाओं तथा समस्त उच्च शिक्षा के अध्यापकों के लिए सेवाकालीन शिक्षा का सहयोगिक रूप में एक विशाल कार्यक्रम बनाया जाना नितान्त आवश्यक है। कोठारी आयोग के अनुसार उच्च शिक्षा के अध्यापकों से किसी प्रकार का व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होता है और भारतवर्ष में कॉलिज प्राध्यापकों के लिए प्रशिक्षण का प्रावधान निरर्थक समझा जाता है अतः उनके लिए यह नितान्त आवश्यक है कि उनका अभिनवन किया जाये जिससे उन्हें शिक्षा के उद्देश्यों, विभिन्न शिक्षण विधियों, मनोवैज्ञानिक तथ्यों और अपने विषय का विशद् अध्ययन हो सके। इसके लिए विश्वविद्यालयों और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सहयोग से कुछ निश्चित कार्यक्रमों का बनाया जाना नितान्त आवश्यक है।

प्रशिक्षण कार्यक्रमों और स्कूल कार्य में सम्बन्ध विहीनता

Absence of Relationship between the Training Programm and School Work

अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में सबसे पहली समस्या यह बताई जाती है कि प्रशि क्षण कार्यक्रमों और स्कूल के कार्यों मे कोई सम्बन्ध नही है। प्राय. यह कहते सुना गया है कि प्रशिक्षण काल में छात्रों को जिस प्रकार प्रशिक्षित किया जाता उसका प्रयोग शाला परिस्थितियों मे सम्भव नही है। जो विद्यार्थीगण प्रशिक्ष समाप्त करके जाते हैं उन्हें भी यही कहते देखा गया है कि, प्रशिक्षण काल में प्रा ज्ञान स्कूल की दशाओ मे व्यावहारिक नहीं है। इसका प्रत्यक्ष अर्थ यह हुआ कि सिद्धान्त और व्यवहार मे अन्तर है। श्री सैयदैन के अनुसार प्रशिक्षण महाविद्याल शिक्षा का सबसे बड़ा दोष सिद्धान्त और व्यवहार की सम्बन्ध विहीनता है, ज तक इस दोष को दूर नहीं किया जायगा। तब तक इसका फल प्रश्नवाचक रहेगा।[1] अध्यापक शिक्षा की महत्ता पर अपने विचार स्पष्ट करते हुए श्री सैयदै ने आगे कहा है कि अन्य महान कलाओ के समान ही शिक्षण कला के लिए जीव भर साधना की आवश्यकता होती है। यह निरन्तर प्रक्रिया होती है जो अध्याप के पहले दिन से अन्तिम दिन भग नही होनी चाहिए। भावी अध्यापकों को तैय करने मे महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयो का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। शिक्ष प्रशिक्षण महाविद्यालयो को केवल प्राविधिक साधन ही नहीं जुटाने हैं बल्कि उ एक उचित दृष्टिकोण भी प्रदान करना पड़ता है।[2]

उपरोक्त कथन के सदर्भ मे यह तो स्वय सिद्ध है कि अध्यापक को व्या

---

1. The divorce of theory from practice is one of the mo serious defects of training College education and, unle it is removed its effectiveness will continue to be ve questionable indeed.

   K G Saiyidain, *Problems of Educational Reconstructio* p. 32

2. Like the other great Arts through which mankind h bu of thi firs Col it before the prospective teacher enters any profession institution, the training colleges have then to provi out only technical equipment but a proper orientati and outlook, when the teacher emerges from the *Ibid*, p 329

सेवारत [illegible] के लिए [illegible] के कार्य-क्रमों का आयोजन किया जाता है जिनमें अनुसंधानों और [illegible] पर किए [illegible] रूप से विचार किया होता है [illegible] पर भी [illegible] पर भी अनुसन्धान किए जाते हैं और [illegible] विचार किया जाता है।

(ग) सेवाकालीन शिक्षा की विधियाँ
Methods of Inservice Education

[illegible] में सेवाकालीन शिक्षा के लिए भिन्न-भिन्न विधियों का प्रयोग [illegible] चाहिए —

1. [illegible] प्रशिक्षण कार्यक्रम
2. व्यावसायिक गोष्ठियाँ
3. सेमीनार
4. अभिनवन कार्यक्रम
5. विद्वानों द्वारा व्याख्यान
6. पारस्परिक वाद-विवाद
7. अनुसन्धान विधियाँ
8. दृश्य-श्रव्य साधनों का उचित प्रयोग

अन्त में सेवाकालीन शिक्षा की महत्ता को स्वीकार करते हुए यही कहना उचित होगा कि व्यावसायिक प्रशिक्षण के पश्चात् यह नितान्त आवश्यक है कि सभी स्तरों के अध्यापकों को अधिक से अधिक पाँच वर्षों के पश्चात् सेवाकालीन शिक्षा के रूप में सम्बन्धित शैक्षिक अनुभव प्रदान किये जायें।

13.05 अध्यापक शिक्षा की समस्याएँ और समाधान
Problems & Solutions of Teacher Education

अध्यापक शिक्षा सम्पूर्ण देश की शिक्षा की आधारशिला है। यही वह शिक्षा है जिसके द्वारा अध्यापकों के व्यक्तित्व को निर्दिष्ट दिशा में ढाला जाता है। अध्यापक शिक्षा द्वारा अध्यापकों में जहाँ एक ओर व्यावसायिक क्षमता का विकास होता है वहाँ दूसरी ओर शैक्षिक क्रान्ति की सम्भावनाएँ भी इसी के द्वारा सम्भव है अतः यह नितान्त आवश्यक है कि इस प्रकार की महत्वपूर्ण शिक्षा की समस्याओं का समाधान यथाशीघ्र ढूँढा जाये जिससे कर्त्तव्यपरायण, कर्मठ और योग्य अध्यापकों का निर्माण किया जा सके।

अध्यापक शिक्षा की महत्वपूर्ण समस्याएँ निम्नलिखित हैं:—

प्रशिक्षण कार्यक्रमों और स्कूल कार्य में सम्बन्ध विहीनता

Absence of Relationship between the Training Programmes and School Work

अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र मे सबसे पहली समस्या यह बताई जाती है कि प्रशिक्षण कार्यक्रमों और स्कूल के कार्यों मे कोई सम्बन्ध नही है। प्राय यह कहते भी सुना गया है कि प्रशिक्षण काल मे छात्रों को जिस प्रकार प्रशिक्षित किया जाता है उसका प्रयोग शाला परिस्थितियों में सम्भव नहीं है। जो विद्यार्थीगण प्रशिक्षण समाप्त करके जाते हैं उन्हें भी यही कहते देखा गया है कि, प्रशिक्षण काल में प्राप्त ज्ञान स्कूल को दशाओं में व्यावहारिक नहीं है। इसका प्रत्यक्ष अर्थ यह हुआ कि सिद्धान्त और व्यवहार मे अन्तर है। श्री सैयदेन के अनुसार प्रशिक्षण महाविद्यालयी शिक्षा का सबसे बड़ा दोष सिद्धान्त और व्यवहार की सम्बन्ध विहीनता है, जब तक इस दोष को दूर नही किया जायगा। तब तक इसका फल प्रश्नवाचक ही रहेगा।[1] अध्यापक शिक्षा की महत्ता पर अपने विचार स्पष्ट करते हुए श्री सैयदेन ने आगे कहा है कि अन्य महान कलाओं के समान ही शिक्षण कला के लिए जीवन भर साधना की आवश्यकता होती है। यह निरन्तर प्रक्रिया होती है जो अध्यापक के पहले दिन से अन्तिम दिन भग नही होनी चाहिए। भावी अध्यापकों को तैयार करने मे महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयो का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों को केवल प्राविधिक साधन ही नहीं जुटाने हैं बल्कि उन्हे एक उचित दृष्टिकोण भी प्रदान करना पड़ता है।[2]

उपरोक्त कथन के संदर्भ मे यह तो स्वयं सिद्ध है कि अध्यापक को व्याव-

---

1 The divorce of theory from practice is one of the most serious defects of training College education and, unless it is removed its effectiveness will continue to be very questionable indeed.

K. G Saiyidain, *Problems of Educational Reconstruction*, p. 323

2. Like the other great Arts through which mankind has bui[illegible]
of [illegible]
this [illegible]
firs [illegible]
Colleges and the Universities have a part to play in it before the prospective teacher enters any professional institution, the training colleges have then to provide not only technical equipment but a proper orientation and outlook, when the teacher emerges from there. *Ibid*, p. 329

तात्विक प्रशिक्षण की नितान्त आवश्यकता है और इसी प्रशिक्षण के द्वारा एक वांछित दृष्टिकोण विकसित होता है। इस पर प्रशिक्षण महाविद्यालयों पर यह आरोप लगाना कि उनके कार्यक्रमों का शाला कार्यों से कोई सम्बन्ध नहीं है, आंशिक रूप अनुचित सा प्रतीत होता है। प्रशिक्षण महाविद्यालयों द्वारा जो भी सैद्धान्तिक और व्यावहारिक शिक्षा प्रदान की जाती है, वह आदर्श है और उस आदर्श के अनुरूप शाला कार्यों का होना नितान्त आवश्यक है।

पिछले वर्ष क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, अजमेर मे 'अध्यापक शिक्षा की समस्याओं' पर नवम्बर 8, 1968 से एक गोष्ठी का आयोजन किया गया था जिसमें 10 प्रतिनिधियों ने भाग लिया जो सभी प्राचार्य अथवा प्राध्यापक थे। अध्यापक शिक्षा की अन्य समस्याओं के साथ इस समस्या पर भी विचार किया गया कि प्रशिक्षण महाविद्यालय के कार्यकलापों का शाला जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। जो शिक्षण-विधियाँ और क्रियात्मक अभ्यास प्रशिक्षण महाविद्यालयों में दिया जाता है उनका शालाओं मे प्रयोग नहीं होता। परन्तु विचार विमर्श के पश्चात् यही विचार धारा सामने आई कि प्रशिक्षण महाविद्यालयों द्वारा प्रतिपादित शिक्षण विधियाँ और शालाओं मे प्रयुक्त शिक्षण विधियाँ कोई दो चीजे नहीं हैं। प्रशिक्षण महाविद्यालयों और शालाओं के कार्यों में जो अन्तर दिखाई पड़ता है उसका कारण शाला के वातावरण की सीमाएँ है। प्रशिक्षण महाविद्यालयों की विधियों और अभ्यासों के साथ कोई बुराई नहीं है।[1]

कुछ लोगों का यह भी मत है कि प्रशिक्षण विधियों से शालाओं का पाठ्यक्रम समाप्त नहीं किया जा सकता है। हमारा इस धारणा के प्रति निश्चित विरोध है क्योंकि यदि शिक्षण विधियों को ठीक प्रकार समझा जाये और उचित ढग से प्रयोग किया जाये तो निश्चित समय में पाठ्यक्रम समाप्त करने मे कोई कठिनाई नहीं होगी। यदि शाला का अध्यापक शिक्षण विधियों के प्रति पूर्ण रूपेण जागरुक हो और अपने व्यावसाय के प्रति वफादार हो तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता कि अध्यापक के मार्ग मे कोई बाधा आये। अतः इस समस्या का एक ही समाधान है कि प्रशिक्षण महाविद्यालयों के विद्यार्थियों में और सकारात्मक और उचित अभिवृत्ति विकसित की जाये जिससे वे प्रशिक्षण काल में प्रयुक्त विधियों को ठीक प्रकार समझ सकें।

इसी समस्या के सदर्भ में एक बाधा यह बताई जाती है कि महाविद्यालयों मे बहुत लम्बी योजनाएँ बनाई जाती हैं जो शाला के अध्यापक द्वारा सम्भव नहीं

1. Report of the conference of Teacher Educators held at Regional college of Education, Ajmer, November 8 to 10, 1968, *Problems of Teacher Education* Extension Services Dept. p 14

हैं। परन्तु इस बाधा के उत्तर में हमारा यही नम्र निवेदन है कि प्रारम्भ में लम्बी *पाठ योजनाएँ बनाना सिद्धान्तों* को समझने के लिए नितान्त आवश्यक है, परन्तु जब पाठ योजना के आधार भूत सिद्धान्तों का ज्ञान हो जाये तो छोटी पाठ योजनाएँ ही पर्याप्त हैं। यदि इसी तथ्य को और स्पष्ट किया जाये तो यह कहा जा सकता है कि पाठ योजना का उद्देश्य शिक्षण को वैज्ञानिक और विधिवत बनाना है। पाठ योजना लम्बी हो, छोटी हो अथवा न हो यह कोई विवादास्पद प्रश्न नहीं है।

अन्त में इस सम्पूर्ण समस्या का समाधान इस प्रकार किया जा सकता है कि व्यवहार और सिद्धान्त को विकसित सत्ताओं के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए, सिद्धान्त व्यवहार का पथ-प्रदर्शन करे और व्यवहार सिद्धान्त को निरन्तर सुधारे।[1]

अध्यापकों का सामाजिक, आर्थिक और व्यावसायिक स्तर
Social, Economic and Professional Status of Teachers

कोठारी आयोग ने अत्यन्त ही बलपूर्वक यह सुझाव दिया है कि शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए और प्रतिभाशाली व्यक्तियों को आकर्षित करने के लिए शिक्षकों के सामाजिक, आर्थिक और व्यावसायिक स्तर को सुधारना नितान्त आवश्यक है। यदि हमें अपने देश की शिक्षा को कारगर बनाना है तो प्रतिभाशाली नवयुवकों को आमन्त्रित करना होगा और यह तभी सम्भव है जबकि उनकी स्थिति को सुधारा जाये।

जब हम अपने देश की स्थिति को देखते हैं तो हमें *यही आभास होता* है कि इस देश का अध्यापक सबसे अधिक गरीब प्राणी है और यही कारण है कि प्रतिभाशाली व्यक्ति इस व्यवसाय की ओर आकर्षित नहीं होते। प्रो० सैयदेन के शब्दों में 'शिक्षण अभी भी आकर्षणहीन व्यवसाय है और इसलिए अधिकतर व्यक्ति इसे अन्तिम आश्रय के रूप में स्वीकार करते हैं।' यही कारण है कि अध्यापक की सामाजिक स्थिति इतनी शोचनीय हो गई है कि आज उसे आदर की दृष्टि से नहीं देखा जाता। संक्षेप में अध्यापकों के स्तर की स्थिति निम्नलिखित है:—

*सामाजिक स्तर (Social Status). —आज समाज में अध्यापक की कोई स्थिति नहीं है यहाँ तक कि आज शिक्षित लड़कियाँ एक अध्यापक से शादी तक करने में आनाकानी करती हैं। इसका एकमात्र कारण है अध्यापक की *हीन सामाजिक दशा*। आज का युग आर्थिक युग है और आर्थिक युग में पूँजीपतियों का साम्राज्य होता है। अध्यापक तो जन्म से ही गरीब है अतः उसके सम्मानित होने का तो प्रश्न ही नहीं

---

1. Practice and theory must both be visualized as growing entities : theory illuminating practice, practice constantly modifying theory.
   K G. Saiyidan, *op. Cit.*, p 314

सायिक प्रशिक्षण की नितान्त आवश्यकता है और इसी प्रशिक्षण के द्वारा एक वांछित दृष्टिकोण विकसित होता है। इस पर प्रशिक्षण महाविद्यालयों पर यह आरोप लगाना कि उनके कार्यक्रमों का शाला कार्यों से कोई सम्बन्ध नहीं है, आशिक रूप अनुचित सा प्रतीत होता है। प्रशिक्षण महाविद्यालयों द्वारा जो भी सैद्धान्तिक और व्यावहारिक शिक्षा प्रदान की जाती है, वह आदर्श है और उस आदर्श के अनुरूप शाला कार्यों का होना नितान्त आवश्यक है।

पिछले वर्ष क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय, अजमेर में 'अध्यापक शिक्षा की समस्याओं' पर नवम्बर 8, 1968 से एक गोष्ठी का आयोजन किया गया था जिसमें 10 प्रतिनिधियों ने भाग लिया जो सभी प्राचार्य अथवा प्राध्यापक थे। अध्यापक शिक्षा की अन्य समस्याओं के साथ इस समस्या पर भी विचार किया गया कि प्रशिक्षण महाविद्यालय के कार्यकलापों का शाला जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। जो शिक्षण-विधियाँ और क्रियात्मक अभ्यास प्रशिक्षण महाविद्यालयों में सिखाया जाता है उनका शालाओं में प्रयोग नहीं होता। परन्तु विचार विमर्श के पश्चात् यही विचार धारा सामने आई कि प्रशिक्षण महाविद्यालयों द्वारा प्रतिपादित शिक्षण विधियाँ और शालाओं में प्रयुक्त शिक्षण विधियाँ कोई दो चीजें नहीं हैं। प्रशिक्षण महाविद्यालयों और शालाओं के कार्यों में जो अन्तर दिखाई पड़ता है उसका कारण

उठता। आज का समाज अध्यापक से लेना तो बहुत कुछ चाहता है परन्तु उसे देने के लिए समाज दिवालिया हो चुका है। इस पर भी समाज की उँगलियाँ आज के अध्यापक पर उठी हुई हैं, उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वह आदर्श हो, चरित्रवान हो समाज का पथप्रदर्शक हो और न जाने क्या आशायें हैं इस समाज को। यदि समाज से अध्यापक के लिए कुछ माँगा जाये तो उसके पास सहानुभूति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

*आर्थिक स्तर (Economic Status) —हमारे देश में अध्यापक का आर्थिक स्तर निकृष्ट है। प्राथमिक शाला का अध्यापक तो उन गरीब प्राणियों में से है जिसे सौ रु० मासिक भी नहीं मिलते। राजकीय प्राथमिक शालाओं के अध्यापक को तो फिर भी कुछ पैसा मिल जाता है परन्तु प्राईवेट प्राथमिक शालाओं के अध्यापक से लिखाया कुछ और जाता है और दिया कुछ जाता है। माध्यमिक शालाओं के अध्यापकों का भी यही हाल है। देश के अनेकों राज्यों में प्राइवेट शालाओं की अधिकता है जिसके कारण उनका शोषण स्वाभाविक है, उनके लिए न तो प्राईवेट फण्ड की व्यवस्था है और न ही चिकित्सा भत्ता मिलता है। कॉलेजों के अध्यापकों की दशा भी बहुत कुछ वैसी ही है। देश में राजकीय महाविद्यालयों की सख्या तो बहुत कम है, अधिकतर महाविद्यालय प्राईवेट संस्थानों द्वारा ही चलाये जाते हैं और उनका स्वरूप विद्या-मन्दिरों के स्थान पर दुकानों का हो जाता है जिनका उद्देश्य मुनाफे के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। विश्वविद्यालयों द्वारा भी इस प्रकार के महाविद्यालयों को प्रोत्साहन मिलता है जिसके कारण अध्यापकों के समक्ष चुपचाप पेट पालने के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं रहता।

*व्यावसायिक स्तर (Professional Status)—आज का अध्यापक जब कुछ वर्षों के सेवाकाल में इस वास्तविकता से परिचित हो जाता है कि अध्यापन व्यावसाय में किसी भी प्रकार की भावी प्रगति की सम्भावना नहीं है तो वह भी इस व्यावसाय के प्रति उदासीन हो जाता है। जो अध्यापक जीवन भर मानसिक कार्य करता है, एक सप्ताह में सामान्यतया चालीस घण्टा कार्य करता है, देश के भावी नागरिकों को अपने व्यावसायिक श्रम द्वारा आदर्श स्वरूप प्रदान करता है—जब यही अध्यापक अपनी तुलना समाज में छोटे-छोटे व्यावसायिक और कम शिक्षित लोगों से करता है तो उसे भग्नाशा होना स्वाभाविक है। व्यावसायिक दृष्टि से

भारत में अध्यापक का व्यवसाय सामान्यतया उसी स्थान पर है जैसा कि अन्य प्रगतिशील देशों में। परन्तु भारतीय अध्यापक को भारतीय संस्कृति और परम्पराओं के संदर्भ में अपने व्यावसायिक उत्तरदायित्वों के प्रति जागरूक होने की आवश्यकता है। परन्तु परिवर्तित सामाजिक परिस्थितियों को देखते हुए यह आवश्यक है कि अध्यापकों के स्तर को ऊँचा उठाया जाये।

अध्यापकों के स्तर को विकसित करने की आवश्यकता
Need for Improving the Status of Teachers

जैसा कि हम पिछले पृष्ठों में स्पष्ट कर चुके हैं कि समस्त मान्यताओं को स्वीकार करते हुए भी अध्यापकों के स्तर को ऊँचा उठाने की बहुत आवश्यकता है। सन् 1953 में माध्यमिक शिक्षा आयोग ने सुझाव दिया था कि 'शैक्षिक पुनर्निर्माण अध्यापक, उसके व्यक्तिक गुणों, शैक्षिक योजनाओं, व्यावसायिक प्रशिक्षण और शाला तथा समाज में उसके उसके स्थान पर निर्भर करता है'। परन्तु हम इस तथ्य से बहुत दुखित है कि अध्यापक का सामाजिक स्तर, उसके वेतन क्रम, और सामान्य सेवा दशाएँ अत्यन्त ही असन्तोषप्रद हैं।' 'हम इस तथ्य से भी सहमत हैं कि यदि अध्यापक की शोचनीय दशा और भग्नाशा को दूर किया जाये तो शिक्षा राष्ट्र निर्माण की महत्वपूर्ण क्रिया हो सकती है, परन्तु इसके लिए अध्यापक के स्तर को उन्नत करना होगा और उसकी सेवा दशाओं में सुधार लाना होगा।'

भारतीय शिक्षा आयोग (1964-66) ने अध्यापक की आर्थिक, सामाजिक और व्यावसायिक स्थिति का सावधानी पूर्वक अध्ययन कर निम्नलिखित सुझाव दिये हैं:—

भारतीय शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग) की सिफारिशें
Recommandations of India Education Commission (Kothari)

वेतन-क्रम
Pay Scales

1. सरकार द्वारा विद्यालय-शिक्षकों का न्यूनतम वेतन निर्धारित किया जाये।
2. केन्द्रीय सरकार को राज्य सरकारों और संघीय क्षेत्रों को निर्धारित वेतन-क्रम अथवा उससे अधिक देने में सहायता करनी चाहिए।
3. सरकारी एवं गैर सरकारी शालाओं के अध्यापकों को समान वेतन मिलना चाहिए। अधिक उत्तम हो यदि वेतन क्रम में शीघ्र समानता लाई जाये। परन्तु यदि कारणवश यह सम्भव न हो तो पाँच वर्ष में लागू कर दिया जाये।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. All India Association of Training Colleges,
   A Symposium on Teacher Education in India, Indian Publications, 1964
2. ....
   Report of the Study Group on the Education of Secondary Teachers in India, 1964
3. Dsouza & Chatterji,
   Training for Teaching in India & England.
4. Hodenfield, G K & Stinett, T. M.
   Education of Teacher, Conflicts and Consensus, Prentide Hall, England Cliffs, 1961
5. Jaffreys, M V. C.
   Revolution in Teacher Training, Pitman and Sons, London, 1961
6. Kabir, H.
   Trends in Soviet Education, Ministry of Education, New Delhi.
7. Ministry of Education,
   Report of the Study Group of the Training of Elementary Teachers in India, 1963
8. ....
   Teachers in India To day, 1957
9. Menon, T K N and Kaul, G N.
   Experiments in Teacher Training, Ministry of Education, New Delhi
10. Mukerji, S N
    Education in India, To-day & Tomorrow, Acharya Book Depot, Baroda
11. *Report of Secondary Education Commission, 1952-53*
12. *Report of Indian Education Commission*, 1966
13. *Report of University Commission*, 1948
14. Safaya R. N.
    Current Problems in Indian Education, Dhanpat Rai & sons, Delhi, 1968
15. Saiyidain, K. G
    Problems of Educational Reconstruction, Asia Publishing House, Bombay, 1962.
16. Shrimali, K. L.
    Better Teacher Education

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. 'A real education is not so much a matter of lessons to be learnt and memorised as of a life to be lived and purposeful activities to be shared.'

University Education Commission

What do yon know about the changing Concept of teacher education in the light of above statement

2. Inprovement in school work mainly depends upon the improvement of the teaching personnel' Discuss and suggest way and means for bringing about the much needed improvement among the teaching personnel in schools

What are the major ills from which teacher education in your state is suffering ! How can these be rectified

(P. U, 1968)

3. What do yon know about intial and in service teacher education ?

What type of inservice training should be given to the teachers for the professional growth ?

4. What are the professional preparation of teachers for various levels ?

5. 'Their Knowledge of theory and their school room practices remain confined in two water—tight compartments instead of mutually enriching and interpreting each other.'

K. G Saiyidain.

Discuss the above statement in the training programme and school work.

6. What do you know abont the Social, Economic and Professional status of teachers. What measures do yon suggest for improving the status of teachers.

अध्याय चौदह
Chapter Fourteenth
प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा
Technical and Vocational Education
अध्ययन बिन्दु
Learning Points

* 14.01 प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा के सिद्धान्त और उद्देश्य
  Principles and Aims of Technical and Vocational Education
  1. मानवीय श्रम की महत्ता
  2. शारीरिक एवं मानसिक दोषयुक्त व्यक्तियों की सहायता करना
  3. समाज के परिवर्तित स्वरूप में तकनीकी ज्ञान आवश्यक
* 14.02 स्वतन्त्र भारत में प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा
  Technical & Vocational Education in Free India
  - विभिन्न आयोग और प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा
    - विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग 1948
    - माध्यमिक शिक्षा आयोग 1953
    - भारतीय शिक्षा आयोग 1964–66
  - प्राविधिक शिक्षा का प्रसार
* 14.03 व्यावसायिक संस्थाएँ और उनकी प्राविधिक शिक्षा हेतु महत्ता
  Vocational Biased Institution & Their Importance for Technical Education
  - (अ) व्यावसायिक और प्राविधिक संस्थाएँ और उनके पाठ्यक्रम
    1. व्यावसायिक और औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाएँ
    2. डिप्लोमा प्रदान करने वाली संस्थाएँ
    3. डिग्री प्रदान करने वाली संस्थाएँ

4. स्नातकोत्तर और अनुसंधान सुविधाएँ प्रदान करने वाली संस्थाएँ
5. भारतीय शिल्प विज्ञान संस्थान और उनके पाठ्य विषय
6. विज्ञान मन्दिर

(ब) प्राविधिक संस्थाओं का प्रशासन

* 14 04 प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा की समस्याएँ

Problems of Technical & Vocational Education

1. मानवशक्ति का उपयोग
2. प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा में भिन्न व्यवस्थाओं की कमी
3. व्यावहारिक प्रशिक्षण मे उद्योगों के सहयोग की कमी
4. अध्यापकों की समस्याएँ
5. पाठ्य पुस्तकों का अभाव
6. उच्चतर माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की कमी
7. राज्यों में पारस्परिक सहयोग की कमी
8. अनुसंधान की कमी
9. सैद्धान्तिक और व्यावहारिक शिक्षा मे असन्तुलन

* 14.05 विदेशों मे प्राविधिक शिक्षा

Technical Education in Foreign Countries

जर्मनी में प्राविधिक शिक्षा

प्राविधिक शिक्षा व्यवस्था

व्यावसायिक निर्देशन की सुविधाएँ

रूस में प्राविधिक शिक्षा

प्राथमिक व्यावसायिक प्रशिक्षण

माध्यमिक व्यावसायिक प्रशिक्षण

प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा

TECHNICAL AND VOCATIONAL EDUCATIO.

किसी भी राष्ट्र की समृद्धि मानवीय तथा भौतिक स्रोतों की उपलब्धि
निर्भर करती है। उद्योगीकरण हेतु मानवीय स्रोतों का प्रयोग विज्ञान की शिक्षा
तकनीकी कौशल के प्रशिक्षण की मांग करता है। उद्योग द्वारा व्यक्ति की आव
की पूर्ति होती है। भारतवर्ष की मानवशक्ति आधुनिक विश्व में तभी योग प्रदान
सकती है जबकि उसको प्रशिक्षित कर दिया जाये।[1]

14.01 प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा के सिद्धांत और उद्देश्य

Principles & Aims of Technical and Vocational Educat

प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा के निम्नलिखित सिद्धांत और उद्देश्य हैं

1. मानवीय श्रम की महत्ता
Dignity of Manual Labour

तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा, सभी स्तरों पर मानवीय श्रम की महत्

---

1. The wealth and prosperity of a nation depends on th
effective utilization of its human and material resources throug
industrialization. The use of human material for industrilization
demands its education in science and training in technical skills
Industry opens up possibilities of great resources of manpower ca
only become an asset in the modern world, when trained an
educated.

Report of Indian Education Commission, 1966, p. 369.

ान करती है तथा वर्तमान उद्योगीकरण प्रक्रिया में मानवीय श्रम के स्थान को श्चित करती है।

2. शारीरिक एवं मानसिक दोषयुक्त व्यक्तियों की सहायता करना
To Help Physically and Mentaly Handicapped Persons

प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा का उद्देश्य उन व्यक्तियों की सहायता रना भी है जो मन्द बुद्धि है अथवा शारीरिक दोषों से युक्त है। दोषयुक्त मानव क्ति की सहायता करना सम्पूर्ण मानव समाज की सेवा है। शारीरिक अथवा किन्हीं षों से युक्त व्यक्तियों को साधारण कार्यों का प्रशिक्षण देकर समाज में व्यवस्थित या जा सकता है।

3. समाज के परिवर्तित स्वरूप में तकनीकी ज्ञान आवश्यक
Necessity of Technical Knowledge for Changing Nature of Society

समाज के परिवर्तित स्वरूप के कारण तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा की आवश्यकता है। इसके लिए केवल मात्र सामान्य ज्ञान ही आवश्यक नहीं है बल्कि विशेष वैज्ञानिक ज्ञान का विकास होना आवश्यक है। समाज के परिवर्तित स्वरूप के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाएँ अधिक से अधिक प्रदान की जाये जिससे अधिकतम तकनीकी विशेषज्ञ, अभियन्ता तथा हस्तकौशल प्राप्त विशेषज्ञों को प्रशिक्षण प्रदान किया जा सके। इसके लिए आवश्यक है कि नवीन शिक्षण विधियों पर अनुसन्धान किये जायें और भारत में अधिक से अधिक सम्बन्धित शिक्षण संस्थाएँ खोली जायें।

14.02 स्वतंत्र भारत में प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा
Technical & Vocational Education in Free India

स्वतन्त्रता के पश्चात देश में औद्योगिक विकास के लिए क्रमिक प्रयत्न हुए जो देश की प्रगति के लिए स्वाभाविक थे। स्वतन्त्रता से पूर्व देश में प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा की बहुत कम सुविधाएँ थीं। सन् 1947 में सम्पूर्ण देश में केवल 38 डिग्री संस्थान थे जिनमें कुल 2,940 छात्रों के प्रवेश की व्यवस्था थी। देश में कुल 53 पॉलिटेकनिक संस्थाएँ थी जिनमें केवल 3,670 विद्यार्थियों की क्षमता थी। परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात देश के औद्योगिकरण हेतु यह अनुभव किया गया कि व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाओं को बढ़ाना नितान्त आवश्यक है। अतः सन् 1948 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने सर्वप्रथम प्राविधिक शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार करते हुए व्यावसायिक शिक्षा के विषय में लिखा कि व्यावसायिक

शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा पुरुष एवं स्त्रियाँ व्यावसायिक भावना के साथ परिश्रम एवं उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य करने के लिए प्रेरित होते हैं।[1]

विभिन्न आयोग और प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा
Different Commissions and Technical & Vocational Education

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (राधाकृष्णनन कमीशन) ने प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये—

1. कृषि-विद्यालयों को आर्थिक सहायता दी जाये।
2. कृषि पाठ्यक्रम में सामान्य शिक्षा, आधारभूत विज्ञान, कृषि और पशु-पालन को समाविष्ट किया जाये।
3. 'इण्डियन काउंसिल आफ एग्रीकल्चरल रिसर्च' के साधनों में वृद्धि की जाये और अन्य कृषि अनुसन्धान केन्द्रों के लिए संयोजक का कार्य करे।
4. वाणिज्य शिक्षा में प्रयोगात्मक कार्यों को स्थान देते हुए छात्रों को विभिन्न फर्मों में व्यावहारिक कार्य का प्रशिक्षण दिया जाये।
5. इन्जीनियरिंग और टेक्नालाजी की संस्थाओं को राष्ट्रीय सम्पत्ति मानकर उनकी उपयोगिता को बढ़ाने का प्रयत्न किया जाये।
6. व्यावहारिक शिक्षण हेतु छात्रों को लम्बे अवकाश में कार्य करने दिया जाये एवं स्नातक होने के पश्चात एक वर्ष शिशिक्षु के तौर पर कार्य करें।
7. फोरमैन, ड्राफ्ट्समैन और ओवरसियरों की शिक्षण संस्थाओं को बढ़ाया जाये।
8. प्राविधिक क्षेत्र में अनुसन्धान की सुविधाएं बढ़ाई जायें।

माध्यमिक शिक्षा आयोग (मुदालियर कमीशन) ने तकनीकी शिक्षा के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये—

1. प्राविधिक शालाओं की स्थापना बड़ी संख्या में की जाये।
2. बड़े नगरों में केन्द्रीय प्राविधिक संस्थाओं (Central Technical Institutes) की स्थापना की जाये जो स्थानीय शालाओं की मांगों को पूरा कर सकें।

---

1. *Professional* education is the process by which men and women prepare for exacting responsible service in the professional spirit.

Report of the University Commission, p. 174.

3. प्राविधिक शालाओं की स्थापना यथासम्भव उद्योगों के पास की जाये।

4 उद्योगों पर 'उद्योग-शिक्षा-कर' लगाया जाये। प्राप्त धन को प्राविधिक शिक्षा के विस्तार में लगाया जाये।

भारतीय शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन) 1964-66 ने तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा प्रगति पर अत्यधिक जोर दिया है और भारत सरकार के एक प्रस्ताव द्वारा निम्नलिखित शब्दों मे प्रकाश डाला—

> एक राष्ट्र की समृद्धि और प्रगति उद्योगीकरण द्वारा मानवीय एव भौतिक साधनो के प्रभावशाली उपयोग पर निर्भर है। उद्योगीकरण हेतु मानवीय तत्वों का प्रयोग विज्ञान की शिक्षा और शिल्प कौशल प्रशिक्षण की मांग करता है। भारतीय विशालतम मानवशक्ति आधुनिक विश्व के लिए तभी लाभदायक हो सकती है जबकि उसे प्रशिक्षित और शिक्षित किया जाये।[1]

उपरोक्त कथन के सन्दर्भ मे आयोग ने व्यावसायिक, प्राविधिक और इञ्जीनियरिंग शिक्षा के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

1. औद्योगिक प्रशिक्षण सस्थाओं मे सुविधाओं का अधिक विस्तार किया जाय।
2. औद्योगिक प्रशिक्षण सस्थाओं तथा टेकनिकल शालाओं में उत्पादन कार्यों पर अधिक बल दिया जाये।
3. व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षणार्थ अशकालीन शिक्षा एवं पत्र व्यवहार द्वारा शिक्षा की सुविधाएँ प्रदान की जायें।
4. 1986 तक इञ्जीनियरों और टेकनिशियनों का अनुपात 1 4 कर दिया जाये।
5. औद्योगिक क्षेत्रों मे पालिटेक्निक विद्यालयों की स्थापना की जाये।
6. राष्ट्रीय आवश्यकताओं को ध्यान मे रखकर पालिटेकनिक सस्थाओं के पाठ्यक्रम को चौथी और पाँचवी पचवर्षीय योजनाओं में पुनर्गठित किया जाये।

---

1. The wealth and prosperity of a nation depends on the effective utilization of its human and material resources though industrialization. The use of human material for industrialization demands its education in science and training in technical skills. Industry opens up possibilities of greater fulfilment for the individual. India's enormous resources of manpower can only become an asset in the modern world, when trained and educated.

Science Policy Resolution Government of India, March 4, 1958.

इन्जीनियरिंग पाठ्यक्रमों जैसे विद्युत, अणुसम्बन्धी (Eletronics) और उपकरण सम्बन्धी (Instrumentation) शिक्षा हेतु प्रतिभाशाली बी० एस० सी० उत्तीर्ण छात्रों को चुना जाये।

वर्कशाप प्रेक्टिस (Workshop Practice) में उत्पादन कार्य पर बल दिया जाय।

रसायनिक प्रौद्योगिकी (Chemical Technology) विमान-विद्या (Aeronautics), नक्षत्र विज्ञान (Astronautics) आदि पाठ्यक्रमों को विकसित किया जाये।

धिक शिक्षा का प्रसार

pansion of Technical Education

कि हम पहले कह चुके है कि 1947 मे केवल 6,600 विद्यार्थियों के यिक और तकनीकी शिक्षा देने के साधन थे परन्तु 1963 मे 4,35,706 लिए इस शिक्षा की व्यवस्था कर दी गई। 1966 मे इन्जीनियरिंग त डिग्री हेतु 25,000 तथा डिप्लोमा हेतु 49,000 विद्यार्थियों को सुविधाएँ थी।

1966–67 मे 137 संस्थाएँ डिग्री स्तर पर इन्जीनियरी और शिल्प पाठ्यक्रम चला रही थी और 284 संस्थाएँ डिप्लोमा स्तर के पाठ्यक्रमों थी। इन दोनों प्रकार की संस्थाओं मे प्रविष्ट छात्रों की वास्तविक 24,934 और 46,461 थी। इन संस्थाओं से स्नातक बाहर छात्रों की कुल संख्या 13,051 और डिप्लोमा प्राप्त छात्रों की संख्या

गारी की भीषण स्थिति के कारण भावी प्रसार हेतु कोई विचार नहीं है। वर्तमान स्थिति में उपाधि (डिग्री) और डिप्लोमा स्तर की की सुविधाओं के लिए तब तक योजना नहीं बनाई जायगी जब तक पंचम पंचवर्षीय योजनाओं की [illegible] शिक्षा और तकनीकी योज- [illegible] शिक्षा और तकनीकी कर्मियों के लिए उनकी मांगों का पता। खनन उद्योग में रोजगार के अवसरों की कमी के कारण 1967– और डिप्लोमा स्तर पर खनन पाठ्यक्रमों में दाखिलों की संख्या बहुत है।

[illegible]

तालिका नं० 14.1

भारतीय शिल्प विज्ञान संस्थान

स्थानों के नाम	पूर्वस्नातक स्तर 1967 में प्रविष्ट छात्र	छात्रों की कुल संख्या	संस्थान से निकले छात्रों की संख्या		
			प्रथम उपाधि	स्नातकोत्तर	डाक्टर उपाधि
बम्बई	371	2,145	304	161	5
दिल्ली	270	1,607	199+8 (डिप्लोमा)	19	4
कानपुर	320	1,802	70	28	11
खड़गपुर	451	2,628	387	208	29
मद्रास	354	1,718	259	50	12

इन्जीनियरिंग कालिजों और पालिटेक्निक संस्थाओं की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है जिससे अधिक विद्यार्थियों को प्राविधिक शिक्षा की सुविधाएँ प्राप्त हुई हैं। सन् 1950-51 में डिग्री पाठ्यक्रम हेतु केवल 49 महाविद्यालय थे और 1965-66 में यह संख्या बढ़कर 117 हो गई। पालिटेक्निक संस्थानों की संख्या 1950-51 में 86 थी जो 1965-66 में बढ़कर 263 हो गई। छात्रों की संख्या में भी उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। तालिका नं० 14.2 में इस स्थिति को स्पष्ट किया गया है।

तालिका नं० 14 2

इन्जीनियरिंग कालिजों और पालिटेक्निक संस्थाओं की संख्या

1950-51 से 1965-66

वर्ष	डिग्री पाठ्यक्रम			डिप्लोमा पाठ्यक्रम		
	संस्थाओं की संख्या	प्रवेश क्षमता	निकासी	संस्थाओं की संख्या	प्रवेश क्षमता	निकासी
1950-51	49	4,120	2,200	86	5,900	2,480
1955-56	65	5,890	4,020	114	10,480	4,500
1960-61	100	13,860	5,700	196	25,570	8,000
1965-66	117	19,140	12,000	263	37,390	19,000

14.3 व्यावसायिक संस्थाएं और उनकी प्राविधिक शिक्षा हेतु महत्ता
Vocational Biased Institutions & Their Importance For Technical Education

(अ) व्यावसायिक और प्राविधिक संस्थाएं और उनके पाठ्यक्रम
Vocational & Technical Institutions And Their Courses

इस समय हमारे देश में सामान्यता चार प्रकार की संस्थाएं हैं जो इस प्रकार हैं—

1. व्यावसायिक और औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाएं
Vocational & Industrial Training Institutions

यह प्रशिक्षण कुशल और अर्द्धकुशल कार्यकर्त्ताओं को दिया जाता है। इनके लिए दो प्रकार की संस्थाएं हैं प्रथम कला एवं उद्योग शालाएं, द्वितीय प्राविधिक एवं औद्योगिक शालाएं। कला एवं उद्योग शालाओं में किसी उद्योग अथवा लघु-उद्योगों का प्रशिक्षण दिया जाता है। दूसरे प्रकार की शालाओं में विभिन्न कौशल और हस्त कार्यों को विकसित किया जाता है। इन संस्थाओं का उद्देश्य नवयुवकों को कुशल कार्यकर्त्ता बनाना है।

2. डिप्लोमा प्रदान करने वाली संस्थाएं
Institutions Giving Diplomas

डिप्लोमा प्रदान करने वाली संस्थाओं को पालिटेक्निक कहा जाता है। इन संस्थाओं में अध्ययन समाप्त करने के पश्चात नवयुवकों को फोरमैन, ओवरसियर आदि नौकरियां प्राप्त होती हैं। प्रशिक्षण काल तीन वर्ष का होता है और प्रवेश के लिए न्यूनतम योग्यता हाई स्कूल है। इनमें सिविल, मेकेनिकल और इलेक्ट्रिकल इन्जीनियरिंग की शिक्षा प्रदान की जाती है। कुछ पालीटेक्निकों में टेक्सटाइल टेक्नालाजी, चर्म टेक्नालाजी, खनन इन्जीनियरिंग की भी शिक्षा दी जाती है। पिछले वर्षों से कुछ पालीटेक्निक महिलाओं के लिए भी खोले गए हैं।

3. डिग्री प्रदान करने वाली संस्थाएं
Institutions Imparting Degree Courses

प्रथम स्नातक पाठ्यक्रम का कार्यकाल सामान्य रूप से चार वर्ष होता है जिसके प्रवेश हेतु न्यूनतम योग्यता इन्टरमीडिएट है। कुछ टेक्नालाजीकल संस्थाओं के स्नातक पाठ्यक्रम तीन वर्ष का भी है। इस स्नातक पाठ्यक्रम में सिविल, मेके-निकल और इलेक्ट्रिकल इन्जीनियरिंग, इलेक्ट्रॉनिक कोम्युनिकेशन (Communi-cation) इन्जीनियरिंग, केमिकल इन्जीनियरिंग, टेक्सटाइल इन्जीनियरिंग, कृषि

(Automobile) इन्जीनियरिंग

और एरोनाटीकल (Aeronautt.cal) इन्जीनियरिंग आदि में प्रथम स्नातक डिग्री अथवा इसके समकक्ष डिग्री प्रदान की जाती है।

4. स्नातकोत्तर और अनुसन्धान सुविधाएं प्रदान करने वाली संस्थाएं
Institutions Imparting Post-graduate & Research Facilities

पहले हमारे देश में स्नातकोत्तर सुविधाओं का पूर्णरूपेण अभाव था। आल इण्डिया कौंसिल फार टेक्नीकल एजूकेशन ने इसके लिए एक विशेष समिति का गठन किया जिसका मूल उद्देश्य देश में वांछित सुविधाओं को देखते हुए स्नातकोत्तर शिक्षा हेतु महत्वपूर्ण सुझाव देना था। समिति के सुझावों के अनुसार 30 संस्थाओं को स्नातकोत्तर विषयों में हाई वे इन्जीनियरिंग (High Way Engineering), बांध, निर्माण, फाउन्डेशन इन्जीनियरिंग (Foundation Engineering), प्रोडेक्शन टैक्नालाजी (Production Technology), केमीकल इन्जीनियरिंग (Chemical Engineering), जिओफिजिक्स (Geophysics) आदि का अध्ययन होता है।

स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम के पश्चात अनुसन्धान कार्य की सुविधाएं भी प्रदान की जाती हैं। अनुसन्धान कार्य पर सामान्यता पी० एच० डी० अथवा डी एस सी. की उपाधि प्रदान की जाती है।

5. भारतीय शिल्पविज्ञान संस्थान और उनके पाठ्य विषय
Indian Institutes of Technology & Their Courses

इन संस्थानों का निर्माण देश की आवश्यकताओं के आधार पर किया गया था। सामान्य पाठ्यक्रम के अतिरिक्त निम्नलिखित स्थानों पर शिल्प विज्ञान स्थानों में नवीन स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम भी आरम्भ कर दिये हैं जो इस प्रकार हैं—

बम्बई—संगणक शिल्पविज्ञान (Computor Technolgy), वायुयान उत्पादन शिल्पविज्ञान प्रणोदन (Air Craft Production Technology Propultion)।

दिल्ली—कंक्रीट निर्माण कार्य और शिल्पविज्ञान, वस्त्र इन्जीनियरी (Textile Engineering), अभिकल्प इन्जीनियरी (Design Engineering), मध्यात्मक विश्लेषण, स्वचालित संगणन (Automatic Computing) आदि।

कानपुर—वैमानिक इन्जीनियरी (Aeronauttical Engineering), सिविल और यान्त्रिक इन्जीनियरी आदि।

खड़गपुर—मास्टर आफ टेक्नालाजी इन माइनिंग, मास्टर आफ रीजनल प्लानिंग, विद्युत कर्षण और दुग्धशाला इन्जीनियरी आदि।

होना चाहिए जिसमे व्यावसायिक संगठनों, उद्योग और सम्बन्धित मन्त्रालयों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए ।

2. यह संगठन योजना आयोग और जनबल अनुसन्धान संस्थान (Institute of Applied Manpower Research) के सहयोग से कार्य करे ।

3. सभी राज्यों मे प्राविधिक शिक्षा निदेशालयों (Directorate of Technical Education) की स्थापना की जाये । इन निदेशालयो को *शिक्षकों की नियुक्ति एवं संस्थाओं के संचालन तथा नियन्त्रण का पूर्ण* अधिकार होना चाहिए ।

4. क्षेत्रीय इन्जीनियरिंग विद्यालयों (Regional Engineering Colleges) के बोर्डस आफ गवरनर्स के अध्यक्ष पद पर शिक्षा शास्त्री की नियुक्ति होनी चाहिए ।

5. संस्थाओं के प्राचार्यों को अपनी संस्थाओं मे शैक्षिक सुविधाओं के सम्बन्ध में पूर्ण अधिकार प्रदान किये जाने चाहिए ।

14.04 प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा की समस्याएं
Problems of Technical & Vocational Education

भारतवर्ष मे तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात भारत सरकार ने इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाये हैं परन्तु इस क्षेत्र मे कुछ समस्याओं के कारण हम निश्चित लक्ष्यों को प्राप्ति करने मे असफल रहे हैं । यद्यपि यह सही है कि अखिल भारतीय प्राविधिक शिक्षा परिषद्, 1945 (All India Council for Technical Education), वैज्ञानिक मानवशक्ति समिति, 1947 (Scientific Manpower Committee), *स्नातकोत्तर इन्जीनियरिंग शिक्षा और अनुसन्धान समिति, 1961* (Postgraduate Engineering Education and Research Committee) आदि के द्वारा महत्वपूर्ण सुझाव दिये गये और प्राविधिक शिक्षा के प्रसार हेतु अथक प्रयत्न भी किये गये तथापि इस क्षेत्र में बहुत कुछ करना शेष है । प्राविधिक शिक्षा की प्रगति देश की प्रगति है । जब हम अन्य प्रगतिशील देशों की ओर देखते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि हमारी प्रगति उनके सम्मुख कुछ भी नहीं है । इसका स्पष्ट अर्थ है कि हमे अभी बहुत कुछ करना शेष है परन्तु यह तभी सम्भव होगा जबकि हम उन समस्याओं का निराकरण कर सकेंगे जो व्यावसायिक और प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र मे हैं । समस्याओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

1. मानवशक्ति का उपयोग
Utilization of Man Power

हमारे देश में प्राविधिक मानव शक्ति की नितान्त आवश्यकता है । यद्यपि

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत बड़े कारखानों एवं व्यावसायिक प्रादेशिक संस्थाओं, औद्योगिक [illegible] की प्रगति की स्थापना की गई। [illegible] योजना प्रारम्भ होने से पूर्व छात्रों की [illegible] की गई। [illegible] अधिक वृद्धि हुई। तृतीय पंचवर्षीय योजना में 117 इंजीनियरिंग [illegible] पालीटेक्निक हो गए और इनमें (क्रमशः) [illegible] मजदूरों की संख्या 11800 और 18000 हो गई, फिर भी देश की आवश्यकतानुसार यह [illegible] बहुत कम थी।

परन्तु पिछले वर्षों से समाचार पत्रों में यह देखने को मिल रहा है कि शिक्षित [illegible] न [illegible] स्नातकों की संख्या आवश्यकता से [illegible] क्योंकि स्नातकों को नौकरी की सुविधाएँ प्राप्त नहीं हो पा रही हैं अतः आवश्यकता इस बात की है कि प्राप्त मानव शक्ति का सदुपयोग कर भविष्य के लिए [illegible] कार्यक्रम बनाए जाएँ। इससे सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि मजदूरों में मन[illegible] नहीं होगी और माता-पिता स्वयं ही अपने बच्चों को प्राविधिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरित करेंगे।

2. प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा में भिन्न व्यवस्थाओं की कमी
Lack of Different Patterns in Technical and Vocational Education

एक ही प्रकार से प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा व्यवस्था से देश का लाभ होना कठिन है। प्रत्येक माता-पिता अपने बालकों को प्राविधिक व्यावसायिक शिक्षा दिलाने में समर्थ नहीं है। इसका प्रमुख कारण आर्थिक कठिनाई है।

अतः इसके लिए नितान्त आवश्यक है कि इस क्षेत्र में शैक्षिक सुविधाओं की भिन्न व्यवस्थाएँ हों। उदाहरणार्थ मजदूरों के लिए सप्ताह में एक दिन के लिए शिक्षा व्यवस्था हो, औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं (Industrial Training Institutions) में विशेष प्रशिक्षण की सुविधाएँ प्रदान कर नियमित रूप से कार्य करने वाले व्यक्तियों को शिक्षण की अन्य सुविधाएँ प्रदान की जायें, पत्र व्यवहार द्वारा व्यावसायिक एवं प्राविधिक शिक्षा की व्यवस्था की जाये और उनके लिए क्रियात्मक शिक्षा की अधिक से अधिक व्यवस्था की जाये।

3. व्यावहारिक प्रशिक्षण में उद्योगों के सहयोग की कमी
Lack of Cooperation of Industries in Practical Training

अभी हमारे देश में व्यावहारिक प्रशिक्षण में उद्योगों के सहयोग की अधिकता नहीं है। हमारे देश की शिक्षा व्यवस्था का सबसे बड़ा दोष यह है कि विद्यार्थियों में सैद्धान्तिक शिक्षा का ज्ञान तो होता है परन्तु व्यावहारिक ज्ञान नहीं होता। संस्थाओं और उद्योगों में काफी अन्तर होता है और यही कारण है कि विद्यालयों से निकलने पर छात्र व्यावहारिक रूप से कार्य करने में असमर्थ रहते हैं।

कोठारी आयोग ने इस समस्या के समाधान स्वरूप लिखा है कि कुछ देशों मे जैसे इंगलैण्ड में औद्योगिक विकास एक्ट के अनुसार उद्योग (Industry) पर प्रशिक्षण सुविधाएँ प्रदान करने के लिए ढाई प्रतिशत कर लगाया जाता है। हमारे देश में इसकी तो आवश्यकता नहीं है परन्तु इसके स्थान पर यह नितांत आवश्यक है उद्योगों द्वारा शिक्षा संस्थाओं को प्रशिक्षण सम्बन्धी सुविधाएँ प्रदान की जाये। उद्योगों और शिक्षा संस्थाओं के प्रतिनिधि समय-समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों पर विचार करें।[1]

4. अध्यापकों की समस्याएँ
Problems of Teachers

जैसा कि हम पहले कह आये हैं कि तीन पंचवर्षीय योजनाओं मे प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा की काफी उन्नति हुई है, परन्तु इन संस्थाओं मे अध्यापकों की अनेकों समस्याएँ हैं। मूल रूप से दो प्रकार की समस्याएँ हैं—

1. अध्यापकों मे व्यावहारिक ज्ञान की कमी।

2. अध्यापकों की कमी।

प्रथम समस्या के समाधान स्वरूप कोठारी आयोग ने सुझाव दिये हैं कि *अध्यापकों को व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने के लिए लम्बी छुट्टियों का प्रयोग करना* चाहिए। पाठ्यक्रम के परिवर्तित स्वरूप और विकासात्मक दृष्टिकोण तथा नवीन ज्ञान के कारण यह नितान्त आवश्यक है कि अध्यापकगण सभी नवीन प्रगतियो से अपने आप को परिचित रक्खें और सम्बन्धित उद्योगों से अपना निकट सम्पर्क बनाये रक्खें इसके अतिरिक्त ग्रीष्मावकाश संस्थानों द्वारा अध्यापकों को नवीन ज्ञान से परिचित किया जा सकता है।

अध्यापकों में कमी की समस्या वास्तव मे बहुत विकट है। जब तक व्यावसायिक और प्राविधिक संस्थाओं मे सभी विषयों से सम्बन्धित अध्यापक नहीं होंगे तब तक सम्बन्धित शिक्षा की प्रगति सम्भव नहीं है। अच्छे अभियन्ताओं और अन्य व्यावसायिक व्यक्तियों का इस ओर आकर्षित न होने का कारण अच्छे वेतन का अभाव है। तालिका नं० 14.3 से यह स्थिति अधिक स्पष्ट होती है कि इन्जीनियरिंग

---

1. This has been a central theme of our recommedations. In some countries such as the U. K. under its recent Industrial Development Act, a leavy of 2¼ per cent of the wage bill is imposed on industry [illegible] In its [illegible] ces & [illegible] train-

Report of the Education Commission, 1966, p. 383

ं और पालीटेक्निकों में कितने स्थान रिक्त पड़े हुए हैं अत. यह आवश्य
ापकों के वेतन मे सुधार किया जाये जिससे रिक्त स्थानों की पूर्ति हो स
ध्यापक वर्ग औद्योगिक छात्रों मे कार्य करने की अपेक्षा प्राविधिक श
यिक संस्थाओं मे कार्य करना पसन्द करें । वेतन मे सुधार के साथ स
ों को अन्य सुविधाएँ भी प्रदान की जाये। इस समस्या का एक समाध
हो सकता है कि शिक्षकों को विभिन्न उद्योगों मे भी आंशिक रूप से का
ी छूट दी जाये।

तालिका न० 14 3

प्राविधिक संस्थाओं में अध्यापकों की कमी[1]

Shortage of Teachers in Technical Institutions

नाम	संस्थाओं की संख्या	अध्यापकों के स्वीकृत स्थान	31.12.63 तक अध्यापकों की संख्या	31 12.63 पर रिक्त स्थान	रिक्त स्थानों का %
			इन्जीनियरिंग कॉलेज		
श	8	351	266	85	24·2
	2	115	54	61	53·0
	6	602	378	224	37·2
	5	223	135	88	39 4
	6	406	249	157	38·6
	9	549	382	167	30 4
	8	296	210	86	29 5
	7	459	267	192	41·8
	8	516	352	164	46 6
	2	190	90	100	52·6
	5	68	68	—	—
	2	188	59	129	68 6
	3	281	124	157	55 9
गाल	11	552	292	260	47·1
	1	22	10	2	16·7
	83	4,808	2,936	1,872	38 9

[1] *Report of the Education Commission,* 1966 p 379.

पालीटेक्निक संस्थाएँ

आंध्र प्रदेश	19	570	472	98	17·2
आसाम	4	110	48	62	56 3
बिहार	11	282	197	115	40 8
गुजरात	11	413	325	88	21 3
जम्मु काश्मीर	1	15	9	6	40 0
केरल	14	428	322	106	24 7
मध्य प्रदेश	13	420	231	189	45 0
महाराष्ट्र	21	568	395	173	30·4
मद्रास	25	625	446	179	28·6
मैसूर	25	536	428	108	20·1
उड़ीसा	6	144	78	66	45 8
पंजाब	10	155	72	83	53 5
राजस्थान	6	114	95	19	16 7
उत्तर प्रदेश	30	489	289	200	40 9
पश्चिमी बंगाल	21	572	367	205	35 8
केन्द्राधीन क्षेत्र					
मणीपुर	1	13	8	5	38 5
त्रिपुरा	1	20	8	12	60 0
पांडीचेरी	1	40	30	10	25 0
हिमाचल प्रदेश	1	15	13	2	13 3
भारत	221	5,529	3,803	1,726	31·2

5. पाठ्य-पुस्तकों का अभाव
Lack of Text Books

विधिक और व्यावसायिक शिक्षा की अन्य समस्या यह भी है कि सम्बन्धित ...का अभाव है। इस समस्या के समाधान हेतु यह नितान्त आवश्यक

है कि अच्छी पुस्तकों का अनुवाद हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाओं में किया जाए। शिक्षा मन्त्रालय इस क्षेत्र में कार्य कर रहा है और अच्छे स्तर की पुस्तकों का अनुवाद भी किया जा रहा है। अमरीका ने पब्लिक ला 480 के अधीन कुछ अच्छी पुस्तकें भारत सरकार को दी हैं और उन्हें कम मूल्यों पर प्रकाशित भी किया गया है।

6. उच्चतर माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की कमी Lack of Vocational Education at Secondary Level

हमारे देश मे उच्चतर माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा की कमी है। कोठारी आयोग[1] ने सुझाव दिया था कि उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विभिन्न प्रकार के पाठ्यक्रमो की व्यवस्था हो तथा वाणिज्य, वैज्ञानिक और औद्योगिक पाठ्यक्रमों की व्यवस्था इसी स्तर के साथ हो। लडकियो के लिए गृह विज्ञान, नर्सिंग और सामाजिक कार्यों की व्यवस्था भी शैक्षिक कार्यक्रमों के साथ होनी चाहिए। माध्यमिक शिक्षा स्तर को व्यावसायिक रूप प्रदान करना आर्थिक दृष्टि से तथा देश की वर्तमान आवश्यकताओं की दृष्टि से बहुत आवश्यक है।

7. राज्यों मे पारस्परिक सहयोग की कमी Lack of Coopertion in Different States

तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा की उन्नति के मार्ग मे एक सबसे बड़ी बाधा यह है कि राज्यों मे पारस्परिक सहयोग की कमी है। इन्जीनियरिंग तथा पालीटेक्निक संस्थाओ मे हडताल होने का यही कारण है। यदि राज्यों मे पारस्परिक सहयोग हो तो विद्यार्थियो के आन्दोलनो को रोका जा सकता है। उदाहरणार्थ राजस्थान के इन्जीनियरिंग स्नातको तथा डिप्लोमा प्राप्त छात्रों को उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश मे नौकरी के लिए भेजा जा सकता है। परन्तु यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि हम अपने को भारतीय न समझ कर प्रान्तीयता की भावना से अधिक प्रभावित हैं और इसी कारण अन्य राज्यों के छात्रों को नौकरी में नहीं लेते जिसके कारण इन संस्थाओं के छात्रों में असन्तोष व्याप्त रहता है। यदि हम तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा को अधिक लोकप्रिय बनाना चाहते हैं तो राज्यों में पारस्परिक [illegible] विकास आवश्यक है।

8. अनुसन्धान की कमी
Lack of Research

देश की वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति न होना और छोटी आवश्यकता
की पूर्ति के लिए विदेशों का मुँह ताकना इसी कारण से है कि हमारे देश में अ
सन्धान की कमी है। इसके लिए आवश्यक है कि विभिन्न राज्यों में अनुसन्धान के
खुलें जिनसे प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा को विशेष रूप प्रदान किया जा सके

9. सैद्धान्तिक और व्यावहारिक शिक्षा में असन्तुलन
Lack of Coordination Between Theoritical and Practi
Education

शिक्षण विधियों की कमी के कारण सैद्धान्तिक और व्यावहारिक शिक्षा
संतुलन का अभाव है। हमारे देश में सैद्धान्तिक पक्ष पर अधिक बल दिया जात
जिसके कारण प्राविधिक शिक्षा पुस्तकीय ही हो जाती है। जबकि अन्य देशों
शिक्षण व्यवस्था औद्योगिक एवं वैज्ञानिक है वहाँ क्रियात्मक पक्ष पर अधिक
दिया जाता है। देश की प्रगति हेतु यह आवश्यक है कि प्राविधिक शिक्षा में क्रि
त्मक अनुभव को अधिक महत्ता प्रदान की जाये जिससे सैद्धान्तिक और व्यावहा
पक्ष में समन्वय और सन्तुलन हो सके।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि हमारे देश में प्राविधिक और व्यावसा
शिक्षा के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है परन्तु फिर भी अनेकों समस्याएँ विद्य
हैं। यदि केन्द्रीय और राज्य सरकारें प्रयत्न करें तो समस्याओं का समा
सम्भव है।

14.05 विदेशों में प्राविधिक शिक्षा
Technical Education in Foreign Countries

किसी भी देश की प्रगति का सही मूल्यांकन तुलनात्मक दृष्टिकोण से
हो सकता है। यदि हम प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र में अपने देश की तुलना
देशों से करें तो पायेंगे कि हमारे देश में बहुत अधिक विकास नहीं हुआ है, इस
मूल कारण यही है कि हमारी प्राविधिक शिक्षा का इतिहास बहुत थोड़े वर्षों
है जबकि इंगलैण्ड, अमरीका, जर्मनी, रूस आदि देशों में प्राविधिक शिक्षा के प्र
काफी पुराने हैं। प्रस्तुत अध्याय में हम जर्मन और रूस की प्राविधिक शिक्षा
अध्ययन करेंगे।

जर्मनी में प्राविधिक शिक्षा
Technical Education in Germany

प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र में जर्मनी बहुत ही विकसित देश है। यद्यपि जर्मनी
दो [illegible] की विभीषिका ने कमजोर किया था तथापि इस देश ने प्राविधिक

के आधार पर पुन. अपने आपको सभाला और विश्व के सम्मुख एक अविस्म
उदाहरण प्रस्तुत किया।

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात जर्मनी को दो भागों में विभाजित किया।
पूर्वी जर्मनी पर साम्यवादियों का प्रभाव है और पश्चिमी जर्मनी पर पूंजीप
का। एक ही देश के दो भाग हो जाने पर भी इस देश ने अपने साहस को।
नहीं है और प्राविधिक शिक्षा के क्षेत्र में उत्तरोत्तर प्रगति ही की है और इ
कारण है कि जो प्राविधिक शिक्षा का स्वरूप इस देश में विद्यमान है, ऐसा अ
कहीं नहीं है। केण्डिल के शब्दों में जर्मनी के अन्तर्गत अनेकों स्तर पर व्यावसा
शालाओं द्वारा विशिष्ट प्रशिक्षण की सुविधाएं प्रदान की जाती हैं। संसा
सम्भवतः जर्मनी के अतिरिक्त कोई भी ऐसा देश नहीं है जो अनेकों प्रकार
व्यावसायिक शालाओं द्वारा इतनी अधिक शिक्षा प्रदान करता हो।[1] जर्मनी में !
18 विश्वविद्यालय हैं, जिनमे से टेक्नीकल होशूल (Technische Hochsc
ules) के अतिरिक्त 8 टेक्नीकल महाविद्यालय हैं। प्राविधिक संस्थाओं में
छात्रों को प्रवेश दिया जाता है जो नौ वर्षीय माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं।

प्राविधिक शिक्षा व्यवस्था
Technical Education Set-up

जर्मनी में प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य एवं नि शुल्क है। अट्ठारह वर्ष तक
लड़के लड़कियों को अनिवार्य एवं नि:शुल्क प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा की
व्यवस्था है। प्राविधिक शिक्षा प्रदान करने के लिए विद्यार्थियों की रुचि, अभिवृत्ति
और योग्यता का विशेष ध्यान रखा जाता है और इसके आधार पर दस वर्ष की
आयु में समस्त विद्यार्थियों को तीन विभिन्न वर्गों में विभाजित कर दिया जाता है।
सामान्य रूप से 80 प्रतिशत विद्यार्थियों को 14 वर्ष की आयु में उच्चतर प्राथमिक
स्तर के पश्चात शिक्षा हेतु उनकी रुचि के अनुसार किसी व्यावसायिक शाला में
प्रविष्ट कर दिया जाता है। शेष 20 प्रतिशत विद्यार्थियों को 1 वर्ष और 19 वर्ष
की आयु के पश्चात क्रमश: प्राविधिक शालाओं और विश्वविद्यालयों में प्रविष्ट कर
दिया जाता है।

की जाती है। विद्यार्थियों की रुचियों और योग्यता के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है और इसे वहाँ की शिक्षा का आवश्यक अंग माना जाता है। व्यावसायिक निर्देशन का सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि वहाँ शिक्षा मे अपव्यय नहीं होता।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि जर्मनी में प्राविधिक शिक्षा की सुविधाएँ प्रायः सभी नवयुवकों और नवयुवतियों को प्राप्त हैं। जो व्यक्ति पूर्णकालीन शिक्षा प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं उन्हें अंशकालीन शिक्षा दी जाती है। इसके अतिरिक्त वहाँ पत्र व्यवहार द्वारा भी शिक्षा प्रदान की जाती है। जर्मनी ही इस प्रकार का देश है जहाँ श्रम की महत्ता को स्वीकार किया जाता है और यही कारण है कि द्वितीय महायुद्ध मे जो देश पूर्णरूपेण ध्वस्त हो चुका था तथा जहाँ चारों ओर विनाश का साम्राज्य था आज वही देश आर्थिक रूप से पूर्णरूपेण सुदृढ़ है।

रूस में प्राविधिक शिक्षा
Technical Education in U. S. S. R.

सोवियत संघ की शिक्षा व्यवस्था का आधार व्यावसायिक प्रशिक्षण है। यहाँ व्यावसायिक प्रशिक्षण को दो भागों में विभाजित किया जाता है।

1. प्राथमिक व्यावसायिक प्रशिक्षण।
2. माध्यमिक व्यावसायिक प्रशिक्षण।

प्राथमिक व्यावसायिक प्रशिक्षण
Primary Vocational Training

सोवियत संघ में प्रशिक्षण का यह कार्य सांस्कृतिक मन्त्रालय के लेबर रिजर्व्स विभाग द्वारा संचालित होता है। इस विभाग का कार्य राष्ट्रीय आवश्यकतानुसार भिन्न प्रकार के कुशल श्रमिक बनाना है। इस उद्देश्य हेतु अनेकों वोकेशनल स्कूल हैं जिनमें ट्रेड स्कूल, रेल्वे स्कूल और औद्योगिक प्रशिक्षण स्कूल सम्मिलित हैं। ट्रेड स्कूलों के द्वारा विशिष्ट व्यवसायों के लिए कुशल श्रमिक तैयार किये जाते हैं। इन स्कूलों के अन्तर्गत प्राथमिक शिक्षा प्राप्त 14 और 15 वर्ष के युवक और युवतियों को प्रवेश पाने का अधिकार होता है। इन स्कूलों में प्रशिक्षण की अवधि दो वर्ष है।

औद्योगिक प्रशिक्षण शालाओं में सामान्य व्यावसायों के लिए कुशल श्रमिक तैयार किये जाते हैं। प्रशिक्षण की अवधि व्यावसाय विशेष पर निर्भर करती है। सामान्यता प्रशिक्षण अवधि पाँच महीने से एक वर्ष तक की होती है।

उपरोक्त समस्त शालाओं का संचालन एक संचालक द्वारा होता है। संचालक की सहायतार्थ दो सहायक होते हैं। एक सहायक प्रशिक्षण और सामान्य शिक्षा का कार्य देखता है और दूसरा सहायक विद्यार्थियों की सांस्कृतिक गतिविधियों का संचालन करता है। विशेष महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षा निःशुल्क है।

माध्यमिक व्यावसायिक प्रशिक्षण
Secondary Vocational Training

यह प्रशिक्षण विशिष्ट माध्यमिक शालाओं मे दिया जाता है। इन शालाओं में 14 से 30 वर्ष तक के नवयुवकों और नवयुवतियों को प्रवेश दिया जाता है। इन शालाओ में प्रवेश प्राप्त करने के लिए एक परीक्षा ली जाती है। प्रशिक्षण अवधि चार वर्ष होती है। इन प्रशिक्षण संस्थाओ में साहित्य, गणित, रसायन शास्त्र, भौतिक शास्त्र आदि अनिवार्य विषय हैं और इनके अतिरिक्त किसी विशेष क्षेत्र का व्यावहारिक ज्ञान भी आवश्यक है। प्रत्येक विद्यार्थि को सरकार द्वारा आयोजित परीक्षा मे सम्मिलित होना अनिवार्य है। परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात सभी विद्यार्थियों को किसी व्यावसाय मे लगा दिया जाता है।

रूस की क्रान्ति से पूर्व सन् 1914 मे इन संस्थाओं की सख्या 295 थी जिनमें 35,800 विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे। सन् 1951 मे इन संस्थाओं की संख्या 3,543 थी जिनमे 13,84,000 विद्यार्थी थे। सन् 1955–56 मे इन संस्थाओ की सख्या 3,612 थी।

टेक्नीकम्स
Technicums

इन सस्थाओं द्वारा मध्यस्तरीय विशेषज्ञों को प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। इन सस्थाओ की आवश्यकतानुसार किसी भी व्यावसाय के लिए आरम्भ किया जा सकता है। इस सस्थाओं मे प्रवेश पाने के लिए न्यूनतम योग्यता माध्यमिक स्तर है और अध्ययन काल 4 अथवा 5 वर्ष है। इन सस्थाओं के विद्यार्थियों को सम्बन्धित कारखानों अथवा कार्यस्थलो के सम्पर्क मे रखा जाता है। इन सस्थाओं में निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था है। अनाथालयों और युद्ध मे काम आये सैनिकों के बच्चों को विशेष सुविधा प्रदान की जाती है।

उपरोक्त विवरण के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा के क्षेत्र में रूस बहुत आगे है। पिछले कुछ वर्षों मे रूस ने अमेरिका से भी अधिक प्रगति की है। 1957 मे एक अमरीकी केन्द्रीय शिक्षा कार्यालय के प्रतिवेदन के अनुसार सोवियत विश्वविद्यालय प्रतिवर्ष 80 हजार इन्जीनियर तैयार करते हैं जबकि अमेरिका मे केवल 30 हजार ही तैयार होते हैं। रूस में 70 प्रतिशत डिग्रियाँ विज्ञान और टेक्नालाजी प्रदान की जाती हैं।

[illegible] विषय है कि हमारे देश में इन्जीनियरों को व्यावसाय नहीं मिलता।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. D'souza, A. A.
   Technical Education in India, & England, Orient Longmans.
2. Lowman, E.
   Report on Soviet Education, U S. Office of Education, Washington D. C
3. Ministry of Education,
   Education in India, New Delhi.
4. ....
   Report of the Education Commission, 1966.
5. ———....
   Report of Secondary Education Commission, 1953.
7. Mukerji S. N.
   Education in India To-day & Tomorrow, Acharya Book Depot, Baroda.

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. Analyse the problem of the educated u[...] India. How can Technical and Vocational educati[...] solution ?

(Rajas[...]

2. The father of a student of class XI come[...] advice as to the vocational prospects before him or[...] the various diversified courses into consideration, e[...] father as to the Careers open to the student.

(Rajast[...]

3. What problems are being faced in the e[...] technical and vocational education in India ? How c[...] tackled ?

भारत में प्राविधिक एव व्यावसायिक शिक्षा के प्रसार की कौ[...] है ?, इन समस्याओं को किस प्रकार नियन्त्रित किया जा सकता है ?

(राजस्थ[...]

4. Describe the system of technical and [...] education in Germany or U. S. S. R. To what extent c[...] be adopted to the needs of our Country ?

जर्मनी अथवा रूस की प्राविधिक एव व्यावसायिक शिक्षा प्र[...] का वर्णन कीजिये । हमारे देश की आवश्यकताओं के अनुकूल उनक[...] उपयोगी बनाया जा सकता है ?

(राजस्थान[...]

5. Define Technical Education. Describe brie[...] different types of institutions for technical education [...] state To what extent is technical education calculated [...] the problems of unemployment ?

प्राविधिक शिक्षा की परिभाषा कीजिये । अपने राज्य की विभिन्न [...] शिक्षा संस्थाओं का वर्णन कीजिये । प्राविधिक शिक्षा द्वारा बेरोजगारी की [...] का समाधान किस सीमा तक होने का अनुमान है ?

(राजस्थान, [...]

6. Define 'Technical Education' Describe briefly the different types of institutions for Technical Education in U. P. To what extent is Technical Education calculated to solve the problems of unemployment ?

प्राविधिक शिक्षा की परिभाषा लिखिये। उत्तर प्रदेश की विभिन्न प्रकार की प्राविधिक शिक्षा का संक्षेप मे वर्णन कीजिये। प्राविधिक शिक्षा बेकारी की समस्या का हल किस सीमा तक करेगी ?

(आगरा, बी० टी० 1965)

7. What are the main handicaps responsible for the slow pace of progress in sphere of Technical Education in India ? Suggest ways for its rapid expansion in the right direction.

भारत मे तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र मे मन्द प्रगति के लिए उत्तरदायी प्रमुख रुकावटें क्या हैं ? उचित दिशा मे इसके शीघ्र विस्तार के लिए सुझाव दीजिये।

(आगरा, बी० एड० 1968)

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. Analyse the problem of the educated unemployed in India. How can Technical and Vocational education help in its solution ?

(Rajasthan, 1961)

2. The father of a student of class XI comes to you for advice as to the vocational prospects before him or her. Taking the various diversified courses into consideration, enlighten the father as to the Careers open to the student.

(Rajasthan, 1964)

3. What problems are being faced in the expansion of technical and vocational education in India ? How can they be tackled ?

भारत में प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा के प्रसार की कौन-सी समस्याएँ हैं ? इन समस्याओं को किस प्रकार नियन्त्रित किया जा सकता है ?

(राजस्थान, 1966)

4. Describe the system of technical and vocational education in Germany or U. S. S. R. To what extent could these be adopted to the needs of our Country ?

जर्मनी अथवा रूस की प्राविधिक एवं व्यावसायिक शिक्षा प्रणा का वर्णन कीजिये । हमारे देश की आवश्यकताओं के अनुकूल उनको उपयोगी बताया जा सकता है ?

(राजस्थान,

5. Define Technical Education. Describe brie different types of institutions for technical education i state. To what extent is technical education calculated to the problems of unemployment ?

प्राविधिक शिक्षा की परिभाषा कीजिये । अपने राज्य की विभिन्न प्र शिक्षा संस्थाओं का वर्णन कीजिये । प्राविधिक शिक्षा द्वारा बेरोजगारी की स का समाधान किस सीमा तक होने का अनुमान है ?

(राजस्थान, 1

2. नव-साक्षरों के लिए साहित्य का उत्पादन
   Production of Literature for Neo-Literates
3. पुनः निरक्षरता की ओर
   Relapse into Illiteracy
4. शिक्षण विधियाँ
   Methods of Teaching
5. कार्यकर्ताओं और उनके प्रशिक्षण का अभाव
   Lack of workers and there Training
6. महिलाओं के निरक्षरता की समस्या
   Problem of Illiteracy of women

अध्याय पन्द्रह
Chapter Fifteenth

समाज शिक्षा
Social Education

अध्ययन बिन्दु
Learning Points

15.01 समाज शिक्षा की परिवर्तित धारणा
Changing Concept of Social Education
- प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ
- प्रौढ़ शिक्षा की नवीन धारणा
- समाज शिक्षा का अर्थ
- समाज शिक्षा क्यों
- प्रौढ़ साक्षरता

15.02 समाज शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य
Aims & Objectives of Social Education
1. व्यावसायिक क्षमता का विकास
2. सामाजिक कौशल का विकास
3. मनोरंजनात्मक अभिवृत्ति का विकास
4. आत्म विकास की सुविधाएँ प्रदान करना
5. राष्ट्रीय स्रोतों की सुरक्षा और उन्नति करना

15.03 प्रौढ़ पाठ्यक्रम के लक्ष्य
Objectives of Adults Curriculum

15.04 समाज शिक्षा की समस्याएँ
Problems of Social Education
1. प्रौढ़ों की शिक्षा का संगठन
Organisation of Education for Adults
कोठारी आयोग के सुझाव

2. नव-साक्षरों के लिए साहित्य का उत्पादन
   Production of Literature for Neo-Literates
3. पुन. निरक्षरता की ओर
   Relapse into Illiteracy
4. शिक्षण विधियाँ
   Methods of Teaching
5. कार्यकर्त्ताओं और उनके प्रशिक्षण का अभाव
   Lack of workers and thero Training
6. महिलाओं के निरक्षरता की समस्या
   Problem of Illiteracy of women

समाज शिक्षा

SOCIAL EDUCATION

भारतवर्ष मे निरक्षरता की समस्या बहुत गम्भीर है । हमारे देश
की सख्या मे प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है और इसके कारण प्रत्येक पग प
का मुख देखना पड रहा है । यदि हमे देश में प्रजातन्त्र की जड़ो को म
है तो निरक्षरता को समूल नष्ट करना होगा अन्यथा हमारी समस्त यो
लक्ष्य पूर्ण न हो सकेंगे ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् निरक्षरता को समाप्त करने के लि
प्रयास हुए । राज्य सरकारो को समाज शिक्षा के प्रसार हेतु पर्याप्त धन
गई । केन्द्रीय सरकार ने जनता कालिजों की स्थापना की । समाज सेव
सेविकाओं द्वारा समाज शिक्षा का प्रसार किया गया । समाज शिक्षा की प्र
शिक्षा प्रणालियों मे सुधार किये गये । प्रौढ़ों को साक्षर करने के लिए इ
सामग्री की व्यवस्था की गई । दूसरी पंचवर्षीय योजना मे समाज शिक्षा में
रुपये तथा राष्ट्रीय विस्तार और सामुदायिक विकास योजनाओं द्वारा समाज
के लिए 10 करोड रुपये निश्चित किये । तृतीय योजना मे भी वयस्क साक्ष
विकास हेतु अनेकों प्रयास हुए और इनके लिए 12 करोड रुपये की धन-राशि

प्रावधान किया है और समाज शिक्षा हेतु 64 करोड रुपये की धन राशि निश्चित की गई है।[1]

इतने अधिक प्रयास होते हुए भी भारत 1961 मे 1951 की अपेक्षा अधिक निरक्षर था और निरक्षरों की संख्या 360 लाख थी। सन 1960 मे निरक्षरों की संख्या मे 200 लाख की और वृद्धि हो गई। प्राथमिक शिक्षा के द्रुत गति से विकास और साक्षरता के लिए अनेकों कार्यक्रमों के पश्चात भी स्थिति यह है।[2] निरक्षरता की संख्या मे उत्तरोत्तर वृद्धि का सबसे प्रमुख कारण जनसंख्या की वृद्धि है।

15.01 समाज शिक्षा की परिवर्तित धारणा
Changing Concept of Social Education

समाज शिक्षा की धारणा बहुत प्राचीन नही है, स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व हमारे उद्देश्य कुछ सीमित थे परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् प्रजातान्त्रिक शासन पद्धति के कारण उद्देश्यों मे व्यापकता आई, अत धारणाओ मे परिवर्तन आना स्वाभाविक था। यहाँ हम धारणाओं के क्रमिक परिवर्तनो को स्पष्ट करेंगे।

प्रौढ़ शिक्षा का अर्थ
Meaning of Adult Education

प्रारम्भ मे प्रौढ शिक्षा का अर्थ प्रौढ स्त्रियो व पुरुषो को साक्षर बनाना था। निरक्षर प्रौढ़ो को अक्षर ज्ञान कराना ही प्रौढ़ शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य समझा जाता था। परतन्त्र भारत मे इस उद्देश्य को और व्यापक कर सकना सम्भव भी नही था। परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् यह अनुभव किया गया कि प्रौढ़ों को केवल मात्र साक्षर कर देने से ही प्रजातन्त्र को सफल नही बनाया जा सकता क्योंकि प्रौढ़ शिक्षा का क्षेत्र अत्यन्त सकुचित और औपचारिक था। अत प्रौढ शिक्षा की धारणा में परिवर्तन आना स्वाभाविक ही था।

प्रौढ शिक्षा की नवीन धारणा
New Concept of Adult Education

जिस समय भारत परतन्त्रता की जंजीरों से जकड़ा हुआ था उस समय हमारे देश के नेताओं का हृदय अशिक्षित जनता को देखकर द्रवित हो उठता था, परन्तु

---

1. चौथी पचवर्षीय योजना (प्रारम्भिक रूपरेखा) पृ. 231
2. India was more illiterate in 1961 than in 1951, with an addition of about 36 million illiterates than in 1961. This hes happened despite unprecedented expansion of primary education and despite many literacy drives and programmes

Report of Education Commission, 1966, p. 423

विस्तार अवस्था में आ रहा था। स्वतन्त्रता संग्राम और देश के कुछ शिक्षित वर्ग ने राजनीतिक चेतना हेतु साक्षरता का प्रसार आरम्भ किया। यद्यपि उद्देश्य छोटा था परन्तु इसके पीछे देश को स्वतन्त्र करने की महान् भावना कार्य कर रही थी।

एक दिन हम स्वतन्त्र हुए, राजनैतिक कर्णधारों ने अपने पुराने स्वप्नों को साकार करने का निश्चय किया और जनवरी 1949 को तत्कालीन शिक्षा मन्त्री मौलाना अबुल कलाम आजाद ने केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के समक्ष प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्र में एक नवीन धारणा प्रस्तुत की। उन्होंने सर्वप्रथम प्रौढ़-शिक्षा के उद्देश्य को विस्तृत किया और उसमें केवल प्रौढ़-साक्षरता ही नहीं बल्कि प्रौढ़ों को अनवरत शिक्षित करने का लक्ष्य था। प्रौढ़ शिक्षा की नवीन धारणा के सम्बन्ध में स्वर्गीय पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि जहाँ तक प्रौढ़-शिक्षा का सम्बन्ध है, बहुत से लोग इसके अर्थ को नहीं समझते। मैं भी उनमें से एक था। अब भी मैं उसे समझने का प्रयास कर रहा हूँ। साधारण अर्थों में इसका अर्थ बहुत स्पष्ट है, परन्तु गूढ़ अर्थों में इसका अर्थ अत्यन्त कठिन है। प्रौढ़-शिक्षा का अर्थ केवल पढ़ना और लिखना ही नहीं है बल्कि नितान्त गहन महत्ता है।[1]

उपरोक्त कथन से स्पष्ट है कि प्रौढ़ शिक्षा का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है और उसकी विस्तृतता वांछित उपलब्धियों से ही सम्भव है। गांधीजी के अनुसार, मेरे विचार में प्रौढ़-शिक्षा का उद्देश्य स्त्री व पुरुषों को अच्छा नागरिक बनाना है।' श्री सैयदेन के अनुसार 'प्रौढ़ शिक्षा राजनीतिक, नागरिक और नैतिक शिक्षा भी निहित है।[2]

उपरोक्त विस्तृत अर्थ के सदर्भ में प्रौढ़-शिक्षा की धारणा में परिवर्तन हुआ और उसका नवीनीकरण 'समाज शिक्षा' के नाम से हुआ।

---

1. As for as Adult Education is concerned......so mai people don't understand what it means I was also o of those people Even now I am trying to understar it Superficially, the meaning is very clear, but the deep meaing is rather different Adult Education doed nc mean reading and writing alone It has a much deepe significance,

   Jawaharlal Nehru, Inauguartion of Shafique Memoria Building in New Dilhi.

2. Adult education includes political and civic as well as moral education.

   —K. G Saiyadain, *Problems of Educational Reconstruction,*

समाज शिक्षा का अर्थ
Meaning of Social Education

समाज शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुए प्रो० हुमायूँ कबीर ने अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये हैं, 'समाज शिक्षा की परिभाषा हम उस पाठ्य विषय के रूप मे कर सकते हैं जिसका मूल उद्देश्य प्रौढ़ों मे नागरिकता एवं सामाजिक एकता की भावना को विकसित करना है। इसका विषय क्षेत्र केवल परिपक्व प्रौढ़ों को साक्षर करना ही नही है बल्कि इसका उद्देश्य जनता मे शिक्षित मस्तिष्क का निर्माण करना है। अत स्वाभाविक रूप से यह शिक्षा व्यक्तियों को व्यक्तिगत एवं सामाजिक रूप मे उनके अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक करती है।[1]

भारत के भूतपूर्व शिक्षा मन्त्री मौलाना अब्दुल कलाम आजाद[2] ने ग्रामीण प्रौढ़ शिक्षा पर हुए यूनेस्को के सेमीनार का उद्घाटन करते हुए समाज शिक्षा के अर्थ के विषय मे कहा था, समाज शिक्षा से हमारा तात्पर्य सम्पूर्ण मानव की शिक्षा से है। यह उसे साक्षर करेगी जिससे उसे संसार का ज्ञान होगा। इसके

---

1. Social Education may be defined as a course of study directod towardes the producton of consciousness of citizenship among the people and the promotion of social solidarity among there It is not content with the introduction of literacy among the grown-up illerates but aims at the production of an educated mind among the masses As a natural corollary, it seeks to inculcate in them a lively sense of rights and duties of citizenship both as individuals and members of the community.

   —Humanyun Kabir, *Education in New India*, p 82

2. By Social Ed[illegible]
   man In will [illegible]
   world may [illegible]
   him how to h[illegible]
   make the be[illegible]
   subsists. It [illegible]
   and modes of [illegible]
   [illegible] will make for peace and progress.

   Maulana Abul Kalam Azad *Inaugural address in UNESCO Seminar on Rural Adult Education* held at Mysore in Dec. 1949

द्वारा उनमें वातावरण से सामंजस्य स्थापित कर
यिक प्रयोग करने की क्षमता का अधिकाधिक
उसे उद्योग और उत्पादन के तरीकों से अवगत
से उन्नति कर सके ।

इसके अतिरिक्त इस शिक्षा का उद्देश्य
स्वास्थ्य विज्ञान के नियमों से परिचित करान
और समृद्धिशाली हो सके । अन्त में इस शिक्षा
प्रदान करता है जिससे उसमें विश्व की बातों
जिसके द्वारा वह अपनी सरकार को उन निर्णयों
सके जिससे शान्ति और प्रगति का प्रसार हो ।'

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि समाज शि
द्वारा व्यक्तियों को साक्षर बनाते हुए सामाजिक
क्षमता का विकास किया जा सके और आर्थिक रूप
नागरिकों के रूप में अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों
मानव समाज को सुखी रख सकें ।

समाज शिक्षा के अर्थ को और भी स्पष्ट
कि 'समाज शिक्षा' की धारणा 'प्रौढ़ शिक्षा' की धा
में 'समाज शिक्षा' प्रौढ़-शिक्षा का ही विस्तृत
अन्तर्निहित है ।

समाज शिक्षा क्यों ?
Why Social Education ?

एक शिक्षित व्यक्ति देश के लिए वरदान होता
जो अज्ञानता के अन्धकार से ग्रस्त है वह समाज के
भी प्रजातन्त्र तब तक सफल नहीं हो सकता जब त
और सामाजिक रूप से शिक्षित नहीं होंगे । समाज शि
यापन के सुखद तरीकों से परिचित किया जाता है ।
नागरिकों को स्वस्थ जीवन की दशाओं, कार्य-कुशलता
अभिवृद्धि और सुखमय जीवन की सम्भावनाओं को

* स्वय के व्यक्तित्व को दूसरे के आश्रय पर छोड़ देता है।
* निराश होकर उसे अपने जीवन की आवश्यक गोपनीयता दूसरों के समक्ष प्रगट करनी पड़ती है।
* राजनीतिक अधिकारों को अपनी बुद्धि अनुसार प्रयोग करने में असमर्थ रहता है।
* एक अशिक्षित नारी एक अच्छी माता और कुशल गृहणी के रूप में जीवन व्यतीत कर सकते में असमर्थ रहती है।
* उसके जीवन का सुख और प्रसन्नता तथा जीवन ज्योति सदैव के लिए लोप हो जाती है।

उपरोक्त व्यक्तिगत और सामाजिक विवशताओं के कारण एक अशिक्षित व्यक्ति का जीवन दूभर हो जाता है। अतः आवश्यक है कि समाज शिक्षा के कार्यक्रमों को यथासम्भव तेजी से बढ़ाया जाये जिससे हमारे देश के हजारों नर-नारियों को शिक्षित किया जा सके।

सामान्यतः यह कहा जाता है कि भारतवर्ष संसार का सबसे बड़ा प्रजातन्त्र है। परन्तु प्रजातन्त्र का आकार बड़ा होने से देश महान नहीं हो सकता यदि हमें अपने देश में प्रजातन्त्र की नीव सुदृढ़ करनी है तो व्यक्तियों का सुशिक्षित होना अनिवार्य है। परन्तु हमारे देश में सन् 1951 से 1961 तक साक्षरों की संख्या में 7 प्रतिशत की वृद्धि हुई और 1961-66 तक केवल 4 प्रतिशत की वृद्धि हुई, परन्तु निरक्षरों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है और इसका प्रमुख कारण जनसंख्या की वृद्धि है। यदि देश की यही स्थिति रही तो देश का भविष्य निश्चित रूप से अन्धकारमय है। यदि देश के भविष्य को उज्जवल करना है तो बहुत आवश्यक है कि समाज शिक्षा की सुविधाओं को बढ़ाया जाये। अन्त में हम कह सकते है कि वर्तमान परिस्थितियों में हमारे [illegible] समाज शिक्षा की बहुत आवश्यकता है। हमारे देश को चाहिए कि वे कम से कम एक व्यक्ति को [illegible] देश अज्ञानता के कूप से

from 16 6
in Percent
ished the

आन्दोलन चलाया जाये। इस कार्य को कोई एक संस्था नहीं कर सकती, अतः आवश्यक है कि सरकार, ऐच्छिक संगठन, श्रमिक संघ और व्यावसायिक संगठन आदि सब मिल कर इस पुनीत कार्य को करें।

रूस या हमारे सम्मुख जीता जागता उदाहरण है जिसने थोड़े समय मे ही 8 वर्ष से 50 वर्ष तक की आयु के मध्य समस्त व्यक्तियों को साक्षर कर दिया। प्रौढ़ साक्षरता के क्षेत्र मे उसका यह कार्य सराहनीय है। जिस देश में सन् 1897 की जनगणना के अनुसार 76 प्रतिशत व्यक्ति निरक्षर थे और स्त्रियो मे निरक्षरता इससे भी कई गुनी अधिक थी, आज वही देश साक्षरता का जीवित उदाहरण है। इसका एक मात्र कारण दृढ़ संकल्प है वहाँ लेनिन ने एक बार कहा था कि हम साम्यवादी राज्य की स्थापना निरक्षर लोगो से नही कर सकते।[1] यही स्थिति भारत की है, यहाँ प्रजातन्त्र तब तक सफल नहीं होगा जब तक यहाँ का प्रत्येक व्यक्ति साक्षर नही होगा। तालिका न० 15 1 से हमे ज्ञात होता है कि भारत मे साक्षरता का प्रतिशत अन्य देशों की तुलना में कितना कम है।

तालिका न० 15·1

विश्व साक्षरता

World Literacy

देश	प्रतिशत	देश	प्रतिशत
डेनमार्क	100	इटली	80
स्वीडन	100	स्पेन	70
फिनलैंड	99	ईरान	70
इंगलैंड	99	लंका	60
कैनाडा	98	ब्राजील	58
फ्रान्स	99	थाईलैंड	52
रूस	98	मैक्सीको	50
अमेरिका	97	टर्की	50
क्यूबा	96	चीन	45
चेकोस्लोवाकिया	95	भारत	24
न्यूजीलैंड	95	पाकिस्तान	19
आस्ट्रेलिया	95	इन्डोनेशिया	15

1. We cannot build a Communist State with an illiterate people. — B. I. Lenin

तालिका नं० 15·2 से सम्पूर्ण देश की स्थिति का ज्ञान होता है कि की विभिन्न राज्यों में क्या स्थिति है।

तालिका नं० 15.2

विभिन्न राज्यों में साक्षरता का प्रतिशत[1]

Percentage of Literacy in Different States

राज्य	पुरुष	महिलाएं	कुल प्र
आंध्र प्रदेश	30 2	12 0	21 2
आसाम	37·3	16 0	27·4
बिहार	29 8	6·9	18·4
गुजरात	41 1	19 1	30·5
केरल	55·0	38·9	46 8
मद्रास	44 5	18 2	31·4
मध्य प्रदेश	27 0	6 7	17 1
महाराष्ट्र	42 2	16·8	29 8
मैसूर	36·1	14 2	25·4
उड़ीसा	34 7	8·6	21 7
पंजाब	33·0	14·1	24 2
राजस्थान	23 7	5·8	15·2
उत्तर प्रदेश	27 3	7 0	17 6
पश्चिमी बंगाल	40·1	17·0	29 3
दिल्ली	60 8	42 5	52·7
हिमाचल प्रदेश	27·2	6 2	17 1
मणिपुर	45·1	15·9	30 4
त्रिपुरा	29 6	10 2	20·2
नागालैंड	24 0	11 3	17·0
अंडमान और निकोबार	42·4	19·4	33·6
बम्बई	64·9	48·8	58·47

1. Nirakshrata Nirmoolan Saptah, 1969, p. 45

15.02 समाज शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य
Aims & Objectives of Social Education

समाज शिक्षा का प्रावधान उन व्यक्तियों के लिए किया जाता है जिन्होंने कभी किसी शाला में विद्या अध्ययन नहीं किया अथवा जो बहुत ही थोड़े समय के लिए विद्यालय जा पाते हैं। अतः समाज शिक्षा का उद्देश्य सभी व्यक्तियों को शिक्षित करना है, जिस शिक्षा द्वारा उनकी आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव हो सके।

संक्षेप में समाज शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1 व्यावसायिक क्षमता का विकास
Developnemt of Vocational Efficiency

व्यक्तियों में व्यावसायिक क्षमता के विकास करने के लिए नगरों में व्यापारिक एवम् औद्योगिक शिक्षा की व्यवस्था करना तथा ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि एवं उद्योगों की जानकारी देना समाज शिक्षा का मूल उद्देश्य है।

2. सामाजिक कौशल का विकास
Development of Social Skill

समाज शिक्षा का उद्देश्य पारस्परिक सम्बन्धों की अभिवृद्धि प्रभावशाली पारिवारिक जीवन की दशाओं से सम्बन्धित जानकारी, अधिकार और कर्तव्यों के प्रति सजगता आदि का विकास करना जिससे सामाजिक कौशल का विकास हो सके।

3. मनोरंजनात्मक अभिवृत्ति का विकास
Development of Recreational Attitude

समाज शिक्षा व्यक्तियों में मनोरंजनात्मक अभिवृत्ति का विकास कर सांस्कृतिक परम्पराओं को सुदृढ़ करती है। नृत्य, लोक गीत, लोक नृत्य तथा अन्य साधनों से स्वस्थ परम्परा का निर्माण किया जाता है इस उद्देश्य के पीछे एक ही आधारभूत सिद्धान्त है कि स्वस्थ मनोरंजन द्वारा जीवन में अच्छे संस्कारों का विकास हो सकता है।

4. आत्म विकास की सुविधाएं प्रदान करना
To Fostar Facilites of Seef Development

समाज शिक्षा से व्यक्तियों में ज्ञान पिपासा जागृत करना, आत्म विकास के लिए वांछित अभिवृत्ति विकसित करना, जीवन के प्रति कलात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करना आदि सम्भव है।

5. राष्ट्रीय स्रोतों की सुरक्षा और उन्नति करना
Conservation & Improvement of National Resources

समाज शिक्षा द्वारा राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति सम्भव है। वांछित जीवन यापन हेतु यह नितान्त आवश्यक है कि उत्पादक योग्यताओं और कुशलताओं की

तालिका न० 15·2 से सम्पूर्ण देश की स्थिति का ज्ञान होता है कि
को विभिन्न राज्यों में क्या स्थिति है।

तालिका न० 15.2
विभिन्न राज्यों में साक्षरता का प्रतिशत[1]
Percentage of Literacy in Different States

राज्य	पुरुष	महिलाएं	कुल प्र
आन्ध्र प्रदेश	30 2	12 0	21·2
आसाम	37·3	16 0	27·4
बिहार	29 8	6·9	18·4
गुजरात	41 1	19 1	30·5
केरल	55·0	38·9	40 8
मद्रास	44 5	18 2	31·4
मध्य प्रदेश	27 0	6 7	17·1
महाराष्ट्र	42 2	16·8	29 8
मैसूर	36·1	14 2	25 4
उड़ीसा	34 7	8·6	21 7
पंजाब	33 0	14 1	24·2
राजस्थान	23·7	5 8	[illegible]
उत्तर प्रदेश	27·3	7 0	
पश्चिमी बंगाल	40·1		
दिल्ली	60·8		
हिमाचल प्रदेश	27 2		
मणीपुर	45·1		
त्रिपुरा	29 6		
नागालैंड	24 0		
अंडमन और निकोबार	42·4		
वृहत बम्बई	64 9		

[1] [illegible]

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए किस प्रकार पाठ्यक्रम का निर्माण हो, इस प्रश्न पर भी विचार करना आवश्यक है कि साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है और न ही प्रारम्भ, यह तो मात्र एक साधन है जिसके द्वारा पुरुषों और स्त्रियों को शिक्षित किया जाता है।[1]

अतः सर्वप्रथम पाठ्यक्रम का मुख्य लक्ष्य पढ़ने और लिखने की क्षमता का विकास हो, तत्पश्चात सामान्य ज्ञान, संगीत, नागरिक शास्त्र, कृषि, वाणिज्य राष्ट्रीयता सहकारी समितियों की स्थापना, प्रारम्भिक चिकित्सा और व्यायाम आदि का ज्ञान प्रदान किया जाये।

15.04 समाज शिक्षा की समस्याऐं
Problems of Social Education

समाज शिक्षा की समस्याएं अन्य शैक्षिक समस्याओं से पृथक हैं। एक बालक को पढ़ाने में और एक प्रौढ़ को पढ़ाने में बहुत अन्तर है क्योंकि दोनों का मनोविज्ञान पूर्णरूपेण भिन्न है। इसके अतिरिक्त प्रौढ़ निरक्षर हो सकते हैं परन्तु अशिक्षित नहीं हैं। संक्षेप में समाज शिक्षा की निम्नलिखित समस्याएं हैं —

1. प्रौढ़ों की शिक्षा का संगठन
Organisation of Education for Adults

समाज शिक्षा के प्रबन्ध हेतु केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय में एक पृथक् विभाग है। परन्तु राज्यों में समाज शिक्षा के लिए एकरूपता नहीं है। केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय का कार्य समाज शिक्षा की प्रगति हेतु पथ प्रदर्शन, विभिन्न संस्थाओं के कार्यों में समन्वय स्थापित करना और विभिन्न संस्थाओं को आर्थिक सहायता प्रदान करना है। केन्द्रीय सरकार ने 1953 में एक बोर्ड की स्थापना की जिसे केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड कहते हैं। केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय के अतिरिक्त अन्य मन्त्रालय जैसे श्रम एवं सामुदायिक विकास आदि भी समाज शिक्षा के प्रसार हेतु कार्य कर रहे हैं।[2]

राज्यों में समाज शिक्षा हेतु प्रत्येक जिले में समाज शिक्षा अधिकारी होते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इसके लिए सामुदायिक विकास ब्लाक (Community & Extension Development Block) द्वारा किया जाता है। प्रत्येक ब्लाक में समाज सेवक और ग्राम सेवक होते हैं। 100 गाँवों के लिए एक विकास-खण्ड में समाज शिक्षा के संगठन हेतु एक आर्गेनाइजर होता है।

---

1. Literacy is not the end of education, nor even the beginning. It is only one of the means whorby men and women can be educated.

   Mahatma Gandhi, *Harjan*, July 31, 1937

2. कोठारी आयोग के सुझाव
Suggestions of Kothari Commission

प्रौढ़ शिक्षा के संगठन और प्रशासन के सम्बन्ध में कोठारी आयो... है कि एक 'राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा परिषद (National Board ... Education) की स्थापना होनी चाहिए। इस समिति में सम्बन्धित म... प्रतिनिधि होने चाहिए। इस परिषद के निम्नलिखित कार्य होने चाहिए —

1. प्रौढ़-शिक्षा के प्रशिक्षण और योजना के सम्बन्ध में केन्द्र एव र... अनौपचारिक परामर्श देना।
2. विकास कार्यक्रम, साहित्य निर्माण, शिक्षण सामग्री आदि को ... बनाना।
3. विभिन्न मन्त्रालयो, सरकारी और गैर-सरकारी संस्थाओं में सम... स्थापित करना।
4. उपलब्धियों का मूल्यांकन एव भावी विकास योजनाएँ बनाना।

राज्य स्तर पर भी प्रौढ़-शिक्षा परिषदो की स्थापना की जानी चाहिए और... जिलास्तर पर इस प्रकार की समितियो को जिला परिषदो का अग होना चाहिए। प्रौढ़-शिक्षा के क्षेत्र मे जो व्यक्ति एव सस्थाएँ ऐच्छिक रूप से कार्य कर रहे हैं उन्हे... आर्थिक एव प्राविधिक सहायता मिलनी चाहिए।

3. नव-साक्षरों के लिए साहित्य का उत्पादन
Production of Literature for Neo-Literates

समाज शिक्षा के क्षेत्र मे सबसे बड़ी समस्या उपयुक्त साहित्य का अभाव है। ...जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि प्रौढो मे केवल मात्र लिखने पढ़ने की क्षमता ...का विकास करना ही पर्याप्त नही है, उनमे वांछित व्यवहार परिवर्तन करने की भी ...आवश्यकता है और यह तभी सम्भव है जबकि नव साक्षरो के लिए उपयुक्त साहित्य ...उत्पादन किया जाये, क्योंकि साक्षरता प्रदान करना जितना आवश्यक है, उससे ...क आवश्यक साक्षरो को पुन: निरक्षर होने से रोकना है। अत साक्षरता के ...ात् शिक्षा का प्रबन्ध करना अति आवश्यक है और यह तभी सम्भव है ... ...थ्रेणियो के प्रौढो के लिए साहित्य का सृजन हो।

श्री सैयदेन के शब्दो मे 'समाज शिक्षा के मार्ग मे सबसे बड़ी कठिना... पुस्तको का अभाव है जो प्रौढ़ो को आकर्षित कर सकें। अत: अच्छी पुस्... ...ओं, समाचार पत्रो, चित्रित, सामग्रियो आदि ... इसमे कोई सन्देह नही कि यदि साहित्य का ... य...

विज्ञान पर आधारित, सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक पहलुओं को ध्यान मे रखते हुए किया जाये तो समाज शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति निश्चित है।

केन्द्रीय सरकार नव साक्षरों के लिए उत्तम साहित्य प्रकाशनार्थ काफी प्रयत्नशील है। इससे सम्बन्धित कुछ कार्यक्रम आरम्भ भी किए गये हैं जैसे भारतीय भाषाओं में उत्कृष्ट नव साक्षरोपयोगी पुस्तकों पर लेखकों को प्रतिवर्ष पुरस्कृत किया जाता है, सरकार द्वारा लेखकों की गोष्ठियों का आयोजन किया जाता है जिसमे नवसाक्षरों के साहित्य सृजन का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। सरकार स्वय भी नवसाक्षर साहित्य के प्रकाशनार्थ कार्य करती है तथा अन्य सरकारी अथवा गैर सरकारी सस्थाओं को इसके लिए अनुदान भी प्रदान करती है।

अन्त मे नवसाक्षरों के लिए ऐसे साहित्य की आवश्यकता है जिसके द्वारा उनमे आत्मलोचन, राजनीतिक स्थिति, सामाजिक भावना और सम्बन्धित व्यवसाय का वाछित ज्ञान सम्भव हो सके एव आदर्श नागरिक के रूप मे देश के उत्थान हेतु अपना सक्रिय योगदान प्रदान कर सकें।

3 पुन निरक्षरता की ओर
Relapse into Illiteracy

सन् 1966 मे भारत की कुल जनसंख्या 49,46,02,640 थी।[1] जैसा कि हम तालिका न० 15.1 में स्पष्ट कर चुके है कि हमारे मे 24% व्यक्ति साक्षर हैं। पुरुषों की साक्षरता का प्रतिशत 34·5 है और स्त्रियों की साक्षरता का प्रतिशत 13·0 है।[2] प्रस्तुत साख्यिकी से पता चलता है कि अभी हमारे देश मे 76% व्यक्ति निरक्षर हैं। ऐसी स्थिति मे देश के उत्थान की बातें करना केवल मात्र स्वप्न है। अशिक्षित जनता का देश—मूक व्यक्तियों का देश होता है। अशिक्षित जनता पर शासन, मूक और निःसहाय व्यक्तियों पर शासन है। यही मूल कारण है कि आज हमारा देश सामाजिक द्वेष, कलह और साम्प्रदायिक झगड़ो का अखाड़ा बन गया है। आज देश मे राजनैतिक अस्थिरता है और इसकी पृष्ठ-भूमि मे अशिक्षा छिपी हुई है।

हमारे देश मे 1951 की अपेक्षा 1961 मे अधिक निरक्षरता थी और 1969 में उससे भी अधिक निरक्षरता है। यदि यही क्रम रहा तो निरक्षरों की सख्या उत्तरोत्तर बढती ही चली जायेगी अत. आवश्यक है कि देश को इस पतन के मार्ग से बचाया जाये। श्री सैयदेन के शब्दों में 'यदि ससार के मानचित्र मे साक्षरता की

1. *India 1967*, p. 5
2. *Ibid*, p 62

स्थिति का अंकन किया जाय और निरक्षर लोगों को काले रंग में प्रदर्शित किया जावे तो भारत उस मानचित्र में एक काले महाद्वीप जैसा दिखाई देगा।' अतः आवश्यक है कि अपनी भूमि से हम निरक्षरता को समूल नष्ट कर।

कोठारी आयोग ने इस कार्य हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

1. देश की निरक्षरता को दूर करने के लिए यथाशीघ्र प्रयास होने चाहिए और 20 वर्षों में इसे समाप्त कर देना चाहिए। साक्षरता दर 1971 तक 60 प्रतिशत और 1976 तक 80 प्रतिशत हो जानी चाहिए।

   निरक्षरता को रोकने का सबसे पहला उपाय 6 से 11 वर्ष के बालकों के लिए अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। 11 से 14 वर्ष के उन बालकों के लिए जिन्होंने स्कूल छोड़ दिया है, अल्पकालीन शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए। 15 से 30 वर्ष के प्रौढ़ों के लिए अल्पकालीन सामान्य एवं व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था होनी चाहिए।
2. निरक्षरता की समाप्ति के लिए चयनात्मक एवं सार्वभौमिक पद्धति का दुहरा कार्यक्रम होना चाहिए।
3. चयनात्मक पद्धति में उन प्रौढ़ों को शिक्षित करना चाहिए जो सरलता से साक्षर हो सकें। सरकार यदि आवश्यक समझे तो यह नियम बना सकती है कि उद्योगों के मालिक अपने निरक्षर कार्यकर्ताओं को नियुक्ति से तीन वर्षों की समयावधि में अवश्य ही साक्षर बना दें।
4. सार्वभौमिक पद्धति में सभी शिक्षितों का उत्तरदायित्व होना चाहिए कि वे निरक्षरों को साक्षर बनावें। इस आन्दोलन हेतु शिक्षकों, छात्रों से विशेष लाभ की आशा होनी चाहिए।
5. स्त्रियों को साक्षर बनाने के लिए 'केन्द्रीय समाज-कल्याण परिषद्' को कार्य करना चाहिए।
6. साक्षरता के बनाये रखने हेतु अनुसरण कार्यक्रमों (Follow up Programmes) की व्यवस्था होनी चाहिए।

उपरोक्त सुझाव वास्तव में महत्वपूर्ण हैं और यह आवश्यक है कि इन सुझावों अनुसार यथाशीघ्र कार्य प्रारम्भ किया जाये और सम्पूर्ण देश में साक्षरता आन्दो- आरम्भ किया जाये।

4. शिक्षण विधियाँ
Methods of Teaching

जैसा कि हम पहले स्पष्ट कर चुके हैं कि प्रौढ़ों को पढ़ाना कोई सरल का है क्योंकि प्रत्येक प्रौढ़ का अपना जीवन-दर्शन होता है। उसके जीवन में व्यस्तत

होती है। उनमे 'अहम् की' भावना होती है। अतः इन समस्त बातों को ध्यान में रखते हुए यह कहना कठिन है कि प्रौढ़ों को किन किन शिक्षण विधियों से शिक्षा प्रदान की जायें।

इस समस्या के समाधान हेतु यह आवश्यक है कि विभिन्न आयु स्तरों के अनुसार शिक्षण विधियों को निश्चित किया जाय। 11 से 45 आयुस्तर के प्रौढ़ों को भिन्न-भिन्न शिक्षण विधियों की आवश्यकता है। यदि इस आयुस्तर के लिए उपयुक्त शिक्षण विधियों पर अनुसंधान कार्य हो तो इस समस्या का समाधान हो सकता है। संक्षेप में निम्नलिखित शिक्षण विधियों को प्रयोग में लाया जा सकता है—

1. वयस्क प्रधान विधियाँ
2. अध्यापक प्रधान विधियाँ
3. सहकारी विधियाँ

उपरोक्त विधियों को ध्यान में रखते हुए विभिन्न शिक्षण विधियों को प्रयोग में लाया जा सकता है।

5. कार्यकर्ताओं और उनके प्रशिक्षण का अभाव
Lack of workers and Their Training

समाज शिक्षा के क्षेत्र में एक अन्य समस्या कार्यकर्ताओं का अभाव है। समाज केन्द्रों की व्यवस्था तो हो जाती है परन्तु समाज सेविकाओं का अभाव रहता है। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र में कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण की बहुत बड़ी समस्या है। यद्यपि सरकार द्वारा समाज शिक्षा प्रशिक्षण केन्द्र (Social Education Training Centres) खोले गये हैं तथापि विस्तार आवश्यकता को देखते हुए इन प्रशिक्षण केन्द्रों की कमी है। अतः आवश्यक है कि सरकार इस ओर ध्यान दे और प्रशिक्षण सुविधाओं को बढ़ाने का प्रयास करें।

6. महिलाओं की निरक्षरता की समस्या
Problem of Illiteracy of Women

समाज शिक्षा की मुख्य समस्या महिलाओं का निरक्षर होना है। जनगणना के आंकड़ों के अनुसार शहरी महिलाओं की संख्या 34.5 प्रतिशत थी जिसमें से केवल 8.9 प्रतिशत ग्रामीण साक्षर थीं। यह निश्चित सत्य है कि जब तक महिलाओं को साक्षर नहीं किया जायेगा तब तक समाज-शिक्षा की सफलता असम्भव है।[1]

---

1. The state of literacy among women is particularly distressing. The census of 1961 showed that 34.5 percent of the women in urban areas and only 8.9 percent of them in rural areas were literate. It is universally acknowledged that unless women become educated, there is little hope for a social transformation.

Report of Education 1966, p 423.

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. Apte, D G.
Social Education at a Glance, Faculty of Psychology, Baroda
2. D'Souza, A.
The Folk High Schools in Denmark, Orient Longmans, 1958
3. Porulekar, R. V.
Literacy in India, Macmillan & Co.
4. ...—......—
The Place of Literacy in Social Education in India, Presidential Address, All India Adult Conference, Patna, 1954
5. *Report of the Central Advisory Board Committee on Adult Education*
6. *Teachers Hand Book of Social Education*
Ministry of Education, New Delhi, 1957.

नारी शिक्षा
WOMEN EDUCATION

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'

मनु का यह कथन कि जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं। इन पंक्तियों मे नारी के महत्व को स्वीकार किया गया है। इसमे कोई सन्देह नही कि भारत की पावन भूमि पर नारी सदैव श्रद्धेय रही है। इसका प्रमुख कारण यही है कि हमारे देश ने अनेक विदुषी नारियो जैसे विश्वतारा, घोषा, लोपमुद्रा, अपाला, उर्वशी, मैत्रेयी और गार्गी आदि को जन्म दिया है। परन्तु आज नारी का वह महत्व नही जो प्राचीन भारत मे था, यही कारण है कि आज का भारत वह भारत नही जो पहले था। आज सम्भवत हम इस तथ्य को भूल गये हैं कि जब नारी उठती है तो देश और समाज उठता है, जब नारी गिरती है तो देश और समाज का पतन होता है। अतः आवश्यकता है कि हमारा समाज उठे, देश विकास की ओर उन्मुख हो, और यह तभी सम्भव है जब हमारे देश की स्त्रियाँ शिक्षित हो। अतः नारी शिक्षा की बहुत आवश्यकता है।

16 01 नारी शिक्षा की आवश्यकता
Need of Women Education

'The hand that rocks the cradle, rules the world.'

अर्थात् जो हाथ पालना झुलाता है, वह संसार का शासन करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि एक नारी बालक को जन्म देकर उस बालक मे संस्कारों को प्लावित

करती है। बालक के व्यक्तित्व को यदि कोई सबसे अधिक प्रभावित करता है तो वह उसकी माता का व्यक्तित्व है, अत जैसी माँ होगी वैसा ही बालक होगा। इसीलिए प० नेहरू ने कहा था कि लड़के की शिक्षा एक व्यक्ति की शिक्षा है, परन्तु एक लड़की की शिक्षा सम्पूर्ण परिवार की शिक्षा है।[1] इस कथन में स्पष्टत नारी शिक्षा की आवश्यकता के दर्शन होते हैं।

भारतीय शिक्षा आयोग ने नारी शिक्षा की आवश्यकता पर बल देते हुए लिखा था कि मानवीय स्रोतों के विकास, परिवारों के सुधार और बाल्याकाल में बालकों पर चारित्रिक प्रभाव हेतु, स्त्रियों की शिक्षा का पुरुषों की शिक्षा की अपेक्षा अधिक महत्व है।[2] इसका एकमात्र कारण यह है कि एक शिक्षित नारी पारिवारिक जीवन को अधिक सुखी करने, बालकों का अच्छी प्रकार पालन पोषण करने, उनमें वांछित अभिवृत्तियों के विकास करने, व्यक्तित्व का विकास करने आदि में अत्यधिक सहायक होती है। इसलिए देश के उत्थान और प्रगति के लिए नारी शिक्षा की बहुत आवश्यकता है।

16.20 स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व नारी शिक्षा का प्रसार
Expansion of Women Education Before Independence

सुविधा की दृष्टि से नारी शिक्षा के प्रसार को निम्नलिखित कालों में विभाजित करना उत्तम रहेगा —

प्रथम काल 1813 से 1881 तक

द्वितीय काल 1882 से 1921 तक

तृतीय काल 1922 से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक

I. प्रथम काल 1813 से 1881 तक
First Period From 1813 to 1881

इस काल में स्त्री शिक्षा केवल कुछ ऊँचे वर्ग के परिवारों तक ही सीमित थी। सर्वप्रथम इस प्रकार की पाठशाला सन् 1820 में डेविडहेयर ने स्थापित की थी।

---

1. Education of a boy is education of one person, but education of girl is the education of the entire family.
— *Jawharlal Nehru*

2. The significance of the education of girls cannot be over-emphasized. For full development of our human *resources*, the improvement of homes and for moulding the character of children during *the most* impressionable years of infancy, the education of women *is of* even greater importance than that of men.
Report of the Education Commission, p. 135.

विद्यालय की स्थापना हुई। सन् 1916 में महर्षि कर्वे ने महिला विश्वविद्यालय की स्थापना की। सन् 1921 में सम्पूर्ण देश में स्त्री शिक्षा हेतु 19 महाविद्यालय, 675 माध्यमिक विद्यालय और 21956 प्राथमिक शालाएँ थीं।

3. तृतीय काल, 1922 से 1947 तक
Third Period From 1922 to 1947

द्वैध शासन की स्थापना के पश्चात् स्त्री शिक्षा का प्रसार सन्तोषप्रद रहा। इस समय राष्ट्रीय नेता और समाज सुधारक महिला उत्थान पर विशेष बल दे रहे थे। राष्ट्रीय जागृति अपनी चरम सीमा पर थी। सन् 1921 और 1937 के विधान के अनुसार शिक्षा का प्रबन्ध भारतीय मन्त्रियों के पास था। स्वतन्त्रता से पूर्व 59 महाविद्यालय, 2370 माध्यमिक शालाएँ और 21,479 प्राथमिक शालाएँ थीं। तालिका नं० 16 1 द्वारा विभिन्न स्तरों पर शिक्षा प्राप्त करने वाली छात्राओं की कुल संख्या और स्त्री शिक्षा का प्रसार स्पष्ट किया गया है।

तालिका नं० 16.1

विभिन्न स्तरों की छात्राओं की संख्या

स्तर	1881–82	1901-02	1921–22	1946–47
उच्च	6	169	905	20,304
माध्यमिक	2054	9,075	26,163	6,02,280
प्राथमिक	1,24,491	3,44,712	11,86,224	34,75,165
विशिष्ट शिक्षा	515	2,457	10,831	58,993

16.03 स्वतन्त्रता के पश्चात् नारी शिक्षा का प्रसार
Expansion of women Education after Independence

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् नारी शिक्षा के क्षेत्र में अलौकिक प्रगति हुई है। पिछले वर्षों में नारी का सामाजिक स्तर भी ऊँचा उठा है और शैक्षिक सुविधाओं में समानता भी आई है। तालिका नं० 16 2 से नारी शिक्षा की प्रगति का तुलनात्मक स्वरूप स्पष्ट होता है जिसमें 1949–50 और 1960–61 की स्थिति स्पष्ट की गई है।

तालिका सं० 16·2

नारी शिक्षा का प्रसार[1] (1949–50 और 1960–61)

Expansion of Woman Education (1949–50 & 1960–61)

विभिन्न स्तर	1949–50		1960–61	
	लड़कियों की संख्या	प्रति 100 लड़कों पर लड़कियों की संख्या	लड़कियों की संख्या	प्रति 100 लड़कों पर लड़कियों की संख्या
...ामान्य शिक्षा				
विश्वविद्यालय				
अनुसन्धान	85	10	768	20
...म.ए और एम एसी	1,636	14	9,227	25
...ी.ए और बी.एस सी	10,750	14	63,379	27
...टर मीडिएट (कला, विज्ञान)	23,540	13	76,517	20
...सायिक शिक्षा (विश्वविद्यालय)	4,055	5	26,124	11
...ट शिक्षा (विश्वविद्यालय)	771	18	7,355	61
... शिक्षा (स्कूल स्तर) ...ूल उच्चतर	7,08,007	19	6,80,395	25
...ड	— —	— — —	19,41,178	35
...मिक	50,34,740	40	1,09,44,051	48
...क शिक्षा (स्कूल)	12,306	91	82,122	85
...क्षा (स्कूल)	35,760	28	85,540	25
...	1,79,641	16	3,36,840	25
...ग	60,11,320	33	1,42,59,505	42

...युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि 1949–50 और 1960–61 के ...ों की संख्या दुगुनी हो गई। सन् 1965–66 में कुछ और प्रगति हुई ...० 16.3 में स्पष्ट की गई है। स्थिति को देखकर यह आभास होता ...प्रयासों के बावजूद भी जो प्रगति है वह बहुत अधिक नहीं है।

...ndian Year Book of Education, 1961

तालिका नं० 16.3

1965–66 में नारी शिक्षा की स्थिति

Position of Women Education in 1965–66

विभिन्न स्तर	1965–66
प्राथमिक स्तर (संख्या लाख में)	182
मिडिल स्तर (संख्या लाख में)	28 39
माध्यमिक स्तर (संख्या लाख में)	10·69
उच्च स्तर (संख्या सौ में)	271
व्यावसायिक विद्यालय (संख्या सौ में)	120
व्यावसायिक महाविद्यालय (संख्या सौ में)	50

इसमें कोई संदेह नहीं कि प्रगति के चरण बढ़े अवश्य हैं परन्तु लड़के और लड़कियों की संख्या में काफी अन्तर है। विभिन्न आयोगों, समितियों और राष्ट्रीय नारी शिक्षा परिषद् ने इस अन्तर को कम करने के लिए समय-समय पर महत्वपूर्ण सुझाव दिये, परन्तु अभी उन सुझावों के अनुसार कार्य नहीं किया गया है। संक्षेप में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् नारी शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न आयोगों, समितियों ने महत्वपूर्ण सुझाव दिये और जो प्रगति आज दिखाई दे रही है वह उन्हीं सुझावों का परिणाम है।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948–49) और नारी शिक्षा
University Education Commission (1948-49) & Women Education

नारी शिक्षा के महत्व और आवश्यकता पर बल देते हुए आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये—

1. स्त्री और पुरुषों को समान शैक्षिक अवसर प्राप्त होने चाहिए।
2. यह आवश्यक है कि स्त्रियों को उनके अनुरूप शिक्षा प्राप्त हो जिससे वे अच्छी माता और गृहस्वामिनी हो सकें।
3. नारियों की शिक्षा में गृह अर्थशास्त्र और गृह प्रबन्ध की समुचित शिक्षा का प्रावधान हो और उन विषयों के लिए उन्हें अधिकाधिक प्रेरित किया जाये।

4 सहशिक्षा शालाओ मे छात्राओं के लिए विशिष्ट सुविधाएँ प्रदान की जाये।

5. महिला अध्यापिकाओ को पुरुष अध्यापको के समान वेतन मिलना चाहिए।

राष्ट्रीय नारी शिक्षा समिति (1958)
National Committee on Women's Education (1958)

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की सिफारिशो से नारी शिक्षा के क्षेत्र मे कोई [illegible]शेष परिवर्तन नही आया। इसीलिए भारत सरकार ने सन् 1958 मे श्रीमती [illegible]ाई देशमुख की अध्यक्षता मे एक समिति का गठन किया जिसका कार्य क्षेत्र [illegible]मिक और माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र मे आवश्यक सुझाव देना था क्योकि प्राथ[illegible] शालाओ मे अध्यापिकाओ का सर्वथा अभाव था अत यह निश्चित किया गया [illegible]स्तुत समिति माध्यमिक शिक्षा के प्रसार हेतु भी सुझाव दे। इस समिति ने सन् [illegible]9 मे अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया और नारी शिक्षा हेतु अनेको [illegible] से कुछ महत्वपूर्ण सुझाव निम्नलिखित थे:—

1. कुछ समय के लिए लडकियो की शिक्षा को विशिष्ट समस्या [illegible] स्वीकार किया जाये और आने वाले वर्षो मे उचित धन [illegible] की जाये जिससे प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा स्तर पर लडकि[illegible] अधिक शिक्षा सुविधाएँ प्रदान की जा सकें।
2. केन्द्रीय स्तर पर राष्ट्रीय नारी शिक्षा परिषद् की स्थापना की जाये [illegible] सम्बन्धित कार्यक्रमों के लिए विशिष्ट इकाई बनाई जाये।
3. प्रत्येक राज्य मे 'राज्य नारी शिक्षा परिषद' हो और लडकियों के [illegible] [illegible]कार्यों के लिए पृथक् निदेशालय हो।

[illegible]रोक्त सुझावों को केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय ने स्वीकार किया और भा[illegible] [illegible]न् 1959 को 'राष्ट्रीय नारी शिक्षा परिषद्' की स्थापना की।

[illegible]ट्रीय नारी शिक्षा परिषद (1959)
[illegible]ional Council for Women Education (1959)

[illegible]959 मे श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख की अध्यक्षता में इस परिषद् [illegible] [illegible]र शिक्षा मन्त्रालय में नारी-शिक्षा की समस्याओ पर विचार करने [illegible] [illegible] इकाई की नियुक्ति की गई। सामान्य रूप से यह परिषद् निम्नलिखित [illegible]

[illegible] शिक्षा के सम्बन्ध में सरकार को सलाह देना।

2. नारी शिक्षा के प्रसार, कार्यक्रम, प्रगति और आवश्यकता से सम्बन्धित सुझाव देना,

3. नारी शिक्षा के पक्ष में जनमत तैयार करना।

4. प्राप्त प्रगति का मूल्यांकन करना और भावी प्रगति हेतु योजना बनाना।

5. नारी शिक्षा की समस्याओं पर अनुसन्धान करना और आवश्यक समितियों का गठन करना।

इस परिषद् ने नारी शिक्षा की समस्याओं पर विचार करने के लिए अभी तक दो महत्वपूर्ण समितियों की नियुक्ति की है।

एक समिति का गठन श्रीमती हंसा महता की अध्यक्षता में सन् 1962 में किया गया जिसका कार्य क्षेत्र लड़कियों की शिक्षा की विभिन्न आवश्यकताओं पर विचार करते हुए पृथक् पाठ्यक्रम हेतु सुझाव देना था।

दूसरी समिति का गठन सन् 1963 में श्री एम० भक्तवत्सलम्, मुख्यमन्त्री, मद्रास की अध्यक्षता में किया गया जिसका कार्यक्षेत्र ग्रामीण क्षेत्रों में नारी शिक्षा के प्रति उपेक्षा के कारणों का पता लगाना था।

कोठारी आयोग (1964–66) और नारी शिक्षा
Kothari Commission (1964–66) & Women Education

आयोग ने श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख, श्रीमती हंसा महता, श्री एम० भक्तवत्सलम् आदि की अध्यक्षता में गठित समितियों का उल्लेख किया है और श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख ने समिति की सिफारिशों को स्वीकार करते हुए निम्नलिखित सुझाव दिये:—

1. निकट भविष्य में नारी शिक्षा के सम्पूर्ण कार्यक्रमों को शिक्षा का महत्वपूर्ण अंग स्वीकार किया जाये।

2. नारी शिक्षा के मार्ग में आने वाली सम्भावी समस्याओं का समाधान करने के लिए आवश्यक कदम उठाये जायें।

3. स्त्रियों और पुरुषों की शिक्षा के बीच जो खाई है उसे यथाशीघ्र समाप्त किया जाये और इस कार्य हेतु विशेष योजनाएँ बनाई जायें।

4. नारी शिक्षा के प्रसार हेतु उदार आर्थिक सहायता प्रदान की जाये।

5. केन्द्र और राज्य स्तर पर बालिकाओं और नारियों की शिक्षा हेतु उपयुक्त प्रशासकीय संगठन का निर्माण किया जाये।

6. अविवाहित स्त्रियों के लिए पूर्णकालीन रोजगार की व्यवस्था हो और अन्य स्त्रियों के लिए अ दकालीन रोजगार की व्यवस्था हो।

16.04 राजस्थान में नारी शिक्षा
Women Education in Rajasthan

राजस्थान ऐतिहासिक और सामाजिक कारणों से नारी शिक्षा के क्षेत्र मे
को पिछड़ा हुआ रहा है। प्रथम पचवर्षीय योजना मे पूर्व तो यहाँ की स्थिति
त ही खराब थी। सन् 1950–51 मे कुल 603 नारी शिक्षा सस्थाएँ थी जिनमे
महाविद्यालय थे, 10 उच्च विद्यालय थे, 102 मिडिल स्कूल थे और 452
मिक शालाएँ थी। सम्पूर्ण राजस्थान का साक्षरता प्रतिशत केवल 3·0 था।
शोचनीय स्थिति को ठीक करने के लिए सतत् प्रयास किये गये और उन्ही
के फलस्वरूप आज की स्थिति बहुत ही सुखद है।
सन् 1955–56 में लड़कियो की प्राथमिक शालाओं की सख्या 585, मिडिल
की सख्या 140, 19 उच्च विद्यालय और 9 महाविद्यालय थे। द्वितीय
योजना मे स्थिति कुछ सुधरी और द्वितीय पचवर्षीय योजना की समाप्ति
1960–61 मे 12 महाविद्यालय, 69 उच्च/उच्चतर माध्यमिक शालाएँ
2 मिडिल स्कूल तथा 614 प्राथमिक शालाएँ थी। सन् 1963–64 मे
लयो की सख्या घटकर 10 रह गई परन्तु माध्यमिक शालाएँ 86, मिडिल
और प्राथमिक शालाएँ 732 हो गई। तालिका न० 16.4 मे इस स्थिति
किया गया है।

तालिका नं० 16.4
राजस्थान मे नारी शिक्षा का प्रसार
Expansion of Women Education in Rajasthan

	शिक्षा सस्थाओ की सख्या			
	प्राथमिक	मिडिल	उच्च/उच्चतर	महाविद्यालय
	452	102	10	6
	585	140	19	9
	614	202	69	12
	732	247	86	10

त्राओ की सख्या का प्रश्न है सन् 1950–51 मे उच्च/उच्चतर
02 लाख, मिडिल स्तर मे 0·09 लाख, प्राथमिक स्तर मे

0·55 लाख और उच्च स्तर में 0·01 लाख छात्राएँ थी। सन् 1963–64 में यह संख्या उच्च/उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 0·15 लाख, मिडिल स्तर पर 0·54 लाख और प्राथमिक स्तर पर 3 25 लाख हो गई। तृतीय पंचवर्षीय योजना के अन्त तक प्राथमिक स्तर पर 4·80 लाख, मिडिल स्तर पर 0·80 लाख, उच्च/उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 0·20 लाख छात्राएँ थी। आशा है चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक प्राथमिक स्तर पर 13·00 लाख, मिडिल स्तर पर 1 60 लाख और उच्च/उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 0 40 लाख छात्राओं की संख्या हो जायेगी। *शाला जाने वाली छात्राओं का प्रतिशत 6–11 वर्षीय आयु समूह का 72 5%,* 11–14 वर्षीय आयु समूह का 21 5% और 11–14 वर्षीय आयु समूह का 5 8% हो जायेगा।

यद्यपि नारी शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति अवश्य हुई है परन्तु लडके और लडकियों की संख्या मे अभी तक भी बहुत बडी खाई है। मिडिल स्तर पर प्रति 5 लडकों पर 1 लडकी और उच्च/उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 8 लडकों पर 1 लडकी स्कूल जाती है। राजस्थान सरकार ने नारी शिक्षा प्रसार हेतु और अध्यापिकाओं को अपने व्यवसाय के प्रति आकर्षित करने की निम्नलिखित विशिष्ट योजना बनाई है—

1. नारी शिक्षा हेतु राज्य व्यापी आन्दोलन।
2. कक्षा 6 से 11 की 600 लडकियों को प्रति वर्ष मुफ्त पुस्तकें देना।
3. नि शुल्क शिक्षा।
4. अध्यापिकाओं को स्वतन्त्र रूप से परीक्षा मे बैठने की सुविधाएँ।
5. अध्यापिकाओं के लिए न्यूनतम आयु 25 वर्ष के स्थान पर 35 कर दी गई है।
6. एस. टी. सी. शालाओं मे प्रशिक्षण प्राप्त करने वाली छात्राओं को 25 रु० मासिक की छात्रवृत्ति और प्रशिक्षण महाविद्यालयों मे बी. एड. के लिए 40 रु० मासिक की छात्रवृत्ति देना।

16.05 नारी शिक्षा की समस्याएँ और समाधान
Problems & Remedies of Women Education

राष्ट्रीय नारी शिक्षा समिति के अनुसार स्त्री शिक्षा की समस्याओं का यथाशीघ्र समाधान किया जाये, इसके लिए विशिष्ट व्यवस्था होना चाहिए, पर्याप्त धन की व्यवस्था की जानी चाहिए और उन राज्यों मे जहाँ व्यक्तिगत प्रयत्नों का अभाव है वहाँ राज्य सरकारों को व्यवस्था करनी चाहिए।[1] भारतीय संविधान 15 के अनुसार भी राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध धर्म, वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान

---

1. *Report of the National Commission, on Women's Education* 1959, p. 3

अथवा इनमें से किसी के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा।[1] इसके अतिरिक्त नारी शिक्षा के प्रसार हेतु केन्द्रीय और विभिन्न राज्य सरकारें बराबर प्रयत्न भी कर रही हैं, तथापि इस क्षेत्र में आशातीत उन्नति नहीं हो पाई है, इसका प्रमुख कारण है कुछ समस्याओं का भारतीय जीवन में विद्यमान रहना है।

1. भ्रमात्मक परम्परागत दृष्टिकोण
False Conventionl Outlook

इस वैज्ञानिक युग में अब भी असंख्य नर नारी भ्रमात्मक परम्पराओं और कुरीतियों के शिकार हैं। भारतवासियों की रूढ़िवादिता को देखकर एक बार एडम्स महोदय ने कहा था कि भारतीयों की यह मान्यता कितनी हास्यास्पद है कि यदि वे नारियों को शिक्षा देंगे तो वे विधवा हो जायेंगी अथवा भ्रष्ट हो जायेंगी। अनेकों हिन्दुओं और मुस्लिम परिवारों में आज भी बाल विवाह की कुप्रथा विद्यमान है। लड़की को घर से निकालना पारिवारिक प्रतिष्ठा के प्रतिकूल समझा जाता है। अधिकतर भारतवासी तो अब भी लड़की को बोझ समझते हैं और उन पर व्यय किया हुआ धन निरर्थक समझा जाता है।

यदि लड़कियों के माता पिता अथवा अभिभावकों का यही दृष्टिकोण रहा तो नारी शिक्षा के प्रसार हेतु सरकार के समस्त कार्यक्रम बेकार हो जायेंगे। अतः आवश्यकता है, उचित सामाजिक दृष्टिकोण को विकसित करने की। यदि यह नहीं हुआ तो नारी शिक्षा का समुचित प्रसार असम्भव है।

2. अशिक्षित जनसंख्या
Uneduated Population

हमारे देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि आजादी के तेइस वर्ष पश्चात भी 75% नर-नारी अशिक्षित हैं। जिस देश में अशिक्षा का साम्राज्य हो वहाँ रूढ़िवादिता और कुरीतियों का होना कोई अस्वाभाविक नहीं है। अशिक्षित व्यक्तियों को सही बात समझाना बहुत कठिन कार्य है। नारी शिक्षा के प्रसार में सबसे बड़ी बाधा इसीलिए है जब तक देश की अधिकांश जनता शिक्षित नहीं होगी, जब तक सामाजिक और सांस्कृतिक विकास असम्भव है, अत ऐसी स्थिति में नारी शिक्षा की प्रगति केवल स्वप्न मात्र है।

3. निर्धनता
Poverty

हमारे देश में सामान्य जनजीवन की सर्वप्रमुख समस्या आर्थिक संकट है।

---

1. The State shall not discriminate against any citizen on grounds only of religion, race, caste, sex, place of birth or any of them.

   Constitution of India, Article 15

अधिकांश परिवार इस प्रकार के हैं जो अपनी आवश्यक आवश्यकताओ की पूर्ति भी नही कर पाते। ऐसी स्थिति मे लड़कियों का पढ़ाना तो दूर, लड़को को ही पाठशाला भेजना असम्भव है।

4. पृथक पाठ्यक्रम का अभाव
Lack of Seperate Curriculum

इस संकटमय स्थिति मे केवल एक ही उपाय है, और वह सरकार द्वारा नि:शुल्क नारी शिक्षा। सरकार को स्वयं ही ग्रामीण क्षेत्रो की शिक्षा व्यवस्था करनी चाहिए। राष्ट्रीय नारी शिक्षा परिषद् इसके लिए प्रयत्नशील है और चौथी पचवर्षीय योजना मे इसके लिए समुचित धन राशि की व्यवस्था भी की गई है।

आज की स्थिति मे प्राथमिक स्तर मे लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक लड़के और लड़कियो के पाठ्यक्रम मे कोई अन्तर नही है। यहाँ हमारे कहने का तात्पर्य यह नही है कि पाठ्यक्रम मे विशेष अन्तर की आवश्यकता है, बल्कि कहने का अभिप्राय यह है कि मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से बालिकाओं की आवश्यकताएँ, रुचियाँ अभिवृत्तियाँ, सामर्थ्य और क्षमता बालकों से भिन्न होती है और ऐसी स्थिति में एक ही पाठ्यक्रम का प्रावधान उचित नही है। अतः अनिवार्य विषयो के अतिरिक्त, कुछ ऐसे विषयों का ज्ञान आवश्यक है जो छात्राओं को भारतीय दृष्टिकोण और पारिवारिक जीवन का ज्ञान प्रदान कर सके।

5. अध्यापिकाओं का अभाव
Lack of Lady Teacher

अध्यापिकाओ का अभाव नारी शिक्षा की प्रगति मे एक बाधा है। शहरो की स्थिति तो फिर भी सन्तोषप्रद है परन्तु ग्रामीण क्षेत्रो में स्थिति बहुत खराब है। इसके कई कारण हैं—प्रथम तो स्त्रियो मे शिक्षा का अभाव है, दूसरे जो स्त्रियाँ शिक्षित हैं वे नौकरी के लिए दूर नहीं जा सकती, कुछ लड़कियाँ शादी से पूर्व तो अध्ययन व्यवसाय में लगी रहती हैं परन्तु शादी के पश्चात् उन्हे प्रायः नौकरी छोड़नी पड़ती है, इन सब कारणों से अध्यापिकाओं का अभाव बराबर बना रहता है। प्रथम तो लड़कियो के विद्यालयो का अभाव रहता है, परन्तु जैसे तैसे विद्यालयो की व्यवस्था होती है तो अध्यापिकाओ का अभाव बना रहता है, ऐसी स्थिति मे माता पिता और अभिभावक यही उचित समझते हैं कि लड़कियो को शाला मे भेजने की अपेक्षा घर मे काम कराना ही उचित है।

इस समस्या का समाधान सरकार द्वारा ही सम्भव है। यदि ग्रामीण क्षेत्रो मे अध्यापिकाओ के लिए आवास की व्यवस्था की जा सके तो सम्भवतः अध्यापिकाओं का अभाव पूरा हो सके। इसके अतिरिक्त अल्प सामयिक अध्यापन व्यवसाय द्वारा विवाहित स्त्रियो को आकर्षित किया जा सकता है। स्त्रियो के लिए आयु प्रतिबन्ध

हटा दिया जाये तो अधिक उत्तम है। अध्यापिकाओं की प्रशिक्षण सुविधाओं को यथ
सम्भव बढ़ाया जाये।

6. दोषपूर्ण शिक्षा प्रशासन
Defective Educational Administration

स्वतन्त्रता से पूर्व नारी-शिक्षा की दशा अत्यन्त शोचनीय थी, परन्तु स्वतन्त्र
के पश्चात् भी हम कोई आशातीत प्रगति नही कर पाये हैं, इसका अन्य कारणों
अतिरिक्त एक कारण दोषपूर्ण शिक्षा प्रशासन है। केवल मात्र कुछ थोड़े से राज्यों
अतिरिक्त अन्य सभी राज्यो मे नारी शिक्षा का प्रशासन पुरुषो के पास ही है। राज
स्थान, उत्तरप्रदेश, बिहार, आध्रप्रदेश, दिल्ली, बगाल के अतिरिक्त समस्त राज्यो
प्रशासन का भार पुरुषो के पास है। इससे प्रशासन दोषपूर्ण हो जाता है क्योकि पुरु
वर्ग स्त्रियों की समस्या से अवगत नही होता।

इस समस्या के समाधान स्वरूप यह आवश्यक है कि प्रत्येक राज्य मे नारी
शिक्षा का निदेशालय पृथक होना चाहिए। एक सचालिका के आधीन क्षेत्रानुसार उप
सचालिकाएँ हो और उनके आधीन विद्यालय निरीक्षिकाएँ हो। इस प्रकार नारी
शिक्षा के प्रशासन मे उचित सुधार करके ही शिक्षा नीति का निर्धारण होना चाहिए।

अन्त मे नारी-शिक्षा की समस्याओ और समाधानो के सदर्भ मे यह कहना
उचित होगा कि स्त्री शिक्षा के प्रति एक नवीन दृष्टिकोण विकसित करना अनिवार्य
है। प्रत्येक भारतवासी का कर्त्तव्य है कि पुरानी परम्परागत धारणाओ, धार्मिक
सकीर्णताओ और अनुचित दृष्टिकोणो को परिवर्तित कर नारी-शिक्षा के प्रति उचित
दृष्टिकोण विकसित करे। भारत की प्रत्येक शिक्षित नारी का यह कर्त्तव्य है कि वह
अपने पड़ोस और कार्यक्षेत्र मे अशिक्षित नारियो को शिक्षा के महत्व से परिचित
करायें और बालिकाओ की शिक्षा के प्रति उनके हृदय मे आस्था उत्पन्न करे। यदि
नारी वर्ग स्वयं ही सचेत होकर नारी-शिक्षा के लिए आन्दोलन करे तो कोई कारण
हमारे देश मे निरक्षरो की सख्या अधिक हो सके। सम्पूर्ण समाज को इस
परिचित होना आवश्यक है कि भारत मे नारियों के निश्चय, ठोस दृष्टिकोण,
और कार्यकुशलता पर ही उनकी शिक्षा का भविष्य निर्भर है।[1]

---

[1] Upon their determination, Compactness, good sense and efficiency rests the future of education women in India. Tara Ali Baig (Ed) *Women of India*, p 160

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. Desai, D. M.
   Universal Free and Compulsory Education in India, Indian Institute of Education, Bombay.

2. Karlekar, K.
   Special Curriculum for girls in Secondary Schools, Teacher Education, New Delhi, Feb 1960

3. Naik, C,
   Education of women in Bombay State, Bombay university, Ph. D. Thesis.

4. *Report of University Education Commission*,
   Ministry of Education, New Delhi, 1949

5. *Report of Secondary Education Commission*,
   Ministry of Education, New Delhi, 1953

6. *Report of the National Committee on women's Education*,
   Ministry of Education, New Delhi, 1959

7. *Report of the Indian Education Commission*,
   Ministry of Education, New Delhi, 1966

17.04 भारत में भाषाओं की स्थिति
Position of Languages in India

17.05 त्रिभाषी सूत्र और उसके कार्यान्वित में कठिनाई
Three Language Formula & Difficulties in Its Implementation

1. शैक्षिक भार
2. अमनोवैज्ञानिक हल
3. अंग्रेजी का ज्ञान अनावश्यक भार
4. हिन्दी भाषी क्षेत्रों पर अनावश्यक भार
5. हिन्दी भाषी क्षेत्रों में व्यावहारिक कठिनाइयाँ

17.06 अंग्रेजी का स्थान
Place of English

1. माध्यमिक शिक्षा आयोग और अंग्रेजी
2. कोठारी आयोग और अंग्रेजी

भाषा समस्या
LANGUAGE PROBLEM

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, मानवीय सामाजिकता का प्रदर्शन भावनाओं और विचारों की अभिव्यक्ति पर अवलम्बित है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी भाषा द्वारा अभिव्यक्ति से सन्तोष प्राप्त होता है, भाषा द्वारा व्यक्ति की छिपी हुई शक्ति का विकास होता है। भाषा के अनुसन्धान से व्यक्ति विकसित अवस्था मे पहुँचा है। भाषा के विकास द्वारा मानव और उसकी संस्कृति का विकसित रूप आंका जाता है। भाषा के विकास में समस्त मानव जाति का योग समाहित होता है। 'भाषा भवन के समान है जिसके निर्माण मे मानव जाति ने पत्थरों को लाकर एक भवन का रूप प्रदान किया है।'[1]

17.01 भाषा-एक समस्या
Language-A Problem

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात हमारे देश के सम्मुख अनेकों समस्याएँ आयी, कुछ समस्याएँ आज भी विद्यमान हैं, अनेकों समस्याओं का समाधान हो चुका है और

1. 'Language is like the building of which every human being brorght a stone.' —*Emerson*

कुछ समस्याओं का समाधान समय की गति से हो रहा है परन्तु भाषा सम
समस्या ही बनी रही । इस समस्या को ज्यों-ज्यों सुलझाने का प्रयत्न किय
समस्या त्यों-त्यों उलझती चली गई और आज यह समस्या अपने विक
हमारे सम्मुख है । इस समय हमारे देश मे 144 भाषाएँ और बोलियाँ बोल
और यही कारण है कि सब अपनी भाषा को ही सर्वोपरि समझते हैं औ
भाषा एक समस्या के रूप मे परिणित हो गई है । कोठारी आयोग के अनुस
न्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे देश मे अनेकों समस्याओं का सामना
परन्तु भाषा की समस्या अभी तक उसी प्रकार से उलझी हुई और अब भी
की सबसे बड़ी समस्या के रूप मे है।[1] अत देश को एक सूत्र में बांधने के लि
भाषा नीति का होना नितान्त आवश्यक है । इस समस्या का शीघ्र एवं स
समाधान राजनैतिक स्थिरता, शैक्षिक और सास्कृतिक विकास हेतु नितान्त
है । यदि इस समस्या का समाधान शीघ्र न हुआ तो यह समस्या और भी ग
जटिल होती चली जायेगी जिससे देश की एकता तथा अखडता को भारी
की सम्भावना है ।

17 02 शिक्षा का माध्यम-ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि
Medium of Instruction-Historical Backgro

भाषा एक समस्या के मूल मे सदैव एक ही प्रश्न है—और वह
माध्यम ? इसी प्रश्न को लेकर सघर्ष का प्रारम्भ हुआ और काल की गति के
भयंकर से भयकरतम् होता चला गया—आज इस समस्या की भयावह विभीषि
देश मे व्याप्त है । इस समस्या के भयानक स्वरूप का सक्षिप्त इतिहास
लिखित है ।

1. शिक्षा माध्यम के प्रारम्भिक प्रयास (1813–33) और भाषा
Early Efforts of Educational Medium (1813–33) & Language

शिक्षा माध्यम का सघर्ष इसी युग मे प्रारम्भ हुआ । मूल रूप से तीन
धाराएँ थीं । शिक्षा माध्यम के रूप में:—

(अ) प्राचीन भाषाएँ—अरबी, फारसी, सस्कृत रखी जायें

अथवा

(ब) देशी भाषाएँ हों,

1. Of the many problems which the Country has faced
independence, the language question has been one of the
complex and intractable and it still continues to be so.'
Report of the Education Commission, 1966, p. 13

अथवा

(स) अंग्रेजी भाषा को माध्यम बनाया जाये।

प्रथम विचारधारा में विश्वास रखने वाले व्यक्तियों का मत था कि भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता की रक्षा हेतु संस्कृत और अरबी भाषा के द्वारा योरोपीय विज्ञानों का ज्ञान प्रदान किया जाये। इस विचारधारा के प्रमुख समर्थक लार्ड हेस्टिंग्ज थे।

द्वितीय विचारधारा के समर्थक मुनरो थे और वे देशी एवं प्रान्तीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम रखना चाहते थे। इन समर्थकों का मत था कि देशी और प्रान्तीय भाषा द्वारा इंगलैंड को काफी लाभ पहुँचेगा।

तृतीय विचारधारा के समर्थक अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाने के पक्षपाती थे। यह समर्थक प्राय सभी प्रान्तों में विद्यमान थे। मिशनरियाँ भी इसी विचारधारा की समर्थक थी। अन्त में यही दल विजयी हुआ और भारतीय संस्कृति के ह्रास का प्रथम पाठ यहीं से प्रारम्भ हो गया तथा भारतीय सभ्यता पश्चिमी सभ्यता के रंग में इसी अशुभ काल से रंगती चली गई, जिसकी प्रक्रिया आज भी उसी गति से विद्यमान है और देश में फूट के दुर्गन्धमय वातावरण की प्रतीक्षा कर रही है।

5. अंग्रेजी के लिए लार्ड मैकाले के प्रयास
Lord Macaulay's Efforts for English

सन् 1833 के लगभग शिक्षा के माध्यम को लेकर एक बहुत बड़ा विवाद खड़ा हो गया। 10 जून 1934 ई० को लार्ड मैकाले गवर्नर जनरल की काउंसिल के 'कानून सदस्य' बनकर भारत पधारे। इन्हीं दिनों 1813 ई० के एक्ट की 43 वीं धारा का प्रश्न उठा। कानूनी सलाहकार होने के नाते लार्ड मैकाले ने सरकार के पूछने पर शिक्षा से सम्बन्धित विवरण प्रस्तुत किया।

मैकाले ने अंग्रेजी का पक्ष लेते हुए प्राच्य भाषाओं को गँवारू और अविकसित बताया। उसके अनुसार एक अच्छी योरोपीय पुस्तकालय की केवल मात्र एक आलमारी सम्पूर्ण भारतीय एवम् अरब साहित्य से बढ़कर है।[1] अंग्रेजी के गुणों का बखान करते हुए मैकाले ने कहा कि पश्चिम की भाषाओं में अंग्रेजी का सर्वश्रेष्ठ स्थान है। जिसको भी इस भाषा का ज्ञान है उसके पास वह बौद्धिक सम्पत्ति है जिसका निर्माण इस पृथ्वी पर सबसे अधिक बुद्धिमान राष्ट्रों ने किया है।[2]

---

1. A single shelf of a good European library was worth the whole native literature of India & Arabia.
Lord T. B. Macaulay's Minute

2. English stands pre-eminent among the language of the west. Whoever knows that language has ready access to all the vast intellectual wealth which all the wisest nations of the earth have created. *Ibid.*

और मातृभाषा के विषय मे मौन रहा। मिडिल स्तर पर शिक्षा का माध्यम निश्चित नहीं किया गया और स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार ही माध्यम के प्रश्न को सुलझाने की सिफारिश की गई। परिणामत माध्यमिक शिक्षा स्तर पर अंग्रेजी का प्रभाव बढ़ता गया और 1902 तक अंग्रेजी शिक्षण माध्यमिक स्तर का विशिष्ट उद्देश्य हो गया। भारतीय भाषाओं के अध्ययन को तिरस्कृत किया गया।[1]

5. भारतीय विश्वविद्यालय आयोग (1902) और भाषा
Indian University Commission (1902) & Language

आयोग ने अंग्रेजी को महत्वपूर्ण स्थान दिया और इससे सम्बन्धित निम्नलिखित सुझाव दिए :—

* जिन शिक्षकों की मातृभाषा अंग्रेजी नहीं है उन्हें अंग्रेजी का प्रशिक्षण दिया जाये।
* अंग्रेजी पढ़ाने के लिए उन शिक्षकों की नियुक्ति की जाये जिनकी मातृभाषा अंग्रेजी हो।
* स्कूलों मे अंग्रेजी शिक्षण की व्यवस्था को और अधिक बढ़ाया जाये।

उपरोक्त सुझावों से भारतीय भाषाओं का बहुत अधिक अहित हुआ और परिणामतः भारतीय भाषाओं का विकास अवरुद्ध हो गया।

6. राष्ट्रीय आन्दोलन और भाषा
National Movement & language

सन् 1902 तक देश मे राष्ट्रीय चेतना की चिंगारियाँ पूर्ण वेग से फैल चुकी थीं। अंग्रेजों का भारतीय भाषाओं के प्रति तिरस्कारपूर्ण एवम् उपेक्षित व्यवहार देख कर भारतीय नेताओं के हृदय मे रोष उत्पन्न हो रहा था। वे बराबर मातृभाषा को शिक्षा के माध्यम के रूप मे सिफारिश कर रहे थे। इधर राष्ट्रीय आन्दोलनों के कारण अंग्रेजों के पैर उखड़ रहे थे। सन् 1917 मे 'कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग' की नियुक्ति हुई और आयोग ने इण्टरमीडिएट स्तर तक शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषा बनाना स्वीकार भी कर लिया। इसके पश्चात् सन् 1937 तक भारतीय भाषाओं को माध्यम के रूप मे स्वीकार किया जाने लगा परन्तु कुछ विद्यालयों मे अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा दी जाती रही। उच्च शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी ही थी।

---

[1] The study of the Indian language was consequently neglected.
Nurullah and Naik, *A History of Education in India*, p 304

सन् 1944 में सर जॉन सारजेंट ने सुझाव दिया कि सभी उच्च विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होनी चाहिए और अंग्रेजी को द्वितीय अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाना चाहिए ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व, संक्षिप्त ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखने से ज्ञात होता है कि अंग्रेजी शासन काल में अंग्रेजी को जो सम्मान प्राप्त हुआ, वह आवश्यकता से अधिक था । एक ओर अंग्रेजी को पाठ्यक्रम का मुख्य विषय बनाया गया, दूसरी ओर यह शिक्षा का माध्यम भी बनी । अतः भारत की भूमि पर विदेशी पौधे को डेढ़ सौ वर्ष तक इस प्रकार सींचा गया कि आज उसकी मजबूत जड़ें इतना घर कर चुकी हैं कि उसको उखाड़ फेंकना तो दूर, उसे छूने तक से भय लगता है । भय का कारण भारतीयों की अंग्रेजी के प्रति आस्था और छिछली दलीलें नहीं हैं बल्कि भय का मूल कारण है कि आज भाषा का प्रश्न शैक्षिक न रहकर स्वार्थी राजनीतिज्ञों का अखाड़ा बन गया है ।

17 03 स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भाषा ?
Language After Independence ?

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भाषाई प्रश्न का समाधान करने के लिए अनेकों आयोगों ने सुझाव दिये । राष्ट्रीय एकता बनाये रखने के लिए इस समस्या पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया । विभिन्न स्तरों पर कितनी भाषाएँ पढ़ाई जायें ? किस भाषा का प्रारम्भ किस स्तर विशेष से हो ? कितनी अवधि तक किस भाषा को पढ़ाना उपादेय होगा ? विभिन्न स्तरों पर शिक्षा का क्या माध्यम हो ? आदि सभी प्रश्नों पर आयोगों द्वारा विचार किया गया जो इस प्रकार है.—

1. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948-49)
University Education Commission (1948-49)

आयोग ने विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा के माध्यम के विषय में गम्भीर रूप से विचार किया और मातृभाषा के द्वारा शिक्षा दिये जाने पर बल दिया । विश्वविद्यालय स्तर पर तीन भाषाएँ पढ़ाने की व्यवस्था निश्चित की :—

प्रादेशिक भाषा (Regional Language)

संघीय भाषा (Federal Language)

अंग्रेजी (English)

आयोग के अनुसार भारत प्रत्येक प्रान्त और इकाई को संघीय क्रियाओं में अच्छी तरह भाग लेने हेतु और प्रान्तों में पारस्परिक सद्भावना की अभिवृद्धि हेतु शिक्षित भारत को दो भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करना होगा और माध्यमिक तथा स्तर पर प्रत्येक छात्र को प्रादेशिक भाषा को जानना भी आवश्यक है,

साथ ही उसे संघीय भाषा की जानकारी भी होनी चाहिए और अंग्रेजी पुस्तकों को पढ़ने की योग्यता भी होनी चाहिए[1]।

भाषा समस्या की जटिलता एवम् गुरुहता पर विचार प्रगट करते हुए आयोग ने लिखा है कि शिक्षा-शास्त्रियों एवम् अन्य व्यक्तियों ने इस समस्या पर इतनी विरोधी विचारधाराएँ प्रगट नहीं की हैं। इसके अतिरिक्त इस प्रश्न को भावनाओं के साथ इस प्रकार गूँथा गया है कि शान्तमय ढग से विचार करना बहुत ही कठिन है।[2] फिर भी आयोग ने बहुत ही सोच-विचार कर इस समस्या के समाधान हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किये हैं:—

1. अन्तर्राष्ट्रीय तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दों का भारतीय भाषाओं का अनुवाद (भारतीयकरण) किया जाये।
2. उच्च शिक्षा स्तर पर अंग्रेजी के स्थान पर भारतीय भाषा का प्रयोग होना चाहिए।
3. संस्कृत की जटिलता, पाठ्य-पुस्तकों की कमी और अन्य कठिनाइयों के कारण इसे शिक्षा का माध्यम न बनाया जाये।
4. संघीय एवम् प्रादेशिक भाषाओं का विकास शीघ्रातिशीघ्र किया जाये।
5. उच्चतर माध्यमिक स्तर, स्नातक तथा विश्वविद्यालय स्तर पर संघीय भाषा का प्रयोग किया जाये।
6. अंग्रेजी के अध्ययन को जारी रखा जाये।

यदि आयोग के सुझावों का आलोचनात्मक मूल्यांकन किया जाये तो हम यह स्पष्टतः कह सकते हैं कि आयोग के सुझाव बहुत व्यावहारिक हैं। समस्या पर

---

1. But in order to enable every religion and unit of India to take its proper share in the Federal activities and to promote interprovincial understanding and solidarity, educated India has to make up its mind to be bilingual . . . .

University Education Commission, 1948-49, p 321

2. No other problem has caused greater controversy among education and evoked more contradictory views from our witnesses. Besides this question is so wrapped up in sentiment that it is difficult to consider it in a calm and detached manner.

Ibid, p. 305

यदि विचार किया जाये तो भारतीय भाषाओ तथा संघीय भाषा को शिक्ष माध्यम के रूप मे स्वीकार किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। तकनीकी और वैज्ञ शब्दकोष का भारतीयकरण होना अत्यन्त उपादेय है। अंग्रेजी को यथावत जारी के विषय मे कुछ विद्वानो मे मतभेद अवश्य है, परन्तु हमारी राय मे अंग्रेजी का वाछनीय है। यह निर्विवाद सत्य है कि अंग्रेजी ससार की प्रमुख भाषाओं मे से है और किसी भाषा का ज्ञान प्राप्त करना किसी भी दृष्टि से अहितकर नही है।

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53)
Secondary Education Commission (1952-53)

आयोग ने भाषा समस्या पर पर्याप्त विचार कर निम्नलिखित भाषाओं अध्ययन पर विशेष बल दिया.—

हिन्दी का स्थान

अंग्रेजी का स्थान

सस्कृत का स्थान

उपरोक्त तीनो भाषाओ की महत्ता पर विचार करने के पश्चात् माध्यमि स्तर पर भाषाओ के अध्ययन के विषय मे निम्नलिखित सुझाव दिये.—

(अ) माध्यमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम हिन्दी अथवा प्रादेशि भाषा हो।

(ब) मिडिल स्तर पर तीन भाषाओ को पाठ्यक्रम मे स्थान दिया जावेः—

(i) मातृ भाषा

(ii) अंग्रेजी

(iii) हिन्दी यदि मातृ भाषा है तो अन्य भारतीय भाषा

(स) उच्च अथवा उच्चतर माध्यमिक स्तर पर कम से कम दो भाषाओं को स्थान दिया जावे। इनमे से एक मातृभाषा हो या प्रादेशिक भाषा। दूसरी भाषा का चयन निम्नलिखित भाषा समूह से किया जावे.—

* हिन्दी (अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों के लिए)
* प्रारम्भिक अंग्रेजी (जिन्होंने मिडिल स्तर पर अंग्रेजी का अध्ययन नहीं किया है।)
* उच्च अंग्रेजी (जिन्होंने मिडिल स्तर पर अंग्रेजी का अध्ययन किया है।)
* एक आधुनिक भारतीय भाषा (हिन्दी के अतिरिक्त)

* एक आधुनिक विदेशी भाषा (अंग्रेजी के अतिरिक्त)
* एक शास्त्रीय भाषा

आयोग के भाषा सम्बन्धी सुझावों का अध्ययन करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि द्विभाषी सूत्र के द्वारा एक परिपक्व सुझाव दिया है परन्तु स्थिति की वास्तविकता का ध्यान नहीं रखा गया है। केवल दो भाषाओं के अध्ययन मात्र से समस्या का समाधान नहीं हो सकता।

3. केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड के सुझाव
Suggestions of Central Advisory Board of Education

26 जनवरी 1956 को केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड की 23वीं बैठक में भाषा के प्रश्न पर विचार किया गया। इस बैठक में त्रिभाषी सूत्र को अपनाया गया। इस सिद्धान्त के अनुसार विद्यार्थियों को माध्यमिक स्तर पर तीन भाषाओं का *अध्ययन करना होगा जिसकी रूपरेखा इस प्रकार निश्चित की गई—*

(अ) मातृ भाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा या उसका मिलाजुला रूप या मातृ-भाषा या प्राचीन भाषा का मिलाजुला रूप या क्षेत्रीय भाषा और प्राचीन भाषा का मिलाजुला रूप।

(ब) अंग्रेजी अथवा आधुनिक विदेशी भाषा।

(स) हिन्दी (अहिन्दी क्षेत्रों के लिए) अथवा अन्य कोई आधुनिक भारतीय भाषा (हिन्दी भाषी क्षेत्रों के लिए।)

यदि त्रिभाषी सूत्र को दार्शनिक दृष्टि से देखें तो हम कह सकते हैं कि यह समन्वयकारी प्रवृत्ति का सूचक है। यदि शैक्षिक दृष्टि से देखा जाये तो यह विद्यार्थियों पर बोझा सा प्रतीत होता है। फिर भी यदि राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधना है तो बोझा भी सहन करना होगा और हिन्दी भाषियों को दक्षिण की भाषाओं को सीखने का थोड़ा कष्ट भी वहन करना होगा। (त्रिभाषी सूत्र के विषय में विशद विवेचन इसी अध्याय के किसी पृथक अध्ययन बिन्दु में करेंगे।)

4. भावनात्मक एकता समिति (1961) और भाषा
Emotional Integration Committee (1961) & Language

सन् 1961 में डा० सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में एक समिति की नियुक्ति हुई। समिति को मूलतः भावनात्मक एकता पर सुझाव देने थे, परन्तु भाषा का प्रश्न एकता के लिए विष बन गया है अतः भाषा समस्या के समाधान हेतु त्रिभाषी सूत्र को स्वीकार करते हुए निम्नलिखित सुझाव दिये :—

1. हिन्दी संघ की राजभाषा है और एक समय मे यह देश की भाषा होगी अत. मातृभाषा के पश्चात् हिन्दी ही दूसरी महत्वपूर्ण भाषा है।
2. अंग्रेजी विश्वविद्यालय की और केन्द्र की प्रशासकीय भाषा के रूप मे अभी विद्यमान रहेगी। यद्यपि प्रादेशिक भाषाओं को उच्च शिक्षा का माध्यम होना है तथापि अंग्रेजी का ज्ञान विद्यार्थियों के लिये लाभप्रद है।
3. भाषाओं को सीखने की सबसे उपयुक्त अवस्था प्रारम्भिक अवस्था है। *अतः यह नितान्त आवश्यक है कि बालक को आरम्भिक अवस्था से ही* दूसरी भाषा का ज्ञान प्रदान किया जाये।
4. तीन भाषाओं को सीखने का उपयुक्त समय प्रारम्भिक माध्यमिक स्तर (class VII to X) है।
5. *जहाँ तक अंग्रेजी और हिन्दी को अनिवार्य रूप से आरम्भ करने की* अवस्था का प्रश्न है, यह प्रेरणा और आवश्यकता पर निर्भर करता है अतः इसे राज्य की इच्छा पर ही छोड देना चाहिए।
6. चार भाषाओं का अध्ययन किसी भी स्तर पर अनिवार्य नही होना चाहिए, परन्तु यदि कोई चार या अधिक भाषा सीखना चाहे, उसके लिए पूर्ण प्रावधान होना चाहिए।

आयोग ने उपरोक्त सिद्धान्तो के आधार पर निम्नलिखित संशोधित त्रिभाषा सूत्र प्रस्तावित किया है—

(अ) मातृ-भाषा अथवा प्रादेशिक भाषा

(ब) संघ की राजभाषा अथवा संघ की सह राजभाषा जब तक वह विद्यमान है।

(स) एक आधुनिक भारतीय अथवा विदेशी भाषा जो (अ) और (ब) मे न ली गई हों तथा जो शिक्षा के माध्यम के रूप मे प्रयोग की जाती हो।[1]

---

1. We, therefore recommend modified or graduated there *language formula to include*
   (a) The mother language or the regional language.
   (b) The official language of the union or the associate official language of the union so long as it exits; and
   (c) A modern Indian or foreign language not covered under (a) and (b) and other than that used as the medium of *instruction*.

   Report of the Education Commission, 1964-66, p. 192

भ्यवस्था हो ।

अहिन्दी क्षेत्रों के विद्यार्थियों को माध्यमिक स्तर पर देवनागरी लिपी द्वारा हिन्दी सिखाने की व्यवस्था हो ।

हिन्दी की पुस्तकों को रोमन लिपि मे प्रकाशित किया जाये ।

विश्वविद्यालय स्तर पर अंग्रेजी को उस समय तक माध्यम के रूप मे प्रयुक्त किया जावे जब तक प्रादेशिक भाषाएँ समृद्ध न हो जायँ । इसके साथ-साथ भारतीय भाषाओं को भी समृद्ध किया जावे ।

त के सुभाव आज स्थिति को दृष्टिगत करते हुए प्रायः ठीक से लगते तकों को रोमन लिपि मे प्रकाशित करना किस प्रकार से उपादेय ात कुछ कम समझ मे आने वाली है ।

राष्ट्रीय एकता समिति (1962) और भाषा

ational Integration Committee (1962) & Language

962 मे श्रीमती इन्दिरा गाधी को अध्यक्षता मे राष्ट्रीय एकता युक्ति की गई । समिति ने हिन्दी की महत्ता पर प्रकाश डाला ःया कि द्विभाषी शब्दकोष तैयार किये जाये जिससे प्रादेशिक भाषाएँ मीप आ सकें ।

य एकता समिति ने इस बात पर बल दिया कि हिन्दी क्षेत्रो मे किसी भाषा को—विशेषकर दक्षिण भारत की किसी भाषा की पढाई की जाये । इससे उत्तर और दक्षिण का भेद शीघ्र ही मिट सकेगा ज भारत का दो भागो मे बँट जाने का खतरा कायम है अपितु श और एक संस्कृति के लोगों को एक दूसरे के प्रति सर्वथा विदेशी ।[1]

शिक्षा आयोग (1964-66) और भाषा

ducation Commission (1964-66)

शिक्षा सलाहाकार बोर्ड ने (1956) ने त्रिभाषी सूत्र का प्रतिपादन स्य मंत्री सम्मेलन (1961) ने उसे पारित किया । कोठारी आयोग । त्रिभाषी सूत्र को कार्यान्वित करने मे अनेको कठिनाइयाँ हैं और ह सफलता प्राप्त नही कर सका है ।

आयोग ने त्रिभाषी सूत्र मे निम्नलिखित सशोधन प्रस्तावित किया है—

वभारत टाइम्स, अक्तूबर 4, 1961

1. हिन्दी संघ की राजभाषा है और एक समय मे यह देश की भाषा होगी अतः मातृभाषा के पश्चात् हिन्दी ही दूसरी महत्वपूर्ण भाषा है।
2. अंग्रेजी विश्वविद्यालय की और केन्द्र की प्रशासकीय भाषा के रूप मे अभी विद्यमान रहेगी। यद्यपि प्रादेशिक भाषाओं को उच्च शिक्षा का माध्यम होना है तथापि अंग्रेजी का ज्ञान विद्यार्थियों के लिये लाभप्रद है।
3. भाषाओं को सीखने की सबसे उपयुक्त अवस्था प्रारम्भिक अवस्था है। अतः यह नितान्त आवश्यक है कि बालक को आरम्भिक अवस्था से ही दूसरी भाषा का ज्ञान प्रदान किया जाये।
4. तीन भाषाओं को सीखने का उपयुक्त समय प्रारम्भिक माध्यमिक स्तर (class VIII to X) है।
5. जहाँ तक अंग्रेजी और हिन्दी को अनिवार्य रूप से आरम्भ करने की अवस्था का प्रश्न है, यह प्रेरणा और आवश्यकता पर निर्भर करता है अत. इसे राज्य की इच्छा पर ही छोड़ देना चाहिए।
6. चार भाषाओं का अध्ययन किसी भी स्तर पर अनिवार्य नहीं होना चाहिए, परन्तु यदि कोई चार या अधिक भाषा सीखना चाहे, उसके लिए पूर्ण प्रावधान होना चाहिए।

आयोग ने उपरोक्त सिद्धान्तो के आधार पर निम्नलिखित संशोधित त्रिभाषा सूत्र प्रस्तावित किया है—

(अ) मातृ-भाषा अथवा प्रादेशिक भाषा

(ब) संघ की राजभाषा अथवा संघ की सह राजभाषा जब तक वह विद्यमान है।

(स) एक आधुनिक भारतीय अथवा विदेशी भाषा जो (अ) और (ब) मे न ली गई हों तथा जो शिक्षा के माध्यम के रूप मे प्रयोग की जाती हो।[1]

1. We, therefore recommend modified or graduated there language formula to include:
   (a) The mother language or the regional language.
   (b) The official language of the union or the associate official language of the union so long as it exits, and
   (c) A modern Indian or *foreign language not covered* under (a) and (b) and other than that used as the medium of instruction.

   Report of the Education Commission, 1964-66, p 192

प्रत्येक भाषा की समयावधि
Duration of Each Language

आयोग ने प्रत्येक भाषा को समयावधि के आधार पर निम्नलिखित रूप क्रियान्वित करने का सुझाव दिया—

भाषाओं का अध्ययन	कक्षा
1 एक भाषा (मातृ भाषा) का अध्ययन	I—IV
2. इस स्तर पर दो भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य होना चाहिए। दूसरी भाषा या तो संघ की राजभाषा (हिन्दी) अथवा सह राजभाषा (अंग्रेजी) हो।	V—VII
3. इस स्तर पर तीन भाषाओं का अध्ययन हो। इनमे से एक संघ की राजभाषा हो अथवा सह राजभाषा (जैसा कि कक्षा V—VII मे निश्चित किया गया हो) होनी चाहिए।	VIII—X
4 किसी भी भाषा को अनिवार्य रूप प्रदान न किया जाये।	XI—XII

आयोग के भाषा सम्बन्धी समाधान के विषय मे भूतपूर्व शिक्षा मन्त्री श्री एम० सी० छागला ने कहा था कि आयोग ने शैक्षिक बिन्दुओं के आधार पर विचार किया है, परन्तु सरकार राजनीतिक बिन्दुओं के आधार पर विचार करेगी।

17 04 भारत में भाषाओं की स्थिति
Position of Languages in India

सन् 1961 मे जनगणना के साथ विभिन्न भाषा-भाषियों की गणना भी हुई थी। तालिका नं० 17 1 मे संविधान मे उल्लिखित विभिन्न भाषाओं के बोलने वालों की संख्या को स्पष्ट किया गया है। सन् 1961 मे भारत की कुल जनसंख्या 44 करोड़ थी। विभिन्न भाषाओं की स्थिति को देखकर यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि भारत में हिन्दी बोलने वालों की संख्या सबसे अधिक है।

तालिका नं० 17.1

संविधान में लिखित विभिन्न भाषाओं के बोलने वालों की संख्या

भाषा	बोलने वालों की संख्या
हिन्दी	17 करोड़ 46 लाख
तेलुगू	3 करोड़ 76 लाख
बंगला	3 करोड़ 38 लाख
मराठी	3 करोड़ 32 लाख
तमिल	3 करोड़ 6 लाख
उर्दू	1 करोड़ 70 लाख
गुजराती	2 करोड़ 3 लाख
कन्नड़	1 करोड़ 74 लाख
मलयालम	1 करोड़ 70 लाख
उड़िया	1 करोड़ 57 लाख
पंजाबी	1 करोड़ 9 लाख
असमिया	68 लाख
कश्मीरी	19 लाख
सिन्धी	13 लाख 71 हजार
संस्कृत	2,544

विभिन्न राज्यों में प्रमुख भाषाओं और बोलियों की स्थिति इस प्रकार है—

आन्ध्र प्रदेश:—तेलुगू—90·63%, उर्दू—7·75%

असम :—असमिया—57·14%, बंगला—17·60, हिन्दी—4·4%

बिहार :—हिन्दी—44·3%, दपही—35 30%, उर्दू—8 9%

होता है। फिर अहिन्दी भाषी क्षेत्रों की यह माँग कि हिन्दी भाषी कोई अन्य भारतीय भाषा और जहाँ तक सम्भव हो दक्षिणी भाषा का अध्ययन करें—हमें यह व्यावहारिक जान नहीं पड़ता। यह भावना तो द्वेष मय प्रवृत्ति का प्रतीक है। इसके अतिरिक्त यदि किसी अन्य भारतीय भाषा का अध्ययन कर भी लिया तो उसका कोई लाभ नहीं है, क्योंकि भाषा का अभ्यास और महत्व उसके प्रयोग में है न कि उसके अध्ययन में। अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में जो हिन्दी का प्रयोग होता है, प्रायः अधिकांश व्यक्ति हिन्दी समझते हैं, यह प्रश्न पृथक है कि वे पारस्परिक द्वेष के कारण। स्वयं को हिन्दी से अनभिज्ञ बतायें, परन्तु वास्तविकता ठीक इसके विपरीत है। हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि हिन्दी को भारत की सामान्य भाषा बनना है क्योंकि यह राष्ट्रभाषा है, अतः अहिन्दी क्षेत्रों को हिन्दी अनिवार्य होनी चाहिए, न कि हिन्दी भाषियों को कोई अन्य भाषा। जहाँ तक पारस्परिक विचारों के आदान प्रदान का प्रश्न है—हिन्दी के व्यावहारिक ज्ञान से सम्पूर्ण भारत में यह भाषा प्रयोग में लाई जा सकती है और वास्तव में देखा जाये तो इस भाषा में ... सामर्थ्य भी है।

हिन्दी भाषी क्षेत्रों में व्यावहारिक कठिनाइयाँ
Practical Difficulties in Hindi Speaking Areas

हिन्दी भाषी क्षेत्रों में अन्य भारतीय भाषाओं को प्रयुक्त करने में कई व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं जो इस प्रकार हैं :—

(i) संविधान में उल्लिखित चौदह भाषाओं किस भाषा का अध्ययन कराया जाये? इसके अतिरिक्त यदि विभिन्न छात्र एक ही शाला में विभिन्न भाषाओं का अध्ययन करना चाहें, तो यह किस प्रकार सम्भव है कि उनके लिए इतने अध्यापकों की व्यवस्था की जा सके।

(ii) अन्य भाषाओं के शिक्षण हेतु अध्यापकों की व्यवस्था होना प्रायः असम्भव सा प्रतीत होता है क्योंकि यदि भारतीय भाषाओं के अध्ययन हेतु अध्यापकों की नियुक्ति की जाये तो कम से कम दस हजार अध्यापकों की आवश्यकता पड़ेगी। इसके अतिरिक्त इस प्रकार के अध्यापकों के लिए यह बहुत आवश्यक है कि वे हिन्दी भी जानते हों अन्यथा उनका कोई उपयोग नहीं होगा। इस प्रकार की व्यवस्था निकट भविष्य में तो असम्भव सी प्रतीत होती है।

(iii) उपरोक्त कठिनाईयों के अतिरिक्त सबसे बड़ी कठिनाई आर्थिक है। राज्य सरकारों के पास इतना धन नहीं है कि अन्य महत्वपूर्ण शैक्षिक कार्यों को छोड़कर भाषाओं के अध्यापकों की नियुक्ति की जाये।

विश्व के अन्य राष्ट्र तो वैज्ञानिक प्रगति पर धन व्यय कर रहे हैं और हमारा राष्ट्र भाषा समस्या पर ही इतना व्यय करे, यह उपादेय नहीं।

उपरोक्त आलोचनात्मक मूल्यांकन से यह तो स्पष्ट है कि त्रिभाषी सूत्र को स्वीकार करने में अनेकों कठिनाईयाँ हैं। इसके अतिरिक्त जनता के सम्मुख इसका रूप भी पृथक पृथक रहा है। हमारी अपनी राय में तीन भाषाओं का शिक्षण प्रत्येक विद्यार्थी के लिए आवश्यक नहीं होना चाहिए। सा [illegible] ण शिक्षा हेतु यही पर्याप्त है कि मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग हो तथा शिक्षा माध्यम के रूप में क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग हो। जहाँ तक अन्तरदेशीय सम्पर्क का प्रश्न है, इसके लिए यह आवश्यक है कि कोई एक सम्पर्क भाषा हो अतः सम्पर्क के रूप में राष्ट्रभाषा का प्रयोग ही उत्तम है। इसलिए उन क्षेत्रों में जहाँ क्षेत्रीय भाषा राष्ट्रभाषा नहीं है, वहाँ राष्ट्रभाषा का शिक्षण प्राथमिक स्तर के समाप्त होने पर कर देना चाहिए। वैज्ञानिक तथा इससे सम्बन्धित शिक्षा हेतु अभी कुछ वर्षों के लिए अंग्रेजी [illegible] हुत जरूरी है कि अनुसन्धान कार्य [illegible] जिससे कुछ ही वर्षों में राष्ट्रभाषा [illegible] या तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने की क्षमता राष्ट्रभाषा में आ सके। अन्त में हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि भाषाई गुत्थी को अत्यन्त ही धैर्य से सुलझाना है। सारे भारतवासियों को इसमें सहयोग देना है और द्वेष की भावनाओं को त्याग कर ही भाषाओं का अध्ययन सम्भव है। इस समस्या को इस प्रकार हल नहीं किया जा सकता कि आप कहें 'क्योंकि मेरी एक आँख फूटी हुई है अतः मैं तो तभी साथ दे सकता हूँ बशर्ते आप भी अपनी आँख फोड लें।' त्रिभाषी सूत्र भी कुछ इसी प्रकार का है कि अनायास ही भाषाओं के बोझ से बच्चों को लादा जा रहा है। हाँ! यदि तीन भाषाओं के अध्ययन से कोई अच्छा फल प्राप्त हो तो इसे अवश्य स्वीकार किया जाये अन्यथा तो यही जरूरी है कि तीन भाषाओं का प्रावधान वहीं हो जहाँ आवश्यकता है। राष्ट्रभाषा को विकसित करना सभी भारतवासियों का पुनीत कर्त्तव्य है—अंग्रेजी के अध्ययन से कोई घृणा नहीं होनी चाहिए—प्रादेशिक भाषाओं का विकास करना चाहिए।

17.06 अंग्रेजी का स्थान
Place of English

अंग्रेजी एक विदेशी भाषा है। अंग्रेजों ने हमारे देश पर करीब सौ-सवासौ वर्षों तक राज्य किया, इसी कारण अंग्रेजी हमारी शिक्षा में आई। हमने उसे सीखा, बोला और लिखा अतः हमारे व्यवहार में उसका प्रवेश होना कोई अस्वाभाविक नहीं है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अंग्रेजों ने अपनी कूटनीति और दूरदर्शिता से अंग्रेजी

रूपी विष का पौधा भारत में लगाया। समय की गति के साथ वह खूब फूला और फ
तथा आज विषवृक्ष के रूप मे हमारे देश के अन्तर्गत विद्यमान है। पर
आज की स्थिति मे वह भारत में प्रयोग की जाने वाली प्रशस्त भाषा है
बुद्धिमानी भी यही है कि वास्तविकता को पहचाना जावे क्योंकि पिछले वर
मे हमने भाषा के प्रश्न पर सम्पूर्ण भारत मे अनुशासनहीनता का नग्न नृत्य देख
जिसमे राष्ट्रीय सम्पत्ति को बहुत आघात पहुँचा। अतः अंग्रेजी को कुछ
समय के लिए अंगीकार करना बहुत आवश्यक है।

प्राथमिक स्तर पर अंग्रेजी की कोई आवश्यकता नही है। माध्यमिक
स्तर पर इसका सामान्य ज्ञान ही बहुत है। विश्वविद्यालय स्तर पर अंग्रेजी
को उस समय तक स्थान दिया जावे जब तक प्रादेशिक भाषाएँ सशक्त नही हो
ती। अंग्रेजी के स्तर को बनाये रखने का यथासम्भव प्रयत्न किया जाये क्योंकि
ग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है और आधुनिक ज्ञान के विस्तृत शब्द भण्डार के
ष्टिकोण से इसके पास उत्तम सम्पति है।

अंग्रेजी के स्थान को निश्चित करने के लिए यह नितान्त आवश्यक है
: हम विभिन्न आयोगो के सुझावो को भी देखें जिससे वर्तमान स्थिति में इस
ाषा को कसौटी पर कसा जा सके।

माध्यमिक शिक्षा आयोग और अंग्रेजी

Secondary Education Commission and English

आयोग ने स्पष्ट किया कि सभी राज्यों मे अंग्रेजी माध्यमिक स्तर तक
निवार्य विषय के रूप मे स्वीकार की है अतः भविष्य मे भी इसे यह स्थान
प्त होना चाहिए। अंग्रेजी के पक्ष मे आयोग ने निम्नलिखित सुझाव दिये:—

1. अंग्रेजी देश के शिक्षित लोगों की लोकप्रिय भाषा है।
2. अंग्रेजी ने भारत मे राजनैतिक तथा अन्य क्षेत्रों में एकता हेतु बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया है।
3. अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भारत ने जो स्थिति प्राप्त की है वह अंग्रेजी ज्ञान प्राप्त शिक्षित भारतीयों के कारण है।
4. अनेकों शिक्षा-शास्त्रियों और वैज्ञानिकों के अनुसार अंग्रेजी का ज्ञान नितान्त आवश्यक है और इसके ज्ञान को किसी भी प्रकार नहीं त्यागा जा सकता।
5. यदि राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर अंग्रेजी को माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम से निकाला गया तो इसके परिणाम भारत के लिए हानिकर सिद्ध होंगे।

माध्यमिक शिक्षा आयोग के सुझाव परिपक्व अनुभव पर आधारित है । आयोग ने स्वयं स्वीकार किया है कि कुछ लोगों का मत है कि अंग्रेजी को अत्यधिक महत्व देने के कारण भारतीय भाषाओं की बहुत क्षति हुई है अतः इसे वह स्थान न दिया जाये जो स्वतन्त्रता से पूर्व प्राप्त था ।

शिक्षा आयोग और अंग्रेजी

Education Commission & English

कोठारी आयोग ने अखिल भारतीय शिक्षा संस्थानों और विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी को शिक्षा माध्यम के रूप में बनाये रखने पर बल दिया है । आयोग के मतानुसार अंग्रेजी का अध्ययन माध्यमिक स्तर से ही हो जाना चाहिए । उत्तम स्नातकोत्तर अध्ययन एवं अन्तर्राष्ट्रीय अनुसन्धान कार्य के लिए छः महाविद्यालयों को विकसित किया जाये जिनमें शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होनी चाहिए । इन महाविद्यालयों को विश्वविद्यालयों में से चुना जाये ।

उपरोक्त दो महत्वपूर्ण आयोगों के सुझावों पर दृष्टिपात करने के पश्चात् यह अनिवार्य है कि हम राष्ट्रीय नीति के संदर्भ में अंग्रेजी के स्थान को देखें । राजकीय भाषा (संशोधन) अधिनियम[1] (1967) लोकसभा में 27 नवम्बर 1967 को पारित हुआ । लोकसभा द्वारा संशोधित बिल राज्यसभा द्वारा 22 दिसम्बर, 1967 को पारित हुआ । इस बिल में स्पष्ट किया गया कि अंग्रेजी 'सहायक अतिरिक्त भाषा' के रूप में रहेगी । सबके मस्तिष्क में यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिए कि संविधान में वर्णित राजभाषा हिन्दी ही है । परन्तु अभी हमारे देश में किन्ही राज्यों के कुछ लोग इस प्रकार के हैं जो अभी अंग्रेजी को ही चलाना चाहते हैं, अतः यह हमारा उत्तरदायित्व है कि हम उन्हें समझें और उनके साथ समायोजित हों जिससे हिन्दी, हमारे देश की राजभाषा हो सके ।

अन्त में हम कह सकते हैं कि अंग्रेजी का भविष्य सहायक भाषा के रूप में रहेगा । प्राथमिक स्तर पर अंग्रेजी की कोई आवश्यकता नहीं है । माध्यमिक स्तर पर अंग्रेजी का सामान्य ज्ञान ही पर्याप्त है । उच्च स्तर पर कुछ समय के लिये अंग्रेजी को रखा जाये और इसी बीच में प्रादेशिक भाषाओं को माध्यम के रूप में अपनाया जाये ।

अन्ततोगत्वा हम कह सकते हैं कि प्रायः संसार के सभी देशों ने भाषा समस्या का किसी न प्रकार से हल किया है परन्तु हमारे देश का दुर्भाग्य है कि हम इस समस्या को अभी तक नहीं सुलझा पाये हैं । स्वतन्त्रता प्राप्ति के 22 वर्ष पश्चात्

---

1. *The Official language (Amendment) Act*, 1967 p. 1

भी हम अंग्रेजी की जड़ों को सींचने मे लगे हुए हैं । यद्यपि यह निश्चित है कि हिन्दी अंग्रेजी का एक दम स्थान नही ले सकती तथापि हमे इसके लिए कुछ करना ही होगा ।

यह निश्चित है कि अंग्रेजी को अब अधिक समय तक सम्पर्क भाषा बनाकर नहीं रखा जा सकता क्योंकि यह देश के अधिकांश निवासियो की भाषा नहीं है। जो लोग अब भी अंग्रेजी के वृक्ष को हरा-भरा देखना चाहते हैं । वे स्वयं को तो अंधकार मे डाल रहे हैं साथ ही समस्त देश को भी उसी अंधकूप मे ले जाना चाहते हैं और अब भी वे देश को अपनी आंखो पर गुलामी का चश्मा लगा कर देखते हैं । हिन्दी ही निकट भविष्य मे देश की सम्पर्क भाषा बनेगी क्योंकि य संघ की राजकीय भाषा है ।

ग्रन्थ-सूची
Bibliography

1. Avinashlingam, T. S.,
Ghandhiji's Thoughts on Education, Ministry of Education, New Delhi, 1958

2. Basu, A. N.
'In what Language shall we teach at our Universities,' *The Education Quarterly*, March 1955, New Delhi.

3. *Hindusthan Varshiki, (1968-69)*
Hindustan Samachar, Mandi House, New Delhi.

4. Parulekar, R. V.
The Medium of Instruction, Parulekar Memorial Committee, Bombay.

5. *Report of University Education Commission*,
Ministry of Education, Govt. of India, 1949

6. *Report of Secondary Education Commission*,
Ministry of Education, Govt. of India, 1953

7. *Report of Educatiou Commission*,
Ministry of Education, Govt. of India, 1964

8. *Report of Official Language Commission*,
Govt. of India, 1957

9. *The Official Language (Amendment) Act, 1967*
Ministry of Information & Broadcasting, Govt. of India, 1968

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. Express your views on the Language Problem in India. How far can we benefit ourselves the way other countries have solved their problem ?

(Rajasthan, 1962)

2. How [illegible] the Secretary. [illegible] What is the place of English [illegible] place Hindi in (a) Madras (b) U. P. ?

(Rajasthan, [illegible])

3. Write short note on—

The Third Language—a political artifice or an educational need ?

(Rajasthan, 1964)

4. What is your opinion of the three language formula ? How is it working in actual practice ? Would you recommend any change in its form and implementation in future ?

वर्तमान में प्रस्तुत किये गये त्रिभाषी सूत्र के सम्बन्ध में आपके क्या विचार हैं ? यह वास्तविक क्रियात्मक रूप में किस प्रकार कार्य कर रहा है ? भविष्य में इसके रूप एवं परिपालन में परिवर्तन के लिए आपके क्या सुझाव हैं ।

5. How far are the suggestion of Kothari Commission in regard to teaching of languages clear and in keeping with constitutional obligations ?

भाषाओं की शिक्षा के सम्बन्ध में कोठारी आयोग के सुझाव कहाँ तक स्पष्ट हैं और संवैधानिक कर्तव्यों के अनुकूल हैं ?

(राजस्थान, 1968)

अध्याय अट्ठारह

Chapter Eighteenth

पाठ्य पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण

Nationalization of Text Books

अध्ययन बिन्दु

Learning Points

18.01 पाठ्य-पुस्तकों का महत्व
Importance of Text Books

18.02 पाठ्य-पुस्तकों के दोष
Defects of Existing Text Books

1. मुद्रण दोष
2. वांछित चित्रों का अभाव
3. प्रकाशकों की लोभी प्रवृत्ति
4. अवांछनीय शब्दावली का प्रयोग
5. विषय से सम्बन्धित दोष

18.03 पाठ्य-पुस्तकों के सुधार हेतु सुझाव
Suggestions for the Improvement of Text Books

1. आचार्य नरेन्द्र देव समिति प्रतिवेदन (1953)
2. माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के सुझाव
   सुझावों का आलोचनात्मक मूल्यांकन
3. कोठारी आयोग (1966) के सुझाव
   आलोचनात्मक मूल्यांकन

18.04 पाठ्य-पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण क्यों ?
Why Nationalization of Text Books

18.05 पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से उत्पन्न समस्याएँ
Problems by Nationalization of Text Books

1. प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तों के विरुद्ध
2. राजनैतिक प्रचार की सम्भावना

पाठ्य पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण
NATIONALIZATION OF TEXT BOOKS

शिक्षा स्वयं मे एक प्रक्रिया है जो जन्म से मृत्यु तक निरन्तर एवं अबाध गति से सक्रिय रहती है। शिक्षा के अभाव मे मनुष्य निर्जीव है—शिक्षा की प्राप्ति से वह सजीव है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य क्रमशः स्वयं को प्राकृतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण के प्रति समायोजित करने का प्रयत्न करता है। संक्षेप में शिक्षा मानव की पथ-प्रदर्शिनी है जो भौतिक क्षेत्र में सांसारिक सुख एवं ऐश्वर्य प्रदान करती है और आध्यात्मिक क्षेत्र मे मुक्ति प्रदान करती है जिसका आधार होता है—ज्ञान। ज्ञान की प्राप्ति पूर्व ज्ञान पर आधारित होती है। पूर्व ज्ञान के कोष को सुरक्षित रखना नितान्त आवश्यक है जिससे ज्ञान और अज्ञान की परख की जा सके तथा ज्ञान को भावी पीढ़ी तक सुरक्षित तौर पर पहुँचाया जा सके। इसके लिए साधन की आवश्यकता होती है और वह साधन है पाठ्य पुस्तक।

18.01 पाठ्य-पुस्तकों का महत्व
Importance of Text Books

प्रत्येक समय मे चाहे वह प्राचीन रहा हो अथवा वर्तमान पाठ्य-पुस्तक किसी न किसी रूप में अवश्य रही है। प्राचीन भारत के भोज-पत्र अथवा ताम्र-पत्र, बौद्ध काल के चित्र, आज की पुस्तकें आदि मानवीय अभिव्यक्ति का साधन रही हैं। पाठ्य-पुस्तकों द्वारा संचित ज्ञान रूपी धन राशि भावी पीढ़ी को प्रदान की जाती है जो

भावी समाज की रचना हेतु पथ प्रदर्शिका के रूप मे कार्य करती । पाठ्य पुस्त के स्तर से शिक्षा का स्तर निर्धारित किया जाता है । उत्तम पाठ्य-पुस्तको द्वा वांछित रुचि, बौद्धिक योग्यता, अभिवृत्ति आदि को विकसित किया जाता है। मान के जीवन को सतुलित साँचे में ढालने का कार्य और उसमे अच्छे सस्कार उत्पन्न कर का कार्य पाठ्य-पुस्तको का ही होता है। अत: सम्पूर्ण समाज का सास्कृतिक, साम जिक, राजनैतिक, आर्थिक और आध्यात्मिक विकास पाठ्य पुस्तको के पृष्ठो प अंकित होता हुआ धरोहर के रूप मे भावी सन्तति के पास पहुँचता है और इस प्रका सम्पूर्ण मानव जाति को लाभान्वित करता है।

पाठ्य-पुस्तक सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया की आधार शिला है जो बालको मे अन्त दृष्टि और ज्ञान के प्रति अनुराग उत्पन्न करती है। अध्यापक के लिए इसकी विशेष महत्ता है क्योंकि इसकी सहायता से वह अध्यापन मे दक्षता प्राप्त करता है। शिक्षा के उद्देश्यो की पूर्ति मे पाठ्य-पुस्तके बहुत सहायक होती हैं--इन्ही की सहायता से हम विभिन्न स्तरो पर पाठ्यक्रम का अध्ययन करते हैं। अन्त मे पाठ्य-पुस्तको का सभी दृष्टियो से महत्व है, अत उनमे आवश्यक सुधार लाना नितान्त अनिवार्य है।

18 02 पाठ्य-पुस्तको के दोष
Defects of Existing Text Books

पाठ्य-पुस्तकों का स्तर बहुत ही गिर गया है। माध्यमिक शिक्षा आयोग ने भी पाठ्य-पुस्तकों के निम्न स्तर पर खेद प्रकट किया था। सक्षेप मे पाठ्य-पुस्तकों में निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं—

दोष देना व्यर्थ है क्योंकि प्रकाशित पाठ्य-पुस्तक की स्वीकृति अथवा अस्वीकृति तो पाठ्य-पुस्तकों से सम्बन्धित समिति पर निर्भर करती है। पाठ्य-पुस्तक समिति के सदस्य प्रकाशकों द्वारा खरीद लिए जाते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप प्रकाशकों द्वारा निम्न स्तर की कुछ पुस्तकें शिक्षा के पुनीत कार्य-क्षेत्र में प्रवेश कर जाती हैं जिसके कारण विद्यार्थियों के ज्ञान में अभिवृद्धि होने का प्रश्न ही नहीं उठता।

4 अवांछनीय शब्दावली का प्रयोग
Use of Undesirable Terminology

इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमें राष्ट्रभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं के शब्द भंडार की अभिवृद्धि करनी है, परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि हम पाठ्य-पुस्तकों में इस प्रकार के कठिन शब्दों का प्रयोग करें जो विद्यार्थियों को विषय वस्तु समझने में कठिनाई उपस्थित कर दें। प्रादेशिक भाषाओं में छपी पुस्तकों का तो हमें ज्ञान नहीं है परन्तु हिन्दी में प्रकाशित पुस्तकों में प्राय यह दोष दृष्टिगत होता है। हमें विद्यार्थियों के सम्मुख उनकी दैनिक जीवन की भाषा में विषय सामग्री परोसनी है न कि भयंकर शब्दावली का प्रयोग कर अपनी विद्वता का डंका बजाना है। हमारे दैनिक जीवन में कुछ शब्द इस प्रकार के हैं जो अंग्रेजी भाषा से लिये गये हैं, अतः यदि उन्हीं शब्दों को देवनागरी लिपि में प्रयोग किया जाये तो इसमें कोई हानि नहीं है। शब्द की आत्मा उसके अर्थ में है अनर्थ में नहीं।

5 विषय-वस्तु से सम्बन्धित दोष
Defects Concerning Subject Matter

पाठ्य-पुस्तक शैक्षिक जीवन की पथ प्रदर्शिका है, परन्तु यदि पथ प्रदर्शक ही भ्रष्ट हो जाय तो गलत दिशा में अथवा अज्ञान की ओर अग्रसर होना स्वाभाविक है। आज माध्यमिक स्तर पर अनेकों पाठ्य पुस्तकें इसी प्रकार की हैं जिनमें विषय वस्तु सम्बन्धी अनेकों दोष हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि पाठ्य-पुस्तकों के लिखते समय स्त्रोत पुस्तकों को नहीं देखा जाता, इसके अतिरिक्त पुराने तथ्यों को प्रदर्शित किया जाता है, कुछ पुस्तकों को राष्ट्रीय एकता के पोषक तत्वों से दूर रखा जाता है, कहने का तात्पर्य यह है कि विषय वस्तु की दृष्टि से पाठ्य-पुस्तकों में अनेकों कमियां हैं जिससे शैक्षिक स्तर शनैः शनैः गिर रहा है।

उपरोक्त दोषों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि पाठ्य-पुस्तकों में सुधार की आवश्यकता है। समय समय पर जितने आयोग और समितियाँ नियुक्त की गई, उन्होंने पाठ्य-पुस्तकों के सुधार हेतु आवश्यक सुझाव दिये।

18.03 पाठ्य-पुस्तकों के सुधार हेतु सुझाव
Suggestions for the Improvement of Text Books

पाठ्य-पुस्तकों के गिरते हुए स्तर पर समय समय पर आवश्यक सुझाव दिये

। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात विभिन्न समितियो, सम्मेलनों तथा आयोगो ने ध्यान
कर्षित कराया जिनका सक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है'—

1. आचार्य नरेन्द्रदेव समिति प्रतिवेदन (1953)

Report of Acharya Narendar Deva Committee (1953)

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सर्वप्रथम इस समिति ने पाठ्य-पुस्तको का अध्य-
यन किया और सुधार हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये:—

(अ) पाठ्य पुस्तकों की स्वीकृति हेतु शाला के प्रधानाध्यापक एवं अध्यापकों को उचित पाठ्य-पुस्तके चयन करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

(ब) एक बार स्वीकृत पाठ्य-पुस्तक का न्यूनतम कार्यकाल तीन वर्ष होना चाहिए।

(स) पुस्तक लेखन हेतु लेखको को पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए।

(द) लेखको को पुस्तक लेखन हेतु उचित धन दिया जाना चाहिए।

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग (1953) के सुझाव

Suggestions of Secondery Education Commission (1953)

माध्यमिक शिक्षा आयोग[1] ने पाठ्य-पुस्तको के गिरते हुए स्तर पर खेद प्रकट
किया और पाठ्य-पुस्तको मे निम्नलिखित दोष बताये.—

1 पाठ्य-पुस्तको की सामग्री विद्यार्थियो की रुचि और योग्यता के अनुसार नही होती।

2 पाठ्य-पुस्तको का सृजन इकाई के अनुसार नही होता जिससे एक पाठ का दूसरे पाठ से कोई सम्बन्ध नही रह पाता।

3. पाठ्य-पुस्तको की छपाई असन्तोषजनक होती है जिसके कारण विद्यार्थी-गण उनके प्रति निरुत्साह हो जाते हैं।

4 पाठ्य-पुस्तकों मे चित्र और रेखाचित्र उपयुक्त नही होते और उन्हे गलत ढग से प्रस्तुत किया जाता है।

---

1. Most of the books submitted and prescribed are po[or] specimens in every way—the paper is usualy bad, t[he] printing is unsatisfactory, the illustrations are poor a[nd] there are numerous printing mistakes If such books a[re] placed in the hands of the students it is idle to exp[ect] that would acquire any love for books or find inter[est] in them or experience the joy that comes from handl[ing] an attractive produced publication.

Report of the Secondary Education Commission, 1953, p 90

5. इन पुस्तकों मे केवल तथ्यों की प्रधानता होती है और समस्त सामग्री को रुचिपूर्ण ढग से नही संजोया जाता।
6. प्रायः पाठ्य-पुस्तकों के लेखक शाला परिस्थितियो से अनभिज्ञ होते हैं जिसके कारण ये पुस्तकें वांछित व्यवहार परिवर्तन करने मे असमर्थ रहती हैं और अध्यापकों की शिक्षण आवश्यकताओ की पूर्ति नही कर पाती।
7. पाठ्य-पुस्तकें प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तो, राष्ट्रीय भावात्मक एकता और अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना से शून्य होती हैं जिसके कारण वांछित उपलब्धियाँ प्राप्त नही हो पाती।
8. अनेक पाठ्य-पुस्तक समितियाँ निष्पक्ष भाव से पाठ्य-पुस्तको का चयन नही करतीं जिसके कारण निम्न स्तर की पुस्तकों को निरर्थक रूप से सहयोग प्राप्त हो जाता है।
9. शिक्षा का मध्यम प्रादेशिक भाषाएँ हो जाने के कारण पाठ्य-पुस्तको के लेख और प्रकाशन मे स्पर्द्धा समाप्त हो गई है क्योंकि लेखको और प्रकाशकों की सख्या कम हो जाने से साधन सीमित हो गये हैं।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने समस्त दोषों को ध्यान मे रखते हुए महत्वपूर्ण सुझाव दिये जो निम्नलिखित हैं —

1. प्रत्येक राज्य मे एक 'शक्तिशाली पाठ्य-पुस्तक समिति' होनी चाहिए जिसका कार्यकाल पाँच वर्ष होना चाहिए और उसे कार्य करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए।
2. 'शक्तिशाली पाठ्य-पुस्तक समिति' मे सात सदस्य रखे जायें जिसका गठन इस प्रकार हो —

* हाईकोर्ट का जज	1
* लोक सेवा आयोग का सदस्य	1
* राज्य के किसी विश्वविद्यालय का उपकुलपति	1
* प्रधानाध्यापक/प्रधानाध्यापिका	1
* प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री	2
* शिक्षा संचालक	1

उपरोक्त समिति को अग्रलिखित कार्य सौंपें गये—

(1) प्रत्येक विषय की पाठ्य-पुस्तकों का विवेचन करने हेतु विशेषज्ञों की नियुक्ति करना।

(ii) पाठ्य-पुस्तकों मे सृजन हेतु विशेषज्ञ विद्वानो को निमन्त्रित करना।

आयोग ने उपरोक्त दोषो को दृष्टिगत रखते हुए पाठ्य-पुस्तकों सम्बन्धी निम्नलिखित सुझाव दिये :—

1. पाठ्य-पुस्तको की दशा सुधारने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर कार्यक्रम बनाया जाये और प्रतिभावान लेखको को पुस्तको के सृजन हेतु प्रोत्साहित किया जाये ।

2 राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् (National Council of Educational Research & Training) के सिद्धान्त एवं कार्य योजना के अनुसार अन्य क्षेत्रो मे भी पाठ्य-पुस्तकों की दशा सुधारने हेतु कार्य हो ।

3. पाठ्य-पुस्तको के उत्पादन को शिक्षा मन्त्रालय द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र का कार्य स्वीकार करना चाहिए और इसके लिए स्वायत्त संगठन (Autonomous Organization) की स्थापना करनी चाहिए ।

4. प्रत्येक राज्य मे पाठ्य पुस्तकों के निर्माण के लिए पृथक रूप से विशेष समितियो की नियुक्ति होनी चाहिए ।

5 पाठ्य-पुस्तको की तैयारी और मूल्यांकन का समस्त भार राज्य के शिक्षा विभाग का होना चाहिए

6 पाठ्य-पुस्तको के बेचने के लिए छात्रो के सहयोगी भण्डार होने चाहिए।

7. पाठ्य-पुस्तको का उत्पादन एक निरन्तर प्रक्रिया है अतः पाठ्य-पुस्तकों के परिवर्द्धित संस्करण सामयिक रूप से समयानुसार निकलने चाहिए ।

8. राज्य द्वारा पाठ्य-पुस्तकों के सृजन मे योग्य लेखक आकर्षित नहीं होते क्योंकि राज्य द्वारा उदार पारिश्रमिक नही दिया जाता और यही कारण है कि निजी कार्य (Private Enterprise) राजकीय कार्य पर विजय प्राप्त कर लेता है। अतः यह आवश्यक है कि प्राइवेट कार्य की तुलना में राज्य द्वारा अधिक उदार पारिश्रमिक की व्यवस्था हो जिससे अच्छे लेखकगण आकर्षित हो सकें ।

9. प्रत्येक विषय मे कम से कम तीन या चार पाठ्य-पुस्तकें होनी चाहिए और शाला की आवश्यकतानुसार अध्यापकों को किसी भी पुस्तक का चयन करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए ।

10. पाठ्य-पुस्तकों का उत्पादन लाभ के आधार पर होना चाहिए, इसका एक मात्र उद्देश्य अच्छी पुस्तकों का सृजन होना चाहिए जिससे कम कीमत पर पुस्तकें प्राप्त हो सकें ।

11. पाठ्य-पुस्तकों पर केवल मात्र पांच पैसे की वृद्धि करने से सम्बन्धित अनुसन्धान शिक्षक निर्देशिकाएं (Teachers' Guides) तथा सहायक सामग्री

(Ancillary aids) पर धन व्यय किया जा सकता है और शिक्षक निर्देशिकाओं एवम् अन्य शिक्षण सामग्री द्वारा पाठ्य-पुस्तकों की पूर्ति हो सकती है।

12. पाठ्य-पुस्तकों के सृजन हेतु अधिकाधिक रुचि उत्पन्न करने के लिए योग्य व्यक्तियों से पाण्डुलिपियाँ प्राप्त की जानी चाहिये और लेखकों से उचित प्रबन्ध करने के पश्चात् पुस्तकों का प्रकाशन करना चाहिये।

आलोचनात्मक मूल्यांकन
Critical Evaluation

शिक्षा आयोग (1964-66) के समस्त सुझावों पर विचार करने के पश्चात् यह अवश्य कहा जा सकता है कि पाठ्य पुस्तकों के लिए राष्ट्रीय स्तर निश्चित कार्यक्रम की रूपरेखा बनाना नितान्त आवश्यक है। केन्द्रीय स्तर पर कार्य सम्पादित करने से पाठ्य-पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण हो जायेगा, क्या इस कार्यक्रम से निजी कार्य (Private Enterprise) हतोत्साहित नहीं होगा? क्या पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से समस्त देश में एक रूपता आना सम्भव है? क्या केन्द्रीय सरकार अथवा राज्य सरकार सम्पूर्ण उत्तरदायित्वों को निभाने में सफल हो सकेगी? क्या पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से प्रतियोगिता की भावना को क्षति नहीं पहुँचेगी? क्या इस प्रकार सृजनात्मक कार्य सम्भव हो सकेगा?

ये कुछ प्रश्न हैं जिनका उत्तर प्राप्त होना नितान्त आवश्यक है। परन्तु इन समस्त प्रश्नों का अर्थ यह नहीं कि पाठ्य-पुस्तकों के आधार हेतु सरकार कुछ भी न करे। आखिर पाठ्य-पुस्तकों का सम्पूर्ण कार्यभार तो सरकार को ही वहन करना होगा, परन्तु इसके लिए परिष्कृत कार्यक्रम बनाना नितान्त आवश्यक है।

18 04 पाठ्य-पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण क्यों?
Why Nationalization of Text Books

पिछले दो अध्ययन बिन्दुओं में हमने प्रचलित पाठ्य-पुस्तकों के दोषों और उनके सुधार हेतु आवश्यक सुझावों पर विधिवत चर्चा की है। पाठ्य-पुस्तकों से सम्बन्धित अनेकों सुझावों में से माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा कोठारी आयोग के कुछ सुझाव पाठ्यपुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से सम्बन्धित भी थे। अत. प्रश्न उपस्थित होता है कि पाठ्यपुस्तकों के राष्ट्रीयकरण की क्या आवश्यकता है? क्या राष्ट्रीयकरण ही सम्बन्धित समस्याओं का समाधान है? यदि निम्नलिखित बिन्दुओं के सदर्भ में इन प्रश्नों का समाधान ढूंढा जाय तो निश्चित ही राष्ट्रीयकरण एक मात्र हल है—

1. स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् हमने प्रजातान्त्रिक शासन पद्धति को अपनाया जिसका एकमात्र उद्देश्य सम्पूर्ण जनता को समान अवसर प्रदान करना था। यह तभी सम्भव था जबकि हम जन जीवन के हृदय में
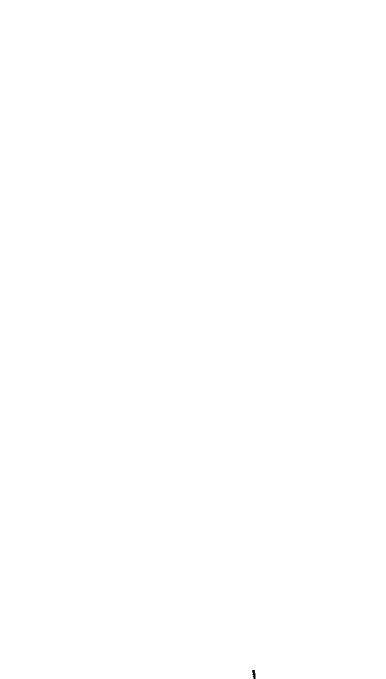
नहीं कहा जा सकता । सरकार को चाहिए कि वह नवीन पद्धति द्वारा पाठ्यपुस्तकों की रचना हेतु लेखकों को प्रशिक्षण दे और स्वयं ही प्रकाशित कराये । कुछ राज्यों में जहाँ पाठ्यपुस्तकों का राष्ट्रीयकरण हो चुका है वहाँ स्थिति मे काफी सुधार आया है ।

4. आज का युग आर्थिक युग है और आर्थिक सहायता को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है । हमे यह प्रयास करना है कि इस आर्थिक युग में अवांछनीय रूप से पैसा न कमाया जाये क्योंकि इससे भ्रष्टाचार और अनैतिकता का जन्म होता है । अनेकों राज्यों में पाठ्यपुस्तकों को स्वीकृत करने की प्रणाली बहुत दोषपूर्ण थी और जहाँ पाठ्यपुस्तकों का राष्ट्रीयकरण नहीं हुआ है वहाँ अब भी है । प्रकाशकों द्वारा पाठ्यपुस्तक-समिति के सदस्यों को अनुचित रूप से लाभ पहुँचाया जाता है जिसके कारण निम्न स्तर की पुस्तकें स्वीकृत हो जाती हैं । अतः आवश्यक है कि सरकार स्वयं ही पाठ्यपुस्तकों का प्रकाशन करे ।

उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर कहा जा सकता है कि पाठ्यपुस्तकों का राष्ट्रीयकरण समय की माँग के अनुसार है । परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से एक आदर्श पद्धति की स्थापना हो सकेगी, इतना अवश्य है कि उससे कुछ समस्याओं का समाधान अवश्य हुआ है तथापि कुछ समस्याएँ आज भी विद्यमान हैं ।

18.05 पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से उत्पन्न समस्याएँ
Problems by Nationalization of Text-Books

पाठ्य-पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण इसलिए किया गया कि जो समस्याएँ इस क्षेत्र में उत्पन्न हो गई हैं, उनका समाधान हो सकेगा । दुर्भाग्यवश उद्देश्य की प्राप्ति उस रूप में नहीं हो सकी है जितनी आशा थी । संक्षेप में पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से निम्नलिखित समस्याएँ उत्पन्न हो गई हैं :—

1. प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्तों के विरुद्ध
Against Democratic Principles

पाठ्य-पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों के विरुद्ध है । जनतन्त्र मे विचारों की विविधता होती है जो पाठ्य-पुस्तकों के रूप में अभिव्यक्त होती है और जिसके द्वारा संस्कृति का विकास होता है । पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से पुस्तकों की विविधता समाप्त हो जाती है जिसके फलस्वरूप वैचारिक भिन्नता से लाभ प्राप्त नहीं हो पाता ।

2. राजनैतिक प्रचार की सम्भावना
Possibility of Political Propaganda

पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण से यह भय रहता है कि कहीं सत्तारूढ़ दल पुस्तकों को अपनी विचारधारा के प्रसार का माध्यम न बना लें। अपरिपक्व अवस्था के बालकों पर इसका बुरा प्रभाव पड़ने की सम्भावना रहती है। प्रजातन्त्रात्मक शासन पद्धति में यह बहुत अनिवार्य है कि शिक्षा को राजनीति से अलग रखा जाये।

3. प्रकाशन में विलम्ब
Late Publication

पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात् प्रायः यह देखा गया है कि पुस्तकें समय पर प्रकाशित नहीं होतीं। कभी-कभी तो यह देखने में आया है कि वार्षिक परीक्षाओं के समीप पुस्तकों का प्रकाशन हुआ। प्रकाशन में विलम्ब होने के मुख्य रूप से निम्नलिखित कारण हैं :—

(क) सरकार के पास मुद्रण सम्बन्धी साधनों की कमी रहती है अतः इसके लिए उन्हें अन्य मुद्रकों पर अवलम्बित रहना पड़ता है।

(ख) धन प्राप्त करने के लिए वित्त विभाग की अनुमति आवश्यक होती है और वित्त विभाग में कठोर नियमों के कारण बड़ी कठिनाई से धन प्राप्त होता है, अतः प्रकाशन में विलम्ब होना स्वाभाविक है।

(ग) प्रायः ऐसा देखा गया है कि सरकारी कार्यों में कर्मचारी रुचि से कार्य नहीं करते। पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण के पश्चात भी ऐसा ही हुआ है।

4. वितरण की समस्या
Problem of Distribution

कभी-कभी पुस्तकें प्रकाशित तो हो जाती हैं परन्तु सरकार की उचित वितरण व्यवस्था के न होने के कारण पुस्तकें निरर्थक पड़ी रहती हैं। जब सरकार पुस्तक विक्रेताओं की सहायता मांगती है तो वे चोर बाजारी करते हैं जिससे छात्रों को अधिक मूल्य पर पुस्तकें खरीदनी पड़ती हैं। कोठारी आयोग ने इस समस्या के समाधान हेतु छात्र सहकारी समितियों की स्थापना का सुझाव दिया है।

5. राष्ट्रीयकृत पुस्तकों के मूल्य में अधिकता
Excess Prices of Nationalised Books

पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण का एक उद्देश्य उनके मूल्यों में कमी करना था, परन्तु वस्तु स्थिति ठीक इसके विपरीत है। प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित पुस्तकों में पारस्परिक होड़ के कारण मूल्य कुछ सन्तोषजनक रहते थे परन्तु सरकारी नियन्त्रण

से स्वस्थ स्पर्द्धा समाप्त हो गई है और मूल्यों में कमी का सिद्धान्त प्राय. समाप्त हो गया है जो अवांछनीय है।

6. लेखकों पर बुरा प्रभाव
Reverse Effect on Writers

पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण का लेखकों पर बुरा प्रभाव पड़ा है। राष्ट्रीयकरण से पूर्व विभिन्न लेखकों की विविध पुस्तकें प्रकाशित होती थी और प्रत्येक लेखक सर्वोत्तम पुस्तक लिखने का प्रयास करता था, परन्तु राष्ट्रीयकरण से लेखकों का उत्साह प्रायः समाप्त हो गया है जिससे विचारों की अभिव्यक्ति को हानि पहुँची है।

18 06 राष्ट्रीयकृत पाठ्य-पुस्तकों के सुधार हेतु सुझाव
Suggestion for the Improvement of Nationalised Text Books

प्राय. पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन की दो ही विधियाँ हैं, प्रथम विभिन्न प्रकाशकों द्वारा प्रकाशन-द्वितीय सरकार द्वारा प्रकाशन। दोनों ही विधियों के कुछ लाभ हैं और कुछ हानियाँ। जो शिक्षा शास्त्री पुस्तकों के प्रकाशन में स्वतन्त्रता चाहते हैं वे राष्ट्रीयकरण के विरुद्ध हैं, कुछ शिक्षा-शास्त्री इसके विपरीत हैं। पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण के पीछे किसी विचारधारा विशेष का प्रोत्साहन नहीं था बल्कि इसका मूल उद्देश्य पाठ्य-पुस्तकों के स्तर को ऊँचा करके सर्वसाधारण को शैक्षिक सुविधाएँ प्रदान करना था। अतः हमारी सम्मति में यही उचित है कि पाठ्य-पुस्तकों की राष्ट्रीयकरण नीति में कुछ आवश्यक सुधार लाये जायें जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :—

1. पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन, मुद्रण तथा लेखन से सम्बन्धित अनुसन्धान की व्यवस्था सरकार स्वयं करे।
2. पुस्तक लेखन हेतु अच्छे लेखकों को प्रोत्साहित किया जाये और अधिक पारिश्रमिक दिया जाये।
3. एक बार स्वीकृत पाठ्य-पुस्तक को कम से कम तीन वर्ष तक परिवर्तित न किया जाये।

[illegible] विभिन्न शिक्षण संस्थाओं को पाठ्य-पुस्तकों के चयन की स्वतन्त्रता [illegible] की जाये और इसके लिए आवश्यक है कि सरकार एक विषय [illegible] कम से [illegible] पुस्तकें प्रकाशित करें।

[illegible] सरकार [illegible] लेखकों की सूची तैयार करें और [illegible] विभिन्न [illegible] लेखन हेतु सुअवसर प्रदान करे।

6. पाठ्य-पुस्तकों को राजनैतिक प्रचार का केन्द्र बिन्दु न बनाया जाये। सरकार को चाहिए कि इससे सम्बन्धित सभी प्रकार की सावधानी बरती जाये जिससे हमारे देश मे प्रजातन्त्र की नींव अधिक गहरी हो सके और बालको को स्वतन्त्र चिन्तन के अवसर प्राप्त हो सकें।

7. सरकार को चाहिए की वह पाठ्य-पुस्तको का मुद्रण स्वयं करे। इसके लिए आवश्यक है सरकारी प्रेसो की व्यवस्था की जाये।

8. प्रकाशित पाठ्य-पुस्तकों मे होने वाली सामान्य त्रुटियों को समाप्त किया जाये। यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि हमारे देश की पाठ्य-पुस्तको मे इतनी गलतियाँ होती हैं कि विद्यार्थियों पर इसका बहुत बुरा प्रभाव पडता है, जबकि विदेशो मे प्रकाशित बडे, ग्रन्थो मे एक भी त्रुटि नही होती। इससे स्पष्ट है कि हम अपने व्यवसाय के प्रति अकर्मण्य हैं। सरकार को चाहिए कि राष्ट्रीयकृत पुस्तकों द्वारा आदर्श स्वरूप प्रदान करे जिससे अन्य प्रकाशको पर इसका अच्छा प्रभाव पड सके।

. राष्ट्रीयकृत पाठ्य-पुस्तको के वितरण हेतु यह बहुत आवश्यक है उनका प्रकाशन निर्धारित समय से पूर्व हो और वितरण व्यवस्था उत्तम हो। उचित वितरण व्यवस्था के लिए कोठारी आयोग के सुझावानुसार छात्र सहकारी समितियो की स्थापना उत्तम रहेगी जिससे काला बाजारी को रोका जा सकता है।

रोक्त सुझावों के सदर्भ मे हमारे सम्पूर्ण विवेचन का उद्देश्य यही है कि पाठ्य-पुस्तकों का आदर्शमय स्वरूप उपस्थित करना चाहिए क्योंकि लेखकों द्वारा लिखी गई उत्तम पाठ्य-पुस्तकें विद्यार्थियों की रुचियों को ती हैं और अध्यापकों को अपने व्यवसाय के प्रति अधिक सचेत करती हैं।

18.07 राजस्थान में पाठ्य-पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण
Nationalization of Text-Books in Rajasthan

ा कि हम अध्ययन बिन्दु 18.03 में स्पष्ट कर चुके हैं कि कुछ राज्यों बिहार, उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, मद्रास, उड़ीसा और केरल मे आंशिक य-पुस्तकों का राष्ट्रीयकरण हो चुका है। इसी प्रकार सन् 1964 से रकार ने भी पहली से आठवी कक्षा तक की पाठ्य-पुस्तकों का राष्ट्रीय- है। सन् 1954 मे राष्ट्रीयकरण पाठ्य-पुस्तक परिषद की स्थापना की समय हमारे राज्य मे पाठ्य-पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण का स्वरूप इस

1. शक्तिशाली पाठ्य-पुस्तक समिति
High Power Text Book Committee

माध्यमिक शिक्षा आयोग के महत्वपूर्ण सुझाव के अनुसार राजस्थान में शक्तिशाली पाठ्य-पुस्तक समिति की स्थापना की गई जिसमे निम्नलिखित सदस्य हैं—

(I) उच्च न्यायालय का न्यायाधीश,
(II) राजस्थान लोक सेवा आयोग का सदस्य,
(III) राष्ट्रीयकरण बोर्ड का अध्यक्ष।

2 राष्ट्रीयकरण बोर्ड
Nationalization Board

राष्ट्रीयकरण बोर्ड का सगठन इस प्रकार है—

(I) शिक्षा सचालक,
(II) राजस्व बोर्ड का सदस्य,
(III) वित्त विभाग का उपसचिव,
(IV) शिक्षा विभाग का उपसचिव,
(V) उपशिक्षा सचालक अथवा समकक्ष अधिकारी।

3. अन्य व्यवस्थाएं
Other Arrangements

विभिन्न विषयो पर लेखकों से पाण्डुलिपियाँ आमन्त्रित की जाती हैं तत्पश्चात् समस्त पाण्डुलिपियाँ समीक्षा हेतु समीक्षकों के पास भेजी जाती हैं। सभी समीक्षक अपना प्रतिवेदन मुख्य समीक्षक के पास प्रेषित करते हैं। मुख्य समीक्षक सभी समीक्षाओं के अध्ययन के पश्चात् पाण्डुलिपियो को राष्ट्रीयकरण बोर्ड के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है, जो भी निर्णय होता है उसे 'शक्तिशाली पाठ्य-पुस्तक समिति' के पास भेजा जाता है।

उपरोक्त सभी औपचारिकताओ और व्यवस्थाओ के पश्चात् स्वीकृत पाण्डुलिपि को मुद्रण हेतु भेज दिया जाता है। अन्त में प्रकाशित पाठ्य-पुस्तक को आवश्यकतानुसार वितरित किया जाता है।

18.08 निष्कर्ष
Conclusion

हमारी राय में केन्द्रीय सरकार द्वारा आदर्श पाठ्य-पुस्तकों का उत्पादन नितान्त आवश्यक है। इसके लिए सरकार द्वारा पाठ्य-पुस्तकों से सम्बन्धित न्यूनतम

निर्धारित मान्यताएं निश्चित कर देनी चाहिए और प्रतियोगिता की भावना स्वरूप निजी कार्य करने वाली संस्थाओं को आमन्त्रित किया जाना चाहिए। राज्य सरकारों को यह पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वे अपनी परिस्थितियों के अनुकूल पाठ्य-पुस्तकों को परिमार्जित कर सकें। इससे लेखकों को प्रोत्साहन भी मिलेगा और पाठ्य-पुस्तकों की हीन दशा में सुधार भी हो सकेगा।

कहने का तात्पर्य यह है कि केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रस्तावित पाठ्य-पुस्तकों का आदर्श स्वरूप राज्य सरकारों के लिए उत्तेजना पूर्ण होना चाहिए। पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन में व्याप्त भ्रष्टाचार समाप्त होना चाहिए। पाठ्य-पुस्तक के चयन का आधार उसकी श्रेष्ठता होनी चाहिए। यदि पाठ्य-पुस्तकों की हीन दशा और व्याप्त भ्रष्टाचार को राष्ट्रीयकरण द्वारा दूर किया जा सकता है तो राष्ट्रीयकरण कर देना ही उचित है।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. *Report of Secondary Education Commission,*
Ministry of Education, Govt. of India, 1953.

2. *Report of Education Commission,*
Ministry of Education, Govt. of India, 1966.

3. *Report of a Study by an International Team,*
Ford Foundation, New Delhi, 1954.

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. Do you subscribe to the view that nationalization of text-books is a desirable end ? How far, do you think, has the experiment of nationalization of text books been successful in Rajasthan ? Give reasons for your answer. (Rajsthan, 1961)

2. What are the advantages and disadvantages of nationalization of text-books in a democracy ? What steps would you take to get over the disadvantages ?

3. Formulate your regarding nationalization of text books in the light of situation prevailing in your state in regard to this issue. (Rajasthan, 1965)

4. What is the system of prescribing and/or recommending text books for secondary stage in your state ? Are you satisfied with that system ? If not, why, and what is your alternative suggestion for the same ?

आपके राज्य मे माध्यमिक स्कूलो के लिए पाठ्य-पुस्तकें निर्धारित करने या उनकी सिफारिश करने की क्या प्रणाली है ? क्या आप उस प्रणाली से सन्तुष्ट हैं ? यदि नहीं, तो बताएँ कि क्यो और साथ ही उसके बदले की दूसरी प्रणाली भी सुझाएँ ।

5. What is your opinion about nationalization of text books secondary stage ?

माध्यमिक स्तर की पाठ्य-पुस्तको के राष्ट्रीयकरण के सम्बन्ध मे आपके क्या विचार हैं ? (राजस्थान, 1967)

अध्याय उन्नीस

Chapter Nineteenth

राष्ट्रीय और भावात्मक एकता

National and Emotional Integration

अध्ययन बिन्दु

Learning Points

* 19.01 *राष्ट्रीय और भावात्मक एकता का अर्थ*
  Meaning of National and Emotional Integration
* 19.02 *भारतीय संस्कृति-राष्ट्रीय भावनात्मक एकता की प्रतीक*
  Indian Culture-A Symbol of National Emotional Integration
* 19.03 रामायण और महाभारत में राष्ट्रीय एकता
  National Integration in Ramayana and Mahabharta
* 19.04 *राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता के विघटनकारी तत्व*
  Destractive Elements of National & Emotional *Integration*
  1. साम्प्रदायिकता
  2. *भाषा समस्या*
  3. प्रादेशिकता की संकुचित भावनाएं
  4. *देशद्रोही राजनैतिक दल*
* 19.05 शिक्षा : राष्ट्रीय एकता का प्रभावोत्पादक साधन
  Education . An Effective Means of National Solidarity
  1. *राष्ट्रीय एकता गोष्ठी (1958)*
  2. भावनात्मक एकता समिति (मई, 1961)
  3. *उपकुलपति सम्मेलन (अक्टूबर, 1961)*
* 19.06 शिक्षा आयोग (1964–66) और राष्ट्रीय एकता
  Education *Commission* (1964–66) and National Integration

राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता
NATIONAL & EMOTIONAL INTEGRATION

'सर्वप्रथम एक देश के लोगो में अपनी मातृभूमि के प्रति सच्चा प्रेम होना चाहिए, तत्पश्चात ही कोई अन्य कार्य किया जा सकता है।'

—रवीन्द्र नाथ टैगोर

जिस क्रान्तिकारी युग मे आज भारत गुजर रहा है, सम्भवत इस प्रकार का युग भारत के इतिहास मे कभी न रहा होगा। इस युग मे यू तो अनेको समस्याए हैं परन्तु सबसे भयानक और विकराल समस्या हमारी आपस की फूट है। एक समय था जब हम एक थे और पराधीनता की जकडी हुई शृंखलाओ को तोडने के लिए कटिबद्ध थे। हमने पराधीनता की जजीरो को तोडा, स्वतन्त्रता की वेला मे सांस ली और उत्कर्ष की पहली मजिल को पार किया। हमारी दूसरी यात्रा प्रारम्भ हुई, सबको एक सूत्र मे बांधने के प्रयास हुए, परन्तु हमारे देश का दुर्भाग्य है कि हम एक न हो सके। अनेको छोटे-छोटे मनमुटाव के कारण, हम सदैव 'अनेक थे और अनेक रहे।' हम 'अनेक मे अनेक' सम्मिलित होते चले गये और 'अनेकता मे ...' के प्रयास लोप होते रहे। हमे बाद मे याद आया कि देश को एकता के सूत्र मे ...ने के लिए शिक्षा के सर्वोतमुखी कार्यक्रमो की अनुपस्थिति मे राष्ट्रोत्कर्ष, जो

सूत्र मे बाँधने का उत्तरदायित्व शिक्षा के सशक्त कन्धो पर है जो शालाओ और विश्वविद्यालयों पर निर्भर करता है।

19.01 राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता का अर्थ
Meaning of National & Emotional Integration

राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता का अर्थ है– एकत्व की भावना और राष्ट्र के प्रति प्रेम जिसमे संस्कृति, जाति, भाषा, धर्म आदि के अन्तर को भावनात्मक रूप से सम्पूर्णता में देखा जाये।[1]

सन् 1961 मे राष्ट्रीय एकता सम्मेलन मे राष्ट्रीय एकता की भावना को निम्नलिखित शब्दो मे स्पष्ट किया गया –

'राष्ट्रीय एकता एक मनोवैज्ञानिक एवम् शैक्षिक क्रम है जिसके द्वारा सभी व्यक्तियो के हृदय मे एकत्व की भावना, समान नागरिकता की अनुभूति और राष्ट्र के प्रति प्रेम की भावना को विकसित किया जाता है।'

उपरोक्त परिभाषाओ के आधार पर राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता हृदय पक्ष से सम्बन्धित है जिसके साथ भावना गुंथी हुई है। यदि देश मे एकता लानी है तो आवश्यकता है हृदय परिवर्तन की, जिससे भावनाएँ बदली जा सकें। यह कार्य भाषणों द्वारा सम्भव नही है, इसके लिए राष्ट्रोपयोगी संस्कारो को विकसित करने की आवश्यकता है और यह कार्य तभी सम्भव है जबकि वर्तमान पीढी को एकता की महत्ता स्पष्ट करते हुए भावी सन्तति को शिक्षित किया जाये।

आज की दशा को देखते हुए ऐसा लगता है कि हमारा देश विभिन्न सम्प्रदायों, धर्मों और भाषाओ मे बँटा हुआ है तथा हमारे देशवासी राष्ट्रीय एकता के अर्थ से परिचित नही हैं। परन्तु वस्तु स्थिति ठीक इसके विपरीत है— आज समस्त देशवासी चाहें वे गरीब हैं अथवा अमीर, शिक्षित हैं अथवा अशिक्षित, ग्रामीण है अथवा शहरी इस तथ्य से परिचित हैं कि देश की प्रगति एकता पर अवलम्बित है, यदि देश की एकता को किंचित भी आघात लगा तो देश की सीमाओं पर शत्रु दल सक्रिय हो सकता है। चीन और पाकिस्तान के आक्रमण के समय जो एकता का प्रदर्शन हुआ वह इस बात का द्योतक है कि भावना से हम सब एकता के सूत्र मे बंधे हैं।

19.02 भारतीय संस्कृति राष्ट्रीय भावनात्मक एकता की प्रतीक
Indian Culture-A Symbol of National Emotional Integration

हमारे देश की संस्कृति मे एकता के कारण सदैव उपस्थित रहे हैं। भारत मे

1. National and emotional integration may be defined as a feeling of oneness in which the differences of culture, castes languages, religion are seen emotionally in one compact whole.

[illegible] ... वाल्मीकि ने एक कथा में ... [illegible]

रामायण कथा में ही नहीं समग्र भारत की भौगोलिक एकता के दर्शन हुए हैं। एक ही कथा में अयोध्या, किष्किन्धा और लंका तीनों के नाम आने के कारण सारा देश एक दिखाई पड़ता है। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि इसने शैव और वैष्णव धर्मों का भेदभाव दूर कर दिया और इसीलिए राम ने युद्ध से पूर्व शिवपूजा की। [illegible] राम का ही एक ऐसा चरित्र रह गया जो धर्म में विष्णु का अवतारी चरित्र माना जाने लगा।

आधुनिक काल में भी देश की सभी भाषाओं में रामायण लिखी गयी। तमिल भाषा में कम्ब रामायण लिखी गयी थी, तेलुगु भाषा में कवि नाचन्द्र की प्रथम रामायण बनी, मलयालम में एजुतच्चन की आध्यात्मिक रामायण का प्रसार हुआ। मराठी में मोरोपन्त की रामायण पूजी गयी तो बंगला में कृत्तिवास की रामायण ने सुगन्ध फैलाई। असमिया भाषा में माधव कंदलि ने रामायण लिखकर असम को शेष भारत के साथ बाँधा, तो उड़िया में सरलादास और बलरामदास की रामायण ने वहाँ के लोगों को शेष भारत की भावनाओं के सूत्र में बाँध दिया। हिन्दी में गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस रचकर सारे हिन्दुओं में इस प्रकार की एकता स्थापित की कि फूट और कलह के प्रचण्ड से प्रचण्ड प्रभंजन तथा भारी से भारी झंझावत भी उसे ध्वस्त न कर सके।

रामायण की जैसी छाप भारत के प्रत्येक नर नारी पर पड़ी है, ठीक वैसी ही छाप महाभारत ने यहाँ के जन मानस पर छोड़ी है। इसके रचयिता महर्षि वेद व्यास ने हमारे राष्ट्रीय जीवन को ऐसे ताने बाने में पूरा कि असंख्य भेद भावों के होते हुए भी सारे भारत की नस नस में सांस्कृतिक एकता की धारा बहने लगी। आधुनिक भारतीय भाषाओं में भी यदि तेलुगु भाषा के तीन महाकवियों नन्नय, तिक्कन और एर्रन ने महाभारत की रचना की तो क [illegible] और कुमार

व्यास का महाभारत प्रसिद्ध हुआ। मलयालय मे एजुतच्चन का महाभारत उनको रामायण से भी अधिक प्रचलित हुआ, तो मराठी मे श्रीधर न पाण्डवप्रताप लिखकर जनता को देश की एकता का पाठ पढ़ाया। उड़िया म तो सरलादास ने महाभारत को जनगण के जीवन मे इस प्रकार मिला दिया कि वह उड़िया के व्यास ही कहलाने लगे। पजाबी मे कृष्णलाल ने महाभारत को कविता मे लिखकर जनता से भारतीयता का सदेश फैलाया, तो असमिया में रामसरस्वती ने महाभारत के आधार पर अनेक ग्रन्थों की रचना की। हिन्दी मे गोकुलनाथ और सबलसिंह चौहान का महाभारत प्रसिद्ध है। बगला में महाभारत के तीन से अधिक रूपान्तर हुए, जिनमे कासीराम दास के महाभारत ने सर्वाधिक महत्व का स्थान पाया।

इस प्रकार रामायण और महाभारत का सदेश सारे देश मे फैलकर महलों से झोंपड़ी तक पहुँचा और यहाँ के हर भाग के लोग राम और कृष्ण के माध्यम से एक दूसरे के साथ उस सास्कृतिक एकता के सूत्र मे बध गये जिसको शताब्दियो की बाहरी विविध विघ्न बाधाएं किसी भी तरह न तोड सकी।'

आज यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कुछ प्रान्त अपने को स्वतन्त्र देश बनाना चाहते हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब-जब हमने एकता के सूत्र को तोड़ा, तब-तब हमारे देश पर बाहरी साम्राज्यवादी शक्तियों का आधिपत्य हुआ। आज आवश्यकता है कि हम पारस्परिक द्वेष को भुलाकर एकता के पवित्र सूत्र मे बधें। हमारे प्राचीन ग्रन्थ एव धार्मिक मूल्य इस दृष्टि मे बहुत कुछ सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

19.04 राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता के विघटनकारी तत्त्व

Destractive Elements of National and Emotional Integration

आज हमारा देश पारस्परिक मन-मुटाव के कारण भारतीय उच्चादर्शों को भूल गया है। हम राष्ट्रीय सम्पत्ति को हानि पहुँचाते हैं, हिंसा करते हैं, एक दूसरे को हेय दृष्टि से देखते हैं। आखिर इन सबका कारण क्या है? वे कौन कौन से मूल तत्त्व हैं जो राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता मे विघटन प्रस्तुत कर रहे हैं? हमारी दृष्टि मे निम्नलिखित विघटनकारी तत्त्व हैं जो देश के विकास में बाधक बने हुए हैं—

1. साम्प्रदायिकता

Communalism

स्वतन्त्रता प्राप्ति के 23 वर्षों के पश्चात भी अग्रेजों के बोये हुए बीजों को सीच रहे हैं। अहमदाबाद के साम्प्रदायिक झगड़े इस तथ्य के द्योतक हैं कि आज भी सम्पूर्ण राष्ट्र एक नहीं है। इसके अतिरिक्त साम्प्रदायिकता की भावना से वशीभूत होकर हम प्रत्येक समस्या का समाधान राष्ट्रीय स्तर पर न सोचकर साम्प्रदायिक

र पर सोचते हैं। जनवरी, 1968 के मेरठ में हुए उपद्रव, बिहार में हुए
ानवीय व्यवहार और यदा कदा साम्प्रदायिक झगड़े हमारी पशुता के द्योतक हैं।
द ये भावनायें इसी प्रकार से विनाश के मार्ग पर चलती रही तो निश्चित ही
ारे देश का भविष्य अंधकारमय हो जायेगा।

2. भाषा समस्या
Language Problem

राष्ट्रीय एकता का दूसरा प्रमुख विघटनकारी तत्व भाषा है। पिछले वर्षों
भाषा के प्रश्न पर झगड़े मद्रास में हुए और जो उपेक्षित भाव हिन्दी के लिए
शित किया गया, वह राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बहुत बड़ी बाधा है। अहिन्दी
ी क्षेत्र में हिन्दी का विरोध मुख्य रूप से मद्रास और बंगाल में है। अन्य राज्यों
हिन्दी का विरोध नहीं है। झगड़े का मूल कारण अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी का
ोध नहीं है बल्कि अंग्रेजी का समर्थन है। आज यह स्थिति हो गयी है कि अंग्रेजी
समर्थक बिना किसी कारण के हिन्दी का विरोध करने लगे हैं। हमने मैसूर
ो यहाँ तक देखा कि वहाँ के मूल निवासी हिन्दी जानते हुए भी हिन्दी में बोलना
ान समझते हैं, वार्तालाप से यह भी पता लगा कि वहाँ के लोग हिन्दी नहीं
ते परन्तु वास्तविकता ठीक इसके विपरीत है क्योंकि हिन्दी फिल्मों में वहाँ इतनी
होती है जितनी कन्नड़ फिल्मों में नहीं। यहाँ हमारे कहने का तात्पर्य केवल
है कि वहाँ के लोग हिन्दी बोलना और समझना जानते हैं परन्तु अंग्रेजी के
होने के कारण हिन्दी का विरोध करने लगे हैं। परन्तु सम्भवतः हमारे दक्षिणी
इस तथ्य से परिचित नहीं हैं कि डेढ़ सौ वर्षों तक अंग्रेजों के आधीन रहने
ी हमारे देश की केवल मात्र दो प्रतिशत जनता ही अंग्रेजी जानती है—अतः
ाकार की भाषा को राज्य भाषा अथवा सम्पर्क भाषा बनाना भारत के अहित
ा। अन्ततोगत्वा यही कहा जा सकता है कि वर्तमान परिस्थितियों में भाषा
िकट समस्या के रूप में उपस्थित है जो राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता के
भयकर खतरा है।

3. प्रादेशिकता की संकुचित भावनाएं
Narrow Feelings of Regionalism

हमारे देश में भारतीयों की संख्या बहुत कम है क्योंकि देश के प्रति भक्ति
ा का अभाव है। हमारे देश के राजनैतिक दलों ने इस भावना को बढ़ाने में
रूप से बढ़ावा दिया है। जब उद्योगों के चुनने की योजना होती है तो
तिक नेता अपने चुनाव क्षेत्रों की प्रगति के विषय में ही सोचते हैं और साधन
ों की अनुपस्थिति में भी उद्योगों की स्थापना कराने में सफल हो जाते हैं।
ादेशिक ढंग की भावना बढ़ती है। जब तक हमारा दृष्टिकोण प्रादेशिकता

की संकुचित भावनाओं से हटकर व्यापक रूप से राष्ट्रीय नहीं होगा तब तक राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता की भावना का आना सम्भव नहीं है।

4. देशद्रोही राजनैतिक दल
Disloyal Political Parties

राष्ट्रीय भावनात्मक एकता को सबसे बड़ा खतरा उन राजनैतिक दलों से है जो छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए विदेशी सत्ताओं से सम्बन्धित हैं। अभी हाल में ही विद्रोही नागाओं का चीन से शस्त्र प्राप्त करना और नक्सलवाड़ी में चीन के स्वागत की तैयारी की योजना बनाना राजनैतिक दलों के देशद्रोही कृत्यों का ज्वलन्त उदाहरण है। यदि इस प्रकार के देशद्रोही राजनैतिक दलों पर रोक न लगायी गयी तो देश की अखण्डता खतरे में पड़ सकती है।

19.05 शिक्षा : राष्ट्रीय एकता का प्रभावोत्पादक साधन
Education : An Effective Means for National Solidarity

राष्ट्रीय एकता को विकसित करने के लिए शिक्षा प्रभावोत्पादक साधन है। शिक्षा द्वारा वांछित अभिवृत्तियों एवम् दृष्टिकोणों को विकसित किया जा सकता है। आज राष्ट्रीय एकता के मार्ग में जो बाधाएँ उपस्थित हो गई हैं उन्हें शिक्षा के द्वारा दूर किया जा सकता है क्योंकि इसके माध्यम से व्यक्ति संकुचित वृत्तों से निकलकर व्यापक वातावरण में विचरण करता है। सम्पूर्ण देश को एकता के सूत्र में बाँधने के लिए शिक्षा महत्वपूर्ण योग प्रदान कर सकती है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य केवल मात्र पुस्तकीय ज्ञान प्रदान करना ही नहीं होता बल्कि विद्यार्थियों में देशभक्ति, राष्ट्रीयता, बलिदान और सहन-शीलता की भावनाओं को विकसित करना भी है। यह केवल तभी सम्भव है जबकि शिक्षा प्रक्रिया में कुछ परिवर्तन हो।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता हेतु अनेकों प्रयास हुए और सभी गोष्ठियों एवं समितियों में यह स्वीकार किया गया कि राष्ट्रीय एकता हेतु शिक्षा को साधन के रूप में स्वीकार किया जाये। संक्षेप में इनका विवरण इस प्रकार है—

1. राष्ट्रीय एकता गोष्ठी (1958)
National Integration Seminar (1958)

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने राष्ट्रीय एकता पर विचार करने के लिए एक गोष्ठी का आयोजन किया। गोष्ठी में राष्ट्रीय एकता हेतु शिक्षा के महत्व पर बल दिया गया। शिक्षा को साधन के रूप में स्वीकार करते हुए गोष्ठी ने निम्न-लिखित सुझाव दिये—

1. राष्ट्रीय एकता हेतु यह अनिवार्य है कि भारतीय इतिहास को ठीक

प्रकार लिया जाये और उन अंशों को हटाया जाये जो साम्प्रदायिकता की भावना को विकसित करते हैं।

2. राष्ट्रीय भावना को सुदृढ़ करने के लिए शिक्षण संस्थाओं को महत्वपूर्ण उत्सव मनाने चाहिए।

3. धर्म और जाति के आधार पर छात्रवृत्तियाँ न दी जायें।

4. साम्प्रदायिकता की भावना को समाप्त करने के लिए यह अनिवार्य है कि साम्प्रदायिक आधार पर छात्रावास न बनाये जायें।

2. भावनात्मक एकता समिति (मई, 1961)
Emotional Integration Committee (May, 1961)

भारतीय सरकार के शिक्षा मन्त्रालय ने डा० सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में भावनात्मक एकता समिति की नियुक्ति की। समिति का विचार क्षेत्र निम्नलिखित था—

* राष्ट्रीय जीवन में भावनात्मक एकता की प्रक्रिया में शिक्षा का योग।
* उपरोक्त विचारधारा के सन्दर्भ में युवकों के लिए सकारात्मक शैक्षिक कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करना।

शिक्षा की महत्ता पर विचार स्पष्ट करते हुए समिति ने स्पष्ट किया कि भावनात्मक एकता को सुदृढ़ करने में शिक्षा महत्वपूर्ण योग प्रदान कर सकती है। शिक्षा का उद्देश्य केवल शिक्षा प्रदान करना ही नहीं है बल्कि विद्यार्थियों के सभी पक्षों का विकास करते हुए उनके व्यक्तित्व का विकास करना है। अतः शिक्षा का दृष्टिकोण विकसित करना चाहिए और एकता, राष्ट्रीय, बलिदान और सहिष्णुता की भावनाओं को विकसित कर तथा संकीर्णता की भावना को समाप्त कर देश के हित में कार्य करना चाहिए।[1]

शैक्षिक योगदान के सम्बन्ध में भावनात्मक एकता समिति के निम्नलिखित सुझाव थे—

(I) पाठ्यक्रम का पुर्नगठन (Reorientation of the Curriculum)

समिति के विचारानुसार शाला और महाविद्यालयों के पाठ्यक्रमों का पुनं-

1. Education can play a vita role in strengthening emoti onal integration It is felt that education should not only aim at imparting knowledge but, should develop all aspects of a students personality. It should broaden the outlook, foster a feeling of oneness and nationalism and a spirit of sacrifice and tolerance so that narrow group interests are submerged in the larger interests of the country.
Emotional Integration Committee, 1967.

गठन करना नितान्त आवश्यक है। प्राथमिक स्तर पर बालकों को राष्ट्रीय भावनाओं से ओत प्रोत करने के लिए राष्ट्रीय गान एवम् देश प्रेम के गीतों का अभ्यास कराया जाये। माध्यमिक स्तर पर भी इस प्रकार के शैक्षिक कार्यक्रमो पर बल दिया जाये जिससे भावनात्मक एकता प्रशस्त हो सके।

(II) भाषा एव लिपि (Language and Script)

उन क्षेत्रो मे जहाँ हिन्दी का ज्ञान पर्याप्त नहीं है, रोमन लिपि का प्रयोग अपेक्षित है। अहिन्दी क्षेत्रों में हिन्दी को प्रादेशिक लिपि द्वारा सीखने का प्रयास किया जाये तथा हिन्दी की पुस्तकों को प्रादेशिक लिपि मे प्रकाशित किया जाये। विश्वविद्यालय स्तर पर हिन्दी तथा अंग्रेजी का स्तर समान होना चाहिए। किसी भी प्रदेश पर भाषा थोपी न जाये तथा अल्पसख्यकों का ध्यान भी रखा जाये। भाषा समस्या का समाधान सौहार्दपूर्ण वातावरण मे होना नितान्त आवश्यक है।

(III) राष्ट्रीय गान (National Anthem)

राष्ट्रीय गान की महत्ता एव अर्थ से बालको को पूर्णरूपेण परिचित कराया जाये। समस्त देश मे राष्ट्रीय गान के प्रति आदर की भावना विकसित करना नितात आवश्यक है। बालकों को, राष्ट्रीय गान के समय अनुशासनात्मक ढग के प्रति जागरुक किया जाये।

(IV) राष्ट्रीय ध्वज (National Flag)

विद्यार्थियो को राष्ट्रीय ध्वज के इतिहास से परिचित कराना नितान्त आवश्यक है। बालको को राष्ट्रीय ध्वज के सम्मान की महत्ता से अवगत कराया जाये। राष्ट्रीय ध्वज में प्रयुक्त रगों का अर्थ एवम् उनके दार्शनिक स्वरूप से बालकों को प्राथमिक स्तर से ही परिचित कराया जाये।

(V) राष्ट्रीय दिवस (National Days)

समस्त देश की शालाओं मे राष्ट्रीय दिवसों का मनाना अनिवार्य होना चाहिए। अध्यापकों और विद्यार्थियों की उपस्थिति अनिवार्य होनी चाहिए। 15 अगस्त और 26 जनवरी को विशेष रूप से मनाया जाये।

(VI) पाठ्य सहगामी क्रियाएँ (Co-Curricular Activities)

समिति के अनुसार राष्ट्रीय भावानात्मक एकता के लिए पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ पर्याप्त रूप से उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। एक क्षेत्र के विद्यार्थियों को दूसरे क्षेत्रों मे भ्रमणार्थ ले जाना, एन० सी० सी०, स्काउटिंग, वादविवाद और पारस्परिक सदभावना हेतु सास्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन आदि पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

(VII) शपथ ग्रहण करना (To take Pledge)

विद्यार्थियों को देश एव देशवासियों की सेवा हेतु शपथ ग्रहण करायी ज
जिसका प्रारुप निम्नलिखित है—

* भारत मेरा देश है, समस्त भारतीय मेरे भाई और बहिन हैं।
* मैं अपने देश को प्यार करता हूँ, और मुझे अपने देश की सम्पन्न एवम् परम्पराओं पर गर्व है, मैं इसके लिए योग्य होने का सदैव प्रय करूँगा।
* मैं अपने माता पिता, अध्यापकों और अपने से बड़ों का मान करूँ और सबसे शालीनता का व्यवहार करूँगा।
* अपने देश और लोगों के प्रति मैं भक्ति की शपथ ग्रहण करता हूँ। मे प्रसन्नता उनकी भलाई और समृद्धि मे निहित है।

(VIII) अखिल भारतीय शिक्षा नीतियाँ (All India Educationa Policies)

समिति का मत था कि भावनात्मक एकता हेतु अखिल भारतीय स्तर प शिक्षा नीतियों का निर्धारण होना चाहिए। इन नीतियों का प्रारुप केन्द्रीय सरकार राज्य सरकारो, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के सक्रिय प्रयासों द्वारा तैयार होन चाहिए।

(IX) सामाजिक अध्ययन का शिक्षण (Teaching of Social Studies)

समिति के विचारानुसार सामाजिक अध्ययन के शिक्षण का महत्व केवल प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर तक ही सीमित न होकर विश्वविद्यालय स्तर पर भी होना चाहिए। यही केवल ऐसा विषय है जिसके द्वारा देश की भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक स्थिति का ज्ञान हो सकता है। सामाजिक अध्ययन के अन्तंगत भारत के महान पुरुषों की जीवनी, उनके द्वारा किये गये कार्य और प्राचीन भारत की गौरवमयी गाथा का उल्लेख अनिवार्य है।

3. उपकुलपति सम्मेलन (अक्टूबर 1961)
Vice Chancellers Conference (Oct 1961)

राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता हेतु शिक्षा के उत्तरदायित्व पर सम्मेलन ने निम्नलिखित सुझाव दिये—

1. अखिल भारतीय सहयोग की भावना को विकसित करने के लिए प्रत्येक विश्वविद्यालय को चाहिए कि सभी राज्यों के छात्रों के लिए कुछ प्रतिशत स्थान सुरक्षित करे।
2. विश्वविद्यालयों में साम्प्रदायिक भावना को नष्ट किया जाय।

3. छात्र संसदों को समाप्त कर पारस्परिक सहयोग की अभिवृद्धि हेतु सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाये।

4. विश्वविद्यालयों को छात्रों में धार्मिक सहिष्णुता को विकसित करना चाहिए।

5. विभिन्न भाषाओं और विशेषकर दक्षिण भाषाओं के अध्ययन की व्यवस्था प्रत्येक विश्वविद्यालय में होनी चाहिए।

4. राष्ट्रीय एकता परिषद् (सितम्बर, अक्टूबर, 1962)
National Integration Committee (Sept , Oct , 1962)

समस्त भारतवासियों को एक सूत्र में बाँधने और शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए डा० राधाकृष्णनन् ने परिषद् का उद्घाटन करते हुए कहा कि 'राष्ट्रीय एकता को ईंटा, हथौड़े, ईंट व पत्थरों से नहीं लाया जा सकता। इसका जन्म तो व्यक्तियों के हृदयों और मस्तिष्कों में शनैः शनैः होता है जिसका केवल मात्र एक साधन है और वह है शिक्षा। यह सम्भव है कि यह प्रक्रिया धीमी हो, पर यह स्वयं में स्थायी एवम् दृढ़ प्रक्रिया है।

राष्ट्रीय एकता हेतु शिक्षा को महत्वपूर्ण साधन स्वीकार करते हुए परिषद् ने निम्नलिखित सुझाव दिये—

1. माध्यमिक शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषाएँ हों।
2. त्रिभाषी सूत्र को लागू किया जाय।
3. हिन्दी को सम्पूर्ण देश की सम्पर्क भाषा बनाया जाये।
4. हिन्दी के समुन्नत होने तक अंग्रेजी को विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा का माध्यम स्वीकार किया जावे।
5. शिक्षा के माध्यम द्वारा राष्ट्रीय भावनाओं, पारस्परिक प्रेम और सद्भावना को विकसित किया जावे।
6. शिक्षा द्वारा भारतीयता की भावना उत्पन्न की जाये।
7. शालाओं का कार्य राष्ट्रीय गान द्वारा प्रारम्भ होना चाहिए।

उपरोक्त परिषदों, गोष्ठियों और सम्मेलनों के सुझावों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय और भावनात्मक एकता हेतु शिक्षा को प्रभावोत्पादक साधन के रूप में प्रयुक्त किया जाना आवश्यक है। राष्ट्रीय एकता के लिए लोगों के दिलों और दिमागों को परिवर्तित करना आवश्यक है – यह तभी सम्भव है जबकि शिक्षा द्वारा वांछित अभिवृत्तियों को विकसित किया जाय।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

1. Hussain, Zakir

Educational Reconstruction in India, Ministry of Information and Broadcasting, New Delhi 1959.

2. Ministry of Education,

Report of the Committee on Emotional Integration, New Delhi, 1962.

3. Ministry of Education,

Report of the Education, Commission, New Delhi, 1966.

4 Shrimali, K. L.

Problems of Education in India, Publication Division, New Delhi, 1961

विश्वविद्यालय प्रश्न

University Questions

1. Explain the role of education in strengthening and promoting the processes of emotional integration in our national life. Suggest some positive educational programmes to strengthen them and toward off the tendencies which come in the way of their development.

(Rajasthan, 1962)

2. Was India One ?

Is India One ?

Shall India be One ?

What do you mean by India ?

Give reasons for your belief and show what you can do as a tecaher to serve India in the best possible way by shaping the patriotic sentiments of your students.

(Rajasthan, 1963)

3. 'Is there a 'Crisis of character' today in India ? Support your views with reasons and suggest educational measures to remedy the evil if it exists

(Rajasthan, 1964)

अध्याय बीस
Chapter Twentieth
शिक्षा और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की समस्याएँ
Education & Problems of National Development

अध्ययन बिन्दु
Learning Points

20.01 राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की समस्याएँ
Problems of National Development

1. खाद्य सामग्री में आत्म निर्भरता
(Self-Sufficiency in Food)
2. आर्थिक विकास और जीविका व्यवस्था
(Economic Growth and full Employment)
3. सामाजिक और राष्ट्रीय एकता
(Social & National Integration)
4. राजनैतिक विकास
(Political Development)

20.02 समस्याओं के समाधान हेतु शिक्षा आयोग के सुझाव
Suggestion of Education Commission for the Solution of the Problems

1. विज्ञान की शिक्षा पर बल
(Emphasis on Science Education)
2. कार्यानुभव
(Work Experience)
3. व्यावसायीकरण
(Vocationalization)

शिक्षा और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की समस्याएँ
EDUCATION & PROBLEMS OF NATIONAL DEVELOPMENT

शिक्षा का विशिष्ट उद्देश्य समाज और देश की आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। यदि किसी देश की शिक्षा इस उद्देश्य की प्राप्ति करने में समर्थ नहीं है तो उस देश की प्रगति असम्भव है। अतः समाज और देश की आवश्यकताओं एवं आदर्शों के अनुरूप ही शिक्षा व्यवस्था का होना अनिवार्य है। इसके लिए सर्वप्रथम राष्ट्रीय लक्ष्यों को निश्चित कर उनके अनुकूल ही शिक्षा की पुनर्स्थापना करनी होगी क्योंकि राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिए शिक्षा ही सर्वश्रेष्ठ साधन है। वर्तमान वैज्ञानिक प्रगति, तकनीकी ज्ञान और उत्तरोत्तर विकसित ज्ञान कोष पर आधारित विश्व में शिक्षा ही वह आधार है जो राष्ट्र में प्रगति और समृद्धि लाने में सहायक हो सकती है।

आज हमारा देश राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की समस्याओं का समाधान करने में व्यस्त है। हमें आज देश में मुख्यतः दो कार्य करने हैं—प्रथम जनता के जीवन स्तर को उठाना है, द्वितीय अन्य प्रगतिशील देशों के साथ चलकर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त करनी है इन दोनों ही कार्यों पर राष्ट्रीय विकास निर्भर है और यह तभी सम्भव है जब हम सभी कमियों और त्रुटियों को दूर कर सकें। योजना तभी सम्भव

कारण यह भी है कि हमारी शिक्षा की जड़ें भारतीय परम्पराओं तक पहुँची हुई नहीं हैं जिसके कारण आज के शिक्षित वर्ग में भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था नहीं रही है। प्राचीन मूल्य जो किसी समय हमारे जन-जीवन के आधार थे आज प्रायः लोप होते जा रहे हैं जिसके कारण राष्ट्रीय अस्थिरता शनैः शनैः विकसित हो रही है और इतना कुछ होते हुए भी शिक्षा के माध्यम से उन मूल्यों को एकत्रित करने का प्रयत्न नहीं किया जा रहा है। आज के विद्यार्थी में असन्तोष है, जन-जीवन में भ्रष्टाचार है और साम्प्रदायिकता की भावनाएँ अधिक गहरी होती जा रही हैं। सामाजिक और राष्ट्रीय एकता को स्थापित करना नितान्त आवश्यक है क्योंकि यह राष्ट्रीय विकास के मार्ग में एक बहुत बड़ी बाधा बन गई है।

शिक्षा आयोग ने इसके लिए शिक्षा को उत्तरदायी ठहराया है और मूल रूप से चार महत्वपूर्ण सुझाव दिये हैं—

(i) सामान्यशाला व्यवस्था

(ii) सामाजिक और राष्ट्रीय सेवा

(iii) भाषा समस्या

(iv) राष्ट्रीय जागरूकता

4. राजनैतिक विकास
Political Development

हमारे राजनीतिक जीवन में अनेकों राजनैतिक परिवर्तन आये और अनेकों कठिनाइयों के पश्चात भारत में प्रजातन्त्रात्मक शासन पद्धति को अपनाया, परन्तु अभी इस क्षेत्र में बहुत कुछ करना शेष है। अभी हमारे अन्दर वह राजनीतिक चेतना उत्पन्न नहीं हो पाई है जिसकी हमारे देश को आवश्यकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आज का सामान्य भारतवासी अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों को पहले की अपेक्षा अधिक समझने लगा है तथापि इस क्षेत्र में और विशेषकर राजनैतिक अभिवृत्तियों को विकसित करने में बहुत कुछ करना है। हमारे देश में अनेकों राजनैतिक दल हैं, सभी राजनीतिक दलों की अपनी नीतियाँ हैं। नीतियों में परिवर्तन होना तो स्वाभाविक है परन्तु राजनीतिक विकास को हानि तब पहुँचती है जब दलों के पारस्परिक द्वेषमय वातावरण से देश में कलह उत्पन्न होता है।

राजनीतिक विकास में तीन पक्षों पर ध्यान देने की आवश्यकता है:—

(i) प्रजातन्त्र को सशक्त बनाना,

(ii) स्वतन्त्र देश की रक्षा करना,

(iii) सम्पूर्ण जनता को प्रजातान्त्रिक मूल्यों के अनुसार दबी हुई भावनाओं को अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान कर उन्हें शिक्षित, उच्च स्तरीय

जीवन स्तर और कल्याण कारी शासन-पद्धति के मार्ग को प्रशस्त करना। इसके लिए नितान्त आवश्यक है कि वर्तमान पीढ़ी। अनुशासन और राष्ट्रीय हित के मार्ग को अपनाये। राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की उक्त लिखित कुछ समस्याएँ हैं जिनका समाधान शिक्षा के माध्यम से सम्भव है क्योंकि शिक्षा ही इन समस्याओं के समाधान का मुख्य साधन है। शिक्षा द्वारा ही सामाजिक जीवन में परिवर्तन लाया जा सकता है। यह तभी सम्भव है जब शिक्षा के वर्तमान स्वरूप में परिवर्तन करके शिक्षा को जन जीवन की आवश्यकताओं और उनकी आकांक्षाओं से सम्बन्धित किया जायेगा। राष्ट्रीय विकास के मार्ग में असफलता का प्रमुख कारण शिक्षा उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का राष्ट्रीय जीवन के प्रतिकूल होना है।

20.02 समस्याओं के समाधान हेतु शिक्षा आयोग के सुझाव

Suggestions of Education Commission for the Solution of the Problems

भारत के भाग्य का निर्माण आजकल के विद्यालयों के अध्ययन कक्षों में हो रहा है। इस युग में जीवन की समृद्धि, कल्याण और सुरक्षा विज्ञान एवं टैकनॉलॉजी की शिक्षा पर आधारित है। विद्यालयों और विश्वविद्यालयों से निकलने वाले छात्रों के गुणों पर ही राष्ट्र का पुनर्निर्माण सम्भव है। अतः आज आवश्यकता है कि शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाये जायें। परिवर्तन तभी सम्भव है जबकि शिक्षा के कार्यक्रम का मूल्यांकन हो और मूल्यांकन के पश्चात जिन परिवर्तनों पर विचार किया जाये उन्हें दृढ़ संकल्प होकर कार्यान्वित किया जाये।

संक्षेप में वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित कार्यक्रमों की आवश्यकता है:—

1. विज्ञान की शिक्षा पर बल

Emphasis on Science Education

पिछले कुछ वर्षों में अनेकों देशों ने द्रुतगति से प्रगति की। इसका श्रेय उन देशों की वैज्ञानिक और टैकनालॉजी की दक्षता है। हम अभी तक निर्णायक स्थिति में नहीं हैं क्योंकि हमारे देश में विज्ञान की शिक्षा का प्रसार अभी तक अपनी बाल्यावस्था में ही है। विज्ञान की शिक्षा स्कूली शिक्षा का अभिन्न अंग होना चाहिए। विज्ञान शिक्षण में भी सुधार की आवश्यकता है। हमारे देश में विज्ञान शिक्षा के बहुत सीमित साधन हैं और इन सीमित साधनों में ही हमें उन्नति के पथ पर अग्रसर होना है। विज्ञान शिक्षा का विकास केवल संख्यात्मक ही नहीं होना चाहिए बल्कि गुणात्मक उन्नति की अत्यधिक आवश्यकता है। विज्ञान शिक्षा की सुविधाओं में अभिवृद्धि, सम्बन्धित उच्च केन्द्रों की स्थापना, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वैज्ञानिकों को निमन्त्रण,

सैद्धान्तिक और व्यावहारिक पक्षों में आवश्यक सम्बन्ध, सुसज्जित प्रयोगशालाएँ आदि की व्यवस्था होना बहुत आवश्यक है। यह सब तभी सम्भव है जबकि सरकार आवश्यक कदम उठाये और सभी विश्वविद्यालय अनुसंधान की सुविधाएँ प्रदान करें। इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि विज्ञान शिक्षा सम्बन्धी राष्ट्रीय नीति को निश्चित किया जाए। कहने का तात्पर्य यह है कि विज्ञान की शिक्षा को यथाशीघ्र बढ़ाया जावे जिससे हमारा देश अन्य प्रगतिशील देशों के साथ चल सके और अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर सके।

2. कार्यानुभव
Work Experience

वास्तविक शिक्षा वही है जो जीवन से सम्बन्धित हो। आज हमारी शिक्षा जीवन से कुछ अलग जा पड़ी है। सैद्धान्तिक ज्ञान तो पर्याप्त होता है परन्तु व्यावहारिक ज्ञान का स्तर बहुत निम्न होता है। शिक्षा आयोग ने सुझाव दिया है कि कार्यानुभव को समस्त स्तरों पर शिक्षा का अभिन्न अङ्ग बनाया जाये। औपचारिक शिक्षा बालक का सामुदायिक कार्यक्रमों से सम्बन्ध विच्छेद कर देती है जिससे बालकों में कौशल विकसित नहीं हो पाता और कर्म एवं ज्ञान एक दूसरे से अलग हो जाते हैं।

कार्यानुभव वह विधि है जो शिक्षा के साथ कार्य करने पर बल देती है। कार्यानुभव का कार्यक्रम उच्चतर प्राथमिक स्तर से प्रारम्भ होना चाहिए और माध्यमिक स्तर पर विभिन्न औद्योगिक संस्थाओं में ले जाकर उचित शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। कार्यानुभव से विद्यार्थियों में स्वयं कार्य करने की प्रेरणा का विकास होगा जिससे श्रम की महत्ता को बल मिलेगा।

3. व्यावसायिकरण
Vocationalization

एक अन्य कार्यक्रम जो शिक्षा को राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान कर सकता है वह है माध्यमिक शिक्षा का व्यावसायिक स्वरूप और विश्वविद्यालय स्तर पर कृषि और प्राविधिक शिक्षा का प्रावधान। भारत की वर्तमान दशा को देखकर तो यही आभास होता है कि प्रत्येक शिक्षित युवक और युवती राजकीय कार्यों में ही जाना चाहते हैं। इस प्रवृत्ति को तभी रोका जा सकता है जबकि माध्यमिक स्तर से ही पाठ्यक्रम को व्यावसायिक बनाया जाये जिससे विद्यार्थीगण जीवन-क्षेत्र में प्रवेश कर सभी व्यवसायों में अपना सहयोग प्रदान कर सकें। सन् 1882 में भारतीय शिक्षा आयोग ने सर्वप्रथम यह सुझाव दिया था परन्तु इस सुझाव को कार्यरूप में परिणत नहीं किया गया और आज की अवस्था यह है कि माध्यमिक स्तर पर केवल 9 प्रतिशत विद्यार्थी व्यावसायिक पाठ्यक्रम लेते हैं और यह संख्या विश्व के अन्य

देशों की तुलना में सम्भवत सबसे कम है। विश्वविद्यालय स्तर पर व्यावसायिक शिक्षा (केवल विधि, चिकित्सा और शिक्षण व्यवसाय के अतिरिक्त) को पूर्ण रूपेण तिरस्कृत किया गया है। कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग ने 1917 में संकेत दिया था कि विश्वविद्यालय स्तर पर 26,000 विद्यार्थियो मे से 22,000 छात्र साहित्यिक पाठ्यक्रम चुनते हैं जिसके कारण वे प्रशासनिक, क्लर्की अथवा शिक्षण व्यवसाय को ही चुन पाते हैं। आज की दशा भी ठीक वैसी ही है जबकि हमें स्वतन्त्र हुए 23 वर्ष हो चुके हैं। यदि राष्ट्रीय समस्याओ का समाधान करना है और देश से बेरोजगारी की समस्या को समाप्त करना है तो शिक्षा का व्यवसायीकरण करना नितान्त आवश्यक है। हमारे राष्ट्रीय विकास मे अवरोध उत्पन्न होने का प्रमुख कारण यह है कि प्रचलित शिक्षा के उद्देश्यों और विषय सामग्री का राष्ट्र के विकास से कोई सम्बन्ध नही है। अत· शिक्षा को व्यक्तियो के जीवन, आवश्यकताओं और आकाक्षाओं से यथाशीघ्र सम्बन्धित किया जाये जिससे राष्ट्रीय विकास सम्भव हो सके और देश के विकास में बाधक समस्याओं का समाधान किया जा सके।

शिक्षा आयोग ने राष्ट्रीय विकास की समस्याओं का समाधान करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये हैं—

1. शिक्षा द्वारा उत्पादन में वृद्धि।
2. शिक्षा द्वारा सामाजिक और राष्ट्रीय एकता का विकास करना।
3. शिक्षा द्वारा प्रजातान्त्रिक मान्यताओं मे विश्वास उत्पन्न करना।
4. शिक्षा द्वारा आधुनीकीकरण।
5. शिक्षा द्वारा सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का विकास।

ग्रन्थ-सूची

Bibliography

Report of the Education Commission, (1964-66)
Ministry of Education, Govt. of India, New Delhi, 1966.

अध्याय इक्कीस

Chapter Twenty one

प्राचीन भारतीय शिक्षा

Ancient Indian Education

अध्ययन बिन्दु

Learning Points

शिक्षा का महत्व

Significance of Eduation

शिक्षा के उद्देश्य एवं आदर्श

Aims & Ideals of Education

1. धार्मिक भावना का विकास
2. चरित्र निर्माण
3. व्यक्तित्व का विकास
4. सामाजिक भावनाओं का विकास
5. सांस्कृतिक मूल्यों का प्रसार

शिक्षा की विशेषताएँ

Characteristics of Education

1. तर्क और साधन का प्रतीक

21.05 मुख्य शिक्षा केन्द्र और विश्वविद्यालय

ducational Centres & Universities

1. तक्षशिला
2. नालन्दा विश्वविद्यालय
3. वलभी विश्वविद्यालय
4. विक्रमशिला विश्वविद्यालय
5. जगद्दला विश्वविद्यालय
6. ओदन्तपुरी विश्वविद्यालय
7. मिथिला विश्वविद्यालय
8. नदिया विश्वविद्यालय

प्राचीन भारतीय शिक्षा

ANCIENT INDIAN EDUCATION

प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था अत्यन्त ही सुन्दर थी । हमारी प्राचीन शिक्षा-पद्धति वैदिक साहित्य के आलोक से प्रकाशित थी । ऋग्वेद संसार का प्राचीनतम ग्रन्थ है । वैदिक-साहित्य में वैदिक संहिता, ब्राह्मण, उपनिषद् और आरण्यक आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं । वैदिक संहिता में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद आदि चार ग्रन्थ हैं । ये चारों ग्रन्थ ही प्राचीन भारतीय शिक्षा और जीवन दर्शन के आदि स्रोत हैं । इसीलिए श्री टामस ने लिखा है कि शिक्षा भारत में विदेशी नहीं है । संसार में कोई भी देश ऐसा नहीं है जहाँ शिक्षा के प्रति प्रेम इतना प्राचीन प्रभावशाली और सदैव जीवित रहने वाला रहा हो । वैदिक युग के कवियों से लेकर आधुनिक बंगाली दार्शनिकों तक विद्वानों और शिक्षकों का सतत क्रम रहा है ।

21.01 शिक्षा का महत्व
Significance of Education

प्राचीन भारत में शिक्षा का अत्यधिक महत्व था । शिक्षा को तीसरा नेत्र कहा जाता था—

'ज्ञान मनुजस्य तृतीय नेत्रं ।'

प्राचीन काल में शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए कहा गया है कि—

'मातेव रक्षति, पितेव हिते नियुङ्क्ते कान्तेव चापि रमयत्य पनीय खेदम ।'

अर्थात् विद्या माता के समान रक्षा करने वाली पिता के समान उचित मार्ग प्रदर्शित करने वाली और पत्नी के समान सुख देने वाली होती है ।

शिक्षा को जितना आदरणीय स्थान प्राचीन काल में प्राप्त था, सम्भवतः आज तो उसकी कल्पना दुर्लभ है । पद्मपुराण में कहा गया है—

'विद्यया प्राप्यते सौख्य यशः कीर्तिस्तथातुला
ज्ञानं स्वर्गः सुमोक्षश्च तस्माद्विद्यां प्रसाधय ।'

अर्थात् शिक्षा अथवा विद्या से सुख, यश, कीर्ति, स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त होते हैं, अतः विद्या प्राप्त करने का पूर्ण प्रयत्न करो ।

भर्तृहरि के नीतिशास्त्र मे कहा गया है—

'विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या पर दैवत,
विद्या राजसु पूज्यते नहि धन विद्याविहीन पशुः ।'

अर्थात् विद्या विदेश को जाते समय मित्र के समान है, विद्या द्वारा ही सम्मान होता है और विद्या के अभाव में मनुष्य पशु के समान है ।

उपरोक्त तथ्यो से यह स्पष्ट है कि प्राचीन काल मे शिक्षा को जीवन का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग स्वीकार किया जाता था और विद्या रूपी प्रकाश से प्रकाशमान होना ही मानव की उच्चतम अभिलाषा होती थी । इसीलिए प्राचीन समय मे शिक्षा के महत्व को स्वीकार करते हुए अल्तेकर ने कहा है कि प्राचीन भारत मे शिक्षा का मूल अभिप्राय प्रकाशमय जीवन यापन और विभिन्न क्षेत्रो मे पथ-प्रदर्शन करना था ।

इससे स्पष्ट है कि प्राचीन भारत मे शिक्षा मनुष्य को विविध क्षेत्रो मे प्रगति प्राप्त करने की एक मात्र सहयोगिनी और प्रेरिका के रूप मे सहायक रही और शिक्षा को अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने का साधन माना गया ।

21.02 शिक्षा के उद्देश्य एवं आदर्श
Aims & Ideals of Education

प्राचीन भारतीय शिक्षा के उद्देश्यों और आदर्शों को स्पष्ट करते हुए अल्तेकर ने कहा है कि ईश्वर भक्ति, धार्मिकता, चरित्र-गठन, व्यक्तित्व का विकास, नागरिक एवं सामाजिक कर्त्तव्यों का पालन, सामाजिक कुशलता, सांस्कृतिक सरक्षण एव प्रसार प्राचीन भारतीय शिक्षा के उद्देश्य एव आदर्श थे ।

उद्देश्यों एवं आदर्शों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

1. धार्मिक भावना का विकास
Development of Religious Feeling

प्राचीन भारत में धर्म का प्रमुख स्थान था। प्राचीन शिक्षा का उद्देश्य मूल रूप से आध्यात्मिक, मोक्ष एवं धर्म को विकसित करना था। आत्मा और परमात्मा का मिलन ही जीवन का अभीष्ट था। सम्पूर्ण शिक्षा साधनात्मक प्रक्रिया थी। धार्मिक जीवन-यापन साधनामय जीवन का मार्ग माना जाता था। विद्यार्थियों में धर्म के प्रति आस्था और धार्मिक भावनाओं से ओत प्रोत करना ही शिक्षा के उद्देश्य थे।

2. चरित्र निर्माण
Formation of Character

प्राचीन शिक्षा का उद्देश्य छात्रों का चरित्र निर्माण करना था। धार्मिक रूप से जीवन व्यतीत करना चरित्र निर्माण का आधार माना जाता था। चारित्रिक परीक्षा लेने के लिए विभिन्न विधियाँ अपनाई जाती थी। ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करना आवश्यक था और इसके लिए गुरु की सदैव यही इच्छा रहती थी कि उसके शिष्य ब्रह्मचर्य से रहे।

3. व्यक्तित्व का विकास
Development of Personality

इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु छात्रों में आत्म-सम्मान, आत्म-विश्वास और आत्म-संयम की भावनाओं को विकसित किया जाता था। वाछित भावनाओं को विकसित करने के लिए वाद-विवाद, विचार-विनिमय आदि शिक्षण-विधियों को प्रयुक्त किया जाता था जिससे विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास हो सके।

4. सामाजिक भावनाओं का विकास
Development of Social Feelings

शिक्षा का एक उद्देश्य विद्यार्थियों में सामाजिक भावनाओं को विकसित करना भी था। शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् प्रत्येक विद्यार्थी से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह गृहस्थ-जीवन व्यतीत करके समाज की सेवा करे। जो छात्र युद्ध-विद्या प्राप्त करते थे, उनका कर्त्तव्य देश की रक्षा करना था, अन्य प्रकार की शिक्षाओं के भी पृथक्-पृथक् उद्देश्य थे और इन शिक्षाओं के मूल में समाज-सेवा के भाव ही प्रधान थे।

5. सांस्कृतिक मूल्यों का प्रसार
Expansion of Cultural Values

सांस्कृतिक मूल्यों का सरक्षण और प्रसार प्राचीन भारतीय शिक्षा का विशिष्ट उद्देश्य था। सभी विद्यार्थियों को शिक्षा प्राप्त करते समय भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों

से परिचित कराया जाता था और यह अपेक्षा की जाती थी कि वे भारतीय आचार-विचार और धार्मिक जीवन-यापन कर, भारतीय संस्कृति को अक्षुण्ण रखेंगे। गुरु का आदर्श शिष्यों को पुत्रतुल्य मानना और उन्हें पुत्र, पति व पिता आदि के रूप में सांस्कृतिक मूल्यों के अनुसार जीवन व्यतीत कर उनके उत्तरदायित्वों से परिचित कराना था। सांस्कृतिक परम्परा के अनुसार प्रत्येक शिष्य को देव-ऋण, ऋषि-ऋण और पितृ-ऋण से मुक्त होना अनिवार्य था। धार्मिक कर्मों से देव-ऋण, विद्या अध्ययन से ऋषि-ऋण और सन्तानोत्पत्ति से पितृ-ऋण से मुक्ति होती थी।

21.03 शिक्षा की विशेषताएँ
Characteristics of Education

प्राचीन भारतीय शिक्षा की निम्नलिखित विशेषताएँ थी—

1. तर्क और साधना की प्रतीक
Symbol of Logic & Devotion

प्राचीन शिक्षा की विशेषता यह थी कि उसे 'ज्ञानमूलक' और 'भक्तिमूलक' बनाया गया था। ज्ञानमूलक शिक्षा में 'तर्क' और भक्तिमूलक शिक्षा में 'साधना' की प्रधानता थी। ज्ञानमूलक शिक्षा में तर्क की प्रधानता होने के कारण वाक्बाणों का प्रयोग किया जाता था और शिष्यों की यह सदैव इच्छा रहती थी कि व्याख्या द्वारा उनका तर्क सर्वश्रेष्ठ हो। भक्तिमूलक शिक्षा का आधार 'साधना' थी और साधना का अवलम्बन 'अभ्यास' था। आत्म-नियन्त्रण, सहनशीलता आज्ञा पालन और तत्परता का अभ्यास भक्तिमूलक शिक्षा के लिए आवश्यक था। इसके लिए गुरु के आदेशों का पालन करना ही शिष्यों का कर्तव्य था।

2. सर्वांग विकास
Harmonious Development

प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था इस प्रकार की थी कि विद्यार्थियों के विभिन्न विकासों के लिए पृथक्-पृथक् प्रयत्न नहीं करने पड़ते थे बल्कि समस्त विकास-क्रम स्वतः पुष्पित एवं प्रफुल्लित होते थे। शिक्षा सिद्धान्तों के अनुसार जीवन व्यतीत करना प्रत्येक शिष्य के लिए अनिवार्य था। छात्रों के दैनिक कार्य इतने सुनिश्चित एवं व्यवस्थित थे कि शारीरिक अभ्यास स्वतः हो जाता था। आध्यात्मिक विकास तो उस समय की शिक्षा का आधार ही था। मानसिक विकास ज्ञानमूलक शिक्षा के कारण तर्क द्वारा होता था। नैतिक विकास सर्वत्र धर्म की शिक्षा के कारण था।

...त्रों के सर्वाङ्ग विकास पर विशेष बल दिया

3. गुरुकुल-प्रणाली
Gurukul-System

भारतीय सभ्यता का विकास वनो मे हुआ है न कि नगरो मे। सामान्यतया गुरुकुल प्रकृति की गोद मे स्थित होते थे और शिष्यो पर केवल गुरु के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ता था क्योंकि आश्रम का स्रोत केवल गुरु का व्यक्तित्व होता था अतः छात्रों में गुरु के गुणों का आना स्वाभाविक ही था। गुरुकुल मे नियमों का पालन होता था और प्रत्येक विद्यार्थी के लिए ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करना आवश्यक था जिससे शारीरिक सौष्ठव और मानसिक प्रवीणता स्वतः ही आती थी। गुरुकुलों मे रहने के कारण सभी शिष्य विद्यारत् रहते थे और गुरु-सेवा करके अपने जीवन को धन्य करते थे।

4. शिष्य-गुरु सम्बन्ध
Pupil Teacher Relations

प्राचीन भारतीय शिक्षा की एक विशेषता यह भी थी कि शिष्य और गुरु के सम्बन्ध पिता और पुत्र के समान थे और गुरु को आध्यात्मिक गुरु समझा जाता

व्यवहार से गुरु के व्यक्तित्व मे ही अपने जीवन की पूर्णता समझते थे।

5. निःशुल्क शिक्षा
Free Education

प्राचीन भारत मे ब्राह्मण का यह पुनीत कर्त्तव्य था कि वे अपने शिष्यों को निःशुल्क शिक्षा प्रदान करें। शिक्षा की समाप्ति पर प्रत्येक शिष्य दक्षिणा देते थे परन्तु इसका मूल उद्देश्य दैशिक था आर्थिक नही।

6. स्त्री-शिक्षा
Women Education

प्राचीन भारत में स्त्री-शिक्षा का प्रसार था। बालिकाओ के लिए भी उपनयन संस्कार की व्यवस्था थी। जीवन के सभी क्षेत्रों मे स्त्रियां पुरुषों के समान ही कार्य करती थीं। स्त्री-शिक्षा के प्रावधान के कारण ही लोपा, अपाला, विश्ववारा, गार्गी, मैत्रेय आदि विदुषियो का प्रादुर्भाव हुआ।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि प्राचीन शिक्षा के उद्देश्य महान् थे। चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व विकास और सामाजिक समृद्धि आदि शिक्षा के आदर्श थे।

21.04 शिक्षा के विभिन्न चरण
Different Stages of Education

प्राचीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था मे दो चरण थे जिनका विवरण इस प्रकार है—

1. प्राथमिक शिक्षा
Primary Education

प्राचीन शिक्षा व्यवस्था मे प्राथमिक शिक्षा का वह स्थान तो नही था जो आधुनिक युग मे है तथापि कुछ तथ्यो[1] के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपनयन संस्कार से पूर्व शिक्षा की व्यवस्था थी और उस शिक्षा का स्वरूप प्राथमिक अथवा प्रारम्भिक शिक्षा जैसा था।

प्राचीन भारत मे शिक्षा कहाँ प्रदान की जाती थी, इसके विषय मे कुछ स्पष्ट प्रमाण प्राप्त नही होते और प्राचीन भारतीय ग्रन्थ इस दृष्टि से मौन हैं। ऋग्वेद के आधार पर यह अन्दाजा लगाया जा सकता है कि प्राथमिक शिक्षा सम्भवतः पाठशालाओ मे ही दी जाती थी, परन्तु पाठशालाओं का स्वरूप आधुनिक पाठशालाओं के समान नही था। डा० अल्तेकर के अनुसार सम्भवतः प्राथमिक शिक्षा गुरु परिवारों मे दी जाती होगी।[2]

प्राथमिक स्तर पर बालक के अन्तर्गत इतनी योग्यता तो अवश्य विकसित की जाती थी जो उसे उच्च शिक्षा प्राप्त करने मे सहायक हो सके। सामान्यतः धार्मिक सस्कारों के द्वारा बालकों मे उच्च शिक्षा की क्षमता विकसित करना प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य था। साधारणतया धार्मिक ग्रन्थों को कंठस्थ करना, भाषा का प्रयोग एवम् सामान्य व्याकरण ज्ञान इस स्तर की न्यूनतम अपेक्षित क्षमता थी।

2. उच्च शिक्षा
Higher Education

वैदिक काल मे उच्च शिक्षा हेतु विद्यार्थी गुरु-गृह अथवा आश्रम मे जाकर शिक्षा प्राप्त करते थे। आश्रम मे छात्रों का आध्यात्मिक, नैतिक तथा मानसिक विकास किया जाता था। वैदिक काल मे सामूहिक रूप से शिक्षा प्राप्त करने वाली शिक्षा सस्थाओं का अभाव था।

उच्च शिक्षा का प्रावधान गुरुकुलों, परिषदों, टोल, घटिकायें, मठ, विद्यापीठ, मन्दिर महाविद्यालय एवम् विश्वविद्यालयों मे था। प्राचीन काल मे ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, सामवेद, इतिहास, तर्कशास्त्र, नीतिशास्त्र, देव-विद्या, ब्रह्म-विद्या, नक्षत्र-विद्या, सर्प-विद्या, व्याकरण, ज्योतिष आदि विषयों का अध्ययन किया जाता था।

---

1. C. Kunhan Raja, *Some Aspects of Education in Ancient India.*
2. It must have been given in the family so long as it continued to be the Centre of education.

—Dr. Althekar

21.05 मुख्य शिक्षा केन्द्र और विश्वविद्यालय
Educational Centres & Universities

जैसा कि हम पहले कह आये हैं कि प्राचीन भारत में शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों की आन्तरिक उन्नति करना था। वैदिक काल और ब्राह्मण काल में बौद्ध-काल और आधुनिक काल के समान सुव्यवस्थित शिक्षा केन्द्र नहीं थे। जहाँ तक प्राचीन भारत के प्रमुख शिक्षण केन्द्रों का प्रश्न है—उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

1. तक्षशिला
Taxsila

प्राचीन भारत में तक्षशिला शिक्षा का महत्वपूर्ण केन्द्र था जिसकी ख्याति देश और विदेशों में व्याप्त थी। तक्षशिला गान्धार प्रदेश की राजधानी थी और बाल्मीकि रामायण के अनुसार इस नगर की नींव भरत ने डाली थी। ईसा से पूर्व सातवीं शताब्दी तक तक्षशिला विद्या का केन्द्र माना जाने लगा था।

तक्षशिला में कोई विद्यालय अथवा विश्वविद्यालय नहीं था और वहाँ की शिक्षा पारिवारिक प्रणाली पर आधारित थी। यहाँ पर अनेकों वैयक्तिक गुरुकुल थे और विशेषज्ञों द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती थी। यही मूल कारण है कि इसे विश्व-विद्यालय न मानकर शिक्षा का केन्द्र मानना अधिक उचित होगा। तक्षशिला में देश के विभिन्न भागों से अनेकों विद्वान एकत्रित हो गये थे और अपनी रुचि के अनुसार शिक्षा प्रदान करते थे।

तक्षशिला में आकर उच्च शिक्षा प्राप्त करना ही प्रत्येक विद्यार्थी का ध्येय होता था। वेदान्त, व्याकरण, आयुर्वेद, सैनिक विद्या, ज्योतिष, वास्तुकला, कृषि, व्यापार, सर्प विद्या आदि विषयों का ज्ञान दिया जाता था। इसके अतिरिक्त साहित्यिक विषयों में ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का कंठस्थ करना आवश्यक समझा जाता था। वैज्ञानिक विषयों में अठारह शिल्पों का अध्ययन किया जाता था जिनमें आयुर्वेद, चिकित्सा, धनुर्विद्या, युद्धकला, मुनीमी, व्यापार, कृषि, रथ संचालन, इन्द्र-जाल गुप्तनिधि अन्वेषण आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

2. नालन्दा विश्वविद्यालय
Nalanda University

पटना से चालीस मील दक्षिण-पश्चिम की ओर नालन्दा विश्वविद्यालय के अवशेष आज भी अतीत की गौरवमयी गाथा की याद दिला रहे हैं। प्रारम्भ में यहाँ एक छोटा सा गाँव था परन्तु महात्मा बुद्ध के अनेकों धर्मोपदेश इस स्थान पर हुए और इसका महत्व शनैः शनैः बढ़ता चला गया। नालन्दा विहार की स्थापना के विषय में यह भी कहा जाता है कि इसके संस्थापक सम्राट अशोक थे।

नालन्दा का प्रमुख शिक्षा के केन्द्र के रूप में जो उद्भव हुआ वह तीसरी शताब्दी से माना जाता है। कुछ विद्वानों का मत है कि सम्भवतः नालन्दा ब्राह्मणीय शिक्षा का केन्द्र रहा होगा। नालन्दा विश्वविद्यालय की निम्नलिखित विशेषताएँ थीं—

1. आरम्भ मे नालन्दा मे एक अथवा दो मठ थे, कालान्तर में यह अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा का केन्द्र हो गया और चीन, कोरिया, जावा, सुमात्रा आदि से अनेकों विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते थे और विद्यार्थियों की सख्या के अनुसार मठों की सख्या भी बढ़ती गयी।

2. नालन्दा के विकास मे कुमार गुप्त प्रथम, बुद्ध गुप्त, बालादित्य, बज्र आदि ने सक्रिय सहयोग दिया और प्रारम्भ मे पाँच सौ व्यापारियो ने दस कराड स्वर्ण मुद्राओ से नालन्दा के लिए भूमि खरीदी और उसे महात्मा बुद्ध को अर्पित किया। नवी शताब्दी मे राजा बालपुत्र देव ने नालन्दा के विकास हेतु छ गाँव दिये।

3 सम्राट अशोक को नालन्दा विहार का प्रथम संस्थापक कहा जाता है।

4 नालन्दा विश्वविद्यालय मे प्रवेश प्राप्त करने के लिए एक परीक्षा का आयोजन किया जाता था तथा न्यूनतम आयु बीस वर्ष थी।

5. नालन्दा विश्वविद्यालल मे नि.शुल्क परीक्षा का प्रावधान था।

6. नालन्दा मे कुल 1,510 शिक्षक थे।

7. विश्वविद्यालय मे वैदिक धर्म, जैन धर्म, और बौद्ध धर्म के विषयो की शिक्षा दी जाती थी। हुएनत्सांग ने योग शास्त्र, न्याय, शब्द विद्या, ब्राह्मण विद्या के विषयों आदि का अध्ययन किया था।

8 अध्यापन पद्धति के तीन स्वरूप—व्याख्यान पद्धति, वाद विवाद और पुस्तक व्याख्या आदि का प्रयोग किया जाता था। छात्रों की शंका का समाधान प्रश्नोत्तर विधि से किया जाता था।

9. विश्वविद्यालय का पुस्तकालय बहुत विशाल था जिसके तीन भवन थे जिन्हे रत्न सागर, रत्नोदधि भवन थे जिन्हे रत्न सागर, रत्नोदधि और रत्नरंजक कहा जाता था।

उपरोक्त विशेषताओ से स्पष्ट है कि नालन्दा विश्वविद्यालय अपने मे शिक्षा का महत्वपूर्ण केन्द्र था, परन्तु इस ज्ञान की धरोहर को बख्तियार खिलजी ने नष्ट कर दिया।

3. वलभी विश्वविद्यालय
Valabhi University

काठियावाड़ के पूर्व किनारे पर वला नाम के स्थान मे वलभी विश्वविद्यालय था। यह नालन्दा विश्वविद्यालय का प्रतिद्वन्द्वी था। 640 ई० मे वलभी के अन्तर्गत 100 विहार थे। इस विश्वविद्यालय में बौद्ध शिक्षा के अतिरिक्त व्याकरण, व्यवहार शास्त्र, साहित्य आदि की भी शिक्षा दी जाती थी। वला पर अरबों पर आक्रमण किया और यह शिक्षा केन्द्र भी विदेशी आक्रमण का शिकार बना।

4. विक्रमशिला विश्वविद्यालय
Vikramsila University

विक्रमशिला उत्तरी मगध में गंगातट पर एक सुन्दर पहाड़ी पर स्थित था। इस विश्वविद्यालय की स्थापना सम्राट धर्मपाल ने की थी। इसमें सौ मन्दिर थे। प्रत्येक मन्दिर का एक अध्यक्ष था जिसे आचार्य कहते थे। विश्वविद्यालय में कुल मिलाकर 114 आचार्य थे। इस विश्वविद्यालय मे तिब्बत से अनेकों छात्र विद्या प्राप्त करने आते थे।

विक्रमशिला विश्वविद्यालय में कुलपति होता था और अन्य प्रबन्धों के लिए अनेकों समितियाँ थी। पाठ्य विषयो के रूप मे अनेको विषयो का अध्ययन होता था जिनमें प्रमुख रूप से व्याकरण, दर्शन, तर्क आदि का अध्ययन होता था।

1203 ई० में बख्तियार खिलजी ने आक्रमण किया और इस विद्या-मन्दिर को भी आक्रान्ताओं का कोपभाजन बनना पड़ा।

5. जगद्दला विश्वविद्यालय
Jagaddala University

बंगाल के पालवंशीय सम्राट राजा रामपाल ने इस विश्वविद्यालय को गंगा-तट पर रामावती नामक स्थान पर बनवाया था। यह विश्वविद्यालय बौद्ध शिक्षा का केन्द्र था। इस विश्वविद्यालय में विभूति चन्द्र, सुधाकर, मोक्षाकर गुप्त नामक प्रसिद्ध आचार्य थे। इन आचार्यों की ख्याति केवल भारत मे ही नहीं बल्कि तिब्बत में भी थी और इनके प्रसिद्ध ग्रन्थों का अनुवाद तिब्बती भाषा में हुआ था।

1203 ई० में इसे भी मुसलमानों के आक्रमण का शिकार होना पड़ा।

6. ओदन्तपुरी विश्वविद्यालय
Odantapuri University

इस विश्वविद्यालय की स्थापना पालवंश के उत्थान से पूर्व हो चुकी थी। इस विश्वविद्यालय में एक पुस्तकालय था जो ब्राह्मणीय और बौद्ध साहित्य की बहु-

मुख्य पुस्तकों से परिपूर्ण था। इस विश्वविद्यालय में लगभग 1,000 भिक्षु रहते
इस विश्वविद्यालय के विषय में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है।

7. मिथिला विश्वविद्यालय
Mithila University

मिथिला का प्राचीन नाम विदेह था जो उपनिषद् काल में ब्राह्मणीय शिक्षा
का केन्द्र था। बौद्ध काल में यह मिथिला के नाम से प्रसिद्ध हुआ और 12वीं शता
ब्दी से लेकर 15वीं शताब्दी तक यह महत्वपूर्ण शिक्षा केन्द्र रहा। मिथिला का
शिक्षा स्तर बहुत ऊँचा था और स्नातक परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् छात्रों को
प्रमाण पत्र प्रदान किया जाता था। सम्पूर्ण अध्ययन समाप्त करने के पश्चात् अन्तिम
परीक्षा होती थी जिसे 'शलका' कहते थे। इस परीक्षा के द्वारा छात्र का पुस्तक ज्ञान
देखा जाता था।

इस विश्वविद्यालय के विद्वानों ने अनेकों महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे। यहाँ ललित-
कलाओं, साहित्य एवं वैज्ञानिक विषयों का अध्ययन किया जाता था।

8. नदिया विश्वविद्यालय
Nadia University

पालवंश के शासकों के प्रयासों और सहायता से ग्यारहवीं शताब्दी में इस
विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। इस विश्वविद्यालय की ख्याति उसके शिक्षण स्तर
के कारण दूर-दूर तक फैली। नालन्दा और विक्रमशिला के नष्ट होने के पश्चात् यह
शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था। इस विश्वविद्यालय के शिक्षकों को वाद-विवाद में निपुण
होना अत्यन्त आवश्यक था। कुछ तथ्यों से यह भी प्राप्त होता है कि इस विश्व-
विद्यालय में छात्र बीस वर्ष तक रहते थे। कुछ प्रमाण इस प्रकार के भी मिलते हैं
जिनके द्वारा यह कहा जाता है कि इस विश्वविद्यालय में 4,000 विद्यार्थी अध्ययन
करते थे और शिक्षकों की संख्या 600 थी। तर्क शास्त्र, कानून, काव्य, ज्योतिष,
व्याकरण आदि का विशेष ज्ञान प्रदान करना इस विश्वविद्यालय की विशेषता थी।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि प्राचीन भारत में शिक्षा का उद्देश्य
व्यक्ति के सर्वाङ्गीण विकास, सामाजिक राष्ट्रीय प्रगति तथा सभ्यता और संस्कृति
का उत्थान करना था। भारत के अतीत में शिक्षा की सुन्दर व्याख्या थी। प्राचीन
शिक्षा पद्धति ने उस समय के [illegible] और अनेकों विचारकों एवं

विद्वान आचार्यों को अध्यापन कार्य में कोई बाधा तो नहीं है। प्राचीन भारत में शिक्षा पर कोई जातीय अथवा साम्प्रदायिक प्रभाव नहीं था।'[1]

1. Education in ancient India was free from any externa[l] control like that of the state or the Government or an[y] party politics. It was one of the king's duties to se[e] that the learned pundits persued their studies and thei[r] duty of importing knowledge without interference fro[m] any source whatever. So also, education did not suffe[r] from any communal interest or prejudices in India.

P. H. Prabhu, *Hindu Social Organaization*, p. 108.

अध्याय बाईस

Chapter Twenty Two

इंगलैण्ड, अमेरिका और रूस में शिक्षा

Education in England, America & Russia

अध्ययन बिन्दु
Learning Points

इंगलैण्ड में शिक्षा
EDUCATION IN ENGLAND

22.01 प्राथमिक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास

1. सर जेम्स ग्राहम बिल (1853)
2. न्यू कासिल आयोग (1861)
3. फोर्सटर अधिनियम (1870)
4. क्रास कमीशन (1888)
5. शिक्षा अधिनियम (1902)
6. फिशर अधिनियम (1919)
7. हैडो आयोग (1926)
8. स्पेन्स प्रतिवेदन (1938)
9. शिक्षा अधिनियम (1944)

22.02 प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य

22.03 माध्यमिक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास

1. ब्राइस आयोग (1894-95)
2. माध्यमिक शिक्षा और मजदूर दलीय सरकार (1924)
3. हैडो प्रतिवेदन (1926)
4. नारवुड आयोग (1943)
5. शिक्षा अधिनियम (1944)

22.04 माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति

22.05 उच्च शिक्षा

अधिम शिक्षा का ऐतिहासिक पर्यावलोकन

विश्वविद्यालयों का स्वरूप

अमेरिका में शिक्षा
EDUCATION IN U. S. A

* 22.06 प्राथमिक शिक्षा
* 22.07 माध्यमिक शिक्षा
* 22.08 उच्च शिक्षा

  उच्च शिक्षा का ऐतिहासिक विकास
  उच्च शिक्षा के उद्देश्य एवम् लक्ष्य
  उच्च शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाएं
  उच्च शिक्षा का प्रसार

रूस में शिक्षा
EDUCATION IN RUSSIA

* 22.09 रूसी शिक्षा का ऐतिहासिक विकास

  1. सन् 1917 से 1932 तक
  2. सन् 1932 से 1936 तक
  3. सन् 1936 से 1944 तक
  4. सन् 1944 से 1952 तक
  5. सन् 1952 से वर्तमान समय तक

* 22.10 शिक्षा का गठन
* 22.11 शिक्षा के विभिन्न स्तर

  प्राथमिक शिक्षा
  माध्यमिक शिक्षा
  उच्च शिक्षा

इंगलैण्ड, अमेरिका और रूस में शिक्षा

EDUCATION IN ENGLAND, AMERICA AND RUSSIA

इंगलैण्ड में शिक्षा
EDUCATION IN ENGLAND

पचास हजार वर्गमील में फैला हुआ यह देश चारों ओर से समुद्र द्वारा घिरा हुआ है जो औद्योगिक दृष्टि से पूर्ण समृद्ध है। देश की समृद्धि के कारण शैक्षिक दृष्टि से भी यह पूर्णरूपेण समुन्नत है यहाँ प्रायः शत प्रतिशत साक्षरता है। वैज्ञानिक और प्राविधिक शिक्षा की दृष्टि से भी यह देश अत्यन्त प्रगतिशील है। इंगलैण्ड की शैक्षिक विलक्षणता यहाँ की परम्परागत संस्कृति के कारण है जिसके कारण यहाँ की माध्यमिक और उच्च शिक्षा बहुत प्रभावित हुई है। सन् 1902 से 1944 तक शिक्षा पद्धति में अनेकों परिवर्तन हुए और जिनका मूल आधार जनता की आवश्यकताओं को पूरा करना था।

22.01 प्राथमिक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास
Historical Development of Primay Education

इंगलैंड में अट्ठारहवीं शताब्दी में प्राथमिक शिक्षा का विकास हुआ। सन् 1800 से 1833 तक कुछ इस प्रकार की संस्थाएँ थीं जो प्राथमिक शिक्षा का

संचालन करती थी। मूलतः इन शिक्षा संस्थाओं का उत्तरदायित्व धार्मिक संस्थाओं का था। इन विद्यालयों को डेन विद्यालय और चर्च विद्यालय कहा जाता था। सन् 1830 में रविवारीय विद्यालयों की स्थापना हुई। सन् 1903 में कुछ अन्य विद्यालयों को खोला गया जिनका उद्देश्य रविवार के दिन बालकों को शिक्षा प्रदान करना था। सन् 1914 में ब्रिटिश फारेन स्कूल सोसाइटी (British Foreign Schools Society) की स्थापना की गई जिसने प्राथमिक शिक्षा के प्रसार में काफी सहयोग दिया।

प्राथमिक शिक्षा के विकास हेतु निम्नलिखित शैक्षिक कार्य उल्लेखनीय हैं—

1. सर जेम्स ग्राहम बिल (1853)
Sir James Grahm Bill (1853)

इस बिल में यह प्रावधान रक्खा कि कारखानों में काम करने वाले बच्चों को अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान की जाये। इसके अतिरिक्त शाला भवनों के निर्माण हेतु और अन्य आवश्यक कार्यों के लिए राज्य सरकार द्वारा ऋण की व्यवस्था होनी चाहिए।

2. न्यू कासिल आयोग (1861)
New Castle Commission (1861)

सन् 1861 में इस आयोग की नियुक्ति हुई। आयोग ने सर जेम्स ग्राहम बिल में आवश्यक सुधार हेतु सुझाव दिये। सन् 1860 तक इंगलैण्ड में जन-जागृति आ चुकी थी और शिक्षा के महत्व को राष्ट्र के विकास हेतु अनिवार्य समझा जाने लगा था। अतः आयोग द्वारा प्राथमिक शिक्षा के प्रसार हेतु अनेकों सिफारिशों को कार्य रूप में परिणत करने पर विशेष बल दिया गया।

3. फोर्सटर अधिनियम (1870)
Forester Act (1870)

सन् 1870 में यह अधिनियम प्रारम्भिक शिक्षा की समस्याओं पर विचार करने के लिए पारित हुआ था। इस अधिनियम का विशिष्ट उद्देश्य बालकों को प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करना था। अधिनियम के आधार पर स्थानीय शिक्षा परिषदों को यह आदेश दिया गया कि उन स्थानों में जहाँ बच्चों की शिक्षा व्यवस्था नहीं है वहाँ नयी शालाएँ खोली जायें और शिक्षा सुविधाओं की प्रगति हेतु आवश्यक कदम उठाये जायें। प्राथमिक शिक्षा के प्रसार हेतु निजी संस्थाओं को प्रोत्साहन दिया जाये।

4. क्रास कमीशन (1888)
Cross Commission (1888)

सन् 1888 में क्रास आयोग ने प्रारम्भिक शिक्षा के प्रसार हेतु कुछ

दिये। प्रारम्भिक शिक्षा मे सुधार हेतु आयोग ने योग्य शिक्षकों की आवश्यकता पर बल दिया। अध्यापकों की प्रशिक्षण सुविधाओं को अधिक सुलभ बनाने के लिए सुझाव दिया गया कि विश्वविद्यालयों को अध्यापक प्रशिक्षण महाविद्यालय खोलने चाहिए जिससे अध्यापकों को अधिक कार्यशील बनाया जा सके।

5. शिक्षा अधिनियम (1902)
Education Act (1902)

सन् 1902 मे शिक्षा अधिनियम पारित हुआ जिसके अनुसार स्कूल बोर्डों को समाप्त कर दिया गया। स्कूल बोर्डों को समाप्त कर प्राथमिक शिक्षा का भार स्थानीय शिक्षा अधिकारियों को दे दिया गया। प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में इतिहास, भूगोल, हस्तकला, बागवानी और विज्ञान आदि विषयों मे सम्मिलित किया गया।

6. फिशर अधिनियम (1918)
Fisher Act (1918)

सन् 1918 के फिशर अधिनियम से प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र मे बहुत बड़ा परिवर्तन आया। इस अधिनियम के अनुसार प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य कर दिया गया। पूर्व प्राथमिक स्तर पर स्थानीय शिक्षा अधिकारियों को 2 वर्ष से 5 वर्ष के बालकों के लिए शिक्षा सुविधाओं का प्रसार करने हेतु कहा गया। निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्राप्त करने की अवधि 14 वर्ष निश्चित कर दी गई।

7. हैडो आयोग (1926)
Hadowe Commission (1926)

सन् 1926 मे हैडो आयोग ने प्राथमिक शिक्षा को और अधिक सुव्यवस्थित करने की सिफारिश की। आयोग के अनुरूप प्राथमिक शिक्षा को पुनर्सगठित किया गया। आयोग के सुझाव के अनुसार अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की आयु पन्द्रह वर्ष तक निश्चित कर दी गई।

8. स्पेन्स प्रतिवेदन (1938)
Spens Report (1938)

यह प्रतिवेदन 1938 मे प्रस्तुत किया। परन्तु इस प्रतिवेदन के सुझावों के अनुसार कार्य न हो सका क्योंकि द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो गया तथापि इस प्रतिवेदन का ऐतिहासिक महत्व बहुत है।

9. शिक्षा अधिनियम (1944)
Education Act (1944)

सन् 1944 के शिक्षा अधिनियम के सुझावानुसार प्रारम्भिक शिक्षा का नाम

प्राथमिक शिक्षा कर दिया गया। प्राथमिक शिक्षा की प्रगति का बहुत कुछ श्रेय इसी अधिनियम को है।

22.02 प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य
Aims of Primary Education

इंगलैण्ड मे प्राथमिक शिक्षा को शैक्षिक जीवन के आधार स्तम्भ के रूप में माना जाता है और इसीलिए प्राथमिक शिक्षा को अत्यन्त ही सुव्यवस्थित एवं संगठित रूप प्रदान किया गया है। प्राथमिक शिक्षा द्वारा निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति अपेक्षित है—

1. शारीरिक विकास।
2. चरित्र निर्माण।
3. भावी शिक्षा हेतु भावना जागृत करना।
4. बौद्धिक एवं मनोवैज्ञानिक विकास।
5. सांस्कृतिक शिक्षा।
6. आध्यात्मिक शिक्षा।

इंगलैण्ड की प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था को देखते हुए यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि वहाँ इसी स्तर से बच्चो मे अच्छे संस्कार विकसित किये जाते हैं जिससे उनमें आत्म अनुशासन की भावना का विकास होता है।

22.03 माध्यमिक शिक्षा का ऐतिहासिक विकास
Historical Development of Secondary Education

इंगलैण्ड मे माध्यमिक शिक्षा का इतिहास भी प्रायः उतना ही पुराना है जितना प्राथमिक शिक्षा का। इस देश मे माध्यमिक शिक्षा का आरम्भ सत्तरहवी शताब्दी से हुआ। उन्नीसवी शताब्दी तक पब्लिक और ग्रामर स्कूलों की स्थापना हो चुकी थी और ये विद्यालय माध्यमिक शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति करते थे।

इंगलैण्ड में माध्यमिक शिक्षा के ऐतिहासिक विकास का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

1. ब्राइस आयोग (1894–95)
   Bryce Commission (1894-95)

इस आयोग ने इंगलैण्ड की माध्यमिक शिक्षा के स्वरूप को निश्चित कर महत्वपूर्ण सिद्धान्तों को स्पष्ट किया। यदि यह कहा जाय कि बीसवी शताब्दी में में माध्यमिक शिक्षा का प्रारम्भ इसी आयोग के सुझावों से हुआ तो अतिशयोक्ति न होगी। आयोग ने माध्यमिक शिक्षा के प्रसार हेतु निम्नलिखित सुझाव दिये—

1. सामाजिक और आर्थिक दशाओं के अनुरूप ही माध्यमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में वांछित परिवर्तन किये जायें।

2. शिक्षण संस्थाओं को निर्देशन देने के लिए 'एजूकेशन बोर्ड' क
की जावे ।

3. केन्द्रीय मन्त्री-मण्डल में पृथक् शिक्षा मन्त्रालय होना चाहिए अ
मन्त्री संसद में शैक्षिक विभाग के लिए उत्तरदायी होना चाहिए

4. शिक्षा संस्थाओं का कार्य देखने के लिए पर्याप्त संख्या में विद्या
सर्वों की नियुक्ति की जाय ।

5. अध्यापकों की सेवाओं को स्थायी बनाया जावे ।

6. प्राविधिक और व्यावसायिक शिक्षा की सुविधाओं को अ
बढ़ाया जावे ।

2. माध्यमिक शिक्षा और मजदूर दलीय सरकार (1924)
Secondary Education & Labour Govt, (1924)

सन् 1924 में मजदूर दलीय सरकार बनी । सरकार के परिवर्तन
स्वरूप नीतियों में परिवर्तन आना स्वाभाविक था । डा० टोनी ने माध्यमि
के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सुझाव दिये । माध्यमिक शिक्षा को देश की आवश्य
के अनुरूप बनाने का विचार किया गया और डा० टोनी के विचारों ने सरक
जनता को बहुत प्रभावित किया ।

3. हैडो प्रतिवेदन (1926)
Hadowe Report (1926)

डा० टोनी के विचारों के कारण सरकार ने डा० हैडो की अध्यक्षता
समिति की नियुक्ति की । समिति ने माध्यमिक स्तर में प्रवेश की न्यूनतम आ
वर्ष निश्चित की गई और समाप्ति की आयु 15 वर्ष निश्चित की गई । ह
ने माध्यमिक स्तर पर कला एवं संगीत को पाठ्यक्रम में प्रविष्ट करने का
दिया ।

4. नारवुड आयोग (1943)
Norwood Commission (1943)

द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् इगलैण्ड की जनता ने यह स्वीकार किय
देश के पुर्ननिर्माण और विकास के लिए शिक्षा अत्यन्त अनिवार्य है । इस आवश्य
के फलस्वरूप सर सिरल नारवुड की अध्यक्षता में इस आयोग की नियुक्ति की
जिसने निम्नलिखित सुझाव दिये ।

1. माध्यमिक शाला में प्रवेश की आयु 13 वर्ष कर देनी चाहिए ।

3. माध्यमिक शिक्षा का आधार विद्यार्थियों की रुचि, क्षमता और योग्यता होनी चाहिए।
4. योग्य छात्रों को आर्थिक सहायता एवम् छात्रवृत्ति दी जानी चाहिए।
5. शिक्षा अधिनियम (1944)
Education Act (1944)

माध्यमिक शिक्षा को सुसंगठित करने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिये गये—
1. माध्यमिक शिक्षा का उत्तरदायित्व सरकार का होना चाहिए।
2. माध्यमिक शालाओं मे प्रवेश की आयु 15 वर्ष निश्चित की गई। इस आयु मे आवश्यकतानुसार एक वर्ष की वृद्धि का प्रावधान किया गया।
3. माध्यमिक विद्यालयों को तीन कोटियो मे विभाजित करने का सुझाव दिया गया—
   (i) नियन्त्रित माध्यमिक शालाएँ।
   (ii) सहायता प्राप्त माध्यमिक शालाएँ।
   (iii) स्थानीय शालाएँ।

22.04 माध्यमिक शिक्षा की वर्तमान स्थिति
Present Position of Secondary Education

जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं कि सन् 1944 के अधिनियम द्वारा इंगलैंड में माध्यमिक शिक्षा को सुव्यवस्थित रूप प्रदान किया गया। सन् 1948 में एक और शिक्षा अधिनियम पारित हुआ जिससे माध्यमिक शिक्षा को अधिक प्राविधिक और वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया गया।

इंगलैण्ड में तीन प्रकार की माध्यमिक शालाएँ हैं—

(i) आधुनिक माध्यमिक शालाएँ (Modern Secondary School)
(ii) ग्रामर शालाएँ (Grammer Schools)
(iii) प्राविधिक शालाएँ (Technical Schools)

इंगलैण्ड में माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र मे अनेकों प्रयोग किये जा रहे हैं जिनके परिणामस्वरूप विभिन्न पाठ्यक्रमों की पृथक्-पृथक् शालाएँ हैं जो इस प्रकार है—

(i) व्यापक शालाएँ (Comprehensive Schools)
(ii) सामान्य शालाएँ (Common Schools)
(iii) द्वि-उद्देशीय शालाएँ (Bi-lateral Schools)
(iv) बहु उद्देशीय शालाएँ (Multi-lateral Schools)

संक्षेप में व्यापक और सामान्य शालाएँ इंगलैण्ड में माध्यमिक शिक्षा की अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। प्राविधिक शिक्षा की विशेष व्यवस्था है।

इंगलैण्ड की विश्वविद्यालयी परम्परा का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

1. *आवास एवं एकात्मक शिक्षण विश्वविद्यालय*
   (Residential Cum-Unitary Teaching Universities)
2. संघात्मक विश्वविद्यालय
   (Federal Universities)
3. सम्बद्ध करने वाले विश्वविद्यालय
   (Affiliating Universities)

उपरोक्त सभी विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर शिक्षा का प्रावधान है। सन् 920 से पूर्व विश्वविद्यालयों में बी.ए. आनर्स ही अन्तिम परीक्षा थी। इसके अतिरिक्त तकोत्तर स्तर के पश्चात शोध कार्य का प्रावधान भी सभी विश्वविद्यालयों में है।

अमेरिका में शिक्षा

Education in United States of America

संयुक्त राज्य अमेरिका का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। इस राष्ट्र की नसंख्या लगभग 350 वर्ष पुरानी है। सन् 1647 ई० तक इस राष्ट्र में बसी नेकों जातियां अपने-अपने बालकों की शिक्षा व्यवस्था करती थीं। सन् 1785 ई० क 7 से 15 वर्ष के बालकों की शिक्षा अनिवार्य थी। इस समय अमेरिका के धिकतर स्कूलों में शिक्षा की वही व्यवस्था थी जो इंगलैण्ड में प्रचलित थी।

अमेरिका में सन् 1821 में बोस्टन हाई स्कूल खुला जो अमेरिकन शिक्षा णाली का प्रथम हाई स्कूल था। इसी काल से शिक्षा की योजना स्थानीय आव-यकताओं के अनुसार निश्चित की गई। सन् 1827 में एक नियम के द्वारा यह निश्चित किया गया कि पांच सौ परिवारों पर एक पृथक् स्कूल की व्यवस्था होनी चाहिए।

22.06 प्राथमिक शिक्षा

Primary Education

अमेरिका में प्राथमिक शिक्षा को बहुत महत्वपूर्ण माना जाता है। इसी स्तर से प्रत्येक बालक में उन संस्कारों को पैदा करने का प्रयत्न किया जाता है जिसके द्वारा राष्ट्र की प्रगति सम्भव है। प्रथम छः से आठ कक्षाओं में सामान्य शिक्षा प्रदान की जाती है। प्राथमिक शिक्षा का आवरण स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार है। सन् 1930 में छः वर्ष के 66 3 प्रतिशत बालक, सात वर्ष से बारह वर्ष 95·6 प्रतिशत बालक प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। 1940 के पश्चात प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में अध्यापकों की कमी हो गई, इसका एक मात्र कारण द्वितीय विश्व-युद्ध था। तत्पश्चात प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य कर दिया गया।

-- अमेरिका में प्राथमिक शिक्षा की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

1. अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा।
2. बाल केन्द्रित प्राथमिक शिक्षा।
3. शिक्षा का सामाजिक आधार।
4. मनोवैज्ञानिक शिक्षा।
5. व्यक्तित्व का विकास, प्राथमिक शिक्षा का आधार।
6. पाठ्यक्रम द्वारा लोकतन्त्रीय भावनाओं का विकास।

उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति ही अमेरिका के प्राथमिक शिक्षा की विलक्षणता है। यही कारण है कि आज अमेरिका संसार का सबसे प्रगतिशील देश है। प्राथमिक शिक्षा को सम्पूर्ण शिक्षा का आधार माना जाता है और इसी स्तर पर वे सभी वांछित संस्कार उत्पन्न किये जाते हैं जो देश की समृद्धि में आवश्यक हैं। शिक्षा रूपी प्रकाश से सभी बालकों को प्रकाशित करना प्रत्येक अमरीकी का पुनीत कर्तव्य माना जाता है और यही कारण है कि सम्पूर्ण देश में अज्ञानता का विनाश हो चुका है। प्राथमिक शिक्षा को उद्देश्यपूर्ण अनिवार्य शैक्षिक इकाई के रूप में स्वीकार किया गया है।

22.07 माध्यमिक शिक्षा
Secondary Education

अमेरिका की माध्यमिक शिक्षा व्यवस्था को जन जीवन की व्यावसायिकता और लोकतन्त्रीय आस्था पर आधारित शैक्षिक स्तम्भ स्वीकार किया गया है। यहाँ की माध्यमिक शिक्षा मानवीय स्वतन्त्रता और [illegible] पर आधारित है जिसके कारण यह शिक्षा राष्ट्रीय उद्देश्यों को प्राप्त करने में समर्थ है।

माध्यमिक शिक्षा व्यवस्था में पिछले 50 वर्षों में अनेकों परिवर्तन हुए हैं। माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में अनेकों परीक्षण हुए जिसके कारण अनेकों प्रकार की माध्यमिक शालाएँ कार्यक्षेत्र में आईं। अमेरिका में निम्नलिखित माध्यमिक शालाएँ हैं—

1. [illegible] माध्यमिक शालाएँ (General Secondary Schools)
2. [illegible] माध्यमिक शालाएँ ([illegible] Arts Secondary Schools)
3. [illegible] शालाएँ ([illegible] Secondary Schools)
4. [illegible]

5. हस्तकला प्रशिक्षण माध्यमिक शालाएँ
(Manual Training High Schools)

अमेरिका मे माध्यमिक शिक्षा का स्वरूप निम्नलिखित है—

माध्यमिक शालाएँ
(High Schools)

र माध्यमिक शालाएँ
nor High Schools)

सीनियर माध्यमिक शालाएँ
(Senior High Schools)
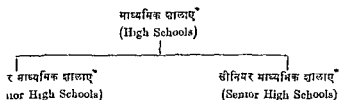
पाठ्यक्रम के अनुसार शालाओं का वर्गीकरण
Classification of the Institutions according to Curriculum

अमेरिका की शिक्षा मे एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि वहाँ विशिष्ट पर बहुत जोर दिया जाता है और इसी कारण वहाँ की माध्यमिक शालाओ भिन्न पाठ्यक्रमो की व्यवस्था है।

संक्षेप मे अमरीकी माध्यमिक शालाओ को पाठ्यक्रम के आधार पर तीन मे विभाजित किया जा सकता है—

1. सामान्य शालाएँ (Ordinary Schools)
   - (i) व्यापक माध्यमिक शालाएँ (Comprehensive Secondary Schools)
   - (ii) सीमित शालाएँ (Limited Schools)
2. विशिष्ट पाठ्यक्रम शालाएँ (Specialized Schools)
   - (i) व्यावसायिक शालाएँ (Vocational Schools)
   - (ii) औद्योगिक शालाएँ (Industrial Schools)
3. अल्पकालीन शालाएँ (Part Time Schools)
   - (i) निरन्तर शालाएँ (Continuous Schools)
   - (ii) प्रौढ़ों की सायकालीन शालाएँ (Adults Evening Schools)

उपरोक्त शालाओं से स्पष्ट है कि अमेरिका में सामान्य और विशेष दोनों ही पाठ्यक्रमों की व्यवस्था है। अमरीकी माध्यमिक शालाओं के पाठ्यक्रम की सबसे विशेष बात यह है कि वहाँ का पाठ्यक्रम इतना विविधता से पूर्ण है कि छात्र किसी भी विषय को ले सकता है। यह छात्रों की रुचि और योग्यता पर आधारित है कि किस विषय का चयन करें। पुस्तकीय ज्ञान के साथ व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करना ही माध्यमिक शिक्षा पाठ्यक्रम की विशेषता है।

22.08 उच्च शिक्षा
Higher Education

अमेरिका की उच्च शिक्षा का इतिहास भी उतना ही प्राचीन है जितना प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा का इतिहास। सन् 1636 में प्रथम महाविद्यालय बोस्टन में स्थापित हुआ। सन् 1760 तक अमेरिका में नौ महाविद्यालय स्थापित हो चुके थे। सन् 1838 में स्त्रियों के लिए हालयोक में एक महाविद्यालय स्थापित हुआ।

उच्च शिक्षा का ऐतिहासिक विकास
Historical Development of Higher Education

सन् 1637 में जान हारवर्ड ने इस महाविद्यालय को धन दिया। पहले यह महाविद्यालय बोस्टन में स्थापित हुआ था परन्तु बाद में इस महाविद्यालय का नाम हारवर्ड के नाम पर रख दिया गया। सन् 1780 के आन्दोलन के पश्चात इसे विश्वविद्यालय की संज्ञा दी गई और आज यह विश्व में हारवर्ड विश्वविद्यालय के नाम से विख्यात है।

सन् 1791 में पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। सन् 1804 में ब्राउन विश्वविद्यालय बना। सन् 1785 में उत्तरी कैरोलीना विश्वविद्यालय बना। सन् 1791 में वरमान्ट विश्वविद्यालय बना। सन् 1912 में कोलम्बिया विश्वविद्यालय की स्थापना हुई।

उच्च शिक्षा के उद्देश्य एवम् लक्ष्य
Aims & Objectives of Higher Education

अमेरिका में उच्च शिक्षा का उद्देश्य समाज के उद्देश्यों को [illegible] करना है। अमेरिका एक प्रजातान्त्रिक देश है और प्रजातन्त्र को सुदृढ़ करना इस देश की उच्च शिक्षा का उद्देश्य है।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

2. सामाजिक समस्याओं के समाधान कर सकने की क्षमता का विकास करना ।

3. प्रजातान्त्रिक जीवन दर्शन के प्रति आस्था उत्पन्न करना ।

4. पारस्परिक सहयोग और अन्तर्राष्ट्रीय सदभावना का विकास करना ।

उच्च शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाएं
Institutions to Impart Higher Education

अमेरिका में उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिए विभिन्न प्रकार की शिक्षा संस्थाएं हैं—

1. जूनियर कॉलिज
2. सामान्य कॉलिज
3. टेक्निकल कॉलिज
4. म्यूनिसिपल कॉलिज
5. लिबरल आर्टस कॉलिज
6. विश्वविद्यालय
7. राज्य विश्वविद्यालय
8. लैंड ग्राण्ट कॉलिज तथा विश्वविद्यालय
9. ग्रेजुएट स्कूल
10. हायर टैक्निकल स्कूल

उच्च शिक्षा का प्रसार
Expansion of Higher Education

अमेरिका में उच्च शिक्षा का प्रसार द्रुत गति से हुआ है । प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सन् 1828 में उच्च शिक्षा प्रदान करने वाली केवल 25 संस्थाएं थीं जिनमें केवल 3,200 छात्र शिक्षा प्राप्त करते थे । सन् 1950 तक शिक्षण संस्थाओं की संख्या 1,788 हो गई और छात्रों की संख्या 2,500,000 हो गई । आज उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अमेरिका संसार का सबसे अग्रणी देश है । तालिका न० 22.1 में यह स्थिति स्पष्ट की गई है ।

तालिका न० 22.1

अमेरिका में उच्च शिक्षा

Higher Education in America

वर्ष	छात्र संख्या	शिक्षण संस्था
1858	3,200	25
1840	16,233	175
1860	56,120	407
1950	2,500,000	1,788
1955	— —	1,850

रूस में शिक्षा
Education in Russia

रूस को प्रगति के मार्ग पर अग्रसर करने के लिए और वर्गहीन समाज की स्थापना करने के लिए शिक्षा ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। संसार में सम्भवत: कोई भी ऐसा देश नहीं है जहाँ राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और वैधानिक समता सिद्धान्त को कार्य रूप में परिणत किया गया हो। रूस ही केवल ऐसा देश है जहाँ शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन के लिए प्रयोग किया गया है और समाजवादी समाज की स्थापना की गई है। रूस का प्रत्येक निवासी लेनिन के इस मत से सहमत है कि 'तुम साम्यवादी राज्य की स्थापना निरक्षर लोगों से नहीं कर सकते।'[1]

22.09 रूसी शिक्षा का ऐतिहासिक विकास
Historical Development of Russian Education

रूस की शिक्षा का इतिहास बहुत पुराना है। सुविधा की दृष्टि से यह अधिक उत्तम होगा यदि रूस की शिक्षा प्रगति को सन् 1917 की क्रान्ति के पश्चात् देखा जाये क्योंकि रूस की क्रान्ति से पूर्व इस विशाल भू-भाग पर ज़ार का शासन था और शिक्षा व्यवस्था शासकों और सामन्तों के हाथ में थी। जो थोड़ी बहुत

1. You cannot build a Communist state with an illi... people.

शिक्षा थी वह भी वर्ग विशेष के लिए सुरक्षित थी। जनता के लिए किसी भी प्रकार की शैक्षिक सुविधा नहीं थी और चारों ओर निरंकुशता का बोलबाला था, अतः संघर्ष निश्चित था और इन सभी घटना चक्रों के कारण सन् 1917 में जन क्रान्ति हुई। सन् 1917 के पश्चात् शिक्षा के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति हुई जिसका ऐतिहासिक विकास इस प्रकार हुआ—

1. सन् 1917 से 1932 तक

From 1917 to 1932

सन् 1919 में सर्वप्रथम यह घोषणा हुई कि सत्तरह वर्ष तक के बालकों के लिए निःशुल्क एवम् अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था होगी। इस घोषणा के परिणाम स्वरूप पूर्व प्राथमिक स्तर से माध्यमिक स्तर तक शिक्षा का प्रसार करना अनिवार्य हो गया। डाल्टन योजना के आधार पर सोवियत शिक्षा की व्यवस्था हुई।

2. सन् 1932 से 1936 तक

From 1932 to 1936

इस काल में सन् 1919 की घोषणा के अनुसार व्यावहारिक पक्षों पर विचार किया गया और सात वर्षीय शिक्षा को अनिवार्य रूप प्रदान करने का प्रयास किया गया। इस समय तक रूस ने औद्योगिक दृष्टि से काफी प्रगति करली थी, अतः यह अनिवार्य था कि व्यावसायिक शिक्षा पर अधिक बल दिया जाये। उस समय की महत्वपूर्ण मांग प्राविधिक शिक्षा थी और इसी के अनुरूप सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था का पुनः मूल्यांकन किया गया और सपूर्ण शिक्षा को प्राविधि केन्द्रित कर दिया गया।

3. सन् 1936 से 1944 तक

From 1936 to 1944

इस काल में शिक्षा की आशातीत प्रगति हुई और माध्यमिक शिक्षा स्तर पर पाठ्यक्रम का विभिन्नीकरण कर दिया गया। विभिन्न व्यवसायों के लिए छात्रों को प्रशिक्षण दिया गया। इस काल में यह भी कानून पास हो गया कि 18 वर्ष से पूर्व किसी को किसी भी प्रकार की नौकरी न दी जाये।

4. सन् 1944 से 1952 तक

From 1944 to 1952

इस काल तक रूस पूर्णरूपेण व्यवस्थित हो चुका था। सभी स्तर के पाठ्यक्रमों को परिवर्तित कर दिया गया था। देश की आवश्यकता के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य निश्चित हो चुके थे। शिक्षा को अत्यधिक वैज्ञानिक और प्राविधिक बना दिया गया था और देश आर्थिक दृष्टि से पूर्णतया स्वावलम्बी हो चुका था।

5. सन् 1952 से वर्तमान समय तक

From 1952 to Present Day

सन् 1952 के पश्चात् रूस ने जो प्रगति की वह विश्व के रंगमंच पर स्वतः दृष्टिगत है। शिक्षा के सभी क्षेत्रों को नवीन रूप प्रदान किया गया। आज रूस

तालिका नं० 22 2

रूस में उच्च शिक्षा की प्रगति
Progress of Higher Education in Russia

वर्ष	शिक्षा सस्थाए	छात्र सख्या
1914	95	117,000
1946	712	653,000
1951	887	1,356,000
1952	890	1,416,000
1956-57	1001	2,756,000

इस समय रूस में 33 विश्वविद्यालय हैं। सोलह रिपब्लिकों में कम से कम एक विश्वविद्यालय है। उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिए विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त अन्य संस्थाएँ भी हैं।

6923
3 2-60

ग्रन्थ-सूची
Bibliography

1. Armfelt, Roger.
   The Structure of English Education.
2. Bernad, H. C.
   History of English Education, U. L. P. Ltd, 1952.
3. Clemens Dutt (Ed.)
   Fundamentals of Marxism-Leninism Manual, Foreign Language Publishing House, Moscow.
4. Curtis, S. J.
   Education in Britain Since 1900, Dakers, 1952.
5. Hofstadter, Richard & Walter P. Metzgar.
   The Development of Academic Freedom in the United States, Columbia University Press, New York, 1955.
6. Johnson, William H. E
   Russia's Educational Heritage, Carnegi Press, Pittsburgh, 1950.
7. Kandel, I. L.
   The New Era in Education, Houghton, Mifflin Co., U. S. A.
8. Kontalsoff, E.
   Soviet Education, Vol VIII, Basic Blackwell, Oxford, 1951.
9. Lester Smith, W. O.
   Education in Great Britain, Oxford, 1949
10. Nicholas Hans,
    Comparative Education, Routledge Kegan Paul, Ltd.
11. Stephens, W. E. D.
    English Education, Longmans, 1947.
12. Storr, Richard J.
    The Beginnings of Graduate Education in America, Chicago, University of Chicago Press, 1953.